गगनांचल

साहित्य कला एवं संस्कृति का संगम

वर्ष: 40, अंक: 1-2, जनवरी-अप्रैल, 2017 (संयुक्तांक)

गिरमिटिया एवं अन्य प्रवासी साहित्य विशेषांक

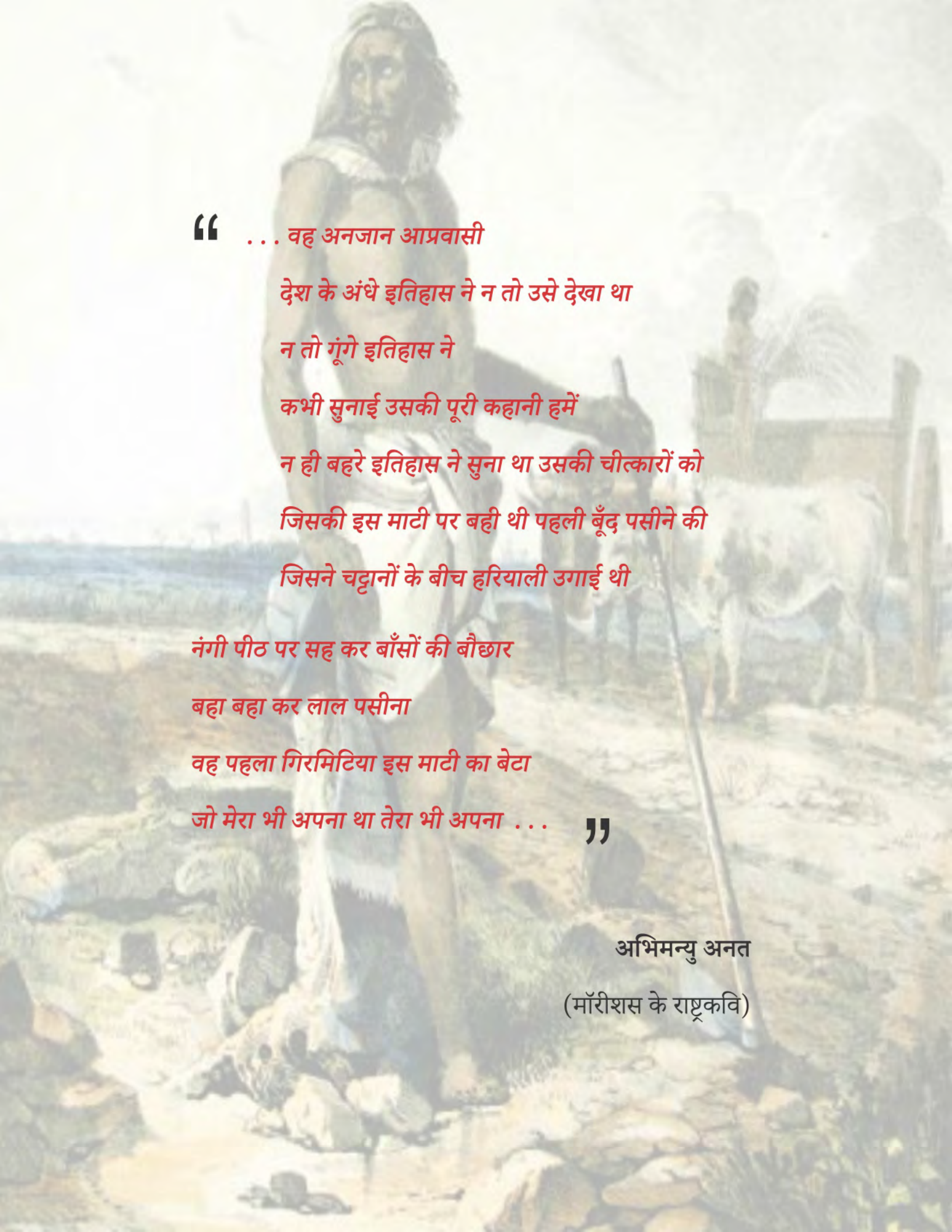

“ . . . वह अनजान आप्रवासी

देश के अंधे इतिहास ने न तो उसे देखा था

न तो गूंगे इतिहास ने

कभी सुनाई उसकी पूरी कहानी हमें

न ही बहरे इतिहास ने सुना था उसकी चीत्कारों को

जिसकी इस माटी पर बही थी पहली बूँद पसीने की

जिसने चट्टानों के बीच हरियाली उगाई थी

नंगी पीठ पर सह कर बाँसों की बौछार

बहा बहा कर लाल पसीना

वह पहला गिरमिटिया इस माटी का बेटा

जो मेरा भी अपना था तेरा भी अपना . . . ”

अभिमन्यु अनत

(मॉरीशस के राष्ट्रकवि)

गगनांचल

जनवरी-अप्रैल 2017 (संयुक्तांक)

प्रकाशक
रिवा गांगुली दास
महानिदेशक
भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्, नई दिल्ली

संपादक
डॉ. हरीश नवल

सह-संपादक
डॉ. आशीष कंधवे

ISSN : 0971-1430

संपादकीय पता
भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्
आजाद भवन, इन्द्रप्रस्थ एस्टेट, नई दिल्ली-110002
ई-मेल: ddgnk.iccr@nic.in, dirpub.iccr@gov.in

गगनांचल अब इंटरनेट पर भी उपलब्ध है।
www.iccr.gov.in/journals/hindi-journals
पर क्लिक करें।

गगनांचल में प्रकाशित लेखादि पर प्रकाशक का कॉपीराइट है। किंतु पुनर्मुद्रण के लिए आग्रह प्राप्त होने पर अनुमति दी जा सकती है। अतः प्रकाशक की पूर्वानुमति के बिना कोई भी लेखादि पुनर्मुद्रित न किया जाए। गगनांचल में व्यक्त विचार संबद्ध लेखकों के होते हैं और आवश्यक रूप से परिषद् की नीति को प्रकट नहीं करते। प्रकाशित चित्रों और फोटोग्राफ्स की मौलिकता आदि तथ्यों की जिम्मेदारी सम्बंधित प्रेषकों की है, परिषद् की नहीं।

शुल्क दर

वार्षिक	:	₹	500
		यू.एस. $	100
त्रैवार्षिक	:	₹	1200
		यू.एस. $	250

उपर्युक्त शुल्क-दर का अग्रिम भुगतान 'भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्, नई दिल्ली' को देय बैंक ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा किया जाना श्रेयस्कर है।

मुद्रक: सीता फाईन आर्ट्स प्रा. लि. नई दिल्ली-110028
www.sitafinearts.com

अनुक्रम

■ गिरमिटिया तथा प्रवासी संदर्भ ■

1. गिरमिटिया व अन्य प्रवासी हिन्दी लेखन : प्रो. महिपती जगन्नाथ शिवदास 5
2. गिरमिटिया हिन्दी : संरक्षण और संवर्द्धन : डॉ. विमलेश कांति वर्मा 7
3. गिरमिटिया हिन्दी कविता में भारतीय संस्कृति : प्रो. हरिमोहन 10
4. गिरमिटिया दर्द की आवाज : प्रवासी पत्रिका : डॉ. राकेश कुमार दुबे 18
5. गिरमिटिया श्रमिकों के देश में दस दिन : डॉ. चंद्रकांता किनरा 22
6. गिरमिटियों के 'बैठका' से विश्वविद्यालय तक : डॉ. उमेश कुमार सिंह 27
7. गिरमिटिया देश फीजी : हिन्दी पत्रकारिता के 103 वर्ष : डॉ. जवाहर कर्नावट 31
8. भारतवंशी गिरमिटिया : राजेश कुमार मांझी 37
9. साहित्य के दर्पण में प्रवासी साहित्य : स्नेह ठाकुर 50
10. स्विटज़रलैंड को लुभाया हिन्दी ने : डॉ. ज्योति शर्मा 54
11. अरमेनिया में हिन्दी भाषा : अध्ययन-अध्यापन : डॉ. कविता सिंह 57

■ विमर्श ■

12. चीनी और चाय का समाजशास्त्र : रीतारानी पालीवाल 61
13. हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के बीच सार्थक संवाद की आवश्यकता : रमेश चंद्र शाह 65
14. भारतीय संस्कृति का मूल आधार 'अध्यात्म' : आचार्य डॉ. रामेश्वर प्रसाद गुप्त 67
15. हिन्दी ग़ज़ल का परिदृश्य : ज्ञान प्रकाश विवेक 70
16. ज़िन्दग़ी की उड़ान : एक ख्वाब : डॉ. कृष्ण कुमार रत्तू 74
17. आर्यों का मूल निवास स्थान : प्रो. योगेश चन्द्र शर्मा 78
18. ध्वनि में रस, रस में जीवन तलाशते अभिनव गुप्त : डॉ. उदय प्रताप सिंह 84
19. महादेवी वर्मा का गद्य : चिन्तन और सम्वेदना : राजेन्द्र परदेसी 89
20. ज्ञानपीठ विजेता ओ.एन.वी. कुरुप का काव्य : डॉ. प्रमोद कोवप्रत 92
21. सर्वेश्वर की सृजन चेतना एवं सौंदर्य-बोध : दान बहादुर सिंह 95
22. ये वादियाँ ये फिज़ायें बुला रही हैं तुम्हें : जितेन्द्र निर्मोही 100
23. स्मृति शेष : उस्ताद हलीम जाफर खां : डॉ. राजेश कुमार व्यास 103

■ कहानियाँ ■

24. अर्धांगिनी : दिव्या माथुर (इंग्लैंड) 105
25. अभिमानी-निराभिमानी : पुष्पा सक्सेना (अमरीका) 114

26. अपराध-बोध क्यों? : दीप्ति प्रकाश (स्पेन) 124
27. डैफ्नी—ऑस्ट्रेलिया : कादम्बिनी मेहरा (यू. के.) 126
28. वही एक अंत : बल्लभ डोभाल 132
29. गुड़ की डली : इंदिरा दांगी 135
30. हाड़ मांस की गुड़िया और पुरुष : स्वदेश भारती 140
31. गोमती : अखिलेश कुमार 147
32. पिचकारी : अर्पण कुमार 155
33. बेमिसाल : नीता दानी 158

■ **लघु कथा क्रम** ■

34. अंधा भिखारी : यंतुदेव बुधु (मॉरीशस) 161
35. जसविंदर शर्मा की दो लघुकथाएं (1) बोहेमियन (2) तारीफ़ 162
36. शोभा रस्तोगी की दो लघुकथाएं (1) आई लव यू दिल्ली (2) पापा की बेटी 163
37. वापसी : अलका धनपत (मॉरीशस) 164

■ **काव्य निधि** ■

38. वैदन बोश ब्रिज : सुशीला उमराव अंग्रु (सूरीनाम) 165
39. सुरेंद्र भुटानी (पौलेंड) की दो कविताएं (1) बदला हुआ वक्त (2) आत्म विरोध 166
40. रेखा मैत्र (अमरीका) की तीन कविताएं 167
41. इक विस्मय की डोर : समीर हसन मूसा (कतर) 167
42. कबूतर और मैं : दो दृश्य : प्रताप सहगल 168
43. ज़िन्दग़ी : निर्मला सिंह 169
44. मुक्त दोहे धूप के : प्रो. प्रेमचंद सोनवाने 170
45. ग़रीब की उम्मीद : राजेंद्र निशेश 170
46. दो ग़ज़लें : वेद मित्र शुक्ल 171
47. विराट के मुक्तक : चंद्रसेन विराट 171
48. कितनी देर : जगदीश पंकज 172
49. ग़ज़ल : चाँद शेरी 172
50. दो कविताएं : हर्षवर्धन आर्य 173
51. बादलों से : मधुर नज़्मी 173
52. अदब के घरौंदे : अनिरुद्ध सिन्हा 174
53. नभ को ढोए हैं : राम बहादुर चौधरी चंदन 174
54. कैसा जश्न : राजेन्द्र तिवारी 175
55. ग़ज़ल : विज्ञानव्रत 175

■ **व्यंग्य** ■

56. कुत्ता पालन एक, लाभ अनेक : प्रेम जनमेजय 176
57. सत्यसेल्स और सेल्ससत्य की कहानी : आलोक पुराणिक 178

■ **समीक्षाग्राम** ■

58. खगेंद्र ठाकुर कृत 'पं. लक्ष्मीनारायण मिश्र : व्यक्तित्व एवं कृतित्व' : डॉ. हरिणय हमिकर 180
59. डॉ. ओम प्रकाश 'प्रकाश' कृत 'आधुनिक हिंदी साहित्य : आलोचना प्रसंग' : डॉ. हरिसिंह पाल 182
60. सिद्धेश्वर कृत 'भीतर का सच' : अशोक मनोरम 184
61. मीना अरोड़ा कृत 'एक ऐसी भी निर्भया' : प्रदीप कुमार 186

■ **आयोजन विवरणिका** ■

62. विशेष रपट : राष्ट्रीय एकात्मकता एवं भारतीय संस्कृति संदर्भित संगोष्ठी : नरेंद्र कुमार भारती 188
63. अखिल भारतीय नागरी लिपि सम्मेलन : पुष्पा पाल 192

■ **विविध समारोह** ■

64. श्रीलंका और जर्मनी : विश्व हिंदी समारोह 194
65. मॉरीशस और स्पेन : विविध समारोह 196
66. क्रोशिया : हिंदी एवं भारतीय संविधान दिवस 199
67. रूस : विश्व हिंदी दिवस 200

■ **अंततोगत्वा** ■

68. वर्तमान समय और हम : हरीश नवल 201

■ **अन्य विशिष्ट यत्र-तत्र** ■

- हमारे पूज्य (कविता) : गुलशन मधुर (अमरीका) 21
- कथा यू.के. लंदन (परिचय) 26
- क्यों लुटाते हो (कविता) : धनंजय कुमार (अमरीका) 36
- कोई इंडिया से जब आए (कविता) : अर्चना पाण्डे (अमरीका) 49
- अच्छा तोहफा, लाश का फैसला (लघु कथाएँ) : राज हीरामन (मॉरीशस) 53
- बचपन (कविता) : बीना टोडी (यू.एस.ए.) 56
- भीतरी संन्यास : कानन झींगन 60
- मेरे पूर्वज कौन थे (कविता) : कमला प्रसाद मिश्र (फिजी) 73
- स्वदेश की मिट्टी (कविता) : महाकवि हरिशंकर 'आदेश' (कनाडा) 77
- परिंदे (लघुकथा) : रेखा राजवंशी (आस्ट्रेलिया) 88
- प्रगति (क्षणिका): डॉ. नरेन्द्रनाथ लाहा 99
- औरों की किताब को पढ़ते (कविता) : डॉ. श्याम बिहारी श्रीवास्तव 113
- पहचान का संकट (लघुकथा) : राकेश भ्रमर 123
- चित्रकार हूँ (कविता) : कुसुम शर्मा 134
- मैं बच्चा बन जाता हूँ (कविता) : गिरीश पंकज 139
- मैं टूटना नहीं चाहती (कविता) : बिमला रावर 146
- सोना (लघुकथा) : राकेश भ्रमर 154
- कुछ पुराने पेड़ हों शायद अभी उस गाँव में (कविता) : राकेश खण्डेलवाल (अमरीका) 185
- जैसा मैंने चाहा था (कविता) : घनश्याम गुप्ता (अमरीका) 187
- नया सूरज उगाना ही होगा (कविता) : हेमराज सुंदर (मॉरीशस) 202

विदेश मंत्री
भारत

Minister of External Affairs
India

सत्यमेव जयते

सुषमा स्वराज
Sushma Swaraj

संदेश

यह बहुत ही हर्ष का विषय है कि गगनांचल का वर्तमान अंक गिरमिटिया एवं अन्य प्रवासी साहित्य पर केंद्रित है। अनेक भारतीय, भारत से शर्तबंदी प्रथा के तहत कई शताब्दियों पूर्व कैरेबियाई, दक्षिण-पूर्व एशिया, अफ्रीका और पूर्व फ्रांसीसी उपनिवेशी देशों में रोटी कमाने के लिए गए। उनका जीवन बहुत यातनाओं से भरा हुआ था। इन देशों में भारतीय डायस्पोरा का इतिहास साहस, दृढ़ता और समरसता से ओत-प्रोत है।

यह हम सभी के लिए बहुत ही गर्व की बात है कि प्रवासी भारतीय समुदाय को उनकी योग्यता, उनके परिश्रम तथा कानून व्यवस्था का पालन करने वाले लोगों के रूप में जाना जाता है। गिरमिटिया देशों में रहने वाले भारतीय मूल के समुदाय ने उस देश के स्थानीय लोगों और संस्कृति के साथ अपने आप को सफलतापूर्वक जोड़ा है। इन देशों में भारतीय डायस्पोरा ने व्यापार, राजनीति, कला, संस्कृति और खेल के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया है।

उनके द्वारा अपनाए गए देशों और उनके मूल देश के बीच विशाल भौगोलिक दूरी और सांस्कृतिक अंतर होने के बावजूद उन्होंने अपनी मातृभूमि की संस्कृति, विरासत, व्यंजन, भाषाएं और परंपराओं को संजो कर रखा है।

गिरमिटिया देशों में रह रहे भारतीय डायस्पोरा के अनेक लोगों को उनकी उपलब्धियों और योगदान के लिए प्रवासी भारतीय सम्मान पुरस्कार से सम्मानित किया जाता रहा है।

गगनांचल का यह अंक उन्हीं भारतवंशियों को समर्पित है। इससे उनके विषय में पाठकों को बहुत कुछ जानने को मिलेगा। संस्कृति की रक्षा के साथ स्वभाषा की मर्यादा का उन्होंने कैसे मान रखा, यह आपको इस अंक में ज्ञात हो सकेगा।

मैं गिरमिटिया देशों में रह रहे भारतीय डायस्पोरा के साहस, बुद्धिमत्ता, धैर्य और जीवट को नमन करती हूँ।

मैं आशा करती हूँ कि यह अंक भारतवंशी गिरमिटिया लोगों के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगा।

सुषमा स्वराज

(सुषमा स्वराज)

संपादकीय

'गगनांचल' के सुधि पाठकों को प्रणाम। इस अंक से सम्पादन का दायित्व मुझे सौंपा गया है। आपके सहयोग, शुभकामनाओं और आशीर्वाद से 'गगनांचल' का स्तर कायम रह सकेगा, ऐसा विश्वास है।

यह एक विशिष्ट पत्रिका है जिसमें शिक्षा, साहित्य और संस्कृति का नवनीत मंथित होता है। इसका पाठक वर्ग भी विशिष्ट है जो वैश्विक स्तर पर मानव का नवोन्मेष चाहता है। अपसंस्कृत होती इकाईयों और विचारों को सांस्कृतिक चेतना देने में 'गगनांचल' सहायक सिद्ध हो सके, इसका प्रयास सदैव रहेगा।

'गगनांचल' भारत और भारत से बाहर के देशों में 'भारतीयता' का परचम फहराता है जिसमें प्रवासी रचनाकारों की विशेष भूमिका है। यह अंक 'गिरमिटिया संदर्भ' अग्रलेखों के माध्यम से अंकित है। अन्य प्रवासी लेखकीय योगदान भी आप देशीय लेखक वर्ग के साथ-साथ इसमें पाएँगे। प्रवासी लेखन की एक वृहत् धारा विश्व में बह रही है। भारत से गए और विदेश में पले बढ़े हिंदी रचनाकारों ने एक बड़ा मुकाम हासिल किया है।

प्रस्तुत संयुक्तांक विशेष रूप से 'गिरमिटिया' और अन्य प्रवासी संदर्भों से युक्त है जिसमें प्रो. महिपती जगन्नाथ शिवदास ने प्रवासी हिंदी लेखन को परिभाषित किया है, स्नेह ठाकुर ने साहित्य और प्रवासी साहित्य पर दृष्टिपात करते हुए कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं को रेखांकित किया है तथा प्रवासी साहित्य विशेषज्ञ डॉ. विमलेश कांति वर्मा ने 'गिरमिटिया हिंदी' के संरक्षण की चर्चा की है और कुलपति डॉ. हरिमोहन शर्मा ने गिरमिटिया कविता का अनुशीलन किया है। राजेश मांझी की इसी विषयक नाटिका और डॉ. चंद्रकांता किनरा की फीजी-डायरी भी इस अंक के विशेष आकर्षण हैं।

आपकी प्रतिक्रिया और सुझाव 'गगनांचल' को दिशा दे सकेंगे।

गिरमिटिया पूर्वजों को नमन।

सादर,

सम्पादक
गगनांचल

गिरमिटिया व अन्य प्रवासी हिन्दी लेखन

प्रो. महिपती जगन्नाथ शिवदास

"...हिंदी को अपनी अस्मिता के साथ जिन्होंने जोड़ रखा है, उन देशों में मॉरीशस, सूरीनाम, फीजी, त्रिनिदाद, गुयाना आदि गिरमिटिया देशों को सर्वप्रथम शामिल किया जा सकता है। मॉरीशस के अभिमन्यु अनत हिंदी की पचास पुस्तकों के रचयिता हैं। इनके अलावा कृष्ण बिहारी मिश्र, रामदेव धुरंधर आदि उपन्यासकारों में हैं। पं. लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी, 'रसपुंज' प्रथम कवि माने जाते हैं। साथ ही सोमदत्त बखोरी, राज हीरामन, हेमराज सुंदर, राजवंती अजोधिया आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। मॉरीशस में 'आर्योदय', 'आक्रोश' और 'इंद्रधनुष' नामक हिंदी पत्रिकाएँ नियमित रूप से प्रकाशित होती हैं। फीजी में पं. कमलाप्रसाद मिश्र, पं. काशीराम कुमुद, बाबू कुँवर सिंह, विवेकानंद शर्मा के नाम सुपरिचित हैं। सूरीनाम में अमरसिंह, रमणजीत नारायण, सूर्यप्रसाद वीरे आदि प्रमुख नाम हैं।..."

सम्पर्क: सहयोगी प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
प्रा. डॉ. एन.डी. पाटील महाविद्यालय, मलकापूर, जिला-कोल्हापुर (महाराष्ट्र)

अब यह सर्वविदित हो गया है कि हिंदी केवल भारतवासियों की भाषा नहीं है बल्कि हमारी संस्कृति, सम्मान और अस्मिता का प्रतीक है। हिंदी भारत में ही नहीं विदेशों में भी बोली जाती है। विदेशों में डेढ़ सौ से अधिक देशों के विश्वविद्यालयों में हिंदी पढ़ाई जाती है। इसमें आप्रवासी भारतीयों के अलावा स्थानीय छात्र भी हिंदी का अध्ययन करते हैं। आज विदेशों में हिंदी एक व्यावसायिक, व्यावहारिक भाषा के रूप में अपनायी जा रही है। रोजी रोटी के लिए प्रयोजनमूलक हिंदी को अपनाया जा रहा हे। विदेशों में हिंदी, सांस्कृतिक दूत का काम करती है। कई विदेशी विद्वान हिंदी की विशिष्टता की ओर आकर्षित हुए हैं। इतना ही नहीं उन्होंने इस भाषा पर अपना प्रभुत्व सिद्ध किया है। उन्होंने हिंदी में रचनाएँ की हैं। साथ ही हिंदी से अपनी भाषा में और अपनी भाषा से हिंदी में अनुवाद किए हैं। इस तरह हिंदी ज्ञान-विज्ञान और साहित्य-संस्कृति की लेन-देन होती रहती है। विदेश में हिंदी लेखन की सम्पन्नता बढ़ती जा रही है। प्रवासी हिंदी साहित्य पर शोधपरक व्याख्याएँ की जा रही हैं।

विदेशों में हिंदी की स्थिति को तीन वर्गों में देखा जाता है—पहले वर्ग में वे लोग आते हैं, जो जीविकोपार्जन के लिए पीढ़ियों पहले भारत से विदेश आ बसे हैं। हिंदी को अपनी अस्मिता के साथ जिन्होंने जोड़ रखा है, उन देशों में मॉरीशस, सूरीनाम, फीजी, त्रिनिदाद, गुयाना आदि गिरमिटिया देशों को सर्वप्रथम शामिल किया जा सकता है। मॉरीशस के अभिमन्यु अनत हिंदी की पचास पुस्तकों के रचयिता हैं। इनके अलावा कृष्ण बिहारी मिश्र, रामदेव धुरंधर आदि उपन्यासकारों में हैं। पं. लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी, 'रसपुंज' प्रथम कवि माने जाते हैं। साथ ही सोमदत्त बखोरी, राज हीरामन, हेमराज सुंदर, राजवंती अजोधिया आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। मॉरीशस में 'आर्योदय', 'आक्रोश' और 'इंद्रधनुष' नामक हिंदी पत्रिकाएँ नियमित रूप से प्रकाशित होती हैं। फीजी में पं. कमलाप्रसाद मिश्र, पं. काशीराम कुमुद, बाबू कुँवर सिंह, विवेकानंद शर्मा के नाम सुपरिचित हैं। सूरीनाम में अमरसिंह, रमणजीत नारायण, सूर्यप्रसाद वीरे आदि प्रमुख नाम हैं। इन देशों में हिंदी भाषी भारतीय मूल के नागरिकों की संख्या इतनी अधिक है कि वे वहाँ की राजनीति, प्रशासन और सामाजिक जीवन के महत्त्वपूर्ण अंग हैं। वे हिंदी के लिए बहुत योगदान दे रहे हैं। इसी कारण दूसरा और चौथा विश्व हिंदी सम्मेलन मॉरीशस में और पाँचवा त्रिनिदाद में आयोजित किए गए।

दूसरे वर्ग में वे पड़ोसी देश हैं जहाँ अनायास ही हिंदी भाषा के रूप में विद्यमान हैं। इन देशों में नेपाल, भूटान, ब्रह्मदेश, श्रीलंका, पाकिस्तान, चीन आदि देशों का समावेश किया जाता है।

तीसरे वर्ग में ब्रिटेन, अमेरिका, कनाडा, जर्मनी, फ्रान्स, स्वीडन, बेल्जियम, चेक गणराज्य, रूस, जापान आदि देशों का समावेश किया गया है। इन देशों में भारतीय लोगों की संख्या काफी बढ़ रही है। इन देशों के हिंदी के विद्वानों का काफी उल्लेखनीय योगदान रहा है। बेल्जियम के फादर कामिल बुल्के का योगदान भला कौन भूल सकता है? अंग्रेजी हिंदी शब्दकोश के रूप में उन्होंने हिंदी जगत को अनोखा उपहार दिया है।

इग्लैंड में हिंदी के अध्ययन-अध्यापन की एक लंबी परंपरा रही है। बीबीसी पर हिंदी समाचार एवं अन्य कार्यक्रम नियमित रूप से होते रहे हैं। एफ.एस. ग्राऊज ने निरंतर समर्पण से रामचरितमानस का अंग्रेजी अनुवाद किया है। गौतम सचदेव, कैलाश बधवार, ओंकारनाथ श्रीवास्तव, भारतेंदु विमल, कीर्ति चौधरी, अचला शर्मा आदि ने बीबीसी के माध्यम से हिंदी कार्यक्रमों को विशेष प्रतिष्ठा दिलाई है। एक सर्वेक्षण में यहाँ तक कहा गया है कि लंदन की दूसरी भाषा हिंदी होती जा रही है क्योंकि भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न देशों के लोग अपनी पहचान के लिए हिंदी का उपयोग कर रहे हैं।

भारत के अलावा पाकिस्तान, नेपाल, बांग्लादेश, म्यान्मार, श्रीलंका आदि देशों के नागरिक हिंदी बोलने को प्राथमिकता देते हैं। अपने रंग-रूप के कारण इन देशों के लोग एक-दूसरे को पहचानते हैं। अपरिचित होने के बावजूद वे आपसी संवाद के लिए हिंदी का उपयोग करते हैं। लंदन में हिंदी रचनाकारों की संख्या अधिक है। इंग्लैंड में कथाकार तेजेन्द्र शर्मा 'अंतर्राष्ट्रीय इंदु शर्मा कथा सम्मान' का संयोजन करते हैं। भारतेंदु विमल, शैल अग्रवाल, कैसर, दिव्या माथुर, गौतम सचदेव, अरुण अस्थाना, उषाराजे सक्सेना, पद्मेश गुप्त, कृष्ण कुमार आदि के नाम आज हिंदी की पहचान हो रहे हैं।

अमेरिका, कनाडा, रूस, ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रान्स, हालैंड, स्विटजरलैंड, डेनमार्क, नार्वे, स्वीडन, इटली, आस्ट्रेलिया, मैक्सिको, क्यूबा, बेल्जियम, ऑस्ट्रिया, फिनलैंड, रोमानिया, उक्रेन, चीन, मंगोलिया, तुर्की, उजबेकिस्तान, थाईलैंड, मॉरीशस, फीजी, सूरीनाम, गयाना, त्रिनिदाद एवं टोबेगो, ताजिकिस्तान, पोलैंड, चेक गणराज्य, हंगरी, दक्षिण अफ्रीका, जापान, दक्षिण कोरिया जैसे देशों के विश्वविद्यालयों में हिंदी को भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है।

कई विदेशी भाषाओं में शब्दकोश भी उपलब्ध हैं जिनमें हिंदी-जर्मन, हिंदी-रोमानिया, हिंदी-रूसी, हिंदी-उजबेकी, संक्षिप्त हिंदी-जापानी, हिंदी-चीनी शब्दकोशों का उल्लेख किया जा सकता है।

इंटरनेट के इस युग में हिंदी की उपयुक्तता बढ़ती जा रही है। हिंदी की कई पत्रिकाएँ इंटरनेट पर आ चुकी हैं। प्रसिद्ध सर्च इंजिन गुगल के प्रमुख एरिक श्मिट का मानना है कि अगले पाँच दस वर्षों के भीतर हिंदी इंटरनेट पर छा जाएगी। अंग्रेजी और चीनी के साथ-साथ यह दुनिया की प्रमुख भाषा होगी। दरअसल हिंदी की इसी व्यापक उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए गुगल के अलावा, माइक्रोसॉफ्ट, सन, याहू, आईबीएम जैसी विश्वस्तर की कंपनियाँ भी अपने मुनाफे के लिए हिंदी को अपनाने की पहल कर रही हैं।

'वर्ल्ड वाइड वेब' पर अंग्रेजी भाषा की स्थिति पर टिप्पणी करते हुए 'युनिवर्सिटी ऑफ वेल्स' के प्रोफेसर और भाषाशास्त्री 'डेविड क्रिस्टल' कहते हैं कि 'वर्ष 1997 ई. में 'वर्ल्ड वाइड वेब' पर अंग्रेजी 80 प्रतिशत थी, जो सन् 2000 ई. में घटकर 70 प्रतिशत हो गई है। इस सर्वेक्षण से यह स्पष्ट होता है कि अंग्रेजी के मुकाबले विश्व की कई भाषाएँ अब 'वर्ल्ड वाइड वेब' पर अपना स्थान बना रही हैं। हिंदी भी अपना स्थान निरंतर बना रही है।

पूर्व राष्ट्रपति जॉर्ज डब्लू बुश ने अमेरिका के विश्वविद्यालयों के मुखियाओं को संबोधित करते हुए कहा था "अमेरिकी बच्चों को हिंदी, रूसी, अरबी और फारसी सिखाने के लिए विशेष प्रयास किए जाएँ। ये प्रयास राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए आवश्यक हैं।" आज इन भाषाओं को अमेरिका की सुरक्षा के लिए आवश्यक माना जाता है। गुप्तचर विभाग और सैन्यदलों में यह भाषा ज्ञान विशेष फायदेमंद हो रहा है।

अमेरिका में भारतीय फिल्में, सूफी गीत-संगीत और रैप म्युजिक का बहुत बड़ा बाजार है। जगजीत सिंह और गुलजार ने भारतीयों को वहाँ अनिवासी नहीं रहने दिया है। अमेरिका की राजनीति में भारतीयों का प्रभाव पिछले कुछ चुनावों में देखा जा रहा है। ज्ञान-विज्ञान, कंप्यूटर, प्रशासन, अंतरिक्ष और व्यापार में भारतीयों की भागीदारी सर्वविदित है। इसके लिए हिंदी सीखनी चाहिए। हिंदी पर जोर इसलिए भी है कि हिंदी अकेली ऐसी भाषा है, जिसमें उर्दू के अलावा अरबी, फारसी शब्दों की मात्रा बहुत है। हिंदी पढ़ाने की नीति को लेकर अब अमेरिका में पढ़ाने वाले शिक्षकों की माँग बढ़ रही है। अनिवासी भारतीयों द्वारा अपने बच्चों को भारतीय संस्कारों और भाषा से जोड़े रखने के लिए कई प्रयास किए जा रहे हैं। वाशिंगटन में भारतीयों ने इंडिया इंटरनेशनल स्कूल खोला है। वहाँ के प्रवासी साहित्यकार मधु माहेश्वरी, धनंजय कुमार, सत्यपाल आनंद, उमेश अग्निहोत्री, गुलशन मधुर, विशाखा ठाकर, कुसुम रस्तोगी, अनिल माथुर आदि कक्षाएँ चलाते हैं। रविवार की सुबह और बुधवार की शाम को स्कूल के बच्चों के लिए हिंदी, भारतीय संस्कृति, संगीत, नृत्य और योग की कक्षाएँ ली जाती हैं। धनंजय कुमार योग में अत्यधिक रुचि रखते हैं।

डॉ. राम चौधरी, कैलाश शर्मा, सीमा खुराना, अनुराधा चंदर, आस्था नवल आदि विद्वतजन न्यूयार्क और आसपास के इलाकों में हिंदी के विकास एवं संवर्धन के लिए विशिष्ट कक्षाओं का संचालन करते हैं। भारतीय विद्या भवन के डॉ. जयरामन ने इस काम में उल्लेखनीय योगदान दिया है। गुलाब खण्डेलवाल, सुषम बेदी, उषा प्रियम्वदा, सुधा ओम ढींगरा, नरेंद्र टंडन, रेखा मैत्र आदि प्रवासी लेखक हिंदी साहित्य की श्रीवृद्धि करते रहे हैं। इस प्रकार प्रवासी लेखन हिंदी का उत्थान कर रहा है।

गिरमिटिया हिंदी : संवर्धन और संरक्षण

डॉ. विमलेश कांति वर्मा

"...सभी प्रवासी भारतीय विदेश में अपनी भाषा की रक्षा, संरक्षा और प्रतिष्ठा के लिए सचेष्ट हैं, यही कारण है कि सर्वत्र विदेश में जहां-जहां भारतीय प्रवासी या आप्रवासी रूप में गए हैं वे हिंदी बोलने का प्रयत्न करते हैं और अपनी भाषा और संस्कृति पर उन्हें गर्व है। अब वे अपनी अगली पीढ़ी को भी हिंदी सिखाना चाहते हैं। क्योंकि वही हिंदी उनको विदेश में जोड़ने वाली सबसे बड़ी ताकत है।..."

'गिरमिटिया हिंदी' आज एक पारिभाषिक शब्द है और इसका तात्पर्य उस हिंदी से है जो गिरमिट प्रथा के अंतर्गत प्रवासी भारतीयों द्वारा पारस्परिक बोलचाल के लिए विकसित हुई थी।

'गिरमिटिया हिंदी' एक तिरस्कार मूलक शब्द नहीं है। गिरमिटिया हिंदी शब्द का प्रयोग 19-20 शती में गन्ने के खेतों में काम करने के लिए विदेशी सत्ता द्वारा छलकपट से ले जाए गए भारतीयों द्वारा प्रवास के समय विदेशी भूमि में विस्थापन की कठिनाइयों को झेलते हुए अपने विचारों और भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त हुआ है।

फीजी में गिरमिटिया हिंदी के नव विकसित भाषा रूप फीजी बात/फीजी हिंदी, सूरीनाम में सरनामी/सरनामी हिंदी/सरनामी हिंदुस्तानी तथा दक्षिण अफ्रीका में नेटाली/नेताली हिंदी कहलाए। इनकी संरचना का मूल अवधी, भोजपुरी और खड़ीबोली था जिनमें नए देश की सत्ता भाषा के शब्द और वहां की जनभाषा के शब्द भी घुलमिल गये जिनसे हिंदी के नए स्वरूप का विकास हुआ। ये विश्वव्यापी हिंदियां विदेश में बसे हुए प्रवासी भारतीयों की रचनात्मक साहित्यिक अभिव्यक्ति का आज माध्यम तो हैं ही हिंदी के वैश्विक विस्तार का दर्पण भी हैं। इन भाषा रूपों में प्रौढ़ साहित्यिक रचनाएं आज हो रही हैं और प्रवासी भारतीयों को अपने इन भाषा रूपों पर गर्व है।

अपनी भाषा हिंदी के प्रति निष्ठा, उसे प्रतिष्ठित करने की उत्कट लालसा भी सर्वत्र दिखेगी। उनकी यही उत्कट लालसा हिंदी को बचाए हुए है।

हिंदी के प्रति मॉरीशस के कवि मुनीश्वर लाल चिंतामणि की निष्ठा की गहराई देखिए—

"उस आदमी से जाकर कहो कि
मेरी हिंदी भाषा
एक ऐसी खूबसूरत चीज़ है
जिसने मेरी संस्कृति को
अब भी बचाए रखा है,
मेरी हिंदी भाषा
एक ऐसी खूबसूरत चीज़ है
जिसने मेरी पहचान को
अब भी बनाए रखा है,
हिंदी जो गई तो मैं समझूंगा,
संस्कृति भी गई,
हिंदी जो गई तो मैं समझूंगा,
अपनी पहचान भी गई।"

—मुनीश्वर लाल चिंतामणि, 'मेरी हिंदी'

सम्पर्क : 73, वैशाली, पीतमपुरा, दिल्ली-110034
ई-मेल : vimleshkanti@gmail.com

सभी प्रवासी भारतीय विदेश में अपनी भाषा की रक्षा, संरक्षण और प्रतिष्ठा के लिए सचेष्ट हैं, यही कारण है कि सर्वत्र विदेश में जहां-जहां भारतीय प्रवासी या आप्रवासी रूप में गए हैं वे हिंदी बोलने का प्रयत्न करते हैं और अपनी भाषा और संस्कृति पर उन्हें गर्व है। अब वे अपनी अगली पीढ़ी को भी हिंदी सिखाना चाहते हैं। क्योंकि वही हिंदी उनको विदेश में जोड़ने वाली सबसे बड़ी ताकत है।

भारत की परिनिष्ठित और मानक हिंदी का प्रवासी भारतीय सम्मान करते हैं, विद्यालयों में छात्र माध्यम के रूप में इसे सीख भी रहे हैं, सृजनात्मक अभिव्यक्ति का वह माध्यम भी बन रही है पर वहां का प्रबुद्ध वर्ग अपनी हिंदी का समर्थन करता है क्योंकि वह उसमें अधिक अधिकार पूर्वक अपने को अभिव्यक्त करने में समर्थ पाता है। पर वहां का एक छोटा वर्ग जिसने भारत में आकर हिंदी सीखी हुई है वह अपनी वर्चस्विता सिद्ध करने के लिए उनकी और अपनी हिंदी को टूटी फूटी और भ्रष्ट कहकर उसका तिरस्कार और विरोध करता है। भाषा द्वैत या हिंदी के विविध भाषा रूपों को लेकर जो विवाद भारतीयों में आपस में पनप रहा है उसके प्रति भी बड़े लेखक सजग हैं। उन्हें लगता है कि यह आपसी विवाद हिंदी को ही कहीं लेकर न डूबे। यही कारण है कि सूरीनाम के वयोवृद्ध राष्ट्र कवि पंडित हरिदेव सहतू लिखते हैं—

"हम तोहके का बोली
बोली बोली
भाषा बोली
अवधी कि भोजपुरी
हम तोहके का बोली
सरनामी कि सरनामी हिंदी
हिंदुस्तानी कि सरनामी हिंदुस्तानी
हम तोहके का बोली
मानक हिंदी कि खड़ी बोली
टूटल भाषा कि एली गेली
हम तोहके का बोली
अपन भाषा में एक बात बोली
तोहसे भाषा में एक बात बोली
तोहसे हम्मे बहुत है प्यार
महतारी भाषा हमार।"

—हरिदेव सहतू, 'महतारी भाषा हमार'

फीजी, सूरीनाम और दक्षिण अफ्रीका जैसे देशों में जहां हिंदी का विस्तार और प्रसार संभव है वहां हिंदी का विरोध स्पष्ट दिखने लगता है। यह दो विचारधाराओं का पारस्परिक विरोधी हिंदी के विकास में बाधा उत्पन्न करता है।

भाषा सुरक्षित और सबल तब होती है जब वह सृजनात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम बनती है। लिखित अभिव्यक्ति के लिए भाषा पर अच्छा अधिकार होना आवश्यक है। यह अधिकार सायास सीखी हुई भाषा पर उतना कभी नहीं होता जितना अपनी मातृभाषा पर अधिकार होता है। प्रवासी भारतीयों के मध्य हिंदी का स्वरूप गिरमिट काल में जो बना वह उनकी अपनी बोलियों और भारतीय भाषाओं का सम्मिश्रित रूप था जिसमें स्थानीय भाषाओं के शब्द थे। अवधी और भोजपुरी भाषा क्षेत्र से आये अधिकांश गिरमिटियों की भाषा में कहीं भोजपुरी की प्रमुखता थी तो कहीं अवधी की। इन मिश्रित रूपों में फीजी में अवधी, काईबीती और अंग्रेज़ी भाषा का तथा सूरीनाम में अवधी, स्नागतों और डच का तथा नेताली में भोजपुरी के साथ अफ्रीकांस का मिश्रण हुआ और नए हिंदी भाषा रूपों का उदय हुआ जो फीजी बात, सरनामी तथा नेताली नामों से इन देशों में जाना जाने लगा। ये ही भाषा रूप उनकी सृजनात्मक अभिव्यक्ति के प्रभावशाली भाषा रूप हो सकते थे। फीजी बात में जिन फीजी के लेखकों ने, सरनामी में जिन सूरीनाम के लेखकों ने अपनी रचनाएं लिखीं उनको विश्वव्यापी ख्याति मिली और वे विश्वमंच पर हिंदी लेखक के रूप में प्रतिष्ठित हुए। फीजी के प्रो. सुब्रमणी ने फीजी बात में लिखकर तथा सूरीनाम के लेखक जीत नराईन, हरिदेव सहतू, अमर सिंह रमण, आशा राजकुमार, चित्रा गयादीन, श्रीनिवासी, रामनाथ सिवदीन आदि ने सरनामी में साहित्य सृजन कर वैश्विक साहित्यिक ख्याति तो अर्जित की ही अपनी कलात्मक, साहित्यिक और भाषिक प्रौढ़ता का परिचय दिया।

मुझे आज भी स्मरण है, फीजी से प्रकाशित पत्र 'शांतिदूत' साप्ताहिक में उसके संपादक श्री महेन्द्र चंद्र शर्मा 'विनोद' 'तिरलोक तिवारी' के छद्मनाम से प्रति सप्ताह 'थोरा हमरो भी तो सुनो' स्तंभ लिखते थे। यह स्तंभ भारतीयों के मध्य बड़ा लोकप्रिय था तथा सभी बड़े चाव से पढ़ते थे; किंतु शुद्धतावादी हिंदी-समर्थकों से यह नहीं देखा गया और उन्होंने स्तंभ का इतना विरोध किया कि स्तंभ के बंद होने की नौबत आ गई। स्तंभ बंद किए जाने की बात सुनकर तत्कालीन उपप्रधानमंत्री माननीय पंडित हरीश शर्मा, जो प्रतिष्ठित बैरिस्टर भी थे, उन्होंने 'पाठकों के पत्र' नामक स्तंभ में इस संबंध में लिखते हुए कहा—

"अबकी एक बात हम बताया देई जो 'थोरा हमरो भी तो सुनो' बंद भय तो तुम्हरे पेपर के बिक्किरी कमती होय जाइ। अब तुम्हीं सोचो कि तिवारी के लेख से 'शांतिदूत' पढ़ने वाले मजा लूटे हैं, ओह में फायदा है कि लेख बंद कर देव और बिक्किरी कमती होय जाइ ओह में।" ('शांतिदूत', साप्ताहिक, फीजी टाइम्स, सूवा, फीजी, 3 नवंबर, 1986)

प्रो. सुब्रमणी फीजी हिंदी को सृजनात्मक अभिव्यक्ति के लिए अधिक समर्थ समझते हैं इसीलिए उन्होंने अपना बृहत् उपन्यास 'डउका पुरान' फीजी हिंदी में लिखकर विश्वव्यापी ख्याति अर्जित की। अब उनका दूसरा बृहत् उपन्यास 'फीजी माँ' जो एक हज़ार से भी अधिक पृष्ठों का है और फीजी बात में लिखा गया है, प्रकाशनाधीन है। कवि जीत नराईन का मानना है कि सरनामी सूरीनाम वासियों के लिए सहज अभिव्यक्ति के लिए अधिक उपयुक्त है। वे देशवासियों को समझाना चाहते हैं कि वे अपनी महतारी भाषा में ही अधिक आत्मविश्वास से लिख सकते हैं। वे बड़े स्पष्ट शब्दों में लिखते हैं—

"सरनामी सरनाम के हिंदुस्तानियों की महतारी भाषा है। हिंदी सरनाम के खातिर एक परदेसी भाषा है... अइसे न समझो कि हम हिंदी से कोई लड़ाई करत हैं, ना, जो मांगे जउन भाषा सीखे ओके खुसी है। बाक़ी सरनाम के हिंदुस्तानियों की पहली भाषा सरनामी है कि ना—सरनामी भाइयो, अपन समाज पर भी मूड़ मारो। समाज बनावे के पहिला नींव अपन भाषा है।" (विमलेश कान्ति वर्मा, 'प्रवासी भारतीय हिंदी साहित्य', भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली-2016)

दक्षिण अफ्रीका के प्रो. रामभजन सीताराम जो देश के प्रतिष्ठित विद्वान हैं वे नेताली को एक दमदार भाषा के रूप में देखते हैं।

हिंदी के इन भाषिक रूपों पर विदेश के अनेक भाषा वैज्ञानिक कार्य कर रहे हैं, उन पर भाषिक दृष्टि से विश्लेषण हो रहा है, व्याकरण ग्रंथ लिखे जा रहे हैं, कोश ग्रंथ निरंतर बन रहे हैं किंतु भारतीयों में मध्य दिन-प्रतिदिन बोलचाल की भाषा होते हुए भी यह साहित्य की भाषा नहीं बन पा रही है। एक नया पनपता हिंदी वर्ग इन भाषा शैलियों का निरंतर विरोध करता भी दिखता है।

जहां तक मुझे पता है, प्रोफेसर सुब्रमणी द्वारा 'फीजी बात' में लिखित उपन्यास 'डउका पुरान' अकेली प्रधान साहित्यिक रचना है, जो पूर्ण कृति के रूप में उभर कर आई है। जिन अन्य कवियों ने 'फीजी बात' को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है, वे बहुत लोकप्रिय हुए हैं; किंतु प्रश्रय और प्रोत्साहन के अभाव में इसमें अधिक रचनाएं नहीं लिखी जा रहीं। आवश्यकता है इन शैलियों को पुष्ट करने की, जिससे इन देशों को साहित्यकार हिंदी की उत्तम रचनाएं दे सकें। इन भाषा रूपों की अवहेलना हिंदी के लिए घातक सिद्ध हो सकती है। रेडियो और टेलीफोन पर इनमें साहित्यिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रसारित हों, इसमें पत्रिकाओं का प्रकाशन हो। मानक हिंदी का अपना महत्व है। हिंदी का पाठ्यक्रम मानक हिंदी का होगा, शिक्षा का माध्यम मानक हिंदी ही रहेगा, पर बोलचाल की हिंदी के स्वत: विकसित सहज स्वरूप को बने रहने देने में ही हिंदी का हित निहित है और अच्छी साहित्यिक रचनाओं के लिए वही उर्वर भाषा भी है।

भारत में यह आम राय है कि विदेश में लिखा जा रहा हिंदी-साहित्य स्तरीय नहीं है और उसमें ऐसा कुछ नहीं है जो साहित्य में रुचि रखने वाले पाठक को अपनी ओर आकृष्ट कर सके। यह राय आमतौर पर उन लोगों की है, जिनका विदेशी हिंदी-साहित्य से परिचय नहीं है। यदि आप ऐसे लोगों से जिज्ञासा-भरे स्वर में यह पूछें कि महाशय, आपने यह राय कैसे बनाई तो उनके पास इसका कोई उत्तर भी नहीं है।

प्रवासी भारतीय लेखन को हिंदी-साहित्यिक जगत में मान्यता मिले, इसके लिए आवश्यक है कि इन लेखकों की अच्छी साहित्यिक रचनाएं विधिवत संपादित होकर भारत में अच्छे प्रकाशक द्वारा प्रकाशित हों, वे प्रबुद्ध पाठक तक पहुंचे, उनका समुचित मूल्यांकन हो तथा विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में अन्य भारतीय लेखकों के साथ उन्हें स्थान मिल सके और उनका साहित्य पढ़ा जाए। इतना ही नहीं अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर इन रचनाओं को उपयुक्त सम्मान तभी प्राप्त होगा जब ये उस देश में सम्मानित होंगी जिस भूमि पर वे लिखी गयी हैं। इसलिए आवश्यक है कि इन रचनाओं का विदेशी भाषाओं में अनुवाद भी हो जिससे उनका नए परिवेश में सही आकलन हो सके।

आज हमें यह समझना चाहिए कि विश्व की अनेक भाषाएं लुप्त होने के कगार पर हैं। हमारे प्रोत्साहन और प्रश्रय के अभाव में त्रिनिदाद में हिंदी लुप्त हो गयी, गुयाना में हिंदी लुप्त हो गयी, दक्षिण अफ्रीका में हिंदी लुप्त होने के कगार पर है। मॉरीशस में हिंदी का स्थान धीरे-धीरे किर्योली लेती जा रही है। यही स्थिति फीजी और सूरीनाम में भी होगी यदि समय रहते हमने इन हिंदी के विविध रूपों पर ध्यान नहीं दिया। हम जानते हैं कि भाषा मात्र अभिव्यक्ति का माध्यम ही नही होती वह एक समाज की संस्कृति का दर्पण भी होती है। संस्कृति की रक्षा यदि हम चाहते हैं तो उस भाषा की रक्षा भी उतनी ही आवश्यक है जिसमें उसकी संस्कृति प्रतिबिंबित होती है।

भारत सरकार हिंदी को एक विश्वभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करना चाहती है और यह तभी संभव होगा जब हम प्रवासी भारतीयों की अपनी भाषा जिसे वे 'महतारी भाषा' कहते हैं उसके संरक्षण और संवर्धन का हम प्रयत्न करेंगे। फीजी की यूनिवर्सिटी ऑफ़ साउथ पसिफ़िक के अंग्रेज़ी विभाग के प्रोफेसर और प्रतिष्ठित हिंदी साहित्यकार प्रो. सुब्रमणी अपने एक साक्षात्कार में कहते हैं कि यदि फीजी हिंदी लुप्त होती है तो प्रवासी संस्कृति के लुप्त होने का भी खतरा है और यह भाषा लोप का खतरा आज फिजी बात, सरनामी तथा नेताली सभी पर मंडरा रहा है।

यदि भारत चाहता है कि हिंदी वैश्विक स्तर पर महत्वपूर्ण भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो तो इन भाषा रूपों को पुष्ट करना होगा और इनकी रचनात्मक निधियों को मान्यता देनी होगी, उनके विकास और प्रसार के उपाय खोजने होंगे। वैश्विक हिंदी के संदर्भ में आज सबसे बड़ी चुनौती हिंदी की इन शैलियों को लुप्त होने से बचाना तथा इनके संरक्षण और संवर्धन का प्रयत्न है।

"हमारी नागरी लिपि दुनिया की

सबसे वैज्ञानिक लिपि है"

—पं. राहुल सांकृत्यायन

गिरमिटिया हिंदी कविता में भारतीय संस्कृति

प्रो. हरिमोहन

"...भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम एवं सर्वाधिक समृद्ध संस्कृति है। काल के थेपेड़ों में भी यह चिरकाल से जीवित है, जिसका मूल कारण है इस संस्कृति की उदार एवं समन्वयवादी प्रकृति। अन्य अनेक संस्कृतियों के सम्पर्क में आने, उनके साथ सहकार और समन्वय बनाते हुए भी भारतीय संस्कृति ने अपनी मूल आत्मा को सुरक्षित रखा है। यही कारण है कि विश्वभर में भारतीय मूल के लोग बसे हुए हैं और अपनी संस्कृति को जीवित रखे हुए हैं। ..."

सम्पर्क : कुलपति, जे.एस. विश्वविद्यालय,
शिकोहाबाद (फिरोजाबाद)-283135 (उ.प्र.)
आवास: 27, सिंडिकेट बैंक कॉलोनी, गैलाना रोड, आगरा-282007
ई-मेल: profharimohan@gmail.com

गिरमिटिया मजदूर यानी, एग्रीमेंट पर विदेशी धरती पर ले जाए गए भारतीय श्रमिक। ये वे प्रवासी हैं, जिन्होंने यातनाएँ सहकर विदेशी बंजर जमीन को सोना उगलने वाली शस्य-श्यामला भूमि बनाया। उन देशों की समृद्धि में इनका बहुत बड़ा योगदान है। जब हम 'प्रवासी' साहित्य की बात करते हैं, तब इनकी रचनाएँ हमारे सामने स्वत: ही आ जाती हैं। वैचारिक दृष्टि से हिंदी में 'प्रवासी साहित्य' (कुछ अध्येताओं के लिए 'आप्रवासी'/'डायस्पोरा') अपेक्षाकृत एक नया साहित्यिक विमर्श है, जैसे दलित विमर्श, स्त्री-विमर्श या आदिवासी विमर्श है। इतिहास में झाँकें तो हम देखते हैं कि किसी समाज के लोगों या उनके पूर्वजों का किसी केंद्र (अपनी जन्मभूमि) से दो या अधिक भागों में फैलना केवल भ्रमण की इच्छा से नहीं हुआ; विशेष परिस्थितियों में भी हुआ है, और वे आप्रवासी बनकर रहते हैं। आप्रवासी होने के मूल में राजनीतिक, आर्थिक (या व्यापारिक) और धार्मिक आदि अनेक कारण हैं। 'डायस्पोरा' की अवधारणा के अध्ययनकर्ताओं ने 'पीड़ित की परंपरा' के साथ-साथ 'स्वैच्छिक विस्थापन' की भी चर्चा की है। जो रोजगार की खोज, व्यापार की तलाश में या औपनिवेशिक महत्वाकांक्षाओं के कारणों को रेखांकित करते हैं। हिंदी में प्रवासी साहित्य के व्यवस्थित अध्ययन के शलाका पुरुष डॉ. कमल किशोर गोयनका जी का यह मत महत्वपूर्ण है कि, "हिंदी में अब प्रवासी साहित्य एक स्वीकृत तथा लोकप्रिय अवधारणा है और भारतेतर हिंदी साहित्य की पहचान अब दो रूपों में होती है—भारतीयों का साहित्य और भारतवंशियों का साहित्य।... दो भिन्न धाराएं होने पर भी प्रवासी भारतीयों तथा उनके वंशजों का हिंदी साहित्य, प्रवासी भारतीय संवेदना एवं चेतना का व्यापक परिदृश्य प्रस्तुत करता है, जिसे भारत और भारतीयता के विस्तार के रूप में देखा जाना चाहिए।" (गोयनका, 2015, पृ. 8)

अपने इस आलेख में प्रवासी हिंदी साहित्य, मुख्यत: 'गिरमिटिया' समाज की कविता में संचरित भारतीय संस्कृति की छवियों को देखने की चेष्टा की है, जो मूलत: 'श्रमिक डायस्पोरा' का हिस्सा है; और जिसमें भारतीय गिरमिटिया श्रमिकों की जीवन-गाथा है। उनकी जीवन जय-यात्रा है। भारतीय डायस्पोरा का यह रूप और उससे उद्भूत साहित्य 19वीं सदी की औपनिवेशिक शासकों ने भारतीय श्रमिकों की एक बड़ी जनसंख्या को अपनी भूमि, भाषा और संस्कृति से काटकर विस्थापित होने के लिए बाध्य किया—उसका जीवंत आख्यान है।

प्रवासी/आप्रवासी की अवधारणा घुली-मिली है। प्रवास की चर्चा होते ही वासी, आप्रवासी, विदेशी और एन.आर.आई. आदि शब्द उभरने लगते हैं। वासी वह हैं, जो पीढ़ियों से अपनी जन्मभूमि पर निवास कर रहे हैं। आप्रवासी व्यक्ति उस देश में रह रहा होता है, जो मूलत: उसका अपना नहीं है; जो स्थान उसकी जन्मभूमि से दूर होता है। साथ ही ऐसा

व्यक्ति निश्चित समय के लिए अपनी मातृभूमि, अपना देश छोड़कर बेगाने देश में रहता है और समय बीत जाने के पश्चात् प्राय: वापस लौट आता है। उस अजनबी देश में ऐसे व्यक्ति को वहां ज़मीन खरीदकर घर बनाने का कानूनी अधिकार प्राप्त नहीं होता, और न समान नागरिकता मिली होती है। लेकिन इसकी व्याख्या यह भी मिलती है कि प्रवासी लोग वे हैं जो अपना देश छोड़कर किसी विपरीत परिस्थिति में या स्वेच्छा से किसी बेगाने देश में चले जाते हैं और उसी देश में बस जाने का निर्णय ले लेते हैं। उस बेगाने देश में उनको सारे कानूनी अधिकार प्राप्त रहते हैं। इनमें से कुछ ऐसे भी होते हैं, जो अपने मूल देश से किसी न किसी रूप में जुड़े रहते हैं और जिनको दूसरे देश में गए हुए पीढ़ियों जितना अधिक समय नहीं हुआ होता। ऐसे लोग प्राय: एन.आर.आई. की श्रेणी में आते हैं। इनके लिए अलग-अलग देशों में अपने-अपने कानून हैं। इस प्रकार 'प्रवासी' जन किसी श्रेणी के हों, अपनी मातृभूमि के प्रति एक आत्मिक लगाव रखते हुए, दूसरे (बेगाने या अजनबी) देश के प्रति भी गंभीर रूप से समर्पित भाव रखते हैं और उस देश की उन्नति में अपना योगदान देते रहते हैं। यहाँ इस पर विस्तार से चर्चा की आवश्यकता नहीं है।

व्यापक रूप से तो हम सब किसी न किसी रूप में प्रवासी ही हैं; क्योंकि मनुष्य ने लाखों करोड़ों वर्ष पूर्व बेहतर जीवनयापन के लिए जंगलों, पहाड़ों, नदियों को पार कर अपने आवास के लिए उपयुक्त स्थलों का चुनाव किया उनको विकसित किया और रहने योग्य बनाया। विपरीत प्राकृतिक परिस्थितियों में वे विस्थापित हुए और इतिहास में ऐसी घटनाएं दर्ज हैं कि अनेक जातियों ने दूसरी जातियों को खदेड़कर उनके निवास स्थलों/प्रदेशों/देशों पर अधिकार कर लिया। ये सब बहुत प्राचीन और मानव विकास की लंबी प्रक्रिया है।

आधुनिक युग की विकास-प्रक्रिया के कई रूप हैं। इनमें से एक चर्चित रूप औपनिवेशिक अधिकार का भी है। जब आप्रवासी जीवन और साहित्य के अध्ययन का प्रश्न शुरू हुआ तो 'डायस्पोरा' की चर्चा हुई। अकादमिक दुनिया में यह चर्चा उत्तर-औपनिवेशिक विमर्शों के आरम्भ से जुड़ी हुई है। प्रथम विश्व युद्ध (1914-1918) के समय तक यूरोपीय साम्राज्य विश्व के लगभग 85 प्रतिशत तक फैला हुआ था। दूसरे विश्व युद्ध (1939-1945) के पश्चात् इन यूरोपीय साम्राज्यों का तेजी के साथ विघटन शुरू हुआ; क्योंकि उपनिवेशित समाजों ने उनसे मुक्ति का आह्वान करते हुए उनका व्यापक विरोध किया। इसी क्रम में 'डायस्पोरा' शब्द का व्यापक प्रयोग धीरे-धीरे प्रचलित होने लगा। समाज विज्ञान के अध्येता इस नए विषय की ओर आकर्षित हुए। प्रवासी समाज और समाज का अध्ययन शुरू हो गया। विलियम सैफरन का नाम इस विषय के आरम्भिक अध्येताओं में आता है, जिन्होंने डायस्पोरा के 'आरंभिक सिद्धांत' निर्मित करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन्होंने वाकर कोन्नोर की एक परिभाषा—'अपने देश से बाहर रह रहे नागरिकों का समूह' को केंद्रित करते हुए इसमें अंतर्निहित मूल प्रवृत्तियों को रेखांकित किया, जो इस प्रकार हैं—

— नागरिकों या उनके पुरखों का किसी केंद्र से दो या अधिक हिस्सों में फैलना।

— मूल देश के बारे में उसके इतिहास की सामूहिक स्मृति, कल्पना या मिथक का बने रहना।

— जिस देश में जाकर बसे वहां के समाज द्वारा स्वीकार न किए जाने के कारण अलगाव या असम्पृक्त रह जाने की भावना।

— इस भावना की मजबूत पैठ कि, पूर्वजों का 'मूल देश' ही उनका सच्चा आदर्श आवास है जहां उन्हें या उनकी अगली पीढ़ियों को अंतत: लौट जाना है।

— मूल देश के रख-रखाव और पुनरोद्धार के प्रति जिम्मेदारी का भाव जिससे वहां सद्भाव स्थापित हो सके।

— मूल देश के अस्तित्व के ही संदर्भों में अपनी 'जातीयता को परिभाषित करना।'

—(उद्धृत, सिंह, रवि प्रकाश, 2014, पृ. 15)

इन प्रवृत्तियों की अपनी सीमा है। विलियम सैफरन द्वारा निर्दिष्ट ये विशेषताएं 'निर्वासन' और 'मूल देश' की अपरिवर्तनीय अवधारणाओं से जुड़ी हुई हैं। शुरू के ऐसे अध्ययन प्राय: यहूदियों के निर्वासन से पैदा हुए अनुभव के आसपास ही रह जाते हैं। कालांतर में इनमें विस्तार हुआ। रोबिन कोहेन ने अपनी पुस्तक 'ग्लोबल डायस्पोरा: एन इंट्रोडक्शन' में विलियम सैफरन की धारणाओं को आगे बढ़ाया।

इसी क्रम में रोबिन कोहेन के सामने इस शब्द की दावेदारी रखने वाले और भी नए समुदाय आगे आ गए थे, जिसके आधार पर उन्होंने 'परंपरागत डायस्पोरा' से स्वयं को अलगाते हुए यह वर्गीकरण दिया—

— **पीड़ित डायस्पोरा**—यहूदी, अफ्रीकी, अर्मेनियाई, फिलिस्तीनी, आयरिश और वर्तमान समय में कई शरणार्थी समूहों को इसमें सम्मिलित किया जाता है।

— **श्रमिक डायस्पोरा**—भारतीय गिरमिटिया मज़दूर, चीनी मज़दूर, उत्तरी अफ्रीकी मज़दूर, जापानी मज़दूर।

— **साम्राज्यवादी डायस्पोरा**—ब्रिटिश, फ्रेंच, डच, पुर्तगाली अर्थात् समस्त औपनिवेशिक शक्तियां।

— **व्यापारिक डायस्पोरा**—लेबनानी, वेनेशियन, जापानी और भारतीय व्यापारी।

— **विक्षेत्रिकृत डायस्पोरा**—कैरैबियाई, सिंधी, पारसी, हाइब्रिड, सांस्कृतिक और उत्तर औपनिवेशिक विमर्शों से जुड़े हुए अध्ययन मूलत- इसी विभाजन से जुड़े हुए हैं।

इस संभावना के साथ कि हो सकता है 'लेबर डायस्पोरा' एक ही समय में 'विक्टिम डायस्पोरा' भी हो।

—(उद्धृत, सिंह, रवि प्रकाश, 2014, पृ. 19)

इस प्रकार भारतीय डायस्पोरा का आरंभिक हिस्सा 'लेबर डायस्पोरा' की श्रेणी में आयेगा। यह 19वीं शताब्दी की परिघटना है।

हम अपने अध्ययन के लिए मुख्यत: गिरमिटिया देशों मॉरीशस, फीजी तथा सूरीनाम की स्थिति पर ही ध्यान देंगे। यह इसी श्रेणी का डायस्पोरा है और इसका साहित्य उसी विडम्बना का दस्तावेज़ है।

प्रवासी गिरमिटिया हिंदी कविता में भारतीय संस्कृति का इंद्रधनुष—यह संयोग ही है कि हिंदी में प्रवासी साहित्य का आरम्भ मॉरीशस के हिंदी साहित्य या मॉरीशस में रह रहे प्रवासी भारतीयों के जीवन-चित्रण केंद्रित रचनाओं से माना गया है। डॉ. कमल किशोर गोयनका कहते हैं, "इसका आरम्भ प्रेमचंद की 'यही मेरी मातृभूमि है' (1908) तथा 'शूद्रा' (1926) कहानियों से होता है। इन कहानियों में अमेरिका से लौटे भारतीय प्रवासी तथा मॉरीशस ले जाए गए भारतीय गिरमिटिया मज़दूरों की कहानियां हैं।" (गोयनका, 2010, पृ. 1)

यहाँ हम फीजी, मॉरीशस तथा सूरीनाम की प्रवासी हिंदी कविता में संचरित भारतीय संस्कृति के मूल तत्त्वों पर दृष्टिपात करेंगे जो उपर्युक्त वर्गीकरण के प्रथम वर्ग में आती है। अर्थात् गिरमिटिया मज़दूरों की कविता।

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम एवं सर्वाधिक समृद्ध संस्कृति है। काल के थेपेड़ों में भी यह चिरकाल से जीवित है, जिसका मूल कारण है इस संस्कृति की उदार एवं समन्वयवादी प्रकृति। अन्य अनेक संस्कृतियों के सम्पर्क में आने, उनके साथ सहकार और समन्वय बनाते हुए भी भारतीय संस्कृति ने अपनी मूल आत्मा को सुरक्षित रखा है। यही कारण है कि विश्वभर में भारतीय मूल के लोग बसे हुए हैं और अपनी संस्कृति को जीवित रखे हुए हैं। उनके जीवन, कला और साहित्य में इस संस्कृति का 'इंद्रधनुष' दीप्त है। इंद्रधनुष अर्थातृ सात रंगों का वैशिष्ट्य! आइए देखते हैं क्या हैं भारतीय संस्कृति की ये मुख्य सात विशेषताएं, जिनको हम गिरमिटिया मज़दूर भाइयों की हिंदी कविता में संचरित पाते हैं?

■ **प्राचीनता**—भारतीय संस्कृति की प्राचीनता सभी ने स्वीकार की है। हज़ारों वर्षों का इसका जीवन है। इस तथ्य से प्रवासी कवि परिचित हैं और इस पर उनको गर्व है। भारतीय होने का उनको अभिमान है। विश्वभर में भाईचारा हो, इस दिव्य भावना के साथ वे अपने भारतीय होने को गौरव का विषय मानते हैं। इस गौरव की अभिव्यक्ति फ़िजी, मॉरीशस तथा सूरीनाम तीनों ही देशों के कवियों की कविताओं में हुई है। यथा—फ़ीजी की हिंदी कवयित्री अमरजीत कौर कहती हैं:

"हिमालय पर्वत का हम बेटा/गंगा मैया की बिटिया
नाम दोनों का अमर सदा है/न कभी गिरा, न मिटिया
देह हमरी में गंगा जल था/हिमालय ने दी शक्ति
तब अत्याचार मिटाने ख़ातिर/बन गए हम गिरमिटिया।"

—(वर्मा, 2012 : 68)

इसी तरह मॉरीशस की कवयित्री सुमति बुधन का भारत-प्रेम इन पंक्तियों में अभिव्यक्त हुआ है, जो भारतीय संस्कृति के प्राचीन वैभव को रेखांकित करता है:

"जिसकी गोद से निकलता रोज़ नया सूरज
जिसकी हवा में गूंजे वेद-गीता का ज्ञान
जिसकी धरती पर मचले गंगा की अमृत-धारा
जिसकी कथा में हो हिमालय की उन्नत शान
उस भारत को है बार-बार हमारा नमस्कार।
जहां पुरुष हो राम और कृष्ण-सम
जहां स्त्री हो सीता और सावित्री-सम
जहां मित्र हो कृष्ण और सुदामा-सम
जहां भक्त हों हनुमान और प्रह्लाद-सम
उस भारत को शीश झुकाएं हम बार-बार।"

—(वर्मा, 2016 : 154)

वहीं सूरीनाम के कवि चंद्रमोहन रणजीत सिंह इस दिव्य संस्कृति के प्रसार-प्रचार हेतु आह्वान करते दिखाई देते हैं:

"सुजन जन प्रेम दीप जलावो।
शुद्ध संस्कृति फुलवारी को धरती बीच सजावो।
हर मानव तक शुभ सौरभ को, प्रमुदित हो पहुंचावो॥...
...वेद शास्त्र गीता रामायण, का संदेश सुनावो।
सुरभित हो सुरीनाम हमारा, शांति हृदय में पावो॥"

—(अवस्थी, 2014 : 113)

इसी देश के कवि सुरजन परोही का कथन है:

"भारत ने/कभी नहीं छोड़ी/अपनी प्राचीनता
सूरीनाम में/कैसे छोड़ दें—मूल भारतीय
अपनी मौलिकता/और संस्कृति।"

—(अवस्थी, 2014 : 214)

■ **निरंतरता**—भारतीय संस्कृति प्राचीन काल से निरंतर प्रवहमान है। इस निरंतरता और प्रवहमानता का एक जीवंत रूप हमें नदियों, तुलसी, वट, पीपल जैसे वृक्षों, सूर्य तथा अन्य प्राकृतिक देवी-देवताओं की सदियों से चली आ रही पूजा-अर्चना में दिखाई देता है। हवन, पूजा-पाठ, वेदों-पुराणों के प्रति श्रद्धा-भाव, आस्था और विश्वास, गीता-उपनिषदों एवं रामायण के प्रेरक संदेश हमारे समाज के मार्गदर्शक हैं। जीवन-मूल्यों तथा संतों की वचनावलियों ने हज़ारों वर्षों से निरंतर हमारा पथ-प्रदर्शन किया है। युग परिवर्तन के बाद भी आज भी भारतीय समाज में इन मूल्यों तथा चिंतन प्रणाली का महत्त्व बना हुआ है। प्रवासी भारतीयों के

लिए भी ये सभी समान रूप से प्रेरक हैं। इस दृष्टि से हम प्रवासी हिंदी कविता के कुछ उदाहरण देखें।

फ़ीजी के सुप्रसिद्ध हिंदी कवि पं. कमलाप्रसाद मिश्र की एक कविता का यह अंश गिरमिटिया मज़दूरों के सम्बल के रूप में हमारे धर्मग्रंथों के प्रति आस्था को दर्शाता है:

"कोई रामायण बांच रहा कोई लेकर सत्यनरायण आया
ख़ूब किया उसका सम्मान कोई अनजान जो आंगन आया।"

—(वर्मा, 2012 : 85)

इसी तरह कवि राघवानंद शर्मा कहते हैं:

"हर गांव में रामायण की गूंज सुनाना।
घर-घर पे हनुमान के झंडे फहराना।
भारतीयों का शान से भारतीय कहना।
फखर से हर कौम में अपने सर को उठाना।
शायद हमारे, नसीब ये न होते।
जड़ मजबूती से अगर तुम जमाए न होते॥"

—(वर्मा, 2012 : 130)

मॉरीशस में भी तुलसी बिरवा, रामायण और हनुमान आदि का उतना ही महत्त्व है; जितना सभी देशों के भारतीयों के यहाँ है। मां गंगा तो वहां के समाज का जीवन है। परी तालाब और उसके तट पर बना भव्य शिव मंदिर आज विश्व प्रसिद्ध है, जो वहां के समाज की आस्था का जीवंत प्रतीक है। भारतीय नैतिक मूल्यों और जीवन मूल्यों के प्रति मॉरीशसवासियों का दृष्टिकोण न केवल हमारे यहाँ की तरह ही है, बल्कि कई स्तरों पर हम से अधिक सकारात्मक है। इस संदर्भ में मॉरीशस के कुछ कवियों की रचनाएं देखें।

हीरालाल गुप्त की पंक्तियां हैं:

"ज्ञान घटै जड़ मूढ़ की संगत,/ध्यान घटै बिन धीरज आए।
मान घटै जब की कछु मांगहु,/चाह घटै नित के घर आए॥
प्रीत घटै जो कठोर बहै बोलहु,/रीति घटै मुंह नीच लगाए।
उद्यम कीन्हैं दरिद्र घटै अरु,/पाप घटै प्रभु के गुण गाए॥"

—(वर्मा, 2016 : 177)

हेमराज सुंदर दार्शनिक मुद्रा में जगत् की क्षणभंगुरता कुछ इस तरह व्यक्त करते हैं:

"सांसारिक पदार्थ/हमें शाश्वत आनंद/एवं स्थायी शांति
प्राप्त कराने में/असमर्थ होते हैं/क्योंकि—
ने नश्वर हैं/और क्षणिक भी।"

—(सुन्दर, 2013 : 11)

सूरीनाम के कवि मुंशी रहमान ख़ान मानवता समर्थक धर्म के कवि हैं। उनकी कविताओं में शिक्षाप्रद दोहे और कुंडलियां विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। भक्ति, सत्य, तीर्थ, ज्ञान, दान आदि पर उन्होंने अच्छी रचनाएं लिखी हैं। यथा:

"सत्य अटल है जगत महँ सत्य धर्म का खंभ।
सत्य की दासी लक्ष्मी सत्य बँधे सुरब्रह्म॥
सत्य बँधे सुरब्रह्म सत्य से ईश्वर राजी।
सत्य सरवरी तप नहीं सत नहिं हारै बाजी॥
कहैं रहमान स्वर्ग है सत से देवै नर्क असत्य।
भव सागर तरना चहहु उर धारहु नित सत्य॥"

—(अवस्थी, 2014 : 84)

भारतीय संस्कृति में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम, श्रीकृष्ण तथा शिव आदि देवों और माँ सीता, देवी पार्वती आदि का विशेष स्थान है। इनके प्रति समाज की गहरी आस्था है। भारत में ही नहीं; विश्व के किसी भी देश में रहने वाले भारतीय इनके प्रति समान भाव से आस्था रखते हैं। फ़ीजी, मॉरीशस एवं सूरीनाम के प्रवासी इसके अपवाद नहीं हैं। यही कारण है कि इन देशों के कवियों की कविताओं में इनका पर्याप्त उल्लेख हुआ है। यथा:

फ़ीजी के कवि अपनी कई कविताओं में कन्हैया का वर्णन करते हैं:

"हमारे ऐसे कुँवर कन्हैया॥
जिनकी कीरति दुनिया गाती।
मन मंदिर की ज्योति जगाती॥
मचती ता ता थेइया।
हमारे ऐसे कुँवर कन्हैया॥"

—(वर्मा, 2012 : 102)

मॉरीशस के कवि लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी 'रसपुंज' ने अपनी कविताओं में श्रीराम, शिव शक्ति आदि का मनोयोगपूर्वक स्तवन किया है। इनमें से एक की कुछ पंक्तियाँ देखें:

"जय जय त्रिपुरारी, भव भय हारी,/मंगल कारी पाहि हरे।
कैलास विहारी, रति पति मारी,/शैल सुता शुभ पाणी धरे॥"

—(वर्मा, 2016 : 13)

सूरीनाम के कवि चंद्रमोहन रणजीत सिंह की कविता मूलत: भक्ति केंद्रित है। अत: स्वाभाविक रूप से उनके यहाँ देवी-देवताओं के पूजा-अर्चन का स्वर मुखरित है। अपनी एक रचना में वे मर्यादा पुरुषोत्तम प्रभु राम के प्रति अपने भाव सुमन इन पंक्तियों में अर्पित करते हैं:

"चैत्र मास के नौमि तिथि, इसलिए हमें है प्यारा।
इसी दिवस श्रीरामचंद्र ने, सुंदर नर तन धारा॥"

—(अवस्थी, 2014 : 114)

प्रवासी कविता में एक बात विशेष रूप से लक्षित करने की है, वह यह कि इस कविता में पौराणिक संदर्भ बहुत प्रयुक्त हुए हैं। इससे वर्तमान

स्थितियों को नई चमक मिल गई है। कहीं-कहीं व्यंग्य भी जीवंत हो उठे हैं। यथा:

फ़ीजी के हिंदी कवि जोगिंदर सिंह कंवल अपनी एक लम्बी कविता में लिखते हैं:

"आ तुलसीदास तू/छेड़ अनोखा गायन
इन रामों को आज फिर/लिख नई रामायन
तेरे राम को मिला था/चौदह वर्ष वनवास
रामचरितमानस लिख दिया/बन कर उनका दास
अपने रामों को बीत गए/सौ से ऊपर साल
फिर भी भटकन भाग्य में/कैसी समय की चाल...."

—(वर्मा, 2012 : 116)

इसी तरह इसी देश के कवि रामनारायण अपनी एक कविता में मंथरा के चरित्र पर लिखते हैं:

"हाँ, मैं मंथरा हूँ।/कलंकित और घृणा के सागर में डूबी
मानस की उपहासित पात्र/कुरूप, कुबड़ी और कुमति
जैसे विशेषणों से विभूषित/ताड़न की अधिकारी नारी पात्र।....
...राम के रामत्व की निर्मात्री/अहिल्या की उद्धारक/
केवट का अहोभाग्य
शबरी का जीवन-स्वप्न/जटायु की मुक्ति दात्री।
मैं हूँ दासी रूप/सरस्वती-स्वरूप/शक्ति की प्रतीक
वाणी अनूप/मंथरा/हाँ मैं मंथरा हूँ।"

—(वर्मा, 2012 : 132 एवं 134)

मॉरीशस के कवियों में भी पौराणिक संदर्भों की बहुतायत है। देखें:

"स्वांग भरते मृग के पीछे/धनुष साधे बेतहाशा
और कब तक दौड़ते रहें हम?
उसकी धूल को/और कब तक अपने माथे लगाते रहें हम?
...मृग मरीचिका का खेल/खत्म करें
और/नई पीढ़ी को/छली मृग से बचाएँ॥"

—हेमराज सुंदर, (वर्मा, 2016 : 187-188)

सूरीनाम के कवियों में भी यह वैशिष्ट्य समान रूप से दिखाई देता है। यथा:

"रावण चूका मूर्ख बन, हर्यो सिया सम नार।
बैर बढ़ो रघुनाथ सों, भयो वंश अंधियार॥
...पंचवटी में चुक गई, सूर्पणखा धर रूप।
कान, नाक दोनों कटी, हो गई अधिक कुरूप॥"

—चंद्रमोहन रणजीत सिंह (अवस्थी, 2014 : 118)

■ **सहिष्णुता**—भारतीय संस्कृति में अद्भुत लचीलापन है। यह इसके हृदय की विशालता है। इसी प्रकृति के चलते हमारी संस्कृति सुदीर्घजीवी बनी हुई है। भारतीयों ने सभी धर्मों तथा संस्कृतियों का हमेशा सम्मान किया है। विश्व की शायद ही ऐसी कोई संस्कृति हो, जिसमें इतनी सहनशीलता है, जितनी भारतीय संस्कृति में है। भारतीय हिंदू किसी भी देवी-देवता की पूजा करने के लिए स्वतंत्र हैं। किसी भी प्रकार की पूजा-पद्धति अपनाने के लिए स्वतंत्रता है। यहाँ कट्टरता के लिए कोई स्थान नहीं है। सही अर्थों में भारतीय संस्कृति की दृष्टि में हिंदू धर्म एक कट्टर धर्म न होकर, जीवन-पद्धति है, जो मूल्यों पर आधारित है।

फ़ीजी के कवि राघवानंद शर्मा की एक कविता में हिंदू धर्म के साथ-साथ अन्य धर्मों के सम्मान की बात कही गई है:

"क़ुरान और गुरु ग्रंथ की इज़्ज़त समान है।
फ़ीजी में सभी धर्म और मजहब समान है।
मजहबी दुराव का न कोई स्थान है।
सारे जहाँ में इसलिए यह मुल्क महान है।
एकता की बंसी हम बजाए न होते।
प्रेम-ज्योति अगर तुम जलाए न होते॥"

—(वर्मा, 2012 : 130)

पं. कमलाप्रसाद मिश्र अपनी एक कविता में सत्य एवं अहिंसा के प्रति अपनी आस्था प्रकट करते हुए लिखते हैं:

"हिंसा है पशुता का प्रतीक/जो जीवन में विष उपजाती,
है सत्य-अहिंसा शुभ्रज्योति/जो मानवता में द्युति लाती।"

—(वर्मा, 2012 : 87)

मॉरीशस के तो प्राय: सभी कवियों ने व्यापक सहिष्णुता एवं अपने देश के प्रति सम्मान का भाव प्रकट किया है। कुछ उदाहरण यहाँ देखे जा सकते हैं:

"मैं वह लम्बा इतिहास हूँ/जिसे अब याद नहीं रहे
वे पुराने दिन लेकिन/सामने का मुड़िया पहाड़
अपने हैं शत्रु भी सारे/ ...हिंद महासागर भी अपना है।"

—अभिमन्यु अनत (वर्मा, 2016 : 44)

"छोटा हिंदुस्तान मारिस छोटा हिंदुस्तान।
इस वसुधा के सभ्य निवासी, तीन लाख हैं भारतवासी।
मुक्ति के हैं सब अधिकारी, निर्बल हों या बलवान॥"

—ब्रजेंद्र कुमार भगत 'मधुकर' (वर्मा, 2016 : 78)'

इसी तरह सूरीनाम के कवियों में यह भाव गहरे तक संचरित है। मार्तिन हरिदत्त लक्ष्मन श्रीनिवासी की एक कविता का अंश बहुत ही मार्मिक है:

"ये देश/चूमने के लिए है/अपनी साँसों से
सबके हृदय को खुश रखता है

इसकी मिट्टी में हैं/तुम्हारे शब्द/तुम्हें जगाने के लिए कि
भविष्य में/तुम और अद्वितीय बनो।"

—(अवस्थी, 2014 : 180)

उन्हीं की एक कविता अन्य धर्मस्थल (गिरिजाघर) के प्रति सम्मान का भाव दर्शाती है, जो सहिष्णुता का आदर्श उदाहरण है:

"मैं जानता हूँ कि / साथ में जुड़े हुए ये हाथ
मेरे माथे के विरुद्ध/आशीर्वाद हैं/तुम्हारे समक्ष
झुक कर प्रणाम करते हैं/ऊँ ईशु क्रीस्ट...."

—(अवस्थी, 2014 : 174)

■ **ग्रहणशीलता**—अन्य संस्कृतियों से अच्छे-अच्छे तत्त्वों को ग्रहण करने की प्रवृत्ति भारतीय संस्कृति को लचीला और अनूठा बनाती है। उसकी समृद्धि का एक बड़ा कारण यह ग्रहणशीलता भी है। सहिष्णुता एवं उदारता के कारण यह ग्रहणशीलता सहज स्वाभाविक है। देखा गया है कि जिस संस्कृति में लोकतंत्र के आधार व्यापक हों, उस संस्कृति में ग्रहणशीलता की प्रवृत्ति स्वत: विकसित हो जाती है। इस ग्रहणशीलता का एक अनूठा पक्ष यह है कि विदेशी संस्कृतियों के लोग; यथा शक, हूण, यूनानी, कुषाण जैसी प्रजातियों के लोग; समय-समय पर यहाँ आये तो भारतीय मूल के लोगों के साथ समन्वय स्थापित कर उनके साथ घुल-मिल गए। हमने मुक्त हृदय से उनको अपना लिया। वे अपनी पहचान खोकर हमारे हो गए। इसी तरह इस्लामी संस्कृति का आगमन अरबों, तुर्कों और मुग़लों के माध्यम से हुआ। यह एक अपवाद ही है कि उस संस्कृति के लोग हमारे साथ घुल-मिल नहीं सके। एक दूरी दोनों संस्कृतियों के बीच बनी रही। किंतु हमने उनसे अच्छे तत्त्व ग्रहण करने में संकोच नहीं किया। इसी तरह ईसाइयत से भी हमने मुक्त मन से कुछ ग्रहण करने में संकोच नहीं किया। यहाँ रेखांकित करने योग्य तथ्य यह है कि अपनी स्वतंत्र सत्ता हमने बनाए रखी। साथ ही भारतीय समाज में मुस्लिम और ईसाई लोग ससम्मान प्रेम भाव से बने रहे। अन्य देशों में आज उनकी पहचान 'भारतीय मुस्लिम' और 'भारतीय ईसाई' के रूप में है। यह 'भारतीय' विशेषण उनको विशेष बनाता है। यह उनके भारतीय परिवेश में जन्म लेने, पलने-बढ़ने तथा भारतीय संस्कृति की छाँव में जीवन जीने को दर्शाता है। यह ग्रहणशीलता हमारी विश्वबंधुत्व की अवधारणा को पुष्ट करती है। "सर्वे भवंतु सुखिन:, सर्वे संतु निरामया:" तथा "वसुधैव कुटुम्बकम्" हमारी संस्कृति के सबसे दिव्य पक्ष हैं।

प्रवासी हिंदी काव्य में उपर्युक्त भाव विद्यमान हैं। यथा:

फ़ीजी की कवयित्री अमरजीत कौर की कविता का एक अंश है, जिसमें फ़ीजी में भारतीय संस्कृति के अनुरूप सभी धर्मों के लोगों को हिल-मिल कर रहने की बात कही गई है:

"काईबीती[1] सिख ईसाई,/हिंदू मुसलिम चीनी भाई,
सुख-दु:ख सब मिलकर सहते,/गोरे काले जहाँ हैं रहते,
वह फ़ीजी देश प्यारा है,/वह फ़ीजी देश न्यारा है।"

—([1]फ़ीजी के मूल निवासी), (वर्मा, 2012 : 40)

मॉरीशस के कवि शाम दानीश्वर 'हिंद महासागर की जय' बोलते हुए अखिल विश्व के बंधुओं का स्वागत करते हुए कहते हैं:

"स्वागत है! / हे मेरे भारत-नेपाल-श्रीलंका!
फ़ीजी-सुरीनाम-पाक-गयाना!
साऊथ अफ्रीका, युके-युएसए-कनाडा!
फ्रांस रेनियन आदि के सहोदर बंधुओ!
इस भूमि में तुम सभी की / स्मृति अंकित है तल तक
कहते हैं 'स्वर्ग' इसे हिंद महासागर का/ कल्पना है या सच है?
प्रिय भाइयो, कल्पना भी हो / तो स्वर्ग इसे बना जाओ
स्वागत-स्वागत-स्वागत है।"

—(वर्मा, 2016 : 128)

इसी क्रम में सूरीनाम के कवि मार्तिन हरिदत्त लक्ष्मन श्रीनिवासी की ये पंक्तियाँ पढ़ी जा सकती हैं, जो अखिल विश्व को अपना घर मानते हैं:

"असल / विश्व मेरा घर है
इसलिए मैं / सब के बीच जीता हूँ
कई देशों के मौसम का / आस्वादन लिए
पूरी पृथ्वी के ऊपर / मेरी यात्रा की / होती है वापसी
गोधूलि में / वृक्ष की टहनी पर / एक चिड़िया की तरह।"

—(अवस्थी, 2014 : 166)

■ **आध्यात्मिकता एवं भौतिकता का समन्वय**—भारतीय संस्कृति की यह अनूठी विशेषता है कि अध्यात्म प्रधान होने के साथ-साथ उसमें भौतिकता के समन्वय का गुण भी है। कारण कि हमारे यहाँ आश्रम व्यवस्था के साथ धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष के रूप में पुरुषार्थ चतुष्टय का विधान है। प्राचीन समय से ही हमारी संस्कृति में जीवन के ऐहिक तथा पारलौकिक दोनों पक्षों को धर्म के साथ सम्बद्ध किया गया है। एक सूत्र है: शरीर नश्वर है, आत्मा अमर है, यहाँ अमरता मोक्ष के साथ जुड़ी हुई है और मोक्ष की प्राप्ति के लिए अर्थ एवं काम के पुरुषार्थ करना भी आवश्यक है। इस प्रकार भारतीय संस्कृति में धर्म और मोक्ष, अर्थ एवं काम की भौतिक अनिवार्यता के साथ जुड़े हुए हैं। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति में लोक तथा परलोक दोनों को सुन्दर बनाने पर बल दिया गया है। संसार को कर्म-प्रधान बनाया गया है। साथ ही पुनर्जन्म की अवधारणा भी विद्यमान है। इसमें दार्शनिक चेतना अपने सारभूत रूप में विद्यमान है।

प्रवासी कवि भारतीय संस्कृति के इस मर्म से परिचित हैं। इसलिए वे अपनी कविताओं में इन वैशिष्ट्यों को रेखांकित करते रहे हैं। ऐसी कुछ कविताओं के उद्धरण यहाँ दे देना प्रासंगिक रहेगा।

फ़ीजी कवि:

"फूल खिलता है / खुशबू लुटाता है / सूख जाता है
... सूरज निकलता है / बहार लाता है / डूब जाता है
आदमी जीता है / सर पटकता है / चला जाता है...."

—सरोजिनी आशा हैरिस, (वर्मा, 2012 : 141)

मॉरीशस के कवि:

"सत्यवान और सदाचार। / करो सदा सबका उपकार।
छोड़ो मन का सभी विकार। / जिससे पाओ तुम सुख सार॥
... दया धर्म सब में सिरमौर। / देते सही स्वर्ग में ठौर॥
सब जीवों को एक समान। / जान करो सबका कल्याण॥"

—वासुदेव (वर्मा, 2016 : 118)

सूरीनाम के कवि:

"अतिशय सरल स्वभाव से, रहना नहीं जरूर।
सीधा तरु कट जात हैं, टेढ़े से सब दूर॥
सोना तपा कर परखिए, नर में लख गुण चार।
त्याग शील गुण कर्म से, नर परखहु सुविचार॥
इस असार संसार में, चार वस्तु हैं सार।
प्रिय भाषण सत्संग पुनि, दया उचित व्यवहार॥"

—चंद्रमोहन रणजीत सिंह (वर्मा, 2014 : 120)

■ **अनेकता में एकता**—भारतीय संस्कृति में अनेकता में एकता का अद्भुत गुण है। अनेक धर्मों, संप्रदायों, भाषाओं, संस्कृतियों, रहन-सहन के तौर-तरीकों, खान-पान, आचार-व्यवहार, भौगोलिक भिन्नता आदि के रहते हुए भी अनूठा ऐक्य उसमें विद्यमान है।

प्रवासी हिंदी कविता में अनेकता में एकता के ये सूत्र विद्यमान हैं। यथा:

फ़ीजी की कवयित्री अमरजीत कौर लिखती हैं:

"हिमालय पर्वत का हम बेटा / गंगा मैया की बिटिया...
...देह हमरी में गंगा जल था / हिमालय ने दी शक्ति।"

—(वर्मा, 2012 : 68)

इसी प्रकार अनेक कवियों ने हिंदी के प्रति अपना सम्मान एवं अनुराग अभिव्यक्त किया है। यथा:

फ़ीजी के कवि सुखराम की कविता 'हिंदी: हमारी मातृभाषा' का यह अंश देखें:

"हिंदी हमारी मातृभाषा, हिंदी हमारा धर्म है।
हिंदी हमारी संस्कृति, हिंदी हमारा कर्म है।
भारत की प्राचीन भाषा, हिंदी को प्रणाम है।
अन्य भाषा की तरह, हिंदी का बड़ा नाम है॥"

—(वर्मा, 2012 : 149)

मॉरीशस के कवि हेमराज सुंदर लिखते हैं:

"हिंदी हमारी संस्कृति की / रानी है
हिंदी का भक्त होना / भारत से जुड़ना है।
अपनी पितृभूमि से / नेह लगाना है।"

—(सुंदर, 2013 : 58)

इसी तरह मॉरीशस के राष्ट्रकवि ब्रजेंद्र कुमार भगत 'मधुकर' कहते हैं:

"बड़ी ही सम्या, अति ही सुदिव्या, / बड़ी ही भव्या, सुकुमारी हिंदी।
बड़ी ही सरला, अति ही सुशीला, / बड़ी ही मृदुला, सुकुमारी हिंदी॥
...बड़ी नवीना, अभिमान हीना, / बड़ी प्रवीणा, सुकुमारी हिंदी।
बड़ी सुपाली, सब सिद्धिदाली, / सुख-शांतिदाली, सुकुमारी हिंदी॥"

—(वर्मा, 2016 : 82, 83)

सूरीनाम के कवि चंद्रमोहन रणजीत सिंह का आह्वान है:

"निज भाषा को भूलना, है भारी अज्ञान।
अपनी भाषा सीखिए, नित होगा कल्यान॥
सब कुछ सीखे जगत् में, भए गुणों के धाम।
निज भाषा सीखे नहीं, समझो सब बकाम॥
हिंदी भाषा को पढ़ो, सुनो हिंदी के लाल।
हिंदी बोली बोलिए, इस पर नहीं सवाल॥"

—(अवस्थी, 2014 : 117)

■ **पर्वों-त्यौहारों, रीति-रिवाजों की जीवंत परम्परा**—भारतीय संस्कृति में पर्वों एवं त्यौहारों का सुंदर विधान है। प्रवासी कविता में भारतीय संस्कृति के इस वैशिष्ट्य को भी वाणी मिली है। इससे सिद्ध होता है कि हमारे प्रवासी बंधु अपनी संस्कृति को भूले नहीं हैं; उसे निरंतर प्रवहमान बनाए हुए हैं। कुछ पर्व-त्यौहारों के प्रति प्रवासी कवियों का अनुराग इन कविताओं में देखें:

दीपावली पर्व पर फ़ीजी के कवि लिखते हैं:

"सब के लिए शुभ हो, कार्तिक अमावस्या की शाम
इंतज़ार कर रहा मानव जगत परिवार के साथ
दीपमाला का स्वागत में दीया की थाली लेकर हाथ
श्रद्धा से पूजन करूँ कि चरणों में प्रणाम
सब के लिए शुभ हो, कार्तिक अमावस्या की शाम्"

—महावीर मित्र (वर्मा, 2012 : 127)

मॉरीशस में होली तथा दीपावली जैसे त्यौहारों के साथ-साथ शिवरात्रि के पर्व का विशेष महत्त्व है। इनको यहाँ के निवासी बहुत उल्लास के साथ मनाते हैं। इनकी अभिव्यक्ति कुछ कविताओं में देखें:

"आर्यों ने ऐसी होली मनाई।
चहुँ दिशि से सज्जन सब आए, बैठे समत बनाई।
गावत वेद अति नीको, ध्यावत यश परगाई॥
अमन गति जाकी है भाई॥
खेलत फाग सुलभ सुचि संयम, सत चित रही बनाई।
प्रेम रंग-रंग भरी-भरी, मारत ज्ञान गुलाल सुहाई॥
रंग सा सज्जन आई॥"

—गणेशी कौलेसर सिंह (वर्मा, 2016 : 62)

"हे ज्योति-पर्व आओ! / आओ, हमें अभय दान दे दो।
आज के घोर अँधेरे में / भटके हुए मानव
सुख-शांति के आलोक पाने के लिए/ संघर्षरत हैं।...."

—मुनीश्वर लाल चिंतामणि (वर्मा, 2016 : 94)

सूरीनाम के कवि मुंशी रहमान ख़ान ने लिखा है:

"दिवाली व्रत भारी मैं क्यों कर मनाऊँ।
दोनों हाथ खाली तुम्हें क्या चढ़ाऊँ॥
मनाते थे पुरखा तुम्हें मेरे पहले।
लगा सत्य श्रद्धा पूजन करते थे पहले॥
मैं तो पड़े सोता हूँ तुम्हें क्या जगाऊँ॥"

—(अवस्थी, 2014 : 104)

इतना ही नहीं इन देशों में विवाह गीत आदि का प्रचलन भी है, जो सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। यथा—

मॉरीशस की कवयित्री सुचीता रामदीन के लिखे एक विवाह गीत की पंक्तियाँ हैं:

"केकर लामी केसरिया अनवर छितरे।
कवन बेटी खेले काठ की पुतरिया॥
धिउवा के केसरिया अनवर छितरे।
सीता बेटी खेले काठ के पुतरिया॥
घोड़वा चढ़ल आए दुलहा ओ दुलहा।
गवना लियावे आइहो दुलहा॥"

—(वर्मा, 2016 : 142)

समग्रत: भारतीय प्रवासी गिरमिटिया जीवन में भारतीय संस्कृति की इंद्रधनुषी छटा अपनी पूरी आभा के साथ विद्यमान है। इन देशों की कविता में गिरमिटिया समाज की आशा-आकांक्षा, दु:ख-दर्द, हर्ष-विषाद, जीवन-दर्शन और संघर्ष की छवियाँ प्रामाणिकता के साथ उभरती दिखाई देती हैं। एक कवि यदि यह कहता है—"प्रवासी भारतवंशियों के पूर्वज / संस्कृति का खज़ाना लेकर / मज़दूरी के लिए सूरीनाम देश आए / अपनी बलि चढ़ाकर / वे अपनी पहचान बना गए/ स्मृतियों में / धरती की मिट्टी में / नदी के पानी में।" (सुरजन परोही, अवस्थी, 2014 : 216) तो दूसरा कवि याद दिलाता है—"वे जो शोषण की चक्की में / पिसते हुए रिस गए, / उनकी ही सन्तान हो तुम। / ...वे जो निराशा के अंधकार में / आशा के गीत गाते आए; / संकट में भी / जीने का संदेश देते आए; / उनकी ही संतान हो तुम।" (मुनीश्वर लाल चिंतामणि, वर्मा, 2016 : 91-92)

संदर्भ-सूची—

1. अवस्थी, पुष्पिता (2014), सूरीनाम का सृजनात्मक साहित्य, नई दिल्ली, साहित्य अकादेमी।
2. गोयनका, कमल किशोर (प्र. संपादक) (2015), प्रवासी साहित्य: जोहंसबर्ग से आगे, नई दिल्ली, विदेश मंत्रालय, भारत सरकार।
3. गोयनका, कमल किशोर (2010), विश्वा (ई-पत्रिका) http://evishwa.com/accessed 11/06/2015
4. बखोरी, सोमदत्त (1990), सोमदत्त बखोरी की चुनी हुई कविताएँ, मॉरीशस: महात्मा गाँधी संस्थान प्रेस।
5. रामधनी, रेशमी (2012), Diaspora Imagination (Vol. 1), New Delhi, Star Publications Pvt. Ltd.
6. रामशरण, प्रह्लाद (1997), मॉरीशस का आदि काव्य-कानन, दिल्ली, आत्मारामा
7. वर्मा, विमलेश कांति (2012), फ़ीजी का सृजनात्मक साहित्य, नई दिल्ली, साहित्य अकादेमी।
8. वर्मा, विमलेश कांति (2016), मॉरीशस का सृजनात्मक साहित्य, नई दिल्ली, साहित्य अकादेमी।
9. सिंह, रवि प्रकाश (2014), आप्रवासी जीवन की समस्याएँ और मॉरीशस का हिंदी उपन्यास लेखन, नई दिल्ली, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय की पी-एच.डी. उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबंध (अप्रकाशित)।
10. सुंदर, हेमराज (2012), मॉरीशस के हिंदी साहित्य का प्रवृत्तिपरक इतिहास (दो भाग), डी.लिट्.उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबंध, आगरा, डॉ. भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय (अप्रकाशित)।
11. सुंदर, हेमराज (2015), सिंहनाद, मॉरीशस, हिंदी साहित्य अकादेमी।
12. सुंदर, हेमराज (2013), चुनौती, मॉरीशस, हिंदी साहित्य अकादेमी।
13. सुंदर, हेमराज (2013अ), सागर मोती, हिंदी साहित्य अकादेमी।

"हिन्दी भारतवर्ष के हृदय की वाणी है"

—दिनकर

गिरमिटिया दर्द की आवाज: प्रवासी पत्रिका

डॉ. राकेश कुमार दूबे

"...प्रवासी पत्रिका के माध्यम से संन्यासीजी ने न केवल भारतीयों के प्रवास के इतिहास पर प्रकाश डाला बल्कि उस समय प्रवासी भारतीयों की जो अवस्था थी, उसको भी बखूबी पटल पर रखा। फिजी, गुयाना, मॉरीशस, सूरीनाम के साथ ही दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों पर जो अत्याचार किए जा रहे थे, उससे विश्व जनमानस को परिचित कराया। दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों पर जो अत्याचार किए जा रहे थे, उससे विश्व जनमानस को परिचित कराया। ..."

सम्पर्क : इतिहास विभाग,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

प्रवासी भारतवासियों की समस्याओं का प्रश्न भारत की आजादी से पूर्व एवं पश्चात् भी एक अत्यंत ही गंभीर मुद्दा रहा है और इस विषय से जनमानस को परिचित कराने एवं उसे पटल पर रखने का महत्वपूर्ण प्रयास कितने ही विद्वानों एवं पत्र-पत्रिकाओं द्वारा किया गया। अंग्रेजों ने सीधे-साधे गिरमिटिया भारतीयों को ले जाकर विदेशी मंडियों में बेचा जहाँ उन पर पशुवत् अत्याचार किया गया पर भारत में उसका विरोध करने वाला कोई नहीं था। राष्ट्रीय आंदोलन का नेतृत्व करने वाली भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तक ने 1922 ई. से पूर्व इस अति महत्वपूर्ण विषय को कभी नहीं उठाया, इसके विपरीत 20वीं सदी के आरंभ से ही हिंदी पत्र-पत्रिकाओं ने इस विषय को उठाना आरंभ किया और इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान 'प्रवासी' पत्रिका का रहा जिसके संपादक प्रवासी भवानी दयाल संन्यासी थे। यह पत्रिका भवानी दयाल संन्यासी द्वारा अजमेर से प्रकाशित की गयी जिसके द्वारा उन्होंने भारत में रहते हुए प्रवासी भारतवासियों की समस्या को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उठाने एवं लोकमानस को उससे परिचित कराने का महत्वपूर्ण प्रयास किया था।

प्रवासी पत्रिका का प्रकाशन 1947 ई. से आरंभ हुआ और यह पत्रिका पूरी तरह से प्रवासी भारतीयों को समर्पित थी। जब दक्षिण अफ्रीका की गोरी सरकार ने भारतवासियों के खिलाफ काला कानून पारित किया तब अजमेर में रह रहे भवानी दयाल संन्यासी ने इस पत्रिका को निकालना आरंभ किया। इस पत्रिका से पूर्व भी उन्होंने प्रवासी भारतीय समस्या पर काफी कार्य किया था। प्रवासी भारतीयों के लिए प्रथम सराहनीय प्रयास महात्मा गाँधी द्वारा किया गया परन्तु उनके दक्षिण अफ्रीका से वापस आ जाने के बाद वहाँ पर उस आंदोलन की बागडोर भवानी दयाल संन्यासी ने ही सँभाली थी और मृत्युपर्यंत प्रवासी भारतीयों के लिए कार्य करते रहे।

1912 ई. में जब गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह किया तो भवानी दयाल ने अपनी पत्नी के साथ उसमें उत्साह से भाग लिया और सपत्नीक जेल जीवन व्यतीत किया। 1914 ई. में गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका से जिस 'इंडियन ओपिनियन' नामक अंग्रेजी पत्र को प्रकाशित किया था उसके हिंदी संस्करण का संपादन भवानी दयाल ही करते थे। हिंदी भाषा के प्रचार एवं प्रवासी भारतीय समस्या को विश्व पटल पर उठाने के उद्देश्य से भवानी दयाल ने 1922 ई. में हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में 'हिंदी' नामक साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन किया था जिसने पत्रकारिता के इतिहास में एक प्रतिमान स्थापित किया। उन्होंने 1922 ई. में ही डरबन के निकट 'जेकोब्स' नामक स्थान पर एक प्रेस खोला और इसी प्रेस से मुद्रित होकर मई के प्रथम सप्ताह में

'हिंदी' का प्रथमांक निकला था। यह पत्रिका सचित्र और विषयवस्तु की दृष्टि से काफी समुन्नत थी और प्रवासी भारतीयों में तो वह ऐसी लोकप्रिय हुई थी कि नेटाल के साथ ही साथ ट्रांसवाल, केप, रोडेशिया (वर्तमान जिम्बाम्बे), मोजाम्बिक, टंगेनिका, युगान्डा, केनिया, मॉरीशस, फिजी, डमरारा, जमैका, ग्रेनेडा, सूरीनाम, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, कनाडा और भारत में भी उसकी काफी मांग थी। इस पत्रिका में बड़े-बड़े लेखकों, समस्या विशेषज्ञों और राजनेताओं जैसे—तारकनाथ दास, सुधीन्द्र बोस, हेनरी पोलक, सरोजिनी नायडू, सी.एफ. एन्ड्रूज, राजा महेंद्र प्रताप इत्यादि के विस्तृत लेख छपते थे। इस पत्रिका के कई सचित्र विशेषांक इतने सर्वांग सुंदर निकले थे कि वे पत्रकारिता के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेंगे।

भारत में स्थायी रूप से बसने के बाद भवानी दयाल संन्यासी ने 1942 ई. में अजमेर में 'प्रवासी भवन' बनवाया एवं प्रवासी साहित्य के उत्थान के अभिप्राय से 'प्रवासी-पुस्तकमाला' का प्रकाशन आरंभ किया और द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण कागज के दाम अत्यधिक बढ़े हुए थे, फिर भी इस पुस्तकमाला में पाँच पुस्तकें गूँथीं—वैदिक प्रार्थना, स्वामी शंकरानंद संदर्शन, अब्दुल्ला इस्माइल काज़ी (अंग्रेजी), पोर्तगीज पूर्व अफ्रीका में हिन्दुस्तानी और वर्ण व्यवस्था या मरण अवस्था।

'प्रवासी भवन' में रहते हुए भवानी दयाल अक्सर बीमार ही रहा करते थे। ऐसी अवस्था में भी जब दक्षिण अफ्रीका की सरकार ने 'घेटो एक्ट' या काला कानून पास किया, जिसका मकसद प्रवासी भारतीयों को अछूतों की भाँति नगरों और कस्बों से अलग बस्ती बसाने के लिए बाध्य करना था, तो इस कानून के खिलाफ प्रवासी भारतीयों ने सत्याग्रह आरंभ कर दिया। ऐसे समय में प्रवासी भारतीयों की समस्या को भारत और विश्व स्तर पर उठाने के उद्देश्य से 1947 ई. में हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में एक साथ सचित्र मासिक 'प्रवासी' नामक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया। इस पत्रिका के प्रकाशन का एक अन्य प्रमुख उद्देश्य यह भी था कि समूचे भारत में प्रवासियों से संबंधित कोई पत्रिका नहीं थी, जैसा कि संन्यासी जी ने स्वयं प्रवासी पत्रिका के प्रथम अंक में इस बात को रेखांकित किया था कि "इस समय हिंदुस्तान में ऐसा एक भी अखबार नहीं है, जिसका मुख्य उद्देश्य हो—प्रवासी भारतीयों की समस्याओं पर प्रकाश डालना, उनके दुःख-सुख की कथा देशवासियों

प्रवासी पत्रिका का मुखपृष्ठ

गाँधी जी का दुर्लभ चित्र

को सुनाना और संकट की घड़ी में उनको धैर्य बँधाना तथा मातृभूमि की ओर से उनको सहायता पहुँचाना। संसार के सभी सभ्य और स्वतंत्र देशों में प्रवास का प्रश्न बड़ा महत्वपूर्ण माना जाता है। इंग्लैंड में तो ऐसी अनेक सभा-समितियाँ हैं और ऐसे अनेक पत्र निकलते हैं, जिनका एकमात्र उद्देश्य प्रवास के सभी पहलुओं पर प्रकाश डालना ही है। पर हमारे देश में? यहाँ का तो कहना ही क्या? इस समय लगभग पचास लाख भारतीय देश-देशान्तरों में बसे हैं, और हजारों भाई हर साल विदेशों में बसने जा रहे हैं, परन्तु इस विशाल देश में, किसी भी भाषा में एक भी ऐसा पत्र नहीं निकलता है, जो प्रवास-जीवन की समस्याओं से देशवासियों को अवगत कराता हो। क्या यह स्वतंत्र भारत के लिए विषाद की बात नहीं है?"

अत्यंत रोगग्रस्त रहते हुए और आर्थिक दृष्टि से अत्यंत विपन्न होते हुए भी भवानी दयाल संन्यासी ने विजयादशमी, सन 1947 वि. को 'प्रवासी' पत्रिका का प्रथमांक निकाला। भवानी दयाल को इस कार्य में प्रवासियों के कुछ शुभचिंतकों—सेठ घनश्याम दास बिड़ला, सेठ नानजी कालीदास मेहता, मूलचंद्र अग्रवाल, रामलोचन शरण बिहारी, भगवानजी काकूभाई एवं भीखाभाई मूलाभाई ने आर्थिक सहयोग प्रदान किया फिर भी यह पत्रिका न निकल पाती यदि राजपूताना के शाहपुरा रियासत के वयोवृद्ध महाराजा श्री उम्मेदसिंह वर्मा की आर्थिक सहायता न मिली होती। आर्यसमाजी महाराज ने इस पत्रिका के सहायतार्थ 1000 रुपए की सहयता दी थी तब कहीं जाकर यह पत्रिका प्रकाशित हो सकी। इस पत्रिका के लिए भारत एवं विदेशों से कितने ही गण्यमान्य लोगों ने शुभकामना संदेश भेजा था जिनमें जुगलकिशोर बिड़ला, हर विलास शारदा, बरार से ब्रिजलालजी बियाणी, बिहार के मुख्यमंत्री श्रीकृष्ण सिंह, शिवपूजन सहाय, आर्य समाज के प्रधान नेता महात्मा नारायण स्वामी, राजा महेंद्र प्रताप, शाहपुराधीश उम्मेदसिंह वर्मा, इंग्लैंड से हेनरी पोलक, रूस से विजयलक्ष्मी पंडित एवं भारत के राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त इत्यादि प्रमुख थे। गुप्तजी ने केवल दो पंक्तियां लिख भेजी थी जो पठनीय थी, वह इस प्रकार हैं—

"वही भूमि तो भोग्य सब भोगा जिसके लिए,
तुम बापू के योग्य उत्तराधिकारी बनो।"

इस पत्रिका का एकमात्र लक्ष्य प्रवासी भारतीयों की धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और शिक्षा संबंधी समस्याओं पर प्रकाश डालना एवं संकट-विपदा में उनकी तरफ से संदेशवाहक का कार्य करना था। इस पत्रिका के मुखपृष्ठ पर भारत का मानचित्र एवं उसके बीच भारतमाता का चित्र रहता था और भारत के मानचित्र को तीन ओर से समुद्र से घिरा हुआ दिखलाया गया है। भारत के तीन प्रमुख बंदरगाहों—कलकत्ता, मद्रास एवं बम्बई से नर-नारियों से लदे हुए जहाजों को तट से दूर जाते हुए दिखलाया गया था जो यह स्पष्ट करता है कि भारत में किन स्थानों से और किन अमानवीय तरीकों से भेड़-बकरियों की भाँति अपने को तथाकथित सभ्य कहने वाली अंग्रेजी जाति भारतवासियों को उपनिवेशों में मजदूरी करने के लिए ले जाती थी।

संपादक भवानी दयाल ने इस कार्य में अजमेर के प्रो. देवकीनंदन शर्मा एवं चंद्र शंकरजी काफी सहयोग तो करते ही थे परन्तु इस कार्य में भवानी दयाल के सबसे बड़े सहयोगी डॉ. लंकासुंदरम एम.ए. थे। यह पत्रिका अजमेर के फाईन आर्ट प्रेस में मुद्रित होती थी और इस प्रेस के स्वामी का भी काफी सहयोग भवानी दयालजी को प्राप्त था। यह वही प्रेस था जहाँ से 1939 ई. में प्रसिद्ध लेखक प्रेमनारायण अग्रवाल की पुस्तक 'दक्षिण अफ्रीका के लोकसेवक—भवानी दयाल संन्यासी' प्रकाशित हुई थी जिसे भारत की अंग्रेज सरकार एवं दक्षिण अफ्रीका की गोरी सरकार ने प्रतिबंधित कर दिया था। प्रवासी पत्रिका में गुप्तनाथ सिंह, चांदकरण शारदा, बनारसीदास चतुर्वेदी, शिवपूजन सहाय, प्रेमनारायण अग्रवाल एवं पीर मुहम्मद मूनिस जैसे विषय विशेषज्ञ नियमित लिखा करते थे। इस पत्रिका की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह भी थी कि इसमें कई दुर्लभ चित्र भी प्रकाशित हुए जो अन्यत्र प्राप्त नहीं होते हैं।

प्रवासी पत्रिका के माध्यम से संन्यासीजी ने न केवल भारतीयों के प्रवास के इतिहास पर प्रकाश डाला बल्कि उस समय प्रवासी भारतीयों की जो अवस्था थी, उसको भी बखूबी पटल पर रखा। फिजी, गुयाना, मॉरीशस, सूरीनाम के साथ ही दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों पर जो अत्याचार किए जा रहे थे, उससे विश्व जनमानस को परिचित कराया। दक्षिण अफ्रीका की गोरी सरकार ने जब भारतीयों के खिलाफ काला कानून पास किया तो प्रवासी पत्रिका ने इसे अत्यंत ही घृणित कार्य बतलाया और इसे नाम दिया 'दक्षिण अफ्रीका में नाजीवाद का नग्न नृत्य'। प्रवासी पत्रिका का 'दक्षिण अफ्रीका में नाजीवाद का नग्न नृत्य' शीर्षक लेख में वहाँ की गोरी सरकार की कटु आलोचना की गयी है। प्रवासी पत्रिका ने अपने अल्पकालीन जीवन में ही प्रवासी भारतीयों से जुड़ी समस्याओं को व्यापक पटल पर उठाने का कार्य किया।

भवानी दयाल संन्यासी का निधन 9 मई, 1950 ई. को अजमेर में हुआ और उसके साथ ही एक प्रकार से यह पत्रिका बंद हो गयी। बाद में उनके समर्थकों ने जनवरी, 1953 ई. में 'भवानी दयाल संन्यासी स्मृति अंक' निकाला जो कि इस पत्रिका का अंतिम अंक थ। इसके बाद यह पत्रिका हमेशा के लिए बंद हो गयी।

भवानी दयाल संन्यासी के जीवन और कार्यों पर दृष्टिपात करने पर यह बात पूर्णतः स्पष्ट हो जाती है कि उनका पूरा जीवन प्रवासी भारतीयों की समस्याओं का समाधान और उनके अधिकारों की रक्षा के साथ ही उनमें अपनी भाषा, सभ्यता और संस्कृति के प्रति ममता और सम्मान की भावना उत्पन्न करने में बीता और यही उनके जीवन का प्रमुख उद्देश्य

बन गया था। इंडियन ओपिनियन, हिंदी और विशेषकर प्रवासी पत्रिका के माध्यम से उन्होंने प्रवासी भारतीयों की समस्या को प्रमुखता से उठाया और इसे अंतर्राष्ट्रीय बना दिया। उनके कार्य-व्यापारों की समालोचना करते हुए राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा था कि—

"स्वामी होकर भी तुम सबकी, सेवा करते रहे सदा।
जीता रहे न्याय इस कारण, लड़ते मरते रहे सदा॥
दक्षिण अफरीका हुआ फिर जो हम पर वाम।
तो निश्चय फिर भी हमीं जीतेंगे संग्राम॥"

प्रवासी भारतवासियों के लिए भवानीदयाल संन्यासी द्वारा किए गए कार्यों पर प्रकाश डालते हुए प्रसिद्ध विद्वान एवं राष्ट्रवादी नेता हरिभाऊ उपाध्याय ने लिखा कि "स्वामी जी प्रवासी भारतवासियों के लिए जिए और उन्हीं की चिंता करते कराते स्वर्गवासी हुए। प्रवासी भारतवासियों के दुःख और दर्द, उनके ऊपर किए जाने वाले अमानवीय अत्याचारों को उन्होंने निकट से देखा और समझा था और चेष्टा की थी कि वे भी स्वाभिमानी नागरिकों की भाँति ही जीवन व्यतीत कर सकें। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उन्होंने वाणी और लेखनी द्वारा निरन्तर आंदोलन किया और इस कार्य में उन्हें बहुत कुछ सफलता भी प्राप्त हुई। जीवन के अंतिम वर्षों में निरन्तर अस्वस्थ रहने पर भी, वे 'प्रवासी' द्वारा भारतीयों की सेवा करते रहे।"

भवानी दयाल संन्यासी जी के समस्त कार्यों को केवल दो शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है—हिंदी की सेवा और प्रवासियों की समस्याओं का समाधान। वर्तमान में प्रवासी भारतीयों को भारत से पुनः जोड़ने का कार्य काफी तेजी से किया जा रहा है और विविध सम्मेलनों का आयोजन एवं संचार माध्यम इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। वर्तमान समय में कतिपय भारतीयों एवं कुछ प्रवासी भारतीयों द्वारा प्रवासी भारतीयों की समस्याओं को उठाने एवं उन्हें आपस में जोड़ने का कार्य कुछ पत्र-पत्रिकाओं द्वारा किया जा रहा है पर फिर भी उस युग में भवानी दयाल संन्यासी द्वारा किया गया कार्य अविस्मरणीय था और वर्तमान के लिए भी प्रेरणास्रोत है। निःसंदेह भवानी दयाल संन्यासी का नाम भारत और समूचे विश्व में प्रवासी भारतीयों की सेवा के लिए गाँधीजी के साथ ही हमेशा लिया जाता रहेगा।

हमारे पूज्य

गुलशन मधुर (अमरीका)

हममें से जो
गहरी आस्थाओं से जुड़े हैं
उनके ही जीवन क्यों इतने प्रश्नचिह्नित
क्यों इतने मुड़े-तुड़े हैं

ऊपर उठें
इसलिए हम अपने को अविराम सींचते हैं
पर वे, जो सतह से बंधे हैं
हमें किस बेतरह खींचते हैं

हम, जो दर्द को पाथेय चुनते हैं
दर्द पर बेदर्दों के प्रवचन सुनते हैं
हम उजाले के रास्ते पर
लगातार अंधेरों में चलते जाते हैं
और वे हैं कि वातायन बंद करके
रोशनी के गीत गाते हैं

कोई आराम की नींद न सोए
जो केवल इसीलिए जगे रहना चाहते हैं
जो तस्वीर बनकर फ्रेम में टंगे रहना चाहते हैं
क्या वही हमारे पूज्य होंगे

इस घेराव से बचें
क्या ये बिना मंज़िल की तलाश है
कोई तो कवच इन प्रहारों से रक्षित होगा
क्या ये झूठी आस है

सम्पर्क: 4647, ब्रेंटले कोर्ट, अनाडेल VA-22003 (USA)

गिरमिटिया श्रमिकों के देश में दस दिन

डॉ. चन्द्रकांता किनरा

"...मंदगति से रनवे पर कुछ देर चलने के बाद हवाई जहाज़ एकाएक तेजी से दौड़ते हुए ऊपर उठने लगा तो कुछ कुछ होता हुआ महसूस हुआ। इत्तफाक से खिड़की वाली सीट मिल गयी। दिल तो बच्चा है! न खिड़की से बाहर झांकने पर बहुत पतली पतली सड़कें, उन पर रेंगते हुए वाहन, हरियाली के आयताकार टुकड़े और फिर व्यवस्थित फ्लैट्स की मीनारें, शायद नौएडा या गुड़गांव की बहुमंजिला इमारते हैं, मैंने सोचा। और फिर ऊपर स्वच्छ नीला आसमान और नीचे रुई के बड़े-बड़े गोलों की चादर बिछी दिखाई देने लगी। विमान के अंदर हलचल शुरू हो गयी थी हल्के गुलाबी और हल्के बैंगनी रंग के सिल्क के थाई परिधान में सजी सँवरी विमान परिचारिकाएं पेय और खाना लेकर उपस्थित थीं।..."

सम्पर्क : एसोसिएट प्राफेसर (रिटायर्ड), डिपार्टमेंट ऑफ हिन्दी, इन्द्रप्रस्थ कॉलेज, दिल्ली यूनिवर्सिटी
निवास: सी-29, सी.सी. कॉलोनी, दिल्ली-110007
मोबाइल: 9810716400,
E-mail : ckinra051@gmail.com

सुना था प्राकृतिक सुषमा से भरपूर फीजी नामक देश ऑस्ट्रेलिया के पूर्व में और न्यूज़ीलैंड के उत्तर में स्थित है, यह जानकर विस्मय भी हुआ था कि फीजी ही वह देश है जहाँ सूर्य की पहली किरण पड़ती है क्योंकि इंटरनैशनल डेटलाइन फीजी के वनुआलेव के पास तव्यूनी द्वीप से होकर गुजरती है। प्रकृति सौन्दर्य के इस भण्डार को देख पाने की ललक पूरी होती दिखाई दी जब फीजी में 14-16 अक्टूबर (2016) को आयोजित 'इंटरनैशनल रामायण कॉन्फ्रेंस' में भाग लेने का निमंत्रण मुझे मिला। फीजी और भारत के सांस्कृतिक संबंधों की नींव सन 1879 में गिरमिटिया भारतीय श्रमिकों ने रखी थी जो गन्ने की खेती और चीनी की मिलों में काम करने के लिए अंग्रेजों द्वारा यहाँ लाए गए थे। ये तथाकथित भारतीय कुली, अनपढ़ होते हुए भी रामायण का गुटका, गीता और कुरान अपने साथ लेकर आए थे। दिन भर शासकों के अत्याचार सहते हुए बिहार, उत्तर प्रदेश, अवध, तमिलनाडु, हरियाणा आदि प्रदेशों से यहाँ पहुँचे ये लोग संध्या समय रामायण की चौपाईयां गाकर अपने सारे दु:ख दर्द भूल जाया करते थे।

इन तथाकथित कुलियों की चार पीढ़ियों के संघर्ष और सतत परिश्रम का परिणाम है कि अब भारतवंशी यहाँ के नागरिक हैं, फीजी के व्यापार, प्रशासन, समाजसेवा में उनकी भागीदारी है। साप्ताहिक रामायण पाठ की जैसी परम्परा फीजी में है वैसी कदाचित भारत में भी नहीं। हिन्दी भाषा, यहाँ स्कूलों के साथ-साथ विश्वविद्यालय में भी पढ़ाई जाती है। भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का फीजी में और अधिक प्रसार हो इसीलिए फीजी के कला, सांस्कृतिक मंत्रालय, भारतीय हाई कमीशन और फीजी सेवाश्रम संघ ने मिलकर प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन की परिकल्पना की।

10 अक्तूबर—अक्तूबर की सुहावनी सुबह थी, चाय की चुस्कियों के साथ शुभकामनाओं और हिदायतों को समेटती हुई मैं निकल पड़ी थी इंदिरा गाँधी इंटरनैशनल एयरपोर्ट की ओर क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय उड़ान के लिए तीन घंटा पहले पहुंचना आवश्यक होता है। ट्रॉली पर अपने अपने सूटकेस और बैग रखे चुस्ती से लगभग दौड़ते हुए लोगों में शामिल होकर 'थाई एयरवेज़' के काउंटर पर पहुंची। कस्टम क्लियरेंस के बाद चैन की सांस आयी कि चलो पहली सीढ़ी मैंने पार कर ली।

मंदगति से रनवे पर कुछ देर चलने के बाद हवाई जहाज़ एकाएक तेजी से दौड़ते हुए ऊपर उठने लगा तो कुछ-कुछ होता हुआ महसूस हुआ। इत्तफाक से खिड़की वाली सीट मिल गयी। दिल तो बच्चा है! न खिड़की से बाहर झांकने पर बहुत पतली-पतली सड़कें, उन पर रेंगते हुए वाहन,

हरियाली के आयताकार टुकड़े और फिर व्यवस्थित फ्लैट्स की मीनारें, शायद नौएडा या गुड़गांव की बहुमंजिला इमारते हैं, मैंने सोचा। और फिर ऊपर स्वच्छ नीला आसमान और नीचे रुई के बड़े-बड़े गोलों की चादर बिछी दिखाई देने लगी। विमान के अंदर हलचल शुरू हो गयी थी हल्के गुलाबी और हल्के बैंगनी रंग के सिल्क के थाई परिधान में सजी सँवरी विमान परिचारिकाएं पेय और खाना लेकर उपस्थित थीं।

सुनहली संध्या में बैंकाक के सुवर्णभूमि एयरपोर्ट पर जब विमान उतरा तो थोड़ी देर पहले हुई बारिश के कारण सब कुछ धुला-धुला सा लग रहा था लेकिन कुछ ही समय बाद जब बैंकाक से ऑकलैंड के लिए थाई एयरवेज के दूसरे विमान से उड़ान भरी तो एयरपोर्ट पर रौशनियों का मेला था। रात का पहला प्रहर बीत जाने के बाद मैं अपनी सीट से उठकर पीछे गयी तो कोई अपने लैपटॉप में व्यस्त दिखा, कोई अगली सीट के पीछे लगी स्क्रीन पर मनपसंद फिल्म देख रहा था। इलैक्ट्रॉनिक गैजेटों में उलझे लोगों को सोने की जल्दी नहीं थी। थोड़ी झपकियां लेने के बाद आँख खुली तो खिड़की के किनारों से रौशनी की किरणें जबरन अंदर आ रही थीं कलाई पर बंधी घड़ी में समय देखा तो रात का एक बजा था लेकिन सूर्योदय हो गया था यानि विमान धरती के दूसरे गोलार्ध में पहुंच गया था, तिथि बदल गयी थी।

11 अक्तूबर—दिन के दूसरे पहर में, समय से लगभग 5 मिनट पूर्व ही विमान ने ऑकलैंड की धरती का स्पर्श किया। लकड़ी से बने हुए कलात्मक प्रवेश द्वार पर अगरबत्ती की सी भीनी खुशबू और मंद मधुर संगीत ध्वनि यात्रियों का स्वागत कर रही थी। एयरपोर्ट से बाहर निकलती तो प्रदूषण रहित ठण्डी बयार और खिली धूप सी खिलखिलाती मेरी भतीजी प्रीति स्वागत के लिए तैयार थी। साफ खुली व्यवस्थित सड़कें, धूल का नामोनिशान नहीं था। दिल्ली की सड़कों में 'सब चलता है' की तर्ज़ पर ट्रैफिक रूल्ज़ तोड़ना गाड़ियों की पौंऽपौंऽऽ एक दूसरे से गुर्राते हुए लोग—उस सबसे कितनी अलग थी यह दुनिया!

प्रीति के घर तक पहुंचाने वाले रास्ते में हर घर के आसपास हरे भरे लॉन, फूलों से सजी क्यारियां, सही शब्दों में घर लैंडस्केप किए हुए लगते थे। अपने यहाँ लिटन साहब की दिल्ली या इंडिया गेट परवर्ती इलाकों में हरियाली का ऐसा पसारा दिखाई देता है। प्रीति के घर तक (तोतारा हाइट्स) पहुंचते हुए कई उतार चढ़ाव आए, किसी हिल स्टेशन की तरह। शोरगुल से रहित प्रकृति की ऐसी प्रचुरता भारत के पहाड़ी पर्यटन स्थलों में देखने को मिलती है।

12 अक्टूबर—प्रशान्त महासागर के स्वर्ग कहे जाने वाले फीजी पहुंचने के लिए मैं बेताब थी। फीजी का मौसम यद्यपि सदाबहार है, यहाँ न अधिक गर्मी होती है न अधिक सर्दी। पर्यटन की दृष्टि से अक्टूबर को सबसे अधिक उपयुक्त माना जाता है शायद इसीलिए रामायण सम्मेलन अक्टूबर में आयोजित किया गया था। यह आयोजन फीजी की राजधानी सुवा में था लेकिन फीजी का अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा, नैन्डी (Nadi) है। नैन्डी में ही 'स्लीपिंग जाइंट' नामक प्रसिद्ध उद्यान है, जहां संसार के सबसे बड़े आर्किड देखे जा सकते हैं। नाँदी और सुवा के बीच सिंगाटोका नामक प्रसिद्ध पर्यटन स्थल हैं जहां का मोहक समुद्री तट और साफ सुथरी रेत मन को मुग्ध कर देती हैं।

नैंडी एयरपोर्ट ऑकलैंड हवाई अड्डे जैसा लकदक न सही लेकिन बहुत बड़े भू भाग पर फैला था और उसका नवीनीकरण भी चल रहा था। यहाँ यूरोपीय लोग कम, भारतवंशी फीजी लोग अधिक दिखाई दिए, प्राय: मिलनसार और सहायता करने के लिए तत्पर। मेरे पास फीजी मुद्रा नहीं थी, फोन के लिए कार्ड कैसेट लूं। मेरी इस परेशानी को देखते हुए एक भारतवंशी युवती—जो एयरपोर्ट पर सेवारत थी—ने अपना वाईफाई 5 मिनट के लिए मुझे इस्तेमाल के लिए दे दिया ताकि मैं घर पर सूचना दे सकूं।

नैंदी से डौमेस्टिक फ्लाइट लेकर रात नौ बजे मैं जब सुवा पहुंची तो रामायण सम्मेलन के एक सहयोगी श्री दीपक गाड़ी लेकर आए हुए थे। एयरपोर्ट से सुवा सिटी सैन्टर की लम्बी यात्रा में बातचीत से मैंने जाना कि वे मूलत: राजस्थान के हैं और यहाँ एल.आई.सी. में कार्यरत हैं। सुवा सिटी में रामायण सम्मेलन के आयोजकों से परिचय और रात के भोजन के उपरान्त उन्होंने मुझे जब तनोवा होटल छोड़ा तो रात के बारह बज चुके थे और थकान महसूस हो रही थी लेकिन चार फ्लाइट्स में अकेली यात्रा करके मैं सुवा पहुंच गयी थी यह सोचकर मेरे आत्मविश्वास का ग्राफ और ऊपर हो गया था।

13 अक्टूबर—आंख खुली तो सुबह के आठ बजे थे पांचवीं मंजिल पर स्थित अपने कमरे की खिड़की से पर्दा हटाया, हल्की बारिश में नहाया सुवा शहर सामने था। नारियल के पेड़ों से घिरे मकानों की छतें ढलवां थीं और पृष्ठभूमि में लहराता हुआ समुद्र। प्रकृति की गोद में बसे इस शहर को जी भर देख सकूं, यह सोचते हुए तैयार हो रही थी होटल के रिसैप्शन से फोन आया श्री अनिल शर्मा (फीजी में भारतीय दूतावास में द्वितीय सचिव) मिलने के लिए आए हैं। रामायण सम्मेलन में भाग लेने के लिए आए विद्वज्जनों से घिरे कर्मठ अनिल जी लॉबी में बैठे थे। सुवा के दर्शनीय स्थलों और अच्छे समुद्री तट देखने की मेरी अभिलाषा का सम्मान करते हुए उन्होंने तुरन्त पैसिफिक यूनिवर्सिटी की दो छात्राओं—मोना और रंजिनी—जो हिंदी की विद्यार्थी हैं—को मेरी सहायता करने के लिए बुलवा लिया।

उत्साही रंजिनी और आत्मविश्वासी मोना ने अनिल जी से बात करके सुवा के सबसे सुन्दर समुद्री तट पैसिफिक हार्बर, क्राफ्ट्स म्यूज़ियम तथा यूनिवर्सिटी ऑफ साउथ पैसिफिक घुमाने की योजना बना ली। सबसे पहले वे दोनों मुझे सुवा के कनॉट प्लेस—सबसे आधुनिक और बड़े बाजार—में ले गयी, ताकि मैं यू.एस. डॉलर की जगह फीजी मुद्रा

ले सकूं। एक फीजी डॉलर भारत के तैंतीस रुपये के बराबर होता है। बड़े-बड़े मॉल्स से भरे इस इलाके से गुजरते हुए उन्होंने मेरे पर्स पर लगे हुए एयरलाइन्स के टैग भी उतरवा दिए और पर्स को संभालकर रखने की हिदायत दी ताकि मुझे टूरिस्ट जानकर मेरा पर्स ही कोई मुझसे छीन न ले। पर्स में पैसों के अलावा पासपोर्ट तथा अन्य जरूरी कागज़ात भी थे; मैं चौकन्नी हो गयी। तय यह हुआ कि बस से पास ही के कसबे नेबुआ तक चलें, वहां उनके परिचित से टैक्सी किराए पर ले लेंगे जिसे मोना चला लेगी। इस तरह 50 डॉलर देकर टैक्सी दिन भर हम अपने पास रख सकते हैं।

नेबुआ से पैसिफिक हार्बर लगभग 20 कि.मी. की दूरी पर है। सड़क के साथ-साथ बायीं ओर नारियल के पेड़ों की कतार थीं, उसके पीछे लहराते समुद्र का विस्तार बीच-बीच में दिखाई देती नौकाएं। दायीं ओर खेतों और बागानों के बीच कहीं-कहीं लकड़ी के बने हुए लगभग एक ही जैसे घर। पैसिफिक हार्बर नामक इस पर्यटन स्थल के आसपास बड़े-बड़े हरे-भरे फार्म हाऊस हैं जिनके मालिक ऑस्ट्रेलिया आदि देशों में रहते हैं और अपनी भागदौड़ से भरी ज़िन्दगी से ऊब कर कभी-कभार छुट्टी मनाने प्रकृति के निकट चले आते हैं। रंजिनी के पिता जैसे स्थानीय लोग ऐसे फॉर्म हाऊसों की देखभाल करते हैं।

'पैसिफिक हार्बर रिसोर्ट' की भव्य इमारत और स्वागत कक्ष की सुरुचिपूर्ण सज्जा उसके पांच सितारा होने की घोषणा कर रहे थे। मौसम का आनंद लेते हुए कुछ विदेशी पर्यटक, बड़े से लॉन के बीच कलात्मक आकार में बने स्विमिंग पूल में पानी से खेल रहे थे। इस जगह का असली आकर्षण था इसके साथ सटा हुआ विस्तृत समुद्र तट। बादलों के साथ आंख मिचौली खेलते सूर्य की किरणें इस जलराशि पर अनेक धूपछाँही चित्र बना रही थी।

लौटते हुए पैसिफिक रिसोर्ट के नजदीक से कुछ ही दूरी पर बनी फीजी कलाकृतियों की एक मार्कीट में भी हम गए जहां लकड़ी, सीपी और शंखों से बने सुंदर 'सोविनियर' उपलब्ध थे पर मेरी युवा सखियों ने हिदायत दी कि यहाँ मुझे सिर्फ चीजों को देखना चाहिए खरीददारी के लिए वे मुझे कहीं और ले जाएंगी क्योंकि यहाँ पर्यटकों से ज्यादा पैसे वसूले जाते हैं, मुझे दिल्ली में जनपथ के दुकानदार याद आ गए जो विदेशी पर्यटकों से दुगुने तिगुने पैसे ऐंठने की कोशिश करते हैं।

दोपहर के खाने का समय था। रंजिनी और मौना का गाँव रास्ते में पड़ता था। कुछ संकोच के साथ उन्होंने खाने के लिए मुझसे पूछा कि क्या मैं उनके घर खाना खाना पसंद करूंगी? फीजी के आम जन से मिलने का इससे अच्छा और क्या मौका हो सकता था, मैंने तुरंत हां कह दी। शांत प्रकृति के अंचल में खुली जमीन पर बने हुए इन भारतवंशियों के लकड़ी के घर सादा लेकिन सुरुचिपूर्ण थे। दोनों के घर में बहुत सुंदर मंदिर थे जहां ढोलक मंजीरे हारमोनियम आदि रखे हुए थे। रंजिनी की सुघड़ मां ने बताया कि हर रोज वहां किसी न किसी के घर पर भजन कीर्तन होता रहता है। सोमवार को शिवजी, मंगलवार को हनुमान जी और सप्ताह के अन्य दिनों शेष देवताओं से जुड़े भजन गाए जाते हैं। रंजिनी के पिता दक्षिण भारतीयों के वंशज हैं और मां के पूर्वज उत्तर भारत से थे। मोना के माता पिता उत्तर भारत में रहते हैं वह स्वयं भी भारत में पली बढ़ी है। लेकिन उसके पति फीजी में बिहार से आकर बसे भारतवंशी हैं। शर्तबंदी के तहत आए हुए श्रमिकों ने कालान्तर में अन्तर्जातीय विवाह कर लिए अत: फीजी की वर्तमान पीढ़ी में भारत के अनेक प्रांतों का मिश्रण है इसी तरह 'फीजी हिन्दी' जिसे स्थानीय लोग 'फीजी बात' कहते हैं, उसमें भी उत्तर प्रदेश, बिहार, हरियाणा, पंजाब और दक्षिण भारत की भाषाओं का मिलाजुला रूप है। इसीलिए इस देश को छोटा भारत या मिनी इंडिया कहा जा सकता है।

तनोआ होटल पहुंचने पर सूचना मिली की रात्रिभोज के लिए रामायण सम्मेलन में आए सभी मेहमान श्री अनिल शर्मा के घर पर आमंत्रित हैं। अब तक त्रिनिदाद, मलेशिया और भारत से बहुत से विद्वज्जन सुवा पहुंच गए थे। अनिल जी के सलीके से सजे हुए घर में श्रीमती सरोज शर्मा ने हाई कमीशन के अन्य अधिकारियों की पत्नियों की सहायता से तरह तरह के सुस्वाद व्यंजनों की व्यवस्था की, उतने ही स्नेह से आग्रह करके खिलाया भी। वहीं पर 14 अक्टूबर दोपहर को भारतीय हाईकमीशन में इस सम्मेलन में आए सभी अतिथियों के औपचारिक स्वागत की सूचना और प्रीतिभोज के निमंत्रण पत्र भी हमें दिए गए।

14 अक्टूबर—सुबह 10 बजे मेरी युवा सखियां मोटर लेकर तनोआ होटल पहुंच गयीं। तय यह हुआ कि सबसे पहले 'यूनिवर्सिटी ऑफ साउथ पैसिफिक' का एक चक्कर लगा लिया जाए। समुद्र के किनारे बने इसके विशाल कैम्पस में विज्ञान, मानविकी, प्रबंधन आदि अलग-अलग विषयों के लिए अलग-अलग इमारतें हैं। कुछ पुरानी और कुछ जापान आदि के सहयोग से हाल ही में बनी हुईं। दिव्यांगों की और यूनिवर्सिटी कर्मचारियों की सुविधाओं का पूरा ध्यान रखा गया है। स्नातक स्तर पर यहाँ हिंदी की भी पढ़ाई होती है अत: लायब्रेरी में मृगनयनी, प्रेमचंद का कथा साहित्य, फीजी हिंदी के लेखकों जैसे डॉ. सुब्रमणी आदि की रचनाएं उपलब्ध थीं। फीजी लेखक विवेकानंद शर्मा का उपन्यास 'प्रशान्त की लहरें' मैंने लायब्रेरी के विक्रय केन्द्र से खरीदी।

हमारा अगला पड़ाव था फीजी का 'क्राफ्ट्स म्यूज़ियम'। यह संग्रहालय बाहर से भारत के ही किसी कला संग्रहालय जैसा दिखता है, इसमें प्रवेश के लिए नौ डॉलर की टिकट लेनी पड़ती है मगर चतुर रंजिनी ने मेरे कान में फुसफुसाया कि वह अपने साथ मेरी भी टिकट ले लेगी तो छ: डॉलर में तीनों की टिकट हो जाएगी। फीजी का इतिहास, संस्कृति और भौगोलिक सम्पदा जीवन्त रूप में इस संग्रहालय में प्रस्तुत है। गन्ने की खेती और चीनी मिलों में काम करने के लिए लाए गए गिरमिटिया

लोगों को दिया जाने वाला 8x10 खोली नुमा कमरा, जिसमें एक खाट, तवा, सिलबट्टा, रसोई के बर्तन, टीन के कनस्तर को काट कर बनाया गया चूल्हा रखे थे, जो उनके अमानवीय जीवन की कथा बयान कर रहे थे। फीजी के मूल निवासियों के जीवन तथा समुद्र से घिरे इन द्वीपों के जल जन्तुओं की अनोखी दुनिया की झलक भी यहाँ बखूबी मिलती है।

घड़ी पर नज़र पड़ते ही फीजी संस्कृति की इस सम्मोहक दुनिया से बाहर आना पड़ा क्योंकि ठीक एक बजे फीजी में भारत के उच्चायुक्त श्री सकपाल जी के यहाँ पहुंचना था। आठ देशों से आए रामायण के विशेषज्ञों और अयोध्या से आए रामलीला कलाकारों का एक बड़े हॉलनुमा कमरे में श्री सकपाल जी ने औपचारिक स्वागत किया। वरिष्ठ रामकथा लेखक श्री नरेन्द्र कोहली, श्री राजेन्द्र अरुण, डॉ. सतीश आलोक आदि ने रामायण सम्मेलन के लिए अपनी शुभकामनाएं दीं। तत्पश्चात उच्चायुक्त आवास के हरे भरे लॉन में श्री सकपाल और उनकी धर्मपत्नी की मेहमान नवाजी का पूरा लुत्फ हमने उठाया। रामायण सम्मेलन का औपचारिक आरंभ संध्याकाल में सुवा सिटी सैन्टर में था। मुख्य अतिथि एटॉर्नी जनरल और अर्थनीति मंत्री श्री ऐयाज सैयद कयूम और अन्य गणमान्य मन्त्रियों ने भारतीय शैली में दीप प्रज्वलित किया, फीजी सेवाश्रम संघ के स्वामी सम्पूर्णानंद द्वारा मंत्रोच्चार हुआ। फीजी किशोरियों द्वारा भरतनाट्यम तथा फीजियन नृत्य 'मैके' ने समा बांध दिया।

15-16 अक्टूबर—राम की चिरपरिचित कथा और उसके बहुचर्चित महत्व से कुछ अलग थे 15 और 16 अक्टूबर को हुए रामायण मंथन के सत्र। दोनों दिन विज्ञान की दृष्टि से रामायण, रामकथा में प्रबन्धन के सूत्र, रामायण की भाषा, रामायण में निहित राष्ट्र निर्माण की प्रेरणा, हिन्दुत्व और रामचरितमानस तथा रामायण के साहित्यिक सौन्दर्य पर विद्वत्तापूर्ण आलेख पढ़े गए और यथासंभव कम्प्यूटिंग टैक्नीक से पर्दे पर दिखाए भी गए। जन मन में रमे मर्यादापुरुषोत्तम राम की जीवन गाथा के अभूतपूर्व अर्थ खुले; सभागार से उठने का मन ही नहीं होता था। सन् 1991 में स्व. श्री लल्लनप्रसाद व्यास द्वारा आयोजित लुवेन यूनिवर्सिटी (बेल्ज़ियम) में आयोजित रामायण सम्मेलन में भी मैंने भाग लिया था, लेकिन वहां पर्चा अंग्रेजी में पढ़ना पड़ा था, यहाँ तो हिन्दी पढ़ने और समझने वाले भारतवंशी श्रोताओं से सभागार भरा रहता था। सुवा में आयोजित इस सम्मेलन को राजकीय संरक्षण और फीजी सेवाश्रम संघ का सहयोग भी मिल रहा था अत: आवास और भोजनादि व्यवस्था की दृष्टि से यहाँ स्थिति बेहतर थी। 15 और 16 अक्टूबर दोनों दिन दोपहर के भोजन के साथ-साथ इसी सभागार के दूसरे तल पर सुवा शहर के छोटे-छोटे बच्चों द्वारा अभिनीत रामायण प्रसंगों और महिला मंडलियों के भजन गायन और नृत्य प्रतिभा का प्रदर्शन भी देखने को मिला।

15 अक्टूबर की संध्या का विशेष आकर्षण था, अयोध्या से आई हुई रामलीला मंडली की प्रस्तुति। परम्परागत शैली में इनके द्वारा मंचित सीता स्वयंवर को देखने के लिए सुवा सिटी सैंटर का सभागार खचाखच भरा था। 16 अक्टूबर की संध्या को दिल्ली के डॉ. रामअवतार शर्मा ने सार्थक बना दिया, अयोध्या से लेकर लंका तक राम जिन-जिन स्थानों पर गए उन स्थानों की बार-बार यात्रा करके स्थानीय साक्ष्यों के सहारे डॉ. शर्मा ने इस पर एक सुंदर वृत्तचित्र बनाया है। उत्तर प्रदेश सरकार ने डॉ. शर्मा के इस प्रयास की सराहना की है। समापन समारोह में फीजी के शिक्षा कला और संस्कृति मंत्री श्री महेन्द्र रेड्डी ने सभी विद्वज्जनों को शॉल और स्मृति चिह्न भेंट करते हुए धन्यवाद ज्ञापन किया।

17 अक्टूबर—अगली सुबह ठीक सात बजे मैं तैयार हो गयी खूबसूरत फीजी को विदा कहने के लिए। उस रात मेरे कमरे में रुकी डॉ. सरोजबाला से गले मिलकर गुलाबी फूलों और गुब्बारों से सजे रेस्टॉरेंट में आखिरी बार नाश्ता करने पहुंची। अक्टूबर की गुलाबी ठंडक के कारण फीजी में अक्टूबर मास को पिंक्टोबर कहा जाता है बुफे ब्रेकफास्ट से जल्दी जल्दी टोस्ट और जूस लिया क्योंकि फीजी सेवाश्रम संघ के एक कर्त्तव्यनिष्ठ कार्यकर्ता मेरे लिए मोटर लेकर पहुंच गए थे।

सुवा के स्थानीय एयरपोर्ट पर पहुंच कर पता चला कि सुवा से ऑकलैंड जाने वाली सीधी फ्लाइट एक महीने से स्थगित है अत- वे मुझे 'नैंदी' (Nadi) तक मोटर से भेज सकते हैं; वहां से दोपहर तीन बजे ऑकलैंड की फ्लाइट मिलेगी। मुझे दुविधा में पड़े देखकर फीजी एयरपोर्ट से एक भले से अधिकारी ऑफिस में अंदर गए और पन्द्रह मिनट बाद आकर उन्होंने मुझे आश्वस्त किया कि 10.30 पर नैंदी जाने वाली फ्लाइट में एक सीट मेरे लिए मैनेज कर ली गयी है। नैन्दी एयरपोर्ट पर मुझे 3-4 घंटे इंतजार करना पड़ेगा इसकी भरपाई के लिए बीस फीजी डालर का एक कूपन भी उन्होंने मुझे थमा दिया, जिससे मैं कुछ खा पी सकूं। नैंदी पहुंचने पर पता चला कि फ्लाइट और लेट हो गई है फिर से एक फूड कूपन दे दिया गया। फीजी एयरलाइन्स के सौजन्य से मुझे खूब खाने-पीने और नैंदी एयरपोर्ट की ड्यूटी फ्री शाप्स में देखादेखी का समय मिल गया। अंतत: दोपहर की बजाए रात 7.30 मैं ऑकलैंड पहुंची।

18 अक्टूबर—अगली सुबह मैं ऑकलैंड के एक भारतीय स्टोर में गयी प्रीति के साथ; करवा चौथ की खरीददारी के लिए। लाल गुलाबी रंगों की अनेक छटाएं बिखेरते हुए नये-नये डिजाईन के आधुनिक सूट और लहंगे, मेंहदी भरी हुई ट्यूब्स, चूड़ियां, पूजा के सामान से सजी हुई थालियाँ सब कुछ उपलब्ध था, जैसे हम भारत में ही किसी दुकान पर खड़े हों। गोल्डन बेल से सजा चटख लाल रंग का सूट प्रीति ने पसंद किया और सामने बीकानेर वाला की दुकान से सर्गी (करवा चौथ का नाश्ता) के लिए मिठाईयाँ। मेंहदी लगाने के लिए शाम को किसी एक भारतीय महिला के घर पर इकट्ठा होने की योजना बनायी जा रही थी। करवा चौथ का चाँद देखने के लिए यहाँ सब भारतीय परिवार किसी एक के घर पर इकट्ठा हो जाते हैं। हर परिवार अपने घर से एक पकवान

बनाकर लाता है और महिलाओं के चाँद देखने की रस्म के बाद सभी लोग मिलकर रात खाना खाते हैं। विदेश में बसे भारतीय परिवार रीति रिवाजों का उतनी ही शिद्दत के साथ पालन करते हैं यह सोचते मेरी आँख लग गयी।

19 अक्टूबर—करवा चौथ का व्रत मैं परम्परागत ढंग से कभी नहीं रखती, मुझे दिल्ली के लिए उस सुबह रवाना भी होना था। प्रीति के घर पर बने छोटे से मन्दिर में पति और परिवार के लिए ईश्वर से अनुकम्पा की याचना करके मैं निकल पड़ी। प्रिय पुलकित (भतीजा) ने रात को ही 'चैक इन' करवा दिया था। एयरपोर्ट पर एक जानकार भी मिल गयीं जो दिल्ली जा रही थीं, मन को कुछ तसल्ली मिली।

थाई एअरवेज का यह विमान उस दोपहरी में ऑस्ट्रेलिया महाद्वीप के ऊपर से गुज़र रहा था। मन भावुक हो रहा था मेरा छोटा भाई जो बचपन में भाई से अधिक मेरा दोस्त हुआ करता था, स्कूल की हर बात मुझसे साझा करता था, मैलबार्न में पिछले तैंतीस वर्ष से बसा हुआ है, अत: कभी-कभी मिल पाते हैं, मन में टीस सी उठती है—जाने कहां गए वो दिन। लगभग 8 घंटे बीत जाने पर सामने लगी स्क्रीन दिखा रही थी कि बाहर तापमान 49 डिग्री फौरनहाइट है, विमान 38000 फीट ऊँचाई पर। गला सूखने लगा था और कुछ बेचैनी सी लगने लगी। घंटी का बटन दबाकर परिचारिका को बुलाया पानी और फिर जूस पीकर मन कुछ शान्त हुआ।

सुवर्ण भूमि एयरपोर्ट तक पहुंचते-पहुंचते न्यूजीलैंड की ठंडक गायब हो गयी थी। गर्म जैकेट और मफलर उतारना पड़ा, यानि अब हम धरती के दूसरे गालोर्ध में पहुंच गए थे। एक अन्य सहयात्री की सहायता से एअरपोर्ट का वाई-फाई ऑन किया और दिल्ली में घर पर अपने आने की सूचना दे दी। थाई एयरवेज़ की यह उड़ान समय से पहले ही अर्थात् लगभग रात में 2 बजे ही दिल्ली पहुंच गयी थी लेकिन इतनी रात में घर जाना मुझे सुरक्षित नहीं लग रहा था अत: मैंने घर पर सूचित कर दिया था कि 2-3 घंटे मैं एयरपोर्ट पर ही रुक जाऊँगी, अतीत में एयरपोर्ट के आसपास हुए एक दो हादसे मेरे जेहन में थे। कस्टम क्लियरेंस के बाद एक एअरपोर्ट कर्मी की मदद से मैंने आपस में जुड़ी तीन कुर्सियाँ ढूँढ़ लीं जहाँ पैर फैलाकर आराम कर सकूं। उनींदी आंखों के पर्दे पर प्रकृति सौन्दर्य से भरपूर फीजी और उसके समुद्र तट, फीजी वासियों का अतिथि सत्कार, न्यूज़ीलैंड में परिवार से संक्षिप्त मुलाकात के दृश्य आ जा रहे थे तभी 5 बजे फोन की घंटी बजी, पतिदेव ने मीठे स्वर में सूचित किया कि वे मुझे लेने के लिए आ रहे हैं।

■■■

परिचय

कथा यू.के., लंदन

यह संस्था ब्रिटेन के कहानीकारों को न केवल आपस में जोड़ती है वरन् उन्हें विश्व के हिंदी-जगत में प्रतिष्ठित भी करती है।

'कथा यू.के.' प्रतिवर्ष यू.के. में भारत एवं ब्रिटेन की किसी उत्कृष्ट साहित्यिक पुस्तक का चयन कर, जून अथवा जुलाई के मध्य उसके लेखक को अंतरराष्ट्रीय 'इंदु कथा साहित्य सम्मान' एवं 'पदमानंद साहित्य सम्मान' से सम्मानित करती है। 'कथा यू.के.' चयनित भारतीय हिंदी पुस्तक के लेखक को एयर इंडिया के सौजन्य से हवाई यात्रा का व्यय एवं एक सप्ताह का लंदन-आतिथ्य देती है, साथ ही उन्हें नेहरू-केन्द्र में स्मृतिचिह्न, श्रीफल और शॉल भेंट कर सम्मानित करती है। यह संस्था मासिक कथा-गोष्ठियाँ करती है जिसमें मूल रूप से ब्रिटेन के दो कथाकार स्वलिखित रचनाएँ पढ़ते हैं। कथा-वाचन के बाद श्रोताओं के विचार और मत आमंत्रित होते हैं। कथा-वाचन की प्रतिक्रियाएँ इंटरनेट पर प्रसारित की जाती हैं। 'कथा यू.के.' प्रतिवर्ष 'सोविनियर' के रूप में एक पत्रिका निकालती है। कथा-गोष्ठी में पढ़ी गई कहानियों को गोष्ठी में हुई प्रतिक्रियाओं के साथ पुस्तक के रूप में प्रकाशित भी करती है। 'कथा यू.के.' ब्रिटेन में आए हिंदी के सैलानी कथाकार अतिथियों का भी स्वागत-समारोह आदि करती है। 'कथा यू.के.' की कथा-गोष्ठियाँ यू.के. के विभिन्न शहरों में भी आयोजित होती रहती हैं। 'कथा यू.के.' की योजनाओं में कहानियों का मंचन, कहानी-कार्यशाला और कहानी-प्रतियोगिता आदि भी शामिल हैं जिसमें युवावर्ग का भी प्रतिनिधित्व होता है। 'कथा यू.के.' के सारे कार्यक्रम हिंदी के प्रचार-प्रसार को ध्यान में रखते हुए नि:शुल्क आयोजित होते हैं। 'कथा यू.के.' के मुख्य कार्यकर्ता हैं श्री तेजेन्द्र शर्मा और नयना शर्मा आदि।

■■■

गिरमिटियों के 'बैठका' से विश्वविद्यालय तक

डॉ. उमेश कुमार सिंह

"...हिंदी के विकास के संदर्भ में मॉरीशस में 'बैठका' कैसे अस्तित्व में आई और वह कैसे हिंदी के साथ जुड़ गई। 'बैठका' के अस्तित्व में आने के इतिहास पर एक दृष्टि डालना अति आवश्यक हो जाता है क्योंकि भारत में 'बैठक' वह स्थान है जहाँ पर समाज के लोग अपने समाज के अन्य लोगों के साथ बैठकर चर्चा-परिचर्चा अथवा दूसरे शब्दों में विचार विनिमय किया करते हैं। मॉरीशस के लेखक पूजानंद नेमा ने बैठका की परिभाषा इस प्रकार दी है, "बैठका भारतीय आप्रवासियों के सामाजिक जीवन में न केवल एक शैक्षिक संस्था है, बल्कि भारतवंशियों के सम्पूर्ण विकास का स्रोत भी है, जहाँ पर उत्सवों और पर्वों के जरिये धर्म, बहुधा, संस्कृति आदि का प्रचार प्रसार हुआ।"..."

सम्पर्क : हिंदी चेयर, महात्मा गाँधी संस्थान, मोका, मॉरीशस
E-mail : umesh_jnu@rediffmail.com
Mobile : 230-57022776 (Mauritius),
09423307797 (Bharat)

मॉरीशस दुनिया का एकमात्र देश है जो पूरी तरह से गिरमिटिया आप्रवासियों का देश कहा जा सकता है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि इस देश को गिरमिटियों ने खून पसीने से सींचकर पुष्पित और पल्लवित किया है। यह देश भारत की तरह मिलीजुली संस्कृति वाला देश हैं जहाँ पर सभी धर्मों के लोग आपस में मिल-जुलकर साथ-साथ रहते हैं और अपने-अपने धार्मिक रीति-रिवाजों का बड़ी सहिष्णुता के साथ पालन करते हैं। इस देश के वासियों को अपनी संस्कृति पर गर्व है। इस देश में भारतीय आप्रवासी सबसे बड़ी तादाद में रहते हैं, यहाँ पर सामान्य परिस्थितियों में 19वीं शताब्दी में दुनिया का सबसे बड़ा विस्थापन (माइग्रेशन) हुआ था जिसमें 4.5 लाख लोग रोजगार के लिए गए थे। वर्तमान में मॉरीशस की जनसंख्या 12 लाख 55 हजार है। पूरे देश को नौ जिलों में विभाजित किया गया है जो इस प्रकार है: 1. फलक, 2. ग्रैंड पोर्ट, 3. मोका, 4. पाम्प्लेमुस (उत्तर में), 5. रिव्येर ज्युसर राम्पार, 6. रिव्येर नॉयर (ब्लेक रिवर), 7. सावन (दक्षिण में), 8. पोर्ट लुईस, 9. पलेनस विल्हम आदि।

मॉरीशस हिंद महासागर में बसा एक प्रमुख द्वीप है। इस देश को प्रकृति का ऐसा वरदान प्राप्त है कि यहाँ लगभग हर समय आसमान में बादल देखे जा सकते हैं और वे बादल आपके ऊपर महीन-महीन बूँदों की बौछार करते हुए से प्रतीत होते हैं। उन महीन-महीन बूँदों में भीगने के अनुभव से ऐसा प्रतीत होता है जैसे सैलानियों के ऊपर इत्र का छिड़काव किया जा रहा है। इस प्राकृतिक सौंदर्य की छटा से भरपूर देश में ऐसा अद्भुत स्वागत किया जाता है। इस देश के नीले सागर के किनारों पर दुनिया के खूबसूरत बीच हैं जिनकी कुल संख्या लगभग 200 के करीब है। मॉरीशस हिंद महासागर का बहुत छोटा द्वीप होने के बावजूद यहाँ पर गाँवों की हरियाली आपका मन मोह लेती है। इस देश में भारतीयों की संख्या दूसरे देशों के आप्रवासियों से कहीं अधिक है। विदेशी लेखक बरन ग्रंट ने अपने लेखन में जिक्र किया है कि 1769 में हिंदुस्तान से बहुत से मद्रासी पांडिचेरी से तथा सन 1758 में बंगाल से बंगाली लोग आकर मॉरीशस में बसे थे परन्तु इस देश में हिंदी की शुरुआत 1834 से ही मानी जा सकती है क्योंकि इस वर्ष पहले भारतीय आप्रवासी ने आप्रवासी घाट पर अपना कदम रखा था। हिंदुस्तान से शर्तबंदी कुली मजदूर के रूप में पहले तीन वर्ष के गिरमिट करार पर परन्तु बाद में पांच वर्ष के करार पर लाए गए थे।

इस देश में ग्यारह भाषाएँ बोली जाती हैं जिनमें भोजपुरी, खड़ी बोली, तमिल, उर्दू, तेलुगू, मराठी, गुजराती, अंग्रेजी, फ्रेंच, चीनी तथा मिश्रित

भाषा क्रियोल आदि प्रमुख हैं। भारत के अतिरिक्त सभी देशों में बोली जाने वाली हिंदी की दृष्टि से मॉरीशस सबसे आगे है। यही वह देश है जहाँ सबसे पहले हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति जागरूकता आई थी। इस देश से सन 1909 में हिंदुस्तानी नामक पत्र प्रकाशित हुआ था जिसके संपादक मणिलाल डॉक्टर थे।

इसके बाद हमें उस दौर की परिस्थितियों से भी परिचित होने की आवश्यकता जान पड़ती है। उन परिस्थितियों को जानने के लिए हमको सन 1934 के इतिहास को खंगालना पड़ेगा। उस दौर में शर्तबंदी कानून के तहत गिरमिट करार पर कुली मजदूर गन्ने की खेती में काम करने के लिए भारत से मॉरीशस बुलवाए गए थे।

मॉरीशस देश में भले ही जापान की तरह प्राकृतिक संसाधनों का अभाव है, क्योंकि इस देश का निर्माण ज्वालामुखी की राख से हुआ है। यहाँ पर 19वीं सदी के प्रारंभ में बड़े पैमाने पर गन्ने की खेती की जाती थी। उस दौर में गन्ने से चीनी बनाने के लिए छोटे-बड़े सब कारखानों को मिलाकर लगभग 303 से अधिक चीनी मिलें तथा इससे कुछ अधिक संख्या में चीनी की कोठियां हुआ करती थीं। यह बात उस दौर की है, जब गन्ने की ढुलाई बैलगाड़ियों द्वारा की जाती थी। तब गन्ने की रुपाई से लेकर खुदाई और कटाई का सब काम मजदूर हाथ के द्वारा किया करते थे। आज भी मॉरीशस में लगभग 70 चीनी बनाने के बड़े कारखाने हैं परन्तु आज भी इतने चीनी बनाने के कारखानों के निशान प्रत्येक एक दो दो गाँवों के मध्य में एक चीनी कारखाने की चिमनी के निशान देखे जा सकते हैं। आज उदाहरण के तौर पर हवाई अड्डे के नजदीक समाज सेवक एवं शिक्षक डॉ. गंगू जी का गाँव है। उस क्षेत्र में कभी 7 चीनी कारखाने हुआ करते थे लेकिन आज उस पूरे इलाके में मात्र एक चीनी बनाने का कारखाना ही शेष रह गया है।

हिंदी के विकास के संदर्भ में मॉरीशस में 'बैठका' कैसे अस्तित्व में आई और वह कैसे हिंदी के साथ जुड़ गई। 'बैठका' के अस्तित्व में आने के इतिहास पर एक दृष्टि डालना अति आवश्यक हो जाता है क्योकि भारत में 'बैठक' वह स्थान है जहाँ पर समाज के लोग अपने समाज के अन्य लोगों के साथ बैठकर चर्चा-परिचर्चा अथवा दूसरे शब्दों में विचार विनिमय किया करते हैं। मॉरीशस के लेखक पूजानंद नेमा ने बैठका की परिभाषा इस प्रकार दी है, "बैठका भारतीय आप्रवासियों के सामाजिक जीवन में न केवल एक शैक्षिक संस्था है, बल्कि भारतवंशियों के सम्पूर्ण विकास का स्रोत भी है, जहाँ पर उत्सवों और पर्वों के जरिये धर्म, संस्कृति आदि का प्रचार-प्रसार हुआ।" इस प्रकार मॉरीशस में भारतवंशियों के जीवन के विकास के प्रत्येक सोपान तक की यात्रा में बैठक का अभूतपूर्व योगदान रहा है।

अब हम इस देश की हिंदी बैठकाओं के बारे में चर्चा करेंगे। इन चीनी मिलों में काम करने वाले गिरमिट कुली मजदूर शाम को काम के बाद खाने के उपरांत बैठक में मिलते थे, वहीं पर अपने दुःख-दर्द और कथा भागवत, सलाह-मशविरा और हिंदी की चर्चा आदि किया करते थे। यही वह बिंदु है जहाँ से हिंदी सीखने सिखाने का सूत्रपात हुआ था। इसी स्थान से 'हिंदी गई तो धर्म गया' का नारा पैदा हुआ था। इस कार्य से चीनी कोठियों के मालिक नाराज रहा करते थे। उन्होंने कुछ समय उपरांत इस बैठका पर भी प्रतिबंध लगा दिया था परन्तु इस सबके बाद भी कुलियों ने आपस में मिलना-जुलना नहीं छोड़ा था। पहले वे खुलकर एक-दूसरे से मिलते थे परन्तु प्रतिबंध लगाने के बाद अब वे छिपकर मिला करते थे। इस बैठका की बदौलत आज मॉरीशस में हिंदी, भोजपुरी जीवित ही नहीं है बल्कि उनमें जागरूकता भी आई है। इस बात का जिक्र अभिमन्यु अनत ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास 'लाल पसीना' में किया है।

आज मॉरीशस में हिंदी की जो स्थिति और प्रचलन है, उसके पीछे सही मायने उसे पीछे 'बैठका' से हिंदी की शुरुआत इतिहास से देना आवश्यक है। इस देश में आज हिंदी के शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए चार संस्थाएँ कार्य कर रही हैं जिनमें हिंदी प्रचारिणी सभा, आर्य सभा, आर्य रवि वेद सभा एवं महात्मा गाँधी संस्थान। हम इन संस्थाओं में से किसी के कार्य को कम अथवा अधिक नहीं माप सकते हैं क्योंकि हिंदी शिक्षण प्रशिक्षण के इस महायज्ञ में इन संस्थाओं ने भरपूर योगदान दिया है। इसके लिए पूरा समाज उनकी ऋणी रहेगा। इन स्वयं सेवी संस्थाओं और सभाओं का संक्षित विवरण जानकारी के लिए प्रस्तुत किया जा रहा है।

हिंदी प्रचारिणी सभा का मुख्यालय, लोंग माउंटेन, मॉरीशस में स्थित है। वर्तमान में इस संस्था के प्रधान श्री यंत्रदेव बुद्धू हैं जो हिंदी को नई ऊँचाइयों पर ले जाना चाहते हैं। इस संस्था के संस्थापक श्री रामलाल मंगर थे, जिन्होंने इस सभा की स्थापना 26 जून 1926 को की थी। उसके तत्काल बाद से यह संस्था हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए कार्य कर रही है पूरे देश में इसकी कुल 187 शाखाएँ हैं जिनमें हिंदी के पठन-पाठन का कार्य किया जा रहा है। आर्य सभा मॉरीशस का मुख्यालय पाई, मॉरीशस में स्थित है इसकी स्थापना वर्ष 1910 में हुई थी। प्रारंभ में इसका उद्देश्य आर्य सभा के उद्देश्यों का प्रचार-प्रसार करना था और इस प्रचार के लिए उन्होंने हिंदी भाषा को अपनाया था। इसके लिए सन 1934 में तिलक विद्यालय को एक राष्ट्रीय संस्था का रूप दिया गया। बाद में इसका नाम परिवर्तित करके हिंदी प्रचारिणी सभा कर दिया गया था। तब से लेकर आज तक हिंदी प्रचारिणी सभा शैक्षिक संस्था के रूप में हिंदी का निरंतर प्रचार-प्रसार कर रही है। 'दुर्गा हस्तलिखित पत्रिका' का प्रथम प्रकाशन इसी संस्था द्वारा किया गया था। वर्तमान में इसके प्रधान डॉ. उदय नारायण गंगू जी हैं। इसकी पूरे देश में 400 शाखाएँ हैं जिनमें से 175 शाखाओं में हिंदी के पठन-पाठन का कार्य चल रहा है।

आर्य रविवेद प्रचारिणी सभा, के वर्तमान में प्रधान श्री सत्यम गती हैं। यह संस्था, सादे मांस, पोस्ट ऑफिस के सामने, पोर्ट लुईस, मॉरीशस में स्थित है। इस संस्था की स्थापना 1934 में हुई थी परन्तु पंजीकरण सन 1956 में हुआ था। तब से लेकर यह संस्था हिंदी के प्रचार-प्रसार में लगी हुई है। इस संस्था की पूरे देश में 130 शाखाएँ हैं जिनमें हिंदी शिक्षण का कार्य किया जाता है। उनकी संख्या कुल 42 है तथा 14 शाखाएँ छात्र न मिलने के कारण बंद हो गई हैं। आज हिंदी बैठकाओं के बंद होने की स्थिति का सामना लगभग सभी संस्थाएँ कर रही हैं। इस देश में हिंदी के भविष्य के लिए चिंताजनक स्थिति है। इसके लिए अधिक से अधिक स्वयंसेवकों की आवश्यकता है जो सेवा भाव से हिंदी का प्रचार-प्रसार कर सकें।

इस प्रकार 19वीं सदी के मॉरीशस में स्थित चीनी कारखानों की बड़ी संख्या के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि प्रत्येक गाँव में उसकी जनसंख्या के आधार पर चार से पाँच बैठकाएं हुआ करती थीं। आज लगभग पूरे देश में छोटे-बड़े सब तरह के गाँवों को मिलाकर 180 गाँव हैं परन्तु मॉरीशस की विलेज काउंसिल के अनुसार 150 गाँव हैं। गाँव परिषद् द्वारा कुछ छोटे-छोटे दो गाँवों को मिलाकर एक गाँव कर दिया है, इसी कारण मॉरीशस के गाँवों की संख्या घटकर 150 रह गई है। इस आधार पर सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि आज प्रत्येक गाँव में कम से कम चार बैठका भी मान लें, इस आधार पर मॉरीशस के सभी गाँवों में बैठकाओं की संख्या 600 के आँकड़े को छू लेती है। आज मॉरीशस में हिंदी के लिए काम कर रही हिंदी सेवी संस्थाओं की बैठकाओं की गिनती सही मान लेते हैं, तो इन सभी संस्थाओं में आज बैठकाओं की कुल संख्या 404 के लगभग ही बैठती है।

मॉरीशस में हिंदी तथा अन्य विषयों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए महात्मा गाँधी संस्थान एकमात्र शिक्षण संस्था है। इस संस्थान में सभी भाषाओं के विशेषज्ञों की उपलब्धता है। यह संस्थान हिंदी के अतिरिक्त विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों का प्रतिनिधित्व करता है। इसकी आधारशिला 3 जून 1970 को भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी तथा मॉरीशस के प्रधानमंत्री सर शिवसागर रामगुलाम के कर कमलों द्वारा रखी गई थी। आज महात्मा गाँधी संस्थान, मॉरीशस में उच्च शिक्षा में हिंदी अध्ययन एवं अध्यापन के लिए पायोनियर एक अग्रणी संस्था मानी जाती है। वर्तमान में इस संस्थान के अध्यक्ष पद पर श्री जयनारायण मितू कार्यरत हैं। महानिदेशक के पद पर श्रीमती सूर्यकान्ति गयान जी, निदेशक के पद पर श्रीमती विदोत्मा कुंजल जी तथा रजिस्ट्रार के पद पर श्रीमती उमा कॉलेसर जी सफलतापूर्वक कार्य कर रही हैं जिनके कुशल निर्देशन में यह संस्थान हिंदी शिक्षा के क्षेत्र में नित नए मानक स्थापित कर रहा है।

इस संस्थान की प्रगति के आकलन के आधार पर कहा जा सकता है कि आज यह संस्थान स्वतंत्र विश्वविद्यालय के रूप में कार्य करने की क्षमता रखता है तथा अध्ययन, अध्यापन और शोध के क्षेत्र में विकास की नित नई ऊँचाइयाँ छू रहा है। आज यह संस्थान अपने छात्रों को मॉरीशस यूनिवर्सिटी से डिग्री प्रदान करता है। इस संस्थान में बी.ए., एम.ए., एम. फिल तथा पी-एच.डी. आदि की हिंदी की पढ़ाई करने के लिए मॉरीशस में एकमात्र संस्था है इसके अतिरिक्त हिंदी के साथ-साथ उर्दू, तमिल, तेलुगू, संस्कृत, फ्रेंच, इंग्लिश भाषाओं के विशेषज्ञ भी उपलब्ध हैं। इस संस्थान में वर्ष 2014-15 में उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर बी.ए. हिंदी में 108 तथा एम.ए. में 09 छात्र पंजीकृत हुए। इसके अतिरिक्त महात्मा गाँधी संस्थान एवं मॉरीशस इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन के संयुक्त तत्वावधान में पी-एच.डी. हिंदी में 21 छात्र, पी.जी.सी.ई. अंशकालिक हिंदी में 13 छात्र एवं पी.जी.सी.ई. पूर्णकालिक में 18 छात्र पंजीकृत हुए थे। इस संस्थान के पंजीकृत छात्रों के उपलब्ध आंकड़ों की गणना के आधार पर अच्छा परिणाम कहा जा सकता है।

मॉरीशस में महात्मा गाँधी संस्थन सरकार के द्वारा स्थापित एक संस्था है परन्तु इसके अतिरिक्त अन्य सभी संस्थाएं समाज द्वारा समाज के उत्थान के लिए खड़ी की गई थीं। इन संस्थाओं को कभी बैठक/सायंकालीन/सप्ताहांत स्कूल रूप में जाना जाता था, जो आज सरकारी तंत्र के रूप में बदल गई हैं। इन सभी संस्थाओं के सामूहिक प्रयास के परिणामस्वरूप देश ने लगभग 98 प्रतिशत साक्षरता के आंकड़े को छू लिया है, लेकिन यह सौ प्रतिशत सत्य है कि आज भी मॉरीशस में छात्र बहुतायत में हिंदी पढ़ने के साथ-साथ पढ़ा भी रहे हैं परन्तु आज की उच्च शिक्षा में छात्र फ्रेंच भाषा को बड़ी संख्या में पढ़ने के लिए चयन करते हैं। देश की जनसंख्या को देखते हुए हिंदी पढ़ने वाले छात्रों की संख्या में बढ़ोतरी होने की स्थिति में ही हिंदी की प्रगति संभव होने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है।

आज मॉरीशस में हिंदी के कई रूप देखने को मिल सकते हैं लेकिन आज जो रूप हिंदी का मॉरीशस में देखने को मिलता है उसमें फ्रेंच, इंग्लिश, भोजपुरी और क्रियोल के शब्दों का प्रयोग भी यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होता है। मेरी दृष्टि में इस तरह का प्रचलन स्थानीय लोग अपनी सुविधा के लिए बेहिचक करते हैं। महात्मा गाँधी संस्थान के वाहन चालक मुझसे हिंदी में ही बात करते हैं, उनके द्वारा बोली जाने वाली हिंदी को भी हिंदी का एक अलग रूप मान लिया जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। जैसे—"डोक्तेर पोर्ट लुईस में बड़का-बड़का जहाज आता है।"

"तोर भाई का करता" (तुम्हारा भाई क्या करता है)?

"तोर बहिन का करता" (तुम्हारे बहिन क्या करती है)

"उ दूकान से एगो पुस्तक खरीदलसा।" (उसने दुकान से एक पुस्तक खरीदी)।

इसी तरह कुछ वाक्य मॉरीशस की भोजपुरी में इस तरह कहे जा सकते हैं—

"तोर भाय कोनची करेला।" (तुम्हारा भाई क्या करता है)। कोनची = क्या, करेला = करता है।

"तोहर भाय कोनची करेलन।" (तुम्हारा भाई क्या करता है) सम्मानसूचक है।

"हम भाय दोक्तेर ह/हवन।" (हमारा भाई डॉक्टर है।) दोक्तेर = डॉक्टर, हवन = है।

आज हम सूचना क्रांति और बहु-भाषाओं के दौर में रह रहे हैं इसलिए अधिक से अधिक भाषा सीखने-सिखाने पर बल देने की आवश्यकता है। आज हिंदी सीखने के साथ-साथ दूसरी विदेशी भाषाओं को भी जानने की अति आवश्यकता है। इस दौर में भाषा ही ज्ञान प्राप्त करने का एक मात्र साधन है। भाषा हमें समाज, संस्कृति, रीति-रिवाजों से जोड़ती ही नहीं है बल्कि आज के दौर में भाषायी ज्ञान के द्वारा रोजगार की बहुतायत सी हो गई है।

आज दुनिया भर के उद्योगपति भारत के साथ व्यापार के लिए हाथ मिलाना चाहते हैं। इतना ही नहीं, प्रत्येक देश के उद्योगपति को अपने व्यापार को बढ़ाने और प्रचार-प्रसार के लिए उन्हें बड़े पैमाने पर दुभाषियों, अनुवादकों और प्रूफ रीडरों आदि की आवश्यकता तो है ही परन्तु इसके अतिरिक्त भारत की क्षेत्रीय भाषाओं और हिंदी फिल्म उद्योग में सभी फिल्मों को मिलाकर लगभग 1200 फिल्में प्रति वर्ष बनाई जाती है। आज के युग में बड़े बजट की फिल्मों को दुनिया भर में अनुवाद की मदद से प्रत्येक भाषा में एक साथ रिलीज किया जाता है। दुनियाभर के टी.वी. चैनलों में, समाचार पत्रों की सूचनाएं भी अनुवाद के द्वारा ही एक क्षण मात्र में एक कोने से दूसरे कोने तक पलक झपकते ही पहुँच जाती हैं। पर्यटन उद्योग, दवा, कपड़ा आदि प्रत्येक व्यापार के लिए विज्ञापन की आवश्यकता होती है, प्रत्येक सामान (प्रोडक्ट) के हैण्ड आउट पम्पलेट आदि को बनाने के लिए विज्ञापन की आवश्यकता होती है।

इस विश्लेषण के बाद हिंदी के क्षेत्र में नौकरी नहीं मिलती हैं यह नहीं कहा जा सकता है। किसी भी भाषा को रोजगार की कमी है, अथवा नौकरी नहीं मिलती है, इस आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता है परन्तु उसके लिए प्रयास करने की आवश्यकता होती है। यहाँ पर इस बात से कतई सहमत नहीं हुआ जा सकता है कि मॉरीशस के जो विद्यार्थी हिंदी, फ्रेंच और इंग्लिश को लेकर अपनी पढ़ाई पूरी करते हैं उनके पास नौकरी नहीं है अथवा नौकरी की कमी है। बल्कि नौकरी नहीं है जैसे शब्दों को स्वप्न में भी नहीं सोचा जा सकता है। इस बात के लिए मॉरीशस वासियों को बधाई देता हूँ कि वे तीन-तीन विदेशी भाषाओं का ज्ञान रखते हैं। इसी के चलते वे दुनिया में अपने को श्रेष्ठ साबित कर सकते हैं। विचारों से लोग ऊँचे उठते और नीचे गिरते हैं। अंत में नि:संकोच कहा जा सकता है कि मॉरीशस में हिंदी के प्रचार-प्रसार का जो सिलसिला हिंदी बैठका से प्रारंभ हुआ था, आज उसने वट वृक्ष का आकार ग्रहण कर लिया है, अर्थात् मॉरीशस में हिंदी प्राइमरी से विश्वविद्यालय स्तर तक पढ़ाई जाती है इसलिए इस देश में हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है परन्तु इसके लिए निरंतर प्रयास करते रहने की अति आवश्यकता है।

संदर्भ—

1. A pictorial recollection (2001), Labor immigrants in Maritius, MGI, ISBN 99903393925
2. मॉरीशस में विश्वविद्यालय स्तर पर हिंदी शिक्षण, अलका धनपत।
3. बैठक का अर्थ एवं परिभाषा, वसंत 138, अभी उदोय, महात्मा गाँधी संस्थान, मोका, मॉरीशस।
4. मॉरीशस का इतिहास, पंडित आत्माराम विश्वनाथ, सं. प्रह्लाद रामशरण।
5. हिंदी प्रचारिणी सभा का एक संक्षिप्त परिचय।
6. आर्य सभा का संक्षिप्त परिचय।
7. आर्य रविवेद सभा का संक्षिप्त परिचय, पोर्ट लुईस, सादे मॉस।

गिरमिटिया देश फीजी : हिंदी पत्रकारिता के 103 वर्ष

डॉ. जवाहर कर्नावट

फीजी एक बहुजातीय देश है जहाँ भारतीयों के अतिरिक्त वहाँ के मूल निवासी काईबीती (फिजियन) रहते हैं। आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड के लोग भी पर्याप्त संख्या में फीजी में हैं। सबकी भाषा एवं धर्म अलग-अलग हैं किंतु हिंदी भाषा जाति तथा धर्म के बंधन से ऊपर उठकर सभी भारतीयों के लिए ही नहीं फीजी के समस्त निवासियों के बीच संपर्क की भाषा बनी हुई है। इस देश में हिंदी पत्रकारिता के गौरवशाली 103 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं।

अपनी फीजी द्वीप की यात्रा के दौरान हिंदी पत्रकारिता के 100से अधिक वर्षों के इतिहास को खंगालना किसी रोचक दास्तान से कम नहीं है। सन् 1913 में डॉ. मणिलाल ने भारतीयों को संगठित करने के लिए 'द सेटलर' पत्र का प्रकाशन अंग्रेजी से प्रारंभ किया था। किंतु उन्हें शीघ्र ही यह अनुभव हो गया कि देश के कोने-कोने में बसे हुए भारतीयों तक संदेश पहुँचाने के लिए अंग्रेजी उतनी कारगर नहीं हो सकती जितनी की उनकी अपनी भाषा हिंदी। इसीलिए उन्होंने 'द सेटलर' को अंग्रेजी संस्करण के साथ ही उसको हिंदी में भी साइक्लोस्टाइल रूप में निकालना प्रारंभ कर दिया। 'द सेटलर' पत्र का यह हिंदी संस्करण फीजी में हिंदी पत्रकारिता का शुरुआती कदम था। धीरे-धीरे इस पत्र की लोकप्रियता बढ़ने लगी और वह समस्त भारतीयों को समाचार के माध्यम से संगठित करने लगा। इस पत्र के हिंदी संस्करण के संपादन का दायित्व संभाला पं. शिवराम शर्मा ने। हिंदी के प्रति बढ़ती हुई रुचि तथा हिंदी में समाचार जानने और पढ़ने की लालसा ने कई भारतीयों को हिंदी पत्र निकालने के लिए प्रेरित किया।

दूसरे दशक में फीजी में कई हिंदी पत्रों के प्रकाशन की शुरुआत हुई। इन पत्रों में 'फीजी समाचार', 'भारतपुत्र', 'वृद्धि' तथा 'वृद्धिवाणी' लोकप्रिय हुए, किंतु फीजी समाचार के अतिरिक्त कोई अन्य पत्र अधिक समय तक नहीं चल सका। फीजी समाचार का प्रकाशन इंडियन प्रिंटिंग तथा पब्लिशिंग कम्पनी द्वारा 1923 में शुरू हुआ और इसके प्रथम संपादक थे—बाबू राम सिंह। यह पत्र 1957 ई. तक प्रकाशित हुआ और इसके अंतिम संपादक रहे नौसोरी प्रांत के पं. चंद्रदेव सिंह। पं. चंद्रदेव की रुचि सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा सामाजिक कार्यों में थी। आपको हिंदी, काईबीती तथा अंग्रेजी भाषा का अच्छा ज्ञान था। वे फीजी रेडियो के लिए कहानी तथा प्रहसन आदि भी लिखा करते थे। फीजी समाचार ने उनके संपादन काल में पर्याप्त लोकप्रियता प्राप्त की तथा वह हर वर्ग के भारतीयों के बीच बड़े चाव से पढ़ा जाता था।

"...फीजी में हिंदी पत्र-पत्रिकाओं के प्रारंभ एवं बंद होने का सिलसिला लगातार चलता रहा। पं. नंदकिशोर ने 1959 ई. में हिंदी साहित्य प्रचारिणी सभा की स्थापना करने के साथ ही 'किसान मित्र' साप्ताहिक पत्र का संपादकीय दायित्व भी संभाला। वे किसानों, मजदूरों, लेखकों तथा कवियों के मध्य बहुत लोकप्रिय हुए।..."

सम्पर्क : ए-401, 'बड़ौदा आदित्य', अमेरिकन स्कूल के सामने, 'जी' ब्लॉक, बांद्रा कुर्ला कॉम्प्लेक्स, बांद्रा (पूर्व), मुम्बई-400 051
दूरभाष: 07506378525,
ईमेलः jkarnavat@gmail.com

फीजी में 1930-40 के मध्य तीन हिंदी समाचार-पत्र प्रकाशित हुए। पहला पत्र हिंदी मासिक 'वैदिक संदेश' था जिसका प्रकाशन आर्य समाज के कार्यकर्ता पं. श्रीकृष्ण शर्मा करते थे। दूसरे मासिक पत्र 'सनातन धर्म' का प्रकाशन 1927 ई. में सनातन धर्म महासभा द्वारा किया गया। किंतु आपसी विरोध तथा द्वेष के कारण दोनों पत्र शीघ्र ही बंद हो गए। दिनांक 11 मई, 1935 को 'शांतिदूत' साप्ताहिक

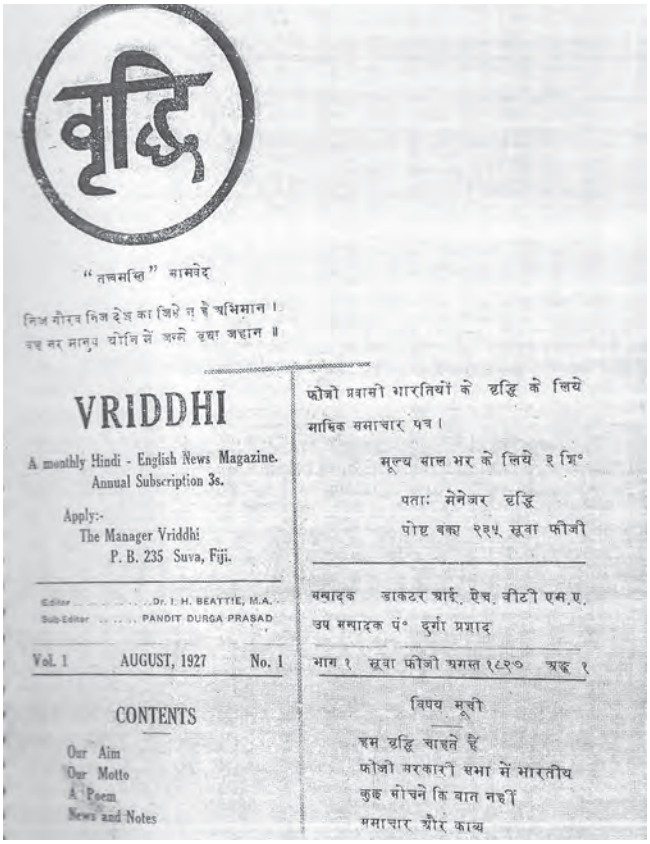
वृद्धि

"तत्वमस्ति" सामवेद

निज गौरव निज देश का जिसे न है अभिमान।
वह नर मानुष योनि में अपने वृथा अज्ञान॥

VRIDDHI

A monthly Hindi - English News Magazine.
Annual Subscription 3s.

Apply:-
The Manager Vriddhi
P. B. 235 Suva, Fiji.

Editor ..... Dr. I. H. BEATTIE, M.A.
Sub-Editor ..... PANDIT DURGA PRASAD

Vol. 1 AUGUST, 1927 No. 1

CONTENTS

Our Aim
Our Motto
A Poem
News and Notes

फीजी प्रवासी भारतियों के वृद्धि के लिये मासिक समाचार पत्र।

मूल्य साल भर के लिये ३ शि॰

पता: मेनेजर वृद्धि
पोष्ट बक्स २३५ सूवा फीजी

सम्पादक डाकटर आई. ऐच. बीटी एम.ए.
उप सम्पादक पं॰ दुर्गा प्रशाद

भाग १ सूवा फीजी अगस्त १८२७ अङ्क १

विषय सूची

हम वृद्धि चाहते हैं
फीजी सरकारी सभा में भारतीय
कुछ सोचने कि बात नहीं
समाचार और काव्य

समाचार-पत्र का प्रकाशन फीजी टाइम्स एण्ड हेरल्ड नामक ब्रिटिश प्रकाशन संस्था द्वारा प्रारंभ किया गया। यह समाचार पत्र विगत 80 वर्षों से लगातार प्रकाशित हो रहा है। विदेश की हिंदी पत्रकारिता में जो स्थान फीजी से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक समाचार पत्र 'शांतिदूत' ने स्थापित किया है वह विदेश का कोई भी हिंदी पत्र प्राप्त नहीं कर सका है। इस साप्ताहिक पत्र के संपादन का दायित्व पं. गुरुदयाल शर्मा को सौंपा गया। पं. शर्मा को इस पत्र का दायित्व संभालने से पहले 'वृद्धि', 'वृद्धिवाणी' तथा 'पैसिफिक प्रेस' नामक हिंदी पत्रों के संपादन का अनुभव था ही। पत्रिका को चलाने तथा उसे लोकप्रिय बनाने के लिए संपादक को जिन कठिनाइयों के बीच से गुजरना पड़ता है, इसका भी उन्हें अच्छा ज्ञान था। शांतिदूत के प्रवेशांक में पं. शर्मा ने 'हमारा अभिप्राय' शीर्षक से एक प्रभावपूर्ण संपादकीय लिखा। जिसमें उन्होंने शांतिदूत के उद्देश्य एवं कार्यप्रणाली का संक्षिप्त परिचय दिया जो इस प्रकार है:

"शांतिदूत पार्टी-बंदियों से दूर रहेगा। इस द्वीप की भलाई व लोकप्रियता का पाठ लोगों को पढ़ाएगा और सभी बंधुओं की सेवा के लिए इसके कालम बिना किसी भेदभाव के खुले रहेंगे। इसके अतिरिक्त इसका मुख्य उद्देश्य समाज सुधार और सर्वजन सेवा है। हर शनिवार को यह निकला करेगा। हमारा दृढ़ विश्वास है कि प्रवासी बंधु इस पत्र को अपना कर हमारे उत्साह को अवश्य बढ़ाएंगे और शांतिदूत को अवसर प्रदान करेंगे कि यह जनता की सेवा का यश का भागी बन सके।"

शांतिदूत के इस अंक की 300 प्रतियाँ प्रकाशित हुई थीं जो फीजी की राजधानी सुवा तथा आसपास के क्षेत्रों में तुरंत बिक गईं। पत्र को प्रारंभ करने से अधिक चुनौती उसे जीवित रखने की थी। संपादक पं. गुरुदयाल शर्मा लगातार इस प्रयास में थे कि पत्र के ग्राहक कैसे बढ़ाए जाएँ, रोचक सामग्री कैसे जुटाई जाए, पत्र का कलेवर आकर्षक कैसे बने तथा पत्र की छपाई उत्तम कैसे हो और पत्र प्रत्येक सप्ताह समय पर भी निकल जाए।

(ESTABLISHED 1922)

फीजी समाचार

THE WEEKLY ORGAN OF THE FIJI INDIANS

SUBSCRIPTION 5s. PER ANNUM LOCAL POSTAGE FREE

Vol. 42 Thursday, December 19, 1968. Price 3d No. 51

SUPPORT Local Industry
Use our LOCAL Printing SERVICE

कल आज से भिन्न रहेगा

किसी एक जाति की प्रगति को रोका नहीं जा सकता !!

सम्भव है विरोधी दल सत्तारूढ़ सरकार में शामिल हो जाय ?

कम यात्री

खुश रहो एहले वतन सब को मुबारक ईद हो

'शांतिदूत' की बढ़ती लोकप्रियता तथा प्रतिष्ठा के कारण कुछ भारतीय पाठकों ने ईर्ष्यावश 'शांतिदूत' के विरुद्ध गंभीर आंदोलन प्रारंभ कर दिया। स्थिति यहाँ तक पहुँच गई कि 'शांतिदूत' का प्रकाशन संकट में पड़ गया, किंतु भारत से आए सनातन धर्मोपदेशक पं. रामचंद्र शर्मा के हस्तक्षेप से यह विरोध खत्म हो गया। 'शांतिदूत' ने स्थानीय समाचारों को पत्र में अधिक स्थान दिया। रामायण मंडलियों की गतिविधियों को भी प्रधानता दी तथा शिक्षा के विस्तार के लिए भी प्रयास किया। हर त्योहार पर सुंदर विशेषांक प्रकाशित कर सभी धर्मों के प्रति समभाव तथा पारस्परिक समझ का वातावरण बनाया। सन् 1939 ई. में छिड़े विश्वयुद्ध में भारतीय जनता को सचित्र समाचार देने वाला 'शांतिदूत' अकेला हिंदी पत्र था। इस कारण पत्र की प्रसार संख्या बढ़कर सोलह हजार तक पहुँच गई। पच्चीस वर्ष पूरे होते-होते शांतिदूत फीजी का सबसे सम्मानित पत्र बन गया। शांतिदूत ने 1960 ई. में अपनी रजत जयंती बड़े धूमधाम से मनाई।

शांतिदूत के सम्पादन का दायित्व 1935 से 1979 ई. तक पं. गुरुदयाल शर्मा ने बड़ी निष्ठा तथा परिश्रम से संभाले रखा। 9 अगस्त, 1979 ई. को उन्होंने संपादन का कार्यभार श्री जयनारायण शर्मा को सौंप दिया। श्री जयनारायण 30 अप्रैल, 1981 तक संपादक के रूप में कार्य करते रहे। उनके कार्यमुक्त होने पर 23 जुलाई, 1981 तक श्रीमती निर्मला पथिक स्थानापन्न संपादिका के रूप में कार्य करती रहीं। उनके त्यागपत्र देने पर पं. गुरुदयाल शर्मा ने पुनः 6 मई, 1982 तक पत्र का संपादन कार्य किया। पं. गुरुदयाल के सेवानिवृत्त होने पर श्री महेशचंद्र शर्मा 'विनोद' शांतिदूत के नए संपादक बने तथा श्रीमती विश्वकीर्ति शर्मा को सहायक संपादिका का स्थान दिया गया। विनोद जी हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं के अच्छे ज्ञाता थे तथा उनके पास पत्रकारिता का व्यापक अनुभव भी था। श्री विनोद के संपादन में शांतिदूत को नए आयाम प्राप्त हुए। उन्होंने नए लेखक मंडल का निर्माण किया। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं पर निर्भीक होकर प्रभावपूर्ण संपादकीय लिखे। श्री विनोद ने सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह भी किया कि फीजी में विकसित नई विदेशी भाषिक शैली फीजी हिंदी के महत्व को समझा तथा स्थानीय लेखकों को उस भाषा में लिखने के लिए प्रेरित किया और स्वयं भी 'थोरा हमरो भी तो सुनो' स्तम्भ प्रति सप्ताह लिखा। सन् 1987 ई. में फीजी में हुई राजनीतिक उथल-पुथल से भारतीयों की प्रतिष्ठा को गहरा आघात लगा। जिस देश को उन्होंने अपनी निष्ठा और समर्पण से विश्व के एक प्रतिष्ठित देश के रूप में ला खड़ा किया था, उसी देश में उन्हें जीवन और सम्मान खंडित होता दिखाई देने लगा। अनेक भारतीय फीजी छोड़कर अन्य देशों को कूच कर गए। 'शांतिदूत' के लोकप्रिय संपादक श्री विनोद जी भी त्यागपत्र देकर न्यूजीलैंड चले गए। श्री विनोद जी के बाद श्री अशोक कुमार द्विवेदी ने शांतिदूत के संपादक का कार्यभार संभाला। उनके संपादन काल में भी अनेक नए लेखक 'शांतिदूत' से जुड़े। श्री द्विवेदी के बाद श्री हेमंत विमल शर्मा संपादक बने। शांतिदूत के प्रकाशन को 80 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं, किंतु फीजी में इसकी लोकप्रियता आज भी पहले की तरह बनी हुई है। वर्तमान में श्रीमती नीलम कुमार इस साप्ताहिक समाचार पत्र के संपादकीय दायित्व का निर्वाह बखूबी कर रही हैं। इसका दीपावली विशेषांक प्रत्येक वर्ष अत्यंत समृद्ध एवं विशिष्ट होता है। इस विशेषांक में आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड के लेखकों की रचनाओं का भी समावेश होता है।

'शांतिदूत' समाचार पत्र की शुरुआत के पश्चात् चौथे दशक में फीजी में अनेक मासिक तथा साप्ताहिक पत्रों का प्रकाशन हुआ। अखिल फीजी कृषक महासंघ ने 'दीनबंधु', श्री ज्ञानीदास ने 'ज्ञान', पं. बी.डी. लक्ष्मण ने 'किसान' आर्य पुस्तकालय ने 'पुस्तकालय', श्री काशीराम कुमुद ने 'प्रवासिनी', श्री रामखेलावन ने 'प्रकाश' पत्रों का प्रकाशन किया। इसी दौरान 'जंजाल', 'सनातन प्रकाश' तथा 'मजदूर' आदि पत्र भी प्रकाशित हुए। किंतु वे बहुत अल्प समय में ही बंद हो गए। सन् 1945 ई. में सुवा से 'द इंडियन टाइम्स' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इस 24 पृष्ठीय समाचार पत्र का पंजीयन सुवा के डाकघर में भी कराया गया था। इस पत्र के संपादक श्री राम सिंह थे। इसकी भाषा अंग्रेजी और हिंदी

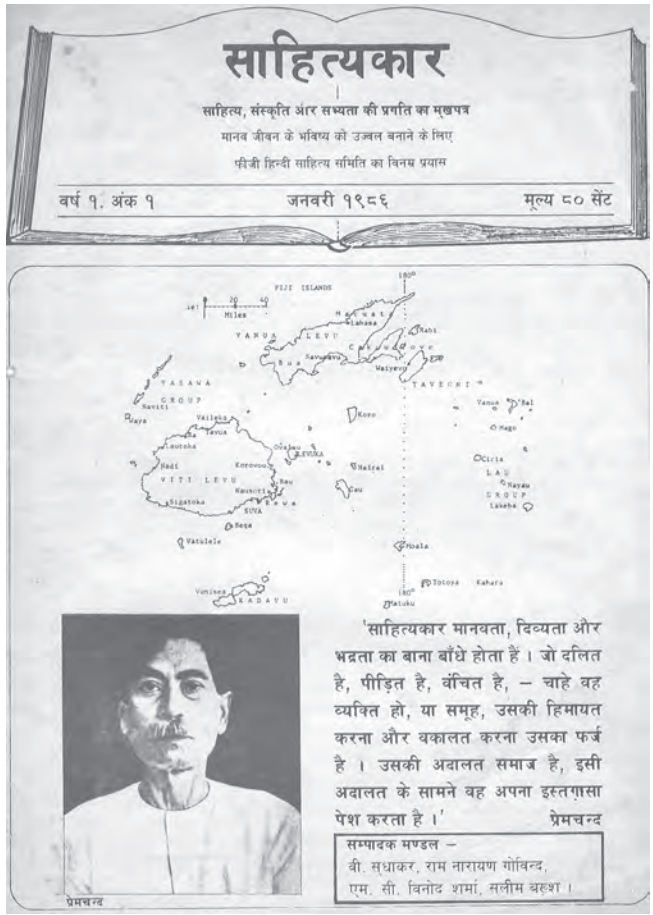
साहित्यकार

साहित्य, संस्कृति और सभ्यता की प्रगति का मुखपत्र

मानव जीवन के भविष्य को उज्वल बनाने के लिए

फीजी हिन्दी साहित्य समिति का विनम्र प्रयास

वर्ष १, अंक १ | जनवरी १९८६ | मूल्य ८० सेंट

'साहित्यकार मानवता, दिव्यता और भद्रता का बाना बाँधे होता हैं। जो दलित है, पीड़ित है, वंचित है, – चाहे वह व्यक्ति हो, या समूह, उसकी हिमायत करना और वकालत करना उसका फर्ज है। उसकी अदालत समाज है, इसी अदालत के सामने वह अपना इस्तग़ासा पेश करता है।' प्रेमचन्द

सम्पादक मण्डल –
बी. सुधाकर, राम नारायण गोविन्द,
एम. सी. विनोद शर्मा, सलीम बख्श।

प्रेमचन्द

दोनों ही थी। इसमें फीजी के अलावा भारत तथा अन्य देशों के समाचार भी प्रकाशित होते थे। फीजी में चौथे और पाँचवे दशक में अनेक पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन के संदर्भ मिलते हैं। फीजी में हिंदी के प्रचार-प्रसार के सशक्त हस्ताक्षर श्री काशीराम कुमुद ने 'प्रवासिनी' पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया। उसमें स्थानीय कवियों की रचनाओं को स्थान देकर कुमुद जी ने अनेक लेखकों को प्रोत्साहित किया था। 'प्रवासिनी' पत्रिका अपने समय की लोकप्रिय पत्रिका थी।

पाँचवे दशक में 'जागृति' पत्र का प्रकाशन भी एक महत्वपूर्ण घटना थी। 'फीजी' के पश्चिमी जिलों के किसानों के मध्य यह पत्र अत्यंत लोकप्रिय हुआ। किंतु 1975 में बंद हो गया। 1953 ई. में 'आवाज' साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन भी अल्पावधि के लिए हुआ। 'झंकार' पत्र का प्रकाशन श्री ज्ञानीदास के संपादन में हुआ। इस पत्र में संक्षिप्त समाचार, फिल्मी गाने, कविताएं आदि होती थीं। आर्थिक साधनों की कमी के कारण यह पत्र 1958 में बंद हो गया। इसके पूर्व श्री ज्ञानीदास ने 'तारा' मासिक पत्र का प्रकाशन भी किया था जो उनकी ही प्रेस में छपा करता था।

फीजी के प्रतिभाशाली कवि एवं विद्वान लेखक श्री कमला प्रसाद मिश्र के संपादन में 1956 ई. में 'जय फीजी' हिंदी साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। आपके ही संपादन में 'जागृति' नामक साप्ताहिक पत्र का प्रथम अंक 1958 ई. में प्रकाशित हुआ। संपादक के रूप में उन्होंने देश के समस्त उदीयमान लेखकों को अपने पत्र में लिखने के लिए प्रेरित भी किया। 'जागृति' के माध्यम से संपादक के रूप में मिश्र जी ने पर्याप्त प्रतिष्ठा अर्जित की। उन्होंने अपने पत्र में सामाजिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक विषयों पर अनेक प्रतियोगिताएं आयोजित कर फीजी के भारतीयों को विविध विषयों पर सोचने तथा समझने के लिए प्रेरित भी किया था। इस पत्र का गिरमिट शताब्दी अंक 11 मई, 1979 ई. को प्रकाशित किया गया था। श्री मिश्र लगभग 35 वर्ष तक फीजी की हिंदी पत्रकारिता में सक्रिय रहे।

फीजी फोकस

SUNDAY OCTOBER 9, 2016 | ISSUE 19, VOL 7 | HINDI

अध्यापकों के वेतन का नया दर

पृष्ठ 19

अस्थाई डाक्टर देश में डाक्टरों की कमी पूरी कर रहे हैं

पृष्ठ 21

संयुक्त राष्ट्र महा सभा में हुई क्लाइमट चैंज पर बातें

संयुक्त राष्ट्र महासभा (United Nations General Assembly) को संबोधित करते हुए प्रधान मंत्री वोरेन्गो बईनिमरामा ने कहा कि भविष्य में और ज़्यादा लोग अपने देश को छोड़ कर अन्य देशों में बसने के लिए जाएँगे और ऐसा सिर्फ लड़ाई- झगड़े या युद्ध की वजह से नहीं बल्कि पर्यावरण या वातावरण में बदलाव याने क्लाइमट चैंज की वजह से भी होगा।

उन्होंने कहा कि क्लाइमट चैंज के कारण काफी संख्या में लोगों को एक जगह को छोड़ कर दूसरी जगह जा कर बसना पड़ रहा है और यह फीजी के लिए बहुत चिंता का विषय है।

"हम विश्व के ऐसे क्षेत्र में रहते हैं जहाँ ग्लोबल वोर्मिंग के कारण समुद्र के स्तर में बढ़ती हो रही है और हम पहले से ही एक बदतर स्थिति पर विचार करने की शुरूआत कर चुके हैं जिस में प्रशांतीय क्षेत्र के तीन मुख्य निचले द्वीप - किरीबास, तुवालू और मार्शल आइलैंड डूबने पर मिल कर एक हो जाएँगे," प्रधान मंत्री बईनिमरामा ने कहा।

प्रधान मंत्री ने बताया कि फीजी किरीबास और तुवालू को शरण देने के लिए तैयार है पर ऐसा करने के लिए उन्हें विश्व के अन्य देशों से सहायता की ज़रूरत पड़ेगी।

बईनिमरामा ने कहा कि इस गम्भीर संकट जिस का सामना अब हर कोई कर रहा है, से निपटने के लिए वैश्विक समुदाय को और ठोस तरीके से एक साथ काम करना होगा।

प्रधान मंत्री, वोरेन्गो बईनिमरामा और संयुक्त राष्ट्र के पद छोड़ रहे सकेटरी जेनरल, बान की मून।

प्रधान मंत्री ने बान की मून को फीजी आने के लिए आमंत्रित किया

फीजी में हिंदी पत्र-पत्रिकाओं के प्रारंभ एवं बंद होने का सिलसिला लगातार चलता रहा। पं. नंदकिशोर ने 1959 ई. में हिंदी साहित्य प्रचारिणी सभा की स्थापना करने के साथ ही 'किसान मित्र' साप्ताहिक पत्र का संपादकीय दायित्व भी संभाला। वे किसानों, मजदूरों, लेखकों

शान्ति दूत

SHANTI DUT

स्वर्ण जयन्ती प्रवेशांक

THE ONLY HINDI WEEKLY IN THE SOUTH PACIFIC

THURSDAY MAY 24, 1984

गुरूवार मई २४, १९८४

दाम २५ सेण्ट | PRICE 25C

फीजी के हिन्दी भाषी भारतीयों की उनचास वर्षों तक सेवा प्रदान करने के बाद शान्ति दूत इस विशेषांक के साथ पचासवें वर्ष में पदार्पण कर रहा है। मई, १९८५ में शान्ति दूत अपनी पचासवीं वर्ष गाँठ [स्वर्ण जयन्ती] हर्षोल्लास के साथ मनाएगा।

शांति दूत दक्षिण प्रशान्त का एकमात्र हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र अत्यन्त लगनशीलता, निर्भीकता तथा निष्पक्षता के साथ आपकी सेवा करता आया है। और भविष्य में भी करता रहेगा।

शान्ति दूत

हमारा अभिप्राय।

भयानक हत्या।

सिंगातोका–रास्ता।

३००० मरे.

जापान में भू कम्प।

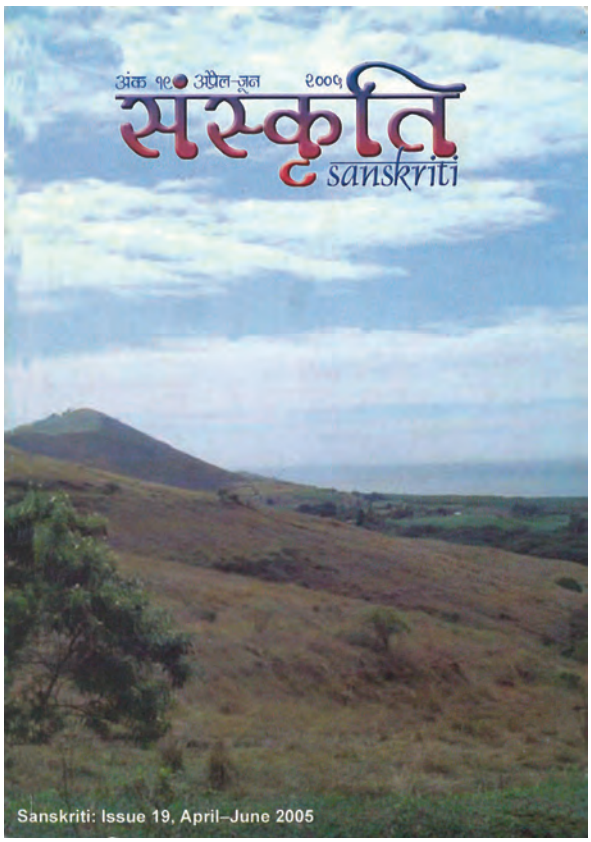

फीजी वृत्तान्त

FIJI VRITANT – ISSUED BY THE MINISTRY OF INFORMATION

सूचना मन्त्रालय द्वारा प्रकाशित

VOLUME 1 No.3 JUNE, 1976

प्रथम फीजी भारतीय सर की उपाधि से सम्मानित

इस वर्ष महारानी के जन्म दिवस ओनर्स में फीजी के अटोर्नी-जनरल, श्री जोन फाल्बी तथा लोक सभा के स्पीकर, श्री विजय आर. सिंह को सर की उपाधि से सम्मानित किया गया है.

श्री विजय आर. सिंह "सर" की उपाधि पाने वाले प्रथम फीजी भारतीय हैं.

सर जोन फाल्बी ने धारा और कार्यकारिणी सभाओं में लम्बी सेवायें प्रदान की है तथा सर विजय आर. सिंह ने फीजी को एक सरकारी अधिकारी, संसद सदस्य, मंत्री तथा हाल में लोकसभा के स्पीकर के रूप में अमूल्य सेवायें प्रदान की है.

तथा कवियों के मध्य बहुत लोकप्रिय हुए। इसी बीच श्री वी.एम. मोरिस ने 'फीजी-संदेश' पत्र भी निकाला। उनके संपादकीय राष्ट्रीय समस्याओं पर विश्लेषणात्मक एवं रचनात्मक होते थे।

1947 ई. में सनातन धर्म महासभा के मुख पत्र के रूप में 'सनातन संदेश' नामक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इस महासभा के महासचिव एवं फीजी हिंदी महापरिषद् के प्रधान पं. विवेकानंद शर्मा 'सनातन संदेश' के संपादक थे। आप फीजी सरकार में मंत्री भी रह चुके थे। फीजी में हिंदी के प्रचार-प्रसार में उनका महत्वपूर्ण योगदान है। 'सनातन संदेश' एक मासिक पत्र था तथा इसका उद्देश्य सनातन धर्म के संदेश को जन-जन तक पहुँचाना था। किंतु यह पत्र कुछ अंक निकलने के बाद बंद हो गया।

फीजी सरकार की ओर से भी कुछ पत्र-पत्रिकाएं हिंदी में प्रकाशित की गईं। 1926 ई. में 'राजदूत' तथा द्वितीय विश्वयुद्ध के समय 'विजय' के अंक भी प्रकाशित हुए। फीजी सरकार के सूचना मंत्रालय ने 'फीजी वृतांत' तथा 'शंख' पत्रों का प्रकाशन किया। इनके अतिरिक्त भी फीजी सरकार समय पर हिंदी पाठकों के लिए प्रपत्र तथा सूचना आदि हिंदी में प्रकाशित किया करती है। जनवरी 1986 में फीजी हिंदी साहित्य समिति द्वारा 'साहित्यकार' पत्रिका का प्रकाशन किया गया। इस पत्रिका के प्रथम अंक के मुखपृष्ठ पर भारत के प्रख्यात लेखक प्रेमचंद का चित्र प्रकाशित कर निम्नलिखित उद्धरण प्रकाशित हुआः

"साहित्यकार मानवता, दिव्यता और भद्रता का बाना बाँधे होता है। जो दलित है, पीड़ित है, वंचित है—चाहे वह व्यक्ति हो या समूह, उसकी हिमायत करना और वकालत करना उसका फर्ज है। उसकी अदालत समाज है, इसी अदालत के सामने वह अपना इस्तगासा पेश करता है।"

इस पत्रिका के संपादन मंडल में वी. सुधाकर, रामनारायण गोविंद, एम.सी. विनोद शर्मा एवं सलीम बख्श का नाम प्रकाशित था। यह पत्रिका कितनी अवधि तक प्रकाशित हुई, इसके प्रमाण उपलब्ध नहीं हो सके।

फीजी से एक और हिंदी साप्ताहिक का प्रकाशन सन् 1988 में 'सरताज' नाम से हुआ। इसमें फीजी, भारत तथा अन्य देशों के समाचार भी छपते रहे। श्री एस.एम. दास के संपादन में प्रकाशित इस पत्र को 'वॉयस ऑफ पीपल' के नाम से जाना जाता था।

फीजी में 21वीं शताब्दी की शुरुआत में ही 'संस्कृति' त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन डॉ. विवेकानंद शर्मा के संपादन में प्रारंभ हुआ। इस पत्रिका में अध्यात्म, ज्योतिष, पौराणिक कथा, लोककथा, फिल्म संसार, बच्चों की दुनिया जैसे स्तंभों के अलावा कहानी-कविताएं आदि भी प्रकाशित होती थीं।

इस प्रकार फीजी में हिंदी पत्रकारिता का दीर्घकालीन गौरवशाली इतिहास है। पिछले 100 वर्षों में प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं ने एक ओर दीर्घकाल तक प्रवासी भारतीयों को फीजी, भारत तथा विदेश के समाचारों से अवगत कराया है। समय पर उनका मार्गदर्शन किया है, वहीं दूसरी ओर फीजी के भारतवासियों को संगठित भी किया है। अपने देश, अपनी भाषा, अपनी संस्कृति के प्रति उनके मन में सम्मान जगाया है और परोक्ष रूप में हिंदी के प्रचार-प्रसार में बहुत बड़ा योगदान भी किया है। 'शांतिदूत' साप्ताहिक समाचार-पत्र ने अपने प्रकाशन के 80 वर्ष पूर्ण कर विदेश की हिंदी पत्रकारिता में एक नया इतिहास बनाया है। फीजी सरकार द्वारा प्रकाशित पत्र 'फीजी फोकस' भी द्विभाषिक रूप में नियमित प्रकाशित हो रहा है।

क्यों लुटाते हो

धनंजय कुमार

फूल से घर को सजाते क्यों हो
रंग शीशे में चढ़ाते क्यों हो।
पाँव टिकते नहीं जमीं पर, तो
आसमां सर पे उठाते क्यों हो।
उस बुढ़ापे को बचाने के लिये
इस जवानी को लुटाते क्यों हो।
खुद ही पाऊँगा मैं वजूद अपना
आईना मुझको दिखाते क्यों हो।
तुम मुझे आईना समझकर यूँ
फासले और बढ़ाते क्यों हो।
मेरी बातें जो दिल दुखाती हैं
वो सवाल ऐसे उठाते क्यों हो।

Contact : 7806, Wendy Ridge Lane, Annanadale,
Virginia 22002 U.S.A.

भारतवंशी गिरमिटिया

राजेश कुमार 'माँझी'

"...हमार शुगरफील्ड्स मॉरीशस आउरो फिजी के संगे संगे दोसरा कैरीबीयन कंट्रीज बाटे। ओ सब शुगरफील्ड्स में बहुत पत्थर बाटे आउर ओ पत्थरन के नीचे बहुते सोना दबल बाटे। ओ शुगरफील्ड्स मतलब खेतन में जवन लेबर काम करी ओकरा उ सोना भी मिल सकेला कुछ सीमा तक। नॉउ, इट्स अप टू यू टू डिसाइड वेदर यू वांट टू वर्क फॉर अस एज़ ऑवर एजेंट फॉर रिक्रूटिंग लेबरर्स फॉर दीज़ शुगरफील्ड्स ऑर टू वेस्ट योवर नॉलेज एंड एक्सपीरियंस इन वर्शिपिंग गोड एंड गोडेस इन टेम्पल्स फॉर सरवाइविंग यावर लाइफ।..."

सम्पर्क : हिंदी अधिकारी, राजभाषा हिंदी प्रकोष्ठ, कुलसचिव कार्यालय,
जामिया मिल्लिया इस्लामिया(केन्द्रीय विश्वविद्यालय), नई दिल्ली-110025
मोबाइल : 9718740789
ई-मेल: manjhirk@gmail.com

पात्र-परिचय

(विदेशी पात्र)

चार्ल्स	फीजी जमींदार
डॉ. गैरिक	डॉक्टर
डॉ. ब्राउन	डॉक्टर
मिस रोजी	नर्स
कैथरीन	चार्ल्स की पत्नी
ओवरसीयर	भारतीयन के काम जाँच करे वाला अफसर
कोंल्मबर	भारतीयन के हाजिरी जाँच करने वाला अफसर
रिक्रूटर	भारतीयन के फुसला-बहका के बिदेश ले जाए वाला दलाल
	डैविड, हैनरी आउर कुछ आउर अंग्रेज अफसर

(भारतीय पात्र)

बुधिया	मुख्य सरदार
शिशिर पंडित	सरदार के सहायक
रामचन्दर	विवाहित पुरुष
पद्मा	रामचन्दर के पत्नी
चंदा	बीस वर्षीया युवती
	गोबिंद, रमेसर, बदरी, दोस्त मोहम्मद, माधव, आनन्द, सोनकलिया—मजूर

दृश्य-एक

(कुछ अंग्रेज लोग एगो जगहा पर बइठ के वार्तालाप करत बाटे)

डैविड — मि. चार्ल्स, वाट हैपेन्ड टू यू? हम तहरा के कव दिन से अपसेट देख रहल बानी। इफ एनी प्रॉब्लम इंज़ देअर, टेल मी। आई विल ट्राई माई बेस्ट टू सोल्व इट।

चार्ल्स — देअर इज़ नथिंग राँग विथ मी। हम बिल्कुल ठीक बानी।

डैविड देन, तू काहें उदास बाड़? का सोचत बाड़ तू?

चार्ल्स डियर फ्रैंड्स हम सोचत बानी कि मॉरिशस एंड फिज़ी के शुगर फील्ड्स में अब वर्क करे खातिर अफ्रीकन कंट्रीज़ से लेबर ले आवल बहुत कॉस्टली हो गइल बाटे।

डैविड सो व्हाट, का कर सकत बानी सन हमनी के?

चार्ल्स आई थिंक इंडिया के लोग बहुत पुअर एंड हंगरी बाटे। बट दे आर वेरी हार्ड वर्कर। शुगरफील्ड्स में वर्क करे खातिर हमनी ला इंडिया से ही लेबर ले गइल बहुत चीप एंड बेस्ट होइत।

डैविड यस, तू ठीक कहत बाड़ चार्ल्स! बट, हाउ, इट केन बी पॉसिबल? इंडिया से लव करे वाला इंडियन्स के ओ कंट्रीज में कइसे ले जइब तू, टेल मी।

चार्ल्स: एकरा खातिर हमको एजेंट रिक्रूट करे के पड़ी।

डैविड: एजेंट... एजेंट काहे ला रिक्रूट करे के पड़ी। व्हाट द एजेंट विल डू इन दिस मैटर? तू कवना लोग के एजेंट बनइब।

चार्ल्स: सी, इंडिया के लोग में पंडिट्स रिस्पेक्टफुल मैन मानल जाला लोग। इंडियन्स इनका बात मानेला लोग। वी केन रिक्वेस्ट देम एज एजेंट, पंडिट्ज हमनी ला बहुत यूज़फुल मैन लागत बाड़े लोग।

डैविड: ओह! आई सी... यू आर राइट माई डियर, वी केन रिक्रूट देम एज़ ऑवर एजेंट्स फॉर दिस पर्पज।

हैनरी: माई डियर फ्रेंड्स, यू बोथ आर राइट। टू रिक्रूट पंडिट्ज एज आवर एजेंट्स, वन मोर इम्पोरटेंट थिंग इज देअर, विच यू बॉथ आज फॉरगेटिंग।

चार्ल्स: व्हाट इज़ देट? टेल मी।

हैनरी: वी हेव टू गिव सम ब्राइब टू देम फॉर यूटिलाइजिंग देअर सर्विसेज। विदआउट गिविंग देम मनी दे विल नॉट एग्री फॉर दिस मैटर।

डैविड: ना, हमनी के केहू को मनी ना देंगे। अवर गवर्नमेंट विल नोट एसेप्ट दिस इजिली।

हैनरी: देन इट इज इम्पासिबल टू रिक्रूट पंडिट्स एज आवर एजेंट्स। अगर तू पंडित लोग के एजेंट बनना माँगता तो तुमको खर्चा देबे के ही पड़ी।

चार्ल्स: नो, डैविड हैनरी इज राइट। आई थिंक, हमनी के उनका लोग के ज्यादा इज्जत देके अपना एजेंट बना सकेम।

डैविड: स्टिल, आई एम नोट इन फेवर टू वेस्ट अवर मनी। ऑस्क कैथरीन अबाउट हर ऑपिनियन, तहारा का ऑपिनियन बाटे कैथरीन?

कैथरीन: ऑफ्टर लिस्निंग यू ऑल, आई हैव कम ऑन दिस डिसीजन टू गिव मनी टू एजेंट्स।

डैविड: इफ यू ऑल आर इन फेवर इन गिविंग मनी देन, देअर इज नो ऑब्जेक्शन टू मी। पर हमनी के इस वर्क खातिर डिफरेंट एरिया में जाना माँगता। विदआउट गोइंग इन डिफरेंट टाउन एंड सिटिज़ ऑफ इंडिया वी कैन नोट सेलेक्ट गुड एजेंट्स।

चार्ल्स: देट्स टू। हमनी के सब लोग इंडिया के अलग-अलग टाउन्स/सिटिज़ में इस वास्ते जाएम सन आउर एजेंट्स रिक्रूट करेम सन। दीज़ एजेंट्स विल वर्क फॉर अस इन रिक्रूटिंग लोकल पिपल फॉर आवर शुगरफील्ड्स।

दृश्य-दो

(चार्ल्स, कैथरीन, डैविड और हैनरी इंडिया के डिफरेंट टाउन/सिटिज़ में पंडित लोग के पैसा देके आउर बहला-फुसला कर अपना एजेंट बनावत के कार्य करत बा लोग)

चार्ल्स: हाय, आई थिंक यू आर मि. शिशिर पंडित। हम समझत बानी कि तू बहुत पढ़ल-लिखल आदमी हव। तहरा गाँव में सब लोग तहार रेस्पेक्ट करेला।

शिशिर: यस, सर, हम टेंथ क्लास पास बानी। हम सब लोग क सही रास्ता देखावे नी। एही कारण सब लोग वाज़ हमार इज्ज़त करेला।

चार्ल्स: देट्स आई वाज़ थिंकिंग। तू थोड़ा बहुत अंग्रेज़ी भी पढ़-लिख लेबेल आउर बोलिए लेबेल आउर समझिओ लेबेल। एही से हम तहरा खातिर कुछ हेल्प करेके चाहता हूँ। तुहीं अइसन मैन है जवन हमारा काम कर सकत है। एकरा लिए हम तुमको बहुत सारा पइसा देम।

शिशिर: मि. चार्ल्स रउवा हमरा के पहिले बताईं तभी हम सोच-समझकर बताएम कि हम उ काम कर सकत बानी कि ना। बिना काम समझे हम रउरा से एको पैसा ना लेहम।

चार्ल्स: मि. शिशिर, हमारा काम बहुत छोटहन बाटे। बस तुमको हमारे शुगरफील्ड्स वास्ते लेबर रिक्रूट करना माँगता बाटे।

शिशिर: सर, कवना शुगरफील्ड्स खातिर लेबर रिक्रूट करे के चाहत बानी रउरा सभे?

चार्ल्स: हमार शुगरफील्ड्स मॉरीशस आउरो फिजी के संगे-संगे दोसरा कैरीबीयन कंट्रीज बाटे। ओ सब शुगरफील्ड्स में बहुत पत्थर बाटे आउर ओ पत्थरन के नीचे बहुते सोना दबल बाटे। ओ शुगरफील्ड्स मतलब खेतन में जवन लेबर काम करी ओकरा उ सोना भी मिल सकेला कुछ सीमा तक। नॉउ, इट्स अप टू यू टू डिसाइड वेदर यू वांट टू वर्क फॉर अस एज़ ऑवर एजेंट फॉर रिक्रूटिंग लेबरर्स फॉर दीज़ शुगरफील्ड्स ऑर टू वेस्ट योवर नॉलेज एंड एक्सपीरियंस इन वर्शिपिंग गोड एंड गोडेस इन टेम्पल्स फॉर सरवाइविंग यावर लाइफ। अगर तू सही लाइफ जीए के चाहत बाड़ त हमारे वास्ते वर्क कर। हम तुमको बहुत पइसा देगा।

शिशिर: मि. चार्ल्स का हमहूँ ओ कंट्रीज में जा सकत बानी?

चार्ल्स: यस, व्हाई नोट! वी विल गिव यू द पोस्ट ऑफ सरदार, देअर यू हेव टू लुक ऑफ्टर द वर्क्स ऑफ इंडियन लेबरर्स इन दोज़ कंट्रीज। तू अंग्रेजी भी जाने ल एहीसे हम तहरो के वहवॉ ले जाएम आउरो सरदार के बडहन पोस्ट देम आउर पइसा भी बहुते देम।

शिशिर: ओके. सर, हम राउर काम करेम। बट डोंट फॉरगेट टू गिव मी माई फी फॉर दिस वर्क। रउरा हमारा के फिजी, मॉरिशस में ले जाइल भी मत भुला जाएम।

चार्ल्स: यस, हम प्रोमिस करत बानी कि हम तहार फी देम आउर तहरा के फिज़ी एंड मॉरीशस में बहुते बड़हन पानिया जहाज में ले जाएब।

शिशिर: अगर रउरा कहत बानी त हम रउरे साथे पानी के जहाज में चलेम। बट यू टेल मी, उहवाँ जाए में हमनी के कितना दिन के समय लागी।

चार्ल्स: हमनी के ओ कंट्रीज़ में 25-30 डेज़ में पहुँच जाएम सन।

शिशिर: 25 से 30 दिन। इ त बहुते लंबा समय बा। ना-ना तब त हम ना जाएम उहवां।

चार्ल्स: हम जहाज पर तहरा लोगिन के खाए-पीए के सब फेसिलिटी प्रोवाइड करेम। एतना काहें डेराते हो भाई।

शिशिर: मि. चार्ल्स रउरा कहत बानी त ठीक बा हम साथे चलेम आउर रउरा खातिर लेबरो रिक्रूट करेम।

चार्ल्स: ओ.के. देट्स गुड, यू स्टार्ट योर वर्क टूडे नॉउ, तू अभी से गाँग-गाँव में जा आउर लोग से कह कि हम ओ कंट्रीज़ में उनका लिए सब फेसिलिटी देम। सब लेबर के वास्ते हम बड़-बड़ घर देम आउर उनका चिल्ड्रन लोगिन के फ्री एजुकेशन प्रोवाइट करेम। हम सबकर समय-समय पर फ्री हैल्थ चेक-अप भी करवाएम। जवन लोग उहवाँ जाई उ लोग कमे समय में बहुते अमीर हो जाई। उसका लोग के लाइफ बन जाई।

शिशिर: ओके, सर, आई विल डू माई वर्क विद एटमोस्ट डेडिकेशन। रउरा लिए लेबर रिक्रूट कइल हमरा खातिर चुटकी भर का खेला बाटे। हम दुई दिन में रउरा खातिर दु सौ लेबर तइयार कर सकत बानी।

दृश्य-तीन

(शिशिर पंडित गाँव में जाके ग्रामीण लोग के साथे एगो छोटहन बइठक करत बाड़े आउर सबका के शुगरफील्ड्स में जाके सोना निकाले के भी बात बतावत बाड़े।)

शिशिर: हम समझत बानी कि तू सब लोग अपना जीवन के बेहतर बनावे के चाहत बाड़ लोग। सब लोग जादा से जादा पइसा कमाए के चाहत बाड़ लोग। इहवां ए देश में तू लोग केतनो मेहनत कर लोग पर तहरा लोगिन के सब इच्छा ना पुराई।

रामचन्दर: पंडित जी, त रउवा ही बताईं एकरा ला हमनी के का करे के पड़ी।

शिशिर: हमरा आज फजीरे ही एगो आदमी भेंटइलख आउर ओकर बात हमरा दिल के भीतर घुस गइल बा। उ बहुते नेक आदमी बाटे जवन तहरा लोगिन के भलाई चाहत बाटे।

रामचन्दर: कव ह उ? कवना तरह उ हमनी के भलाई करी?

शिशिर: उ आदमी फिजी देश से आइल बाटे। मॉरिशस आउर दोसर देश से उनकर दोसर साथी लोग हमनी के भारत

में आइल बाटे लोग आउर गरीब लोग के सहायता करे के चाहत बाटे। उ कहत रह कि उहवां ईख के खेत में दबल कीमती सोना के निकाले खातिर कुछ मजदूर लोगिन के जरूरत बाटे।

पद्मा: ईख के खेत में कवनो सोना-चाँदी होखेला। रउरा पगला त नइखी गइल पंडित जी।

शिशिर: हम पगलाइन नइखीं। उ सज्जन कहत रहे कि ओ खेतन में छोट-छोट पत्थर के नीचे बेशकीमती सोना दबल बाटे। जवन लोग ओ सब पत्थर के नीचे से दबल सोना के बाहर निकाले में मदद करी ओ लोग के आधा सोना मिली आ मजदूरी भी अलग से मिली।... आ मजदूरी... मजदूरी के बात मत करल लोग तू सबे... वहवाँ के मिले वाला मजदूरी इहवां के मजदूरी से दुगना-तिगुना होई। एही से हम त कहब कि समझदारी एही में बाटे कि तू लोग ओ ओ अंग्रेजन के बात मान लोग आ ओकनी खातिर काम कके जल्दी से जल्दी अमीर बन जा लोग।

माधव: रउरा कहत बानी त ठीक बा। हमनी के ओ लोगिन खातिर काम करेंम। पर रवरे बताईं कि हम उहवाँ जाएंगे कइसे महाराज? उहवाँ जाए के लिए तो बहुते पइसा के जरूरत होत है। एतना पइसा कहवाँ से आएगा हमनी सन के पास।

शिशिर: अरे तू लोग पइसा के चिंता छोड़। उ सबका प्रबंध हम कराएम उनका से बोलके, इ त हमार काम बा।

रामचन्दर: त ठीक बाटे बाबू जी। हम उहवाँ जाए के लिए तइयार बानी।

शिशिर: इ भइल नू मरद वाली बात। मर्द लोग कबो कवनो बात से पीछे ना हटेला।

पद्मा: अइसन काहें कहत बानी बाबू जी। का मेहरारू कवनो मदर से कम होले। हमनी के भी त पुरुष के साथ कंधा से कंधा मिलाके कमर तोड़ मेहनत करेनी सन?

शिशिर: हम अइसन कब कहनी कि औरत केहू से कम होले। आदमी आउर औरत भगवान सबका के एके जइसन बनवले बाड़े। केहू केहू से तनिको कम नइखे। औरत त साक्षात लक्ष्मी, दुर्गा आउर काली के रूप होले।

पद्मा: जी, अब सही बात कहनी राउरा। एकरा साथे-साथे औरत सीता के भी रूप होले जवन दु:ख सुख, सब में अपना पति के साथ देबेले।

शिशिर: हँ पद्मा, ठीक कहलू तू। पर अब ई बताव कि का तूहूँ फिजी-मॉरिशस जाए के लिए तइयार बारू नू।

पद्मा: काहे नहीं। हमनी के सब औरत उहवाँ जाए के लिए तैयार बानी सन। हम ओ चंदा के भी अपने साथे लेके जाएम। जब से ओकर असली माई मुअल ओकर सौतेला माई ओकर जीवन नरक बनाए चाहत बिया। बेचारी चंदा... दु:ख के मारल लइकी हीय। सौतेला महतारी त ओकरा के कोठा पर ले भेजे के प्रयास कइलक। उत हम बानी कि ओ गाय देके आउर पड़ोसी होखला के नाते मार-पीटके थोड़ा सीधा कइले बानी हम। हम कतहू जाएम चंदा के भी अपने साथे लेके जाएम।

शिशिर: बहुते नेक विचार बाटे पद्मा तहार। हम ओ फिजी वाला महोदय से चंदा के भी तहरे साथे ले चले के सिफारिश करम।

पद्मा: ठीक बा। राउर बहुते मेहरबानी होई।

शिशिर: अरे मेहरबानी कइसन। ईश्वर तुम लोगिन के सेवा के लिए ही तो हमें एह धरती पर भेजले बाड़े। तुम लोगिन को सही रास्ता बताना हमार धर्म ही तो है।

रामचन्दर: जी, अब ई बताइए कि हम लोगिन के उहवाँ कब जाए के बाटे आ ओ अंग्रेज सहेबवा से कब मिले के बाटे।

शिशिर: हम कलुए ही आऊँगा उनका पास। तुम सब लोगिन के हमरा साथे ही चले के होई साहेबवा से मिले... आउर बाकि उ खुदे बतलइहन। एह बीच हम दोसरे गाँव के लोगिन के ई खबर देबे जात बानी। जे जाए के चाही उ तुम लोगिन के साथ ही चल पड़ेगा। तुम सब लोग काल्हे के तइयारी करल लोग। जेकरा जवन समान लबेके बाटे उ रख ल लोग बाद में टाइम ना मिली। काल्ह के बाद अइसन सुनहरा मौका ना मिली जीवन सँवारे के।

माधव: ठीक बाटे बाबू जी। हम लोग काल्हे के तइयारी आजुए ही कर लेते हैं। रउवा काल्हे जइसे ही आएंगे, हम रउरे साथे चल देंगे... ठीक है नू भाई लोग।

ग्रामीण: *(एक स्वर में)* हं-हं, बिलकुल ठीक बाटे।

शिशिर: ठीक बाटे, त हम चलता हूँ। काल्हे सुबह ही हम इहवां पर आ जाऊंगा।

ग्रामीण: *(एक स्वर में)* ठीक बाटे, राम-राम।

दृश्य-चार

(सुबह के समय बाटे। शिशिर, पद्मा, रामचन्दर, माधव, चंदा आदि ग्रामीण लोग के अपना साथ ले जाए खातिर गाँव पहुँचल बाड़े। उनका साथ विदेश जाए के लिए कवगो लोग खुश बाटे त कवगो उदास। सब लोग आपन सर समान लेके एगो पेड़ के नीचे सुबह से ही पंडित जी के इंतजार में बइठल बाटे। शिशिर के पहुँचते ही सब उकना के नमस्कार करत बा लोग।)

ग्रामीण: *(एक स्वर में)* प्रणाम पंडित जी।

शिशिर: खुश रह लोग, बच्चा लोगिन। का हो रामचन्दर, का तुम लोग तैयार हो।

रामचन्दर: हँ, हमनी के त रातहीं में तइयारी कर लिए हैं।

माधव: अरे तइयारी तो इनकी है। भौजी थोड़िहे जाने देना चाहती हैं इनको बहरा। रात के सुनत रहीं हम सब बात। बहुते रोवत रहली उ बेचारी। सुबह त इनकर लइका लइकी भी बहुत रोवत रहे।

रामचन्दर: अरे तू आपन बात काहें ना करत बाड़। बड़ा अइल हमरा घर के बात करे वाला। तहरो माई भी तहरा के उहवां जाए से मना करत रहली, फिर काहें जा रहल बाड़ तू।

पद्मा: आरे काहें बहस कइले जा रहे हो तू दुनो लोग। हम तू दुनों लोगिन के घर परिवार के सुबही समझाला के बादे इहवां पर आई हूँ। हम ठीक से समझा देले बानी कि हम लोग जल्दीए अपना गाँवे लौट आइए सन।

शिशिर: बहुते ठीक कइलू तू। का केहू आउरो के कहले बाड़ लोग चले खातिर।

पद्मा: हँ पूरब टोली से मुन्ना सिंह आउर हरेन्द्र सिंह आवे वाला बा लोग। मियाँ टोली से सलीम व अशरफ भाई भी आवे के कहले रहे लोग, आ आवते होई उ लोग।

शिशिर: ठीक बाटे, हमनी के उ लोगिन के थोड़ा इंतजार कर लेबे के। कुछ देर में ना आई लोग त चल देहल जाई हमनी के।

माधव: इंतज़ार खतमे हो गया जी... हउ देखिए ना, उ लोग आ ही गए। अब चलिए जहवां चले के बाटे अंग्रेजी सहेबवा से मिले।

शिशिर: त ठीक बाटे। बइठ लोग सब जाना ए बैलगाड़ी में।

(सब लोग बैलगाड़ी में सवार हो जात बाड़े आउर बैलगाड़ी धीरे-धीरे आगे बढ़ जात बाटे।)

(बैलगाड़ी के आगे बढ़ते ही रामचन्दर की मेहरारू रोवते-रोवते लइकन के साथ उहवां आ जात बाडी। केहू के उहवां ना देखके आउरो फूटकर रोवे लागत बाड़ीं। बच्चा सन भी महतारी के साथ रोवे लागत बाडन सन। माधव के बूढ़ माई भी आ गइल बारी आ फूट-फूटकर रोवत बाड़ीं गाँव के बुजुर्ग इकट्ठा होके रामचन्दर के मेहरारू और माधव के माई को समझा बुझाके घरे भेज देत बा।)

दृश्य-पाँच

(पानी के जहाज पर सवार होखे खातिर लम्हर लाइन लागल बाटे। जहाज पर सवार भइला से पहिले अंग्रेज अफसर लोगिन द्वारा एगो रजिस्टर में सब मजदूर लोगिन के नाम, पिता के नाम आउर गाँव आदि के विवरण लिखल जात बाटे। आ साथे साथ उनका लोगिन के अंगूठा के निशान भी लिहल जा रहल बाटे।)

चार्ल्स: मि. शिशिर, ई लोग काहे इतना नोइज़ कर रहा है। टेल देम टू स्टेंड क्राइटली इन द लाइन। रजिस्ट्रेशन में कुछ आउर समय लगेगा। एग्रीमेंट पर बिना अंगूठा लगाए कोई जहाज पर सवार नहीं हो सकत बा।

शिशिर: ओके सर, ए भाई लोग थोड़ा धैर्य रख लोग सब जाना। जल्दी ही सबकर नाम, पता रजिस्टर में लिख लेहल जाई आउर तबही जहाज पर चढ़े के इजाजत मिली केहू के भी।

रामचन्दर: अब केतना धैर्य रखीं सन हमनी के बाबू जी, एक सुबह से लाइन में ठार बानी सन। सूरज भी सर पर आ गइल। मारे प्यास दम निकल रहल बाटे।

पद्मा: अरे पियास ना। लइकन सन के त भूख भी लाग गइल बाटे अब। सुबह की एकनी के सतुआ पिआके ले आइल रहनी हईं आ अब लो कुछ ना भेंटाइल एकनी के खाए के।

शिशिर: थोड़ा आउर सब्र कर पद्मा। जल्दी ही सबकर नाम लिख जाई आउर जहाज पर चढ़ते ही सबका खाए पीए के सामान मिल जाई... पेट भर खइह लोग सब जाना।

माधव: जहाज पर चढ़े में त बहुते समय बा, अभी तक का भूखे ही रहीं सन हमनी के। काहे नहीं कुछ लाइनवे में ही दिलवा देते हैं आप।

शिशिर: हम अभी साहेब से कहके गुड़ व चना बंटवा देत बानी। कुछ त भूख मिटी ओकरा से।

(शिशिर कैथरीन आउर हैनरी महोदय से जाकर कुछ कहते हैं आउर तदुपरांत एगो अंग्रेज अधिकारी द्वारा चना आ गुड़ बांट दिहल जात बाटे। एगो दोसर अंग्रेज अधिकारी सबका के पानी वितरित कर देत बाटे।)

चार्ल्स: *(एगो ग्रामीण से)* का नाम है तुम्हारा?

रामचन्दर: साहिब हम रामचन्दर हूँ। हमरा पिताजी के नाम अयोध्या प्रसाद बाटे। छपरा जिला के सुरजपूर गाँव बाटे हमार।

चार्ल्स: ओके, इहवां पर अंगूठा लगाओ।

रामचन्दर: ठीक बाटे मालिक।

(रामचन्दर अंगूठा लगा देत बाड़ें।)

कैथरीन: तहार नाम?

पद्मा: हमरा के पद्मा कहेला लोग।

कैथरीन: पति के नाम?

पद्मा: हमरा आदमी त बहुत पहिले ही गुजर गइलन। एही से त मारी-मारी बानी साहेब हम आउर मेहनत मजदूरी करेनी हम।

कैथरीन: मि. शिशिर, व्हाट शी इज़ सेइंग?

शिशिर: शी इज़ सेइंग दैट हर हसबैंड इज़ नो मोर।

कैथरीन: सो सैड, जस्ट टेल मी हिज नेम।

शिशिर: मैडम, एकरा आदमी के नाम कर्मवीर रहे।

कैथरीन: ओके। देन आई विल राइट पद्मा वाइफ ऑफ लेट कर्मवीर।

शिशिर: यस मैडम, रउवा ठीक समझी हैं अब।

कैथरीन: आई थिंक, आई हैव रजिस्टर्ड द नेम ऑफ ऑल लेडीज। एनीबडी एल्स इज देअर?

शिशिर: ना मैडम, रउवा सबकर नाम लिख लेले बानी।

कैथरीन: ओके। मी एंड ए फ्यू मोर ऑफिसर्स आर गोइंग टू फिजी बाइ अनदर शिप बिफोर, ऑन लेवनीदास शिप।

शिशिर: ओके मैडम, नमस्कार। हम रवरा से फिजीए में अब मिलेम।

दृश्य-छह

(भारतीय लोगिन के जहाज पर चढ़ने के सीन बाटे। उहवां उनका लोगिन के वस्त्र व अन्य सामग्री देहल जात बाटे)

डैविड: मि. रामचन्दर, तुमको ई पाएंट-कमीज पहनना है। तुम्हारे खाने वास्ते यह प्लेट है आउर वाटर पीने वास्ते यह बर्तन है।

रामचन्दर: काहें पंडित जी, हमनी लोगिन के लिए इहे टीन के लोटा-थरीया मिलल साहेब के।

शिशिर: अरे टीन में का हुआ। बर्तन कवनो भी हो बस साफ-सुथरा होखे के चाहीं। टीन व पीतल में कुछओ नाहीं रखल बाटे। इ त केवल जहाज पर यात्रा तक ही हमनी के साथ रही। उहवां पहुँचा के बाद सबका चमचमात नाया चाँदी के लोटा थरीया मिल जाई साहेब कहले बाड़ें।

पद्मा: अच्छा, अइसन बात बा। तब तक बहुत अमीर देश बाटे उ। हम त आज ले चाँदी के बर्तन नइखी देखले।

शिशिर: तब त तू लोग अपना के खुशनसीब समझ लोग कि तहरा लोगिन के चाँदी के बर्तन में खाना मिली उहवां पर।

माधव: पंडित जी, इ त बताइए, हम उहवाँ कहवाँ पर रहेंगे... घर त दीहें नू साहेब हमनी के।

शिशिर: आरे सबका खातिर आच्छा व्यवस्था कइले बाड़े साहेब लोग...। काहें जी मि. हैनरी आप ही बताइए न तनी इन लोगिन के कि इनका लोगिन के लिए रहे के कइसन

व्यवस्था की है आपने। काल्हुए त आप एकरा बारे में हमरा से कह रहे थे।

हैनरी: यस, यस, वी हैव ऑलरेडी मेड ऑल अरेंजमेंट्स फॉर देअर एकॉमडेशन। उहवां इ लोगिन को कवनों प्रकार के दिक्कत नहीं होगा... हम प्रोमिस करता हूँ।

डैविड: मि. शिशिर, टेल देम टू यूज 2 टॉयलेट्स मेन आन दी टॉप ऑफ दिस शिप इन डे और नाइट। औरतों के लिए एक टॉयलेट है और आदमियों के लिए एक। सबको उन्हीं टॉयलेट्स को यूज़ करना है और उसे क्लीन भी रखना है।

शिशिर: ओके सर, आई विल एक्सप्लेन। सुन भाई लोगिन। जहाज के ऊपर वाला मंजिल पर औरत आदमी के खातिर अलग-अलग शौचालय बनल बाटे सबका ओकरे इस्तेमाल करे के बाटे आउर ओकर सफाई के भी ध्यान रखे के बाटे।

रामचन्दर: हम सब बात बुझ गए हैं। अब ई बताइए कि रात को हम लोग कहवाँ सुतेंगे। बीस-पच्चीस दिन की यात्रा बाट त सुतहूँ के त व्यवस्था होखे के चाहीं जहाज में।

डैविड: यू ऑल हेव टू रेस्ट इन नाइट इन अलॉटिड एरिया ओनली। केहू के अपना स्थान बदले के इजाजत नहीं बाटे। एगो परिवार के लोग एक साथ रह सकत बाटे।

हरेन्द्र सिंह: अरे शिशिर जी हमनी किसके साथ जगह दे दिया साहेब ने। हम ना सुतेम एह जगहा पर। हमारी जाति-धर्म का तो ध्यान रखा होता साहेब ने।

अशरफ: रउवा ठीक कहते हैं जी। अलग-अलग जाति धर्म के लोगिन को जहात के अलग-अलग हिस्से में स्थान देना देबे के चाहीं साहेब के। अब आप ही बताइए जी हम मुस्लिम लोग आपन नमाज़ कइसे अदा करम सन इहवां पर।

शिशिर: व्यर्थ के चिंता करत बार भाई अशरफ मियाँ तू। जहवां चाहो उहवां राम-रहीम मिल जाएंगे। तहरा जवन जगह मिलल बाटे उहां पर ही नमाज़ अदा कर सकत बाड़ तू।

अशरफ: रउरा कहत बानी त ठीक था। हम इहवां पर ही आपन नमाज़ अदा कर लेम। चल भाई सलीम हाथ-मुँह धो ल नमाज़ के समय हो गइल बा अब।

पद्मा: चल चंदा शाम हो गइल बाटे हमनी के भी अपना प्रभु के पूजा-अर्चना जहाज पर कर लेंबे के।

(जहाज पर एक ओर पूजा अर्चना होखे लागत बा दोसरा ओर नमाज़ अदा होत बा। तदुपरांत सबका भोजन मिलत बाटे। खा-पीके सबे सुत जात बा।)

दृश्य-सात

(भारतीय मजदूर लोगिन के लेके जहाज फिजी पहुंच चुकल बा। कुछ भारतीय लोग एगो जहाज से उतरत लऊकत बाड़न। एही बीच एगो उद्घोषणा सुनाई पड़त बा, "आज सन् 1879 के 15 मई ह। अंग्रेजन के अधीन फिजी नाम के एक टापू के बंदरगाह पर आज भारतीय लोगन के पहिलका जत्था लेके लेवनीदास नाम के जहाज़ आवे वाला बा। शायद आइये गइल।... योर अटेंशन प्लीज, लेवनीदास शिप फ्रॉम इंडिया हैज़ जस्ट नाउ अराइव्ड ऐट फीजी पोर्ट।" चार्ल्स आ उनकर मेहरारू कैथरीन दू गो डॉक्टर के साथ लेके पोर्ट पर यात्री लोगिन के स्वागत में खड़ा बाड़ें।)

चार्ल्स: वेलकम फ्रेंड्स वलेकम ऑन दिस फिजी आइलैंड।

शिशिर: थैंक यू सर। *(भारतीय लोगिन से)* साहेब हमनी के स्वागत करत बानी।

सब लोग: *(एके सुर में)* धन्यवाद।

शिशिर: दे आर सेइंग, थैंक यू सर।

कैथरीन: वी होप यू ऑल इनजॉयड योर जर्नी।

शिशिर: इहाँ के पूछत बानी कि हमनी सन के यात्रा सुखद रहल?

सब लोग: *(एके सुर में)* जी... हँ... ठीके-ठाक रहल।

एक आदमी: बाबा कहीं ना कि सभे थाक गइल बा, भूख पिआस दूनों जोर से लागत बा, कुछ खाए-पिए के बेवस्था करस साहेब। खा पी के तनी आराम करतीं सन।

शिशिर: सर, वी आर टायर्ड, वी वांट सम रिफ्रेशमेंट एंड ऑफ्टर दैट वी वुड लाइक टु टेक सम रेस्ट।

ब्राउन आ गैरिक: नो-नो-नो इट्स नौट गुड।

गैरिक: विदआउट मैडिकल चेक अप एण्ड बाथ यू कैन नौट ड्रिंक अ ग्लास ऑफ वाटर हियर।

शिशिर: इहाँ सबे ई कहत बानी कि बिना नेहइले-धोअइले आ डॉक्टरी जाँच के पानीयो ना पीए के मिली।

सब लोग: ठीक बा, जइसन इहाँ सबे के मर्जी।

ब्राउन: यस, यस, दैट्स राइट। मिस रोजी एक्सप्लेन दिज लेडिज द टर्म ऑफ मेडिकल एक्जामिनेशन एण्ड इट्स इम्पोरटेंस।

रोजी: यस डॉक्टर, आई विल इक्सप्लेन दैम इन डिटेल। *(मेहरारू लोगिन का ओर घूम के)* यू फॉलो मी।

(रोजी नामक नर्स सब लोगिन के नेहाय धोआए के जगह बतावतीया। सब लोग नेहा धोआ के आपन आपन कपड़ा एगो बड़ बरतन में खउलत पानी में डाल देत बा। एकरा बाद सबकर बारी-बारी से डॉक्टरी जाँच शुरू होता।)

ब्राउन: मिस्टर रिक्रूटर सेण्ड दिस लेडी टु सुवा हॉस्पिटल एण्ड दिस मैन बैक टू इंडिया।

रिक्रूटर: बट, वाई सर। ह्वाट रौंग विद दैम।

ब्राउन: दिस वूमेन इज प्रिगनेंट एंड दिस मैन इज नॉट फिट फॉर हार्ड वर्क।

रिक्रूटर: ओके सर, *(औरत से)* तू अस्पटाल जा, पेट में बच्चा बा? सूवा अस्पटाल चल। आ टू रोगी आडमी वापस इंडिया जा।

(डॉक्टरी जाँच करत-करत सुबह से सांझ हो जाला जाँच के बाद चार्ल्स और कैथरीन सब लोग खातिर भोजन के व्यवस्था में जुट जातारें)

चार्ल्स आ कैथरीन: लेट्स ज्वाइन ऐट डीनर, फ्रेन्ड्स।

शिशिर: इहाँ सबे खाना खाए के कहत बानीं।

बुधिया: हँ-हँ, चले के भाई चले के बीजे भइल बा। बड़ी जोर से भूख लागल बा। सुबह से सांझ होखे वाला बा अबहीं ले पानीयो नसीब नइखे भइल।

(सब लोग खाना खाके ओही जगे भुइयें सूत जातारन। यात्रा के थकान के कारण एके नीने विहान हो जाता। किरिण फूटते चिरइन सन के चहचआहट से जब आँख खुलत बा तब सब लोग आपना के तरो ताजा महसूस करत बा। सभे फर-फराकित होके चारों तरफ अचम्भा से देखत बा।)

दृश्य-आठ

चार्ल्स: लेट्स कम, प्लीज टेक योर टी।

शिशिर: इहाँ के चाह पिये के कहत बानी। जेकरा चाह-ओह पीये के बा पी लेवे।

(कुछ लोग चुस्की ले ले के चाह पियत बाड़े त कुछ लोग आपन हाथ मुँह जरा लेत बाड़े।)

चार्ल्स: शिशिर, आइ वुड लाइक टु शो यू द प्लेस वेयर यू औल हैव टु वर्क।

शिशिर: ओके सर। *(पीछे घूम के)* ए भाई लोग इहाँ के हमनी सब के ऊ जगह देखावे के चाहत बानीं जहाँ हमनी सन के काम धाम करे के बा।

बुधिया: ठीक बा बाबा, चले के। ए भाई चल लोगिन।

(चार्ल्स अपना मेहरारू के संगे सब भारतीय लोग के अपना इस्टेट के तरफ ले जात बाड़न। उहाँ ओवरसियर आ कोलम्बर से सबकर परिचय करावत बाड़न।)

चार्ल्स: शिशिर, दिस जेन्टल मैन इज नोन बाई दी नेम ऑफ मिस्टर ओवरसियर। हिज ड्यूटी इज टु चेक योर वर्क एवरी डे एण्ड दिस इज मिस्टर कोलम्बर। ही विल टेक योर अटेंडेंट्स ऐट द स्टेट। यू हैव टु वर्क अन्डर दिज जेन्टलमेन। दे विल प्रोवाइट फूड एण्ड शेल्टर एण्ड अदर नेसेसरी आइटम टु यू ऑल।

शिशिर: ओके सर।

बुधिया: का बाबा इ का कहत बाड़न।

शिशिर: इहाँ के कहत बानी कि इहाँ के नाम ओवरसियर आ इहाँ के नाम कोलम्बर ह। इहें के दूनों आदमी हमनी के काम देखल करेब आ इहें के हमनी के खाना आ रहे आदि के व्यवस्था करेब।

चार्ल्स: नाउ आई एम गोइंग बैक विद कैथरीन।

कोलम्बर आ ओवरसियर: *(एके सुर में)* ओके सर, बॉय।

शिशिर: नमस्कार सर।

(चार्ल्स अपना मेहरारू के साथ वापस चल जातारें। कोलम्बर आ ओवरसियर सब लोग के काम समझावत बाड़े। खेती-बारी के औजार सब केहु के देत बाड़े। सबकर काम अलग-अलग होता। केहु ऊख काटत बा त केहु मेढ़ ठीक करत बा त केहु के काम बोझा बान्हे

के बा। काम करते-करते सुबह से सांझ हो जाता—कोलम्बर सब लोग के खाए-पीए के समान देत बा आ समान देते-देत इ हुकुम देत बा कि—नौ बड़ी इज सपोज्ड टु सेल दिज आइटम फोर मनी। डॉन्ट ट्राई टु डू दिस)

बुधिया: ई का कहत बा, ए बाबा?

शिशिर: इहे कहत बा कि हई जवन दाल चाउर मिलत बा एकरा के केहु रोपेया पइसा खातिर बेचे के कोसिस ना करे। अगर कहु अइसन करत पकड़ल जाइ त ठीक ना होई।

बुधिया: ठीक बा बाबा। ए भाई लोगिन, समझ गइल लोग?

ओवरसियर: नाउ फॉलो मी। आइ विल शो यू द प्लेस व्हेयर यू हैव टु स्टे ऐट नाइट। मिस्टर शिशिर, दिस इज कूल लाइन। अ ग्रुप ऑफ थ्री पिपल और अ फैमिली कैन लिव इन अ हाऊस, देट्स वाई यू चूज योर रूम पार्टनर्स।

शिशिर: ओके सर।

बुधिया: *(खिसिया के)* ए बाबा, तु काहे नइख बतावत की इ का गिट-पिट, गिट-पिट कहत बा?

शिशिर: *(खिसिया के)* रह ना रे मरदे—का बताइं तहरा के। हम इहे बतावत रहीं कि के का कहता? काहे नइख अंग्रेजी सीख लेत?

बुधिया: खाली हमरे अंग्रेजी सिखला के काम चल जाई? काहें ना तूहीं सबका के सीखा देत बाड़ अंग्रेजी आ रंगरेजी।

शिशिर: अच्छा फालतू मत बोल। ई कहत बा कि हे जगह के नाम कुली लाइन हवे।... आ हमनी सबके एही जगे रहेके बा। एकही कमरा में तीन तीन गो आदमी अथवा एगो परिवार रह सकेला। एही से ई कहत बाड़े कि सभे आपन-आपन गोइयाँ चुन लेबे। जेकरा साथे जे रहल चाहे उ बोले।

बुधिया: ठीक बा ए बाबा। एक भाई लोगिन हे घुरकुल्ली में तीन-तीन गोआदमी के रहेके बा।... ठीक बा नू... समझ गइल लोग?

कोलम्बर: यू हैव टु कुक योर फूड इनसाइड दिज हाउसेज।

शिशिर: *(खिसिया के)* इट्स इंपोसिबल सर। वी कैन नौट कुक आवर फूड इनसाइट दिज स्माल हाउसेज। देयर इज नो विन्डो एण्ड इलेक्ट्रिसिटी।

बुधिया: काहे बाबा, काहे खिसिया गइनी? का बात बा तनी हमनियों के त बताई।

शिशिर: का बताइं हो। ई कहत बा कि हमनी सन के खाएको हे हती-हती धरवन में बनावेक होइ आ ओही में सुतहूँ के बा।

बुधिया: ई सरवा पगला गइल बा का? ई सब हती-हती घर आ कहत बा रहबो कर लोग आ खाएको बनाव लोग एही में। ना ना ना ई सब ना होइ हमनी से।

कोलम्बर: बी पोलाइट मिस्टर शिशिर। दिस इज द रूल ऑफ औल इस्टेट्स। यू हैव टु ओबे औल द रूल रेगुलेशन ऑफ अवर इस्टेट।

शिशिर: *(मेहरा के)* ओके सर।

(इ सब बात सुन के बुधिया मुँह फुला लेता पर शिशिर ने स्थिति की नाजुकता को ध्यान में रा के ओकरा के समझावत बुझावत बाड़न।)

शिशिर: सुन लोग... ई जवन कहता उ सब हमनी सन के माने के होई हमनी सन के... ए कुलीये लाईन में रहेके या आ इहयीं खाना दाना पकावे के होई अब।

सब लोग: *(एके सुर में)* ठीक बा बाबा। अब जवन करम करावे।

(एकरा बाद शिशिर सबका के समझा-बुझा के कोठरीन में जाएके कहत बाड़न।)

दृश्य-नौ

रामचन्दर: ए पद्मा हाली से चूल्हा जोड़ ना। देख त लइका भूख से बिलकत बाड़न सन।

पद्मा: *(खिसिया के)* का चूल्हा, जोड़ी... चारों ओर धूरे-धुर त उड़त बा।

रामचन्दर: अरे धूर उड़त बा त उड़े दे। चूल्हा जोड़ चूल्हा। पाछे लिपाई-पोताई करीह।

पद्मा: *(खिसिया के)* आरे जा होने। लागत बा कि लइकन से अधिका त तूहीं भुखाइल बाड़।

राचन्दर: फेन वेसी बोलत बिया।

(पद्मा मर्द के डरे चुप हो जात बाड़ी आ चूल्हा लीप पोत के हाली से जोड़त बाड़ी। घर में धुआँ के निकासी ना होखे के कारण घर में धुएँ-धुएँ हो जात बा। लइका आँख मले लागतारे सन आ आँख मलते-मलते घर से

बाहर चल जातारन सन। खाना बनला पर पद्मा लइकन के बोला के खियावत-पियावत बाड़ी आ ओकरा बाद सब परिवार घरे में सुत जात बाड़े। लइका गरमी के मारे बार-बार हेने से होने करवट बदलत बाड़न सन आ बीच-बीच में उठ के बइठ जातारन सन पर पद्मा अँचरा से हवा कर-कर के लइकन के सुतावे के कोशिश करत बाड़ी।)

दृश्य-दस *(सुबह के समय था, 3 बज के 30 मिनट पर ही एगो सीटी के आवाज आवत बा। सब लोग हाली हाली उठत बाड़ी आ फर-फराकित होके खाना-पीना बनावत बाड़ें आ ठीक 4 बज के 30 मिनट पर स्टेट पर हाजिर हो जात बाड़ें।)*

कोलम्बर: *(हाजरी लेत बा)* कुली नम्बर वन, कुली नम्बर टू, कुली नम्बर थ्री।

बुधिया: ए बाबा, हई का वन टु, वन टु कइले बा? का कहे चाहत बा ई?

शिशिर: ई हमनी सन के हाजरी लेत बा। ई... ई जाने के चाहत बा कि के काम पर आइल बा के नइखे आइल। सुन रामचन्दर तोर एक नम्बर माने कि वन हा, आ आनन्दवा तोर टू नम्बर दू ह, आ तोरी चंदा तीन आने थ्री नम्बर ह। बाकी लोग के आपन-आपन नम्बर याद बा नू? सब केहु अपना-अपना नम्बर पर यस सर बोल दिह लोग।

सब लोग: *(एके सुर में)* ठीक बा बाबा... ठीक बा समझ गइनी सन हमनी के।

(कोलम्बर फेन से हाजिरी लेत बा। कुली नं. वन-यस, टू-यस, थ्री-यस... हाजिरी के बाद सब लोग काम में जुट जात बा। कुछ समय बितला पर ओवरसियर सबकर काम देखे आवत बा।)

ओवरसियर: रामचन्दर, हैव यू फिनीस्ड योर वर्क?

रामचन्दर: ए बाबा ई कहत बा हमरा से?

शिशिर: ई पूछत बा कि का तोहार काम खतम हो गइल?

रामचन्दर: हँ-हँ, सब काम खतम हो गइल।

शिशिर: सर ही सेज दैट ही हैज कम्पलीटेड हीज टास्क।

ओवरसियर: श्योर मिस्टर शिशिर।

शिशिर: यस सर, यू कैन चैक हीज वर्क योरसेल्फ। नइखे बिसवास द अपने देख ले भाई।

ओवरसियर: एण्ड व्हाट अबाउट यू चंदा?

चंदा: *(शिशिर से)* एक बाबा हई मुअना का हमरा आगे-पीछे घूमत बा? का जाने का चाहत बा ई हमरा से? एकर चाल-ढाल हमरा तनिको अच्छा नइखे बुझात।

शिशिर: काहें खिसियात बाड़िस? ई जाने के चाहत बा कि तोर काम खतम हो गइल कि ना?

चंदा: ना अभी नइखे भइल। रउवे कह दीहीं कि हम आपन काम काल्हे ले खतम कर लेब।

शिशिर: *(ओवरसियर से)* सर शी इज नॉट वेल टुडे। शी विल फिनिश हर वर्क टुमॉरो।

ओवरसियर: नो, नो, इट्स नॉट पोसिबल, शी हैज टु फिनिश हर वर्क टुडे पोजिटिवली।

शिशिर: ओके सर.... कैन आई हेल्प हर?

ओवरसियर: नो, नो बडी इन सपोजड टु हेल्प हर। इक्सेप्ट हर यू ऑल मे गो बैक टु कुली लाइन।

शिशिर: ओके सर *(दोसरा ओर घूम के)* ए भाई जेकर जेकर काम खतम हो गईल बा उ कुली लाइन जा सकत बा अब।... ए चंदा... ई साला कहत बा कि तहरा आपन काम आजे खतम करे के होई। इहो कहत बा कि केहु मददो मत करो आ जेकर काम खतम हो गइल उ कुली लाइन जाओ।

(चंदा के छोड़ के सब लोग कुली लाइन के ओर जाए लागत बा)

शिशिर: ऐ चंदा हाली-हाली आपन काम खत कर के तुहूँ कुली लाइन हाली से आ जइह। हमनी सन के जात बानी सन।

चंदा: ना पंडित जी, हमरो के लिया चलीं। हम आपन काम काल्हे पूरा कर लेब।

शिशिर: कइसे लिया चलीं तहरा के? कहनी हईं ना एकरा से। ई तनिको सुनत बा निष्ठुर साला? इहो नइखे बुझत कि तहार तबीयत खराब बा।... अच्छा हम जात बानी। तू आपन ध्यान रखीह।

(एतना कह के शिशिर भी एस्टेट से चल जात बानी।)

ओवरसियर: *(चंदा से)* यू हैव नॉट फिनिश्ड योर वर्क एण्ड दैट्स वाई यू आर नॉट सपोज्ड टू गो बैक टु कुली लाइन विदाउट

माई परमिशन। यू विल रिमेन हियर अण्टिल यू फिनिश योर वर्क।

(चंदा ओवरसियर के बात सुन के चुप रहत बाड़ी आ आपन काम हाली हाली करे लागत बाड़ी। चंदा के अकेला पा के ओवरसियर उनका साथ अभद्र व्यवहार करे लागत बा। चंदा कसहुँ ओकरा से आपन जान बचा के कुली लाइन का ओर भागत बाड़ी। ओवरसियर कुछ दूर तक चंदा के पीछा करत बा पर चंदा कुली लाइन में पहुँच जातारी आ ओवरसियर वापस अपना इस्टेट पर चल जात बा। चंदा अपना घर में जाके फूट-फूट के रोवे लागत बाड़ी।)

चंदा: *फिरंगिया के राजवा में छुटल मोरा देसवा*
गोरी सरकार चलल चाल रे विदेसिया।
भोली मोहे देख अरकाटी भरमवलें हो
निकललें सब झूठ ही सपना विदेसिया। फिरंगिया के...

(चंदा के ई दर्द भरल गीत सुन के भीड़ इकट्ठा हो जात बा। सब केहु उनका दुख के कारण जाने के कोसिस करता पर लोक लेहजा के डर से चंदा एको शब्द नइखी बोलत आ फेन से फूट-फूट के रोवे लाग तारी।)

चंदा: हाथ में थमाई दिहलें खुरपी फिरंगयि हो

घाम में पसेना हम बहाईं हो विदेसिया।
खेत में कोलम्बारा आवाज दे बोलावो हो
मार-मार हुकुम चलावे हो विदेसिया।
काली से कोठरिया में बीते नाहिं रतिया हो
केकरा से पीर हम बताईं हो विदेसिया।

(धीरे-धीरे चंदा के आवाज कम हो जात बा आ सारा लोग अपना-अपना घरे चल जात बा।)

दृश्य-ग्यारह

(फेन सुबह के समय 3 बज के 30 मिनट पर ही सिटी बाजत बा। पहिलहीं अस ई लोग 4 बज के 30 मिनट होत होत स्टेट पर हाजिर हो जात बा लोग। कुछ लोग दस पन्द्रह मिनट देरी से भी पहुँचत बाड़ें।)

कोलम्बर: मिस्टर बदरी एण्ड रामेश्वर.... वाई आर यू कमिंग लेट?

बदरी: ए बाबा का पूछत बा ई?

शिशिर: ई जाने के चाहत बा कि काम पर आवे में काहें देरी भइल ह?

बदरी आ रामेश्वर: सर खाना बनावे में लेट हो गइल ह। उ का रहलख कि जरना काठी नू सब ओद रहलख।

कोलम्बर: मिस्टर शिशिर, व्हाट आर दे सेइंग?

शिशिर: सर, दे आर सेइंग दैट द वुड वाज नॉट ड्राई एनफ टु कुक देयर फूड क्विकली एण्ड देट्स वाई दे आर डिलेड।

कोलम्बर: ओके, एण्ड व्हाट अबाउट यू सोनकलिया?

सोनकलिया: *(शिशिर से)* ए बाबा, हमरो से देरीए के कारण जाने के चाहत बा का?

शिशिर: हँ-हँ, काहे देर भइल बा आवे में तोहरा?

सोनकलिया: सर लइका सन में देर हो गइलख। उ का रहलख कि बिचला बबुआ के तनी तबीयत दब चलत बा। उहे ना छोड़त रहलख हमरा के।

कोलम्बर: व्हाट शी सेज?

शिशिर: शी इज़ सेइंग दैट शी वाज बीजी विद हर चिल्ड्रेन। हर सेकेण्ड चाइल्ड इन नॉट वेल सर।

कोलम्बर: ओके-ओके, टेक केयर ऑफ योर चिल्ड्रेन एण्ड बी इन टाइम इन फ्यूचर।

(एतना कह के कोलम्बर खेत के दोसरा छोर की ओर चल जात बा। ओकरा गइला के बाद सबकर बतकही शुरू हो जात बा।)

सोनकलिया: *(शिशिर से)* ई का कह के गइलख ए बाबा?

शिशिर: इहे त कहलख कि लइका-फइका सन के धेयान राखल कर आ आगे से समय से काम पर आवल कर।

सोनकलिया: हँ-हँ, ठीक बा।

आनन्द: का ए पंडित जी, कइसन लागत बा इहाँ? पंडिताइन त इयाद आवते होइहें? इयाद त अइबे करिहें छ:-सात महीना जे हो गइल। साला एगो जुग त जहजुए में बीत गइल। एतना लमहर सफर तक कबहुँ ना कइले रहनी सन।

शिशिर: त का एतना पानिओ कबो देखले रहल?

आनन्द: ना बाबा एतना पानी तो कबो सपनों में ना देखले रहनी सन। आपन गंगा मइया के पानी त एह पानी के आगे कुछ नइखे। आ इहाँ साला लोग... लोग त लउकते

नइखे। चारों ओर पत्थर, पहाड़, खेत आ पानीए... पानी बा इहाँ।

शिशिर: हँ आनन्द। बाकिर इहाँ-उहाँ में जमीन आसमान के अन्तर बा। अपना देश में तू कतहीं चल जा नित सुबह सांझ भजन-कीर्तन के मधुर स्वर मन के आनन्द विभोर कर देबे ला।... इहाँ के बारे में नहींए जान त अच्छा रही।

आनन्द: कउँची बाबा?

शिशिर: इहाँ के लोग के भजन-कीर्तन से कवनो दरकार नइखे। इहाँ के लोग अभद्र नृत्य में आपन धुनी रमावेला। ई गोरा सब त बस तन के भूखल हउवें सन। एहनी खातिर रूपिये-पइसा सब कुछ बा।... आ एगो आपन देश बा जहाँ रोपिया-पइसा के चकाचौंध आस्था आ विश्वास के ना डिगा सकला। बोल... भारत माता की...

(एक बार चारों ओर भारत माता के जयकार गूँज जात बा।)

आनन्द: बाबा छोड़ीं इहाँ के बात। काहें ना आज कुली लाइन में भजन-कीर्तन के आयोजन कइल जाए? हमार विचार बा कि हमनीस के अब ए देश के भी अपने देश मान लेबे के चाहीं आउरो इहवें अपना सभ्यता संस्कृति के आगे बढ़ावे के कोशिश करे के चाहीं। रहल बात इहवाँ से अपना देश वापस लौटे के से ई सब किस्मत पर छोड़ देबे के चाहीं। समय आई त हमनी के फिर से अपना देश भारत में लौटिए जाएग सन। पर जब ले इहवाँ रहेके तब ले खुशी-खुशी रहे के प्रयास करे के चाहीं हमनी सन के।

शिशिर: बड़ा बढ़ियाँ रहीत। बाकिर आउरो सभे के राय ले लिहल जाय।

आनन्द: *(चंदा से)* काहो चंदा आज सांझ के गाना-बजाना हो जाए? का राय बा तोहरा?

चंदा: आरे हमार का राय होई। पहिले मोहम्मद साहेब से त पूछ ल।

आनन्द: का जी मोहम्मद साहेब? का कहत बानी रउवा?

दोस्त मोहम्मद: जेमें सबकर खुशी, ओमे हमरो खुशी।

आनन्द: *(सबके संबोधित करत, तेज आवाज में)* ए भाइ लोग आज सांझ के कुली लाइन में भजन-कीर्तन के आयोजन होई। ए से सब केहु हाली-हाली हाथ चलावे आ आपन-आपन काम खतम करे।

(सब लोग हाली-हाली आपन काम खतम करके कुली लाइन पहुँच के खाना बनावत बा आ खा-पी के एक जगह जुटत बाड़ें।)

बुधिया: का ए बाबा कार्यक्रम शुरू कइल जाए?

शिशिर: हँ-हँ, देर कइला के काम ना बा। तू हेड सरदार होखला के नाते एगो नीमन भजन से उठाव।

बुधिया: आरे ना, ना, बाबू जी, ई का कहतानी। हम आ गीत गाईं? ना, ना, ना। ई हमरा से ना होई।

शिशिर: आरे का कहत बाड़ मरदे। हेइजा जइसे खटत बाड़ ओइसे कबो खटत रह?

बुधिया: ना।

शिशिर: तब! तहरा अबहूँ ना विश्वास भइल के आदमी जे चाहे उ कर सकत बा? कुछुओ असंभव नइखे। कोशिश त कर।

बुधिया: ठीक बा त एही बात प सुनीए लिहीं—बोल सिया बर राम चन्द्र की जय।

(सब कोई जयकार करत बा)

मंगल भुवन अमंगल हारी रामा हो रामा
द्रवहुँ सुदसरथ अजर बिहारी रामा हो रामा
श्रीरामचन्द्र कृपाल भजुमन हरण भव भय दारूणम

(सभे सुर मिला के गावता। सोनकलिया आ पद्मा बिना फरमाइस के गा उठत बा लोग आ नाचतो बा लोग)

हमसे ना होई बनिहरिया ए मालिक हमसे ना होई...
अपना लरिकवा के भेजीं स्कूलिया
हमार लरिकवा अधरिया ए मालिक हमसे ना...
आपन लरिकवा के पोथी पढ़ाई
हमार भँड्स चरवहिया ए मालिक हमसे ना...

(एक गीत के बाद सब लोग अपना-अपना कोठरी में सुते चल जात बा लोग काहे कि रात ढेर हो चुकल बा आ अगिला सुबह काम पर जाए के भी चिंता बा ओ लोग के।)

दृश्य-बारह

(अगिला सुबह खेत में)

माधव: पाँव लागी ए बाबा।

शिशिर: जय हो, जय हो। का हाल बा माधो?

माधव: ठीके बा बाबा। रउरा कइसन बानी? सब ठीक बा नू?

शिशिर: का ठीक रही हो। हमनी के इहाँ अइला लगभग पाँच बरिस होखे जात बा बाकिर हमनी भिरी आज ले एतनो पइसा ना जुट सकल कि आपन देश जा सकीं। जिन्ह जना राशन-पताई चोरा-चोरा के बेंचले बाड़े आ कुछ पइसा कउड़ी एकट्ठा कइले बाड़ें उनकर स्वास्थ्य बहुत बिगड़ चुकल बा। अइसन ना होखे कि उ सबे भारत पहुँचे से पहिले कहीं आउरे पहुँच जाए लोग।

माधव: जी। इ त बहुत सोचनीय आ गंभीर स्थिति बा।

शिशिर: एह देश में हमनी के गिरमिटिया बन गइनी सन। इहाँ के लोगवो हमनी के गिरमिटिए कहेला। इहाँ आके हमनी के बहुत बड़ गलती कइनी सन। चाहे नूने रोटी पर गुजारा करे के पड़े तबो आपन देश आपने होला।

माधव: हँ-हँ बाबा, एकदम साँच कहतानी। तुलसीदास जी ठीके कहले बानी, "पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।" तुलसी बाबा सब सही लिख दिहले। जब सीता मैय्या और राम लखन जैसे राजा लोगन चौदह बरस जंगल जंगल डोलत फिरे, तकलीफ सहलें, तब हम मजूर लोगन भी काहे तकलीफ न सह सकीलें। हम गिरमिटियन एक दिन वैसा ही राज करेम जा जैसन श्रीराम कईलन। क्यों पंडित जी?

शिशिर पंडित: सच कहा माधव, राम हमारी नैय्या पार लगाइहन। जो भाग्यन में लिखल बा, होगा ही पर हम मिलकर अपना भाग्य बनाइम सन। प्रभु राम हम पर कृपा करें। बोलो सियापति राजा रामचंदर जी की....

सब: जय।

(ढोलक और मंजीरों की आवाज़ में गिरमिटियों की रामधुन गूँजने लगी)

(परदा गिर जात बा)

■■■

कोई इंडिया से जब आए...

अर्चना पाण्डे (अमरीका)

कोई इंडिया से जब आए तो वो यही सोचकर आए
कि मैं सपनों के देश में आ तो पाई रे...

पर आकर इस प्लेस में यूँ लगता है
डॉलर भी तो पेड़ पे नहीं उगते हैं
मन तन्हा है, जीवन सूना फिर भी रे
सुख-दु:ख में हम किस-किस से मिल पाते हैं?
मंहगा डे केयर है, जीरो पे शेयर है
कटे आधी तनख्वाह टैक्स में, लगता नहीं फेयर है।
बैंक होम सब बोलें, तुम लाखों में डोलो
सच्चाई हम जानें तुम हमको न बोलो।
हाँ! इंडिया से नई माँग आई रे...
कोई इंडिया से जब आए...

पर जीवन तो फिर भी चलता रहता है
हमने वहीं पर हँसना गाना सीखा है
बिना किसी बैसाखी के खुद ही चलना
अब तो अपना देश ही अमेरिका है
उस माँ ने जनम दिया इस माँ ने पाला है
तो इस माँ का दर्जा उस माँ से आला है
ऐ मेरे वतन के लोगो, ये बात जान लो हाँ
रखना ऊँचा निज स्वाभिमान, तुम जग में रहो जहाँ...

पूरब से आई कैसी पुरवाई रे...
कोई इंडिया से जब आए...

सम्पर्क : E-mail: panda_archana@yahoo.com
Mobile : 458-707-6645

साहित्य के दर्पण में प्रवासी साहित्य

स्नेह ठाकुर

"...जैसे वीरों के लिए कहावत है कि वे अपना मस्तक सदा हथेली पर लिए घूमते हैं, वास्तव में वैसे ही साहित्यकार भी अपनी उँगलियों के पोरों पर अपने मस्तक के सभी विचार धारण करते हैं और उन्हें अपनी कलम द्वारा समाज से परिचित कराते हैं। साहित्यकार तो बस यह देखता है कि उसका मस्तक यथार्थ-रूप से उसकी कृति में उतरा है या नहीं। वह एक स्वस्थ विचाराधीन परिधि में सृजन करता है। उसके पास सबसे बड़ा शस्त्र उसकी कलम है।..."

Contact : 16, Revlis Crescent, Toronto,
Ont. M1V-1E9, Canada
Tel.: 416-291-9534
E-mail : sneh.thakore@rogers.com
Website: http://www.Vasudha1.webs.com

जब उद्गम स्थान पर ही जल-धारा क्षीण होने लगे तो उसके अस्तित्व की चिंता व उस पर प्रश्न स्वाभाविक हो जाते हैं। पर हिंदी की शाश्वतता कुछ ऐसी है कि उद्गम स्थान पर क्षीणतर होती जल-धारा प्रवास में अपने पूर्वतर वृहद एकत्रित जल से परिपूर्ण मद-मस्त गति से अनेकों प्रवासी भारतीयों के हृदयों को आलोड़ित करती, प्रवास की भाषा से भी कुछ-कुछ समृद्ध होती, प्रवाहित हो रही है।

हम जब भारत में हिंदी की स्थिति पर एक विहंगम दृष्टि डालते हैं, यह पाते हैं कि ऐसा भी नहीं है कि सभी भारतवासी हिंदी से विमुख हैं। नहीं, भारतीयों को अपनी भाषा से प्रेम अवश्य है। भारत के जनमानस में हिंदी के प्रति जाग्रति की एक नई लहर दौड़नी आरंभ हो चुकी है। भारत के प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी ने चुनावोपरांत प्रधानमंत्री पद ग्रहण करने के बाद देश की भाषा का मान रखा और सार्क के नेताओं से हिंदी में बात की। जो विदेशी नेता हिंदी नहीं जानते थे उनके लिए दुभाषिया रखा जैसा कि उन सभी देशों का प्रचलन है जिनकी मातृभाषा अंग्रेजी नहीं है।

यह हर्ष का विषय है कि जब प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी ने हिंदी में बात करने की पहल की तो नेपाल के प्रधानमंत्री माननीय श्री सुशील कोयराला जी ने भी उनसे हिंदी में बात की। इसी प्रकार पाकिस्तान के प्रधानमंत्री माननीय श्री नवाज़ शरीफ जी ने भी हिंदुस्तानी में बात की।

अब इस उम्मीद का पनपना स्वाभाविक है कि ईमानदार हिंदी संरक्षक, हिंदी प्रेमी और प्रवासी भारतीय, भारतवंशी मिलकर हिंदी को उसके पूर्वतर गरिमामय स्थान पर प्रतिष्ठापित करते हुए उसे यू.एन.ओ. की आधिकारिक भाषा बनाने में सफल होंगे।

यह सर्वविदित है कि जो अपनी मान-मर्यादा की रक्षा स्वयं नहीं करते दूसरे भी उन्हें मान-मर्यादा नहीं देते। यदि हम अपनी मातृभाषा, राष्ट्रभाषा का सम्मान नहीं करेंगे तो दूसरे भी उसकी उपेक्षा करेंगे। अपनी मातृभाषा, राष्ट्रभाषा के प्रति हमारा सम्मान न केवल हममें स्वाभिमान जगाएगा वरन् उस स्थिति में दूसरे देश भी न केवल हमारी भाषा का सम्मान करेंगे बल्कि इस भाव के प्रति वे हमें भी अच्छी नज़र से आँकेंगे।

जहाँ सभी साहित्य कालजयी नहीं होता है वहीं साहित्य पर एक बात और यह लागू होती है कि साहित्य की अनेकानेक अनगिनत विचारधाराएँ हैं और उसके पाठक भी अनगिनत हैं। प्रत्येक पाठक की रुचि साहित्य के हर क्षेत्र में नहीं होती। जहाँ साहित्य की भिन्न-भिन्न विचारधाराएँ हैं, वहीं

पाठक की भी भिन्न-भिन्न रुचियाँ हैं। जो साहित्य एक पाठक को लुभाता है आवश्यक नहीं कि वही दूसरे पाठकों को भी उसी प्रकार आनंदित कर आलोड़ित करे। अतः प्रवासी साहित्य को भी उसी दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए। जहाँ वह कुछ पाठकों को अच्छा लगेगा, स्तरीय लगेगा या उच्च स्तरीय लगेगा वहीं कुछ को नहीं भी। इसका मापदण्ड पाठक व आलोचक—दोनों के द्वारा ही स्थापित होगा। यह भी संभव है कि दोनों के दृष्टिकोण में अन्तर हो। पाठक अपना मापदण्ड चुनें और आलोचक अपना। तथापि जहाँ तक साहित्यकार का प्रश्न है वह अपनी मनःस्थिति प्रकट करता है। साहित्यकार पर देश, काल की परिस्थितियों का प्रभाव अवश्य पड़ता है और वह इन सबको स्वयं में पचा, अन्तर में उनका विवेचन कर, अपनी मनोदृष्टि से उसे प्रस्तुत करता है।

साहित्य साहित्यकार की दिमागी ऐय्याशी नहीं है। साहित्य में साहित्यकार की सम्पूर्ण विवेकधर्मिता, अनुभव, संवेदनशीलता, उसका सम्पूर्ण जीवन-यथार्थ प्रतिबिम्बित होता है। साहित्य सुख-दुःख, उत्थान-पतन, समस्या-समाधान की गाथा है। साहित्य साहित्यकार द्वारा अनुभूत हुए सामाजिक कार्यकलापों, विचारधाराओं के मंथन से उत्पन्न हुए 'क्यों' और यथाशक्ति उसका समाधान 'इसलिए' ढूँढने की प्रक्रिया है। 'क्यों' से आरंभ होकर संभवतः 'इसलिए' पर समाप्त होने वाली वस्तु का नाम साहित्य है। प्रश्नों के जंगल काटकर उनके उत्तर, उनके समाधान की खेती करना, जीवन का यथार्थ, उसकी सार्थकता पहचानने के प्रयास की उपलब्धि ही साहित्यकार का लक्ष्य होना चाहिए। साहित्य जीवन से छनकर आता है, जीवन से प्राप्त होता है और जीवन साहित्य से गौरवान्वित होता है।

बाह्य संसार में जो कुछ दृष्टिगत होता है, साहित्यकार उसे आत्मसात कर, विचार और भावना की उस पर परत चढ़ा, उसे साहित्य के रूप में परोसता है। सर्वोच्च साहित्य साहित्यकार की सोच, उसकी अनुभूति, उसकी भावना का वह समुच्चय रूप है जो एक मन से दूसर मन, एक काल से दूसरे काल में व्यक्तियों की भावना और बुद्धि-विवेक को प्रभावित करता हुआ सतत प्रवाहित होता रहता है, उनमें अपनी जीवंतता से जीवित रहता है। नव अर्जित ज्ञान पुराने ज्ञान को झुठला सकता है, नव आविष्कार पुराने आविष्कार की उपादेयता कम कर सकता है, परन्तु हृदय-स्पंदित भाव पुराने नहीं होते। हृदयग्राही भाव साहित्य को अमरत्व प्रदान करते हैं।

हृदय अंतः व बाह्य दो भाव-धाराओं से प्लावित होता है। अंतःस्थल से अनुभूत किए गए बाह्य भाव जब अंतरस्फूर्त हो बाहर निकलते हैं तो बाहर की ओर जाने वाली भाव-धारा में विश्व के अंतिम छोर तक जाने की सामर्थ्य होती है। स्वयं की ओर आने वाले भावों को उनकी गहराई में पैठ तथा साथ ही उन्हें उनकी सूक्ष्मता में आत्मसात कर, सूक्ष्म से सूक्ष्म भाव को भी इस विस्तार से दिखाना कि विस्तारित अवस्था में भी वह सूक्ष्म-तत्व सहस्राब्दियों पश्चात् भी विकृत न हो, पारंगत साहित्यकार की विशेषता है।

साहित्य में सौंदर्य-बोध भी आवश्यक है। जैसे का तैसा लिख देना अधिकांश पाठक-वर्ग को आकर्षित करने की क्षमता नहीं रखता। सत्य में जब सौन्दर्य स्थापित होता है तब साहित्य का वह मंगलमय रूप कला का रूप धारण कर लेता है, और तब वह आनंदस्वरूप साहित्य सत्यं शिवं सुंदरम् रूप से जन-मानस के हृदयों को आलोड़ित कर काल-कालांतर में अमर हो जाता है।

जैसे वीरों के लिए कहावत है कि वे अपना मस्तक सदा हथेली पर लिए घूमते हैं, वास्तव में वैसे ही साहित्यकार भी अपनी उँगलियों के पोरों पर अपने मस्तक के सभी विचार धारण करते हैं और उन्हें अपनी कलम द्वारा समाज से परिचित कराते हैं। साहित्यकार तो बस यह देखता है कि उसका मस्तक यथार्थ-रूप से उसकी कृति में उतरा है या नहीं। वह एक स्वस्थ विचाराधीन परिधि में सृजन करता है। उसके पास सबसे बड़ा शस्त्र उसकी कलम है।

लेखक का सबसे बड़ा गुण संवेदनशीलता है चाहे वह किसी भी देश का हो, किसी भी देश में हो, या प्रवासी हो। दूसरों के सुख-दुःख को अनुभूत करने की क्षमता और संप्रेषणीयता अच्छे लेखक की अनिवार्यता है। कोई भी साहित्य, कहीं का भी साहित्य, देश काल की परिस्थितियों से बनता है, उससे अछूता नहीं रह सकता। विषय-वस्तु पर सामाजिक, सामयिक परिस्थितियों का प्रभाव अवश्यम्भावी है। हर देश की समस्याएँ उनकी परिस्थितियों से, उनके वातावरण से उत्पन्न होती हैं। यद्यपि समस्याएँ सर्वदेशीय, सर्वकालिक हैं पर हर देश की समस्याओं का स्वरूप देश काल की स्थितियाँ निर्धारित करती हैं। अतः उनमें केवल सामयिक सामाजिक अन्तर होता है। साहित्य का ताना-बाना देश काल की परिस्थितियों से ही बुना जाता है। उसकी गठन उससे ही होती है। यह अपरिहार्यता है। क्या देश काल का प्रभाव पड़े बिना साहित्य लिखा जा सकता है!

आपका समाज, आपका रहन-सहन, आपकी आयु का विकास आपके व्यक्तित्व के विकास की एक ऐसी अवस्था है जो आपके व्यवहार में परिलक्षित होती है, होनी भी चाहिये। आप समाज से कटकर नहीं रह सकते। समाज का प्रभाव आप पर न पड़ना अस्वाभाविक है। आपके व्यक्तित्व के विकास की यह माँग है।

कोई भी साहित्यकार-गद्यकार या कवि, जब तक समाज में रहते हुए समाज की वर्तमान समस्याओं को परिलक्षित नहीं करेगा तब तक वह उस समाज का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में न वह समाज के साथ है और न समाज ही उसके साथ। समाज एक महासमुद्र की भाँति है जिसमें मानव-रूपी जलयान कभी अपनी अबाध गति से

चलते रहते हैं तो कभी दिशा-भ्रष्ट हो भटक जाते हैं। दिशाहीन होने पर स्थिरता से वहाँ खड़ा 'लाइट-हाउस' उन्हें दिशा प्रदान करता है, विध्वंस होने से बचा लेता है। साहित्यकार भी समाज-रूपी समुद्र में स्थापित प्रकाश-स्तंभ है। समाज भी अपने साहित्यकार से दिशा-निर्देश की अपेक्षा रखता है। समाज की माँग है कि साहित्यकार तात्कालिक परिस्थितियों को आकलन कर, यथोचित् मूल्यांकन कर, उससे ऊपर उठ, साहित्य का निर्माण करे।

अब बात आती है प्रवासी साहित्य की। प्रवासी साहित्य पर आरोप लगाया जाता है 'नॉस्टेल्जिया' का, विषाद, उदासी, खिन्नता, रोने-धोने का, भूतकाल को तरजीह देने का। प्रवासी साहित्य पर 'नॉस्टेल्जिया' का जो आरोप लगाया जाता है उन आरोपों के प्रति दो प्रश्न उभरते हैं— एक यह कि क्या ऐसी सोच वाले व्यक्तियों ने सम्पूर्ण प्रवासी साहित्य को पढ़ा है? और क्या ऐसे आलोचकों ने हर प्रवासी साहित्यकार की हर रचना में बस 'नॉस्टेल्जिया' ही पाया है? कुछ रचनाओं में यह संभव है और स्वाभाविक भी है। कोई भी साहित्यकार जिस देश, काल में पला-बढ़ा है उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता और यह प्रभाव उसके प्रवासी काल में तुलनात्मक प्रवृत्ति के रूप में यदा-कदा परिलक्षित होना स्वाभाविक है।

एक और बात विचारने की है कि क्या प्रवासी साहित्यकार से यह अपेक्षा न्यायसंगत, तर्कसंगत है कि वह अपने पुराने अनुभवों को अपने जीवन की स्लेट से पूर्णरूप से धो-पोंछ कर, सभी पुराने प्रसंगों, संदर्भों को मिटा कर प्रवासी साहित्य की रचना करे! यदा-कदा रचना की संदर्भित विषय-वस्तु पर या तुलनात्मक विषय-वस्तु पर 'नॉस्टेल्जिया' का प्रभाव तो दिखेगा ही। व्यक्ति उससे अपने को काटकर नही रह सकता। संस्कृति की जड़ें आपको पकड़ती हैं, जकड़ती हैं।

यदि प्रवासी साहित्य को 'नॉस्टेल्जिया' साहित्य की संज्ञा दी जाती है तो जब भारत में साहित्यकार अपने बचपन की बातें, अपने देश, काल की पुरानी बातें वर्णित करते हैं तो उन्हें क्या कह कर परिभाषित किया जायेगा? क्या उसे भी 'नॉस्टेल्जिया' साहित्य की श्रेणी में रखा जाएगा?

अब आती है बात भाषा की। जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि साहित्य पर देश, काल की परिस्थितियों का प्रभाव अवश्यम्भावी है, वहीं यह भी सत्य है कि साहित्य उस देश की भाषा के प्रभाव से भी अछूत नहीं रह पाता। प्रवासी साहित्यकार जहाँ तक संभव होता है (अपवाद संभव हैं) हिंदी का प्रयोग करता है, उसमें कभी-कभी आंचलिक भाषा का भी छौंक देता है पर साथ ही साथ विशिष्ट परिस्थितियों में उस देश के कुछ विशेष शब्द जो हिंदी में नहीं हैं, उनका समावेश रचना की अनिवार्यता बन जाता है।

एक बात और है। किसी भी प्रवासी साहित्यकार की रचनाधर्मिता को उसकी सम्पूर्णता में ही देखा जाना चाहिए। अच्छे से अच्छे साहित्यकार की हर रचना कालजयी नहीं होती। साहित्यकार हर सृजन की प्रसव-पीड़ा शिद्दत से महसूस करता है पर वह यह भी जानता है कि हर प्रसव-पीड़ा का परिणाम एक जैसा नहीं होता। अतः प्रवासी साहित्यकार की एक-आध रचना पढ़कर उसे ख़ारिज करना न्यायसंगत न होगा। संभवतः दुर्भाग्यवश कहीं हाथ में उनकी कम वज़नी रचना न पड़ गयी हो।

जहाँ कुछ बड़े महान साहित्यकारों की सृजनता 'पुलाव' की तरह है जिसके चावल का हर दाना एक जैसा है, वहीं सामान्यतः कुछ साहित्य थोड़ा खिचड़ी-सा भी होता है जहाँ चावल का कोई दाना थोड़ा कड़क तो कोई दाना थोड़ा नरम।

एक बार गोकुलेश्वर जी ने फ़िराक़ साहब के सन्दर्भ में कहा था कि एक बार वे अपने एक मित्र के पीछे जूता लेकर दौड़े जा रहे थे। पूछने पर कि माज़रा क्या है, वे बोले 'यह मेरे कम वज़नी शेर पर भी दाद पर दाद दिए जा रहा है।' यदि फ़िराक़ साहब का कोई शेर कभी कम वज़नी हो सकता है तो प्रवासी साहित्य में भी कभी हल्कापन आ सकता है।

हाँ! यह भी न्यायोचित् न होगा कि आप बारम्बार साहित्यकार को 'संशय-लाभ' देकर स्वयं को यंत्रणा का भागी बनाते रहें। बस न्यायाधीश की कुर्सी पर बैठ प्रवासी साहित्य पर निर्णय देने में अत्यधिक जल्दबाजी न कर, कुछ धैर्यपूर्वक उसका यथोचित् मूल्यांकन ही प्रवासी साहित्य का न्यायोचित् प्राप्य है।

प्रवासी साहित्य की एक समस्या यह भी है कि वह भारत में या विश्व के विभिन्न कोनों में पहुँच नहीं रहा है, उपलब्ध नहीं हो रहा है। प्रवासी साहित्य की सीमित उपलब्धता के कारण उस पर सीमित प्रतिक्रिया ही संभव हो सकती है, जो हो रही है।

कहा जाता है कि प्रवासी साहित्य भारतीय साहित्य की तरह समृद्ध नही है। एक स्तर पर यह सच हो सकता है पर साथ ही यह भी उतना ही सत्य है कि भारतीय साहित्य के समय का अन्तराल प्रवासी साहित्य की अपेक्षा तुलना में अति विस्तृत है। अतः इस विस्तार को दृष्टि में रखते हुए दोनों साहित्यों की समृद्धता की परस्पर तुलना स्वयं में तर्कसंगत नहीं है।

प्रवासियों द्वारा लिखे साहित्य का निरपेक्ष भाव से अध्ययन-मनन हो, किसी विशेष विचारधारा के अधीन होकर नहीं; और उस स्थिति में प्रवासी साहित्य का मूल्यांकन हो, तभी मूल्यांकन सार्थक होगा।

यह मेरा सौभाग्य है कि प्रवासी भारतीय साहित्यकार और पत्रकार के रूप में व्यक्तिगत स्तर पर माँ सरस्वती की अनुकम्पा से चौदह वर्ष से अनवरत 'वसुधा' हिंदी साहित्यिक त्रैमासिक पत्रिका का संपादन व प्रकाशन कर रही हूँ जिसकी सफलता का आधारभूत श्रेय हिंदी-प्रेमियों, लेखकों और पाठकों को जाता है। 'वसुधा' द्वारा मेरा प्रयास है कि भारतीय साहित्यकार एवं आप्रवासी भारतीय साहित्यकारों से, अधिकाधिक भारतीय व भारतवंशियों को अवगत कराया जाए। हिंदी साहित्य और भारतीय संस्कृति संसार के कोने-कोने में फले-फूले। 'वसुधा' हिंदी के प्रति माँ सरस्वती के लिए अंजुरी-भरी अर्घ्य है, जिसमें

सभी साहित्यकारों की रचना-धाराएँ मिश्रित हो प्रवाहित हो रही हैं और पाठकगण हृदय से उनका स्वागत कर रहे हैं। 'वसुधा' हिंदी के उत्थान के लिए हम सबका मिला-जुला प्रयास है, परिश्रम है, माँ की वंदना है।

हम देश में रहें चाहे विदेश में, इतनी अमूल्य रत्न-जटित भारतीय संस्कृति जो हमें विरासत में मिली है, उसका प्रचार-प्रसार न करना आत्म-हनन होगा। भावी पीढ़ी को, चाहे वह भारतीय हो या प्रवासी भारतीय, भारतीय संस्कृति की मशाल जलाए रखने के लिए स्वयं के साहित्य की आवश्यकता है। हाँ, जिन देशों में हम बसे हुए हैं उनकी संस्कृति को, उसके मूल्यों को समझना भी हमारा ही दायित्व है और उन्हें समझ कर उसकी अच्छी बातों को स्वयं के शीशे में उतारना भी हमारा ही कर्तव्य है। कोई भी संस्कृति न पूर्णतया खराब होती है और न ही संपूर्णतया अच्छी ही। वह देश, समय, काल से प्रभावित होती है। वातावरण से अप्रभावित रहना असामान्य है। अतः सब तथ्यों को ध्यान में रख कर हमें एक अच्छे भारतीय की तरह सहृदयता का परिचय देना है। हमें भारतीय संस्कृति ने हर एक का सम्मान करना सिखाया है। दूसरों के दिये गये यथोचित् सम्मान से ही आप अपने आत्म-सम्मान की रक्षा कर सकते हैं।

इतिहास अतीत की व्याख्या है। साहित्य वर्तमान का दर्पण है और समाज का भविष्य निर्माता भी। साहित्यिक गतिविधियों द्वारा ही हम, भारतीय समाज—आप्रवासी भारतीय समाज व भारतवंशियों का, न केवल वर्तमान उज्ज्वल बनाएँगे वरन् उज्ज्वल भविष्य की नींव, ठोस आधार-शिला का निर्माण भी करेंगे।

भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति माननीय श्री प्रणब मुखर्जी ने अपने सन् 2014 के स्वतंत्रता दिवस के वक्तव्य में 'सिद्धिर्भवति कर्मजा' उक्ति का उद्धरण दिया था। अतः हिंदी के उत्थान के प्रति भी यदि हम सभी हिंदी प्रेमी—भारतीय, प्रवासी भारतीय एवं भारतवंशी—इस धारणा को लेकर चलते हुए प्रगति-पथ पर बढ़ें कि 'सफलता कर्म से ही उत्पन्न होती है' तो उन्नति का शिखर कैसे न मिलेगा।

अतः हिंदी की उत्तरोत्तर प्रगति की इस पृष्ठभूमि पर कदम रख हम सभी हिंदी प्रेमी, आइए एकजुट हों—

"हम करें राष्ट्र अभिवादन"।

राज हीरामन की लघुकथाएं

अच्छा तोहफा

क्रिसमस आ गया। इससे एक दो दिन पहले पगार मिल गई थी। गर्मी तो पहले से थी ही, बाजार में खरीदारों की भीड़ से गर्मी अपनी चरम सीमा तक पहुँच गई थी। बहुत मुश्किल से अपनी एकमात्र बेटी के लिए, उसकी इच्छा और माँग अनुसार, एक बढ़िया और महंगा-सा तोहफा खरीद लाया था। पत्नी ने नौकरानी की छोटी बेटी के लिए एक छोटी सी भेंट खरीद लाने को कहा था। वह मेरी बेटी की हम उम्र है। हम मियां-बीवी को बड़ा ही सदमा पहुँचा यह जानकर कि मेहनत और महंगे तोहफा हमारी बेटी को पसंद नहीं। मैंने तुरंत बाजार जाने को फिर सोचा, कोई नया ले लूँ लेकिन इस पर भी बेटी राजी नहीं हुई। ठुनक-ठुनक करती रही पर क्या चाह रही थी हमें यह जानना मुश्किल हो गया था और हमारे लिए क्रिसमस का यह नया सिर दर्द था। अंत में हमें लगा कि नौकरानी की बेटी वाला गिफ्ट इसे पसंद है। मैं वैसा ही एक खरीदने के लिए बाजार की ओर भागा और चंद मिनटों में हूबहू एक ले आया। अरे बाप रे। यह भी इसे पसंद नहीं था। इसे वही चाहिए जो नौकरानी की बेटी के हाथ में है। न ऐसा न वैसा न कोई दूसरा!

लाश का फैसला

हीराधन की पत्नी लाजो की लाश पर अभी कफन नहीं चढ़ा था। आस-पड़ोस की स्त्रियों की सहायता से कुछ अपने लोगों ने मृत शरीर को नहला दिया था। घर के अंदर की तैयारियाँ ठीक थीं। सभी चित्र उलटा दिए गए थे। शीशों और अलमारी पर चादरें ओढ़ा दी गई थीं। कोने में एक दीवान जैसे सफेद चादर और उसके नीचे सितरपाटी बिछाई गई थी। जिस पर लाश को लिटाना था। लोटे में पानी और फूल तथा सिरहाने के पास कुछ अगरबत्तियाँ भी जल रही थीं। रामायण मंडली भी रामायण पाठ के लिए आकर अपना स्थान ग्रहण कर चुकी थी। लाजो की लाश ठंडी पड़ गई थी और धीरे-धीरे काठ होती जा रही थी। इससे पहले कि लाश बिल्कुल ही पत्थर बन जाए उस पर कफन पहना देना है। पर किसका कफन लाजो की लाश पहने? रिवाज़ के अनुसार मायके से कफन आया है। हीराधन ने भी कफन खरीदा है। बेटी-दामाद चाहते हैं उनके खरीदे कफन सास पहने। बेटे-बहू भी कफन ओढ़ाने का अधिकार नहीं खोना चाहते। लाजो की गोतनी भी कफन लेकर खड़ी है। कोई तय नहीं कर पा रहा था कि लाजो किसका कफन ओढ़ अपनी अंतिम यात्रा पर विदा कर जाती। निर्णायक कोई था नहीं!

इतने में स्वयं लाजो उठीं सिर्फ इतना कहने के लिए—"जिसने मेरे जीते-जी एक घूँट पानी मुझे पिलाया हो उसी का कफन मैं ओढ़ूँगी।" वह फिर से सो गयी।

सम्पर्क: सृजनात्मक एवं लेखन विभाग, महात्मा गाँधी संस्थान, मोका, मॉरीशस

स्विटजरलैंड को लुभाया हिंदी ने

डॉ. ज्योति शर्मा

"गुलाब को उपदेश देने की आवश्यकता नहीं होती। वह तो केवल अपनी खुशबू बिखेरता है। उसकी खुशबू ही उसका संदेश है।" (महात्मा गाँधी)

यूरोपीय देशों में सबसे सुन्दर सुव्यवस्थित और पृथ्वी के स्वर्ग कहे जाने वाले स्विटजरलैंड के जिनेवा शहर में उतरते के साथ ही मैंने हिंदी की इस खुशबू को महसूस किया। जब मेरी नज़र जिनेवा के एक सिनेमाघर पर लगे 'लगान' फिल्म के पोस्टर पर पड़ी, मैं हैरान रह गई। मुझे पता चला कि इस छोटे से खूबसूरत देश में हिंदी और हिंदुस्तान को जानने और समझने की ललक है।

मेरी नियुक्ति स्विटजरलैंड के लोसान में भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद् द्वारा टैगोर चेयर प्रतिनिधि के रूप में हुई। हिंदी के प्रति स्विटजरलैंड में यह सकारात्मक रवैया मेरे लिए एक सुखद अनुभव था। ऐसा लगा मानो हिंदी की उपस्थिति ने मीलों की दूरी को मिनटों में पाट दिया हो। घंटों की यात्रायी थकान जैसे चुटकियों में इस उत्साह के आगे फुर्र हो गई हो। फरवरी के महीने की यूरोप की कड़कड़ाती ठंड में भी मैंने आत्मीयता की गर्माहट को महसूस किया। लोसान विश्वविद्यालय में प्रमुख प्रोफेसर माया बर्गर की जुबान से हिंदी सुन मैं मंत्रमुग्ध हो गई। उनकी सहायता, समय पर दिए गए सुझावों और साथ ने लोसान में हिंदी शिक्षण की मेरी राह को न केवल सहज बनाया बल्कि अर्थवान बनाने में भी योगदान दिया।

लोसान मे हिंदी शिक्षण के लिए अपनी यात्रा शुरू करने से पहले मन में कई सवाल थे, जैसे छात्र हिंदी में कुछ समझते भी होंगे, उनकी दिलचस्पी हिंदी भाषा में होगी या कैसे जगाई जाएगी? साथ ही स्विटजरलैंड के मौसम को लेकर भी एक भय था। दिल्ली के मौसम का आदी मेरा शरीर स्विटजरलैंड के बर्फीले माहौल में कैसे प्रतिक्रिया करेगा?

बहरहाल तमाम सवालों को समेट एक उम्मीद, उत्साह और उत्सुकता के साथ अब मैं स्विटजरलैंड के लोसान शहर में स्थित यूनिवर्सिटी ऑफ लोसान के डिपार्टमेंट ऑफ साउथ एशियन स्टडीज में टैगोर चेयर, विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में उपस्थित थी। यहाँ पर प्रमुख प्रोफेसर माया बर्गर जी की मुझसे पहली शर्त थी कि विद्यार्थियों के साथ केवल हिंदी में बात करनी है।

एक अन्य सहायक प्राध्यापक निकोला पोज़ा जी ने मुझे फ्रेंच-हिंदी में तैयार कुछ शब्दावली पाठ दिए। इन पाठों का प्रयोग कर मुझे अपनी कक्षा में छात्रों के साथ हिंदी में संवाद स्थापित करने थे। किंतु कक्षा में

"...धीरे-धीरे जब मैंने इस देश के मौन को पढ़ना सीखा, पता लगा कि यह छोटा-सा देश ऐसे ही विश्व में अपना नाम नहीं रखता या कहें कि यूँ ही प्रगतिशील देशों के क्रम में शुमार नहीं है। सतत् काम करने की बेचैनी, समय पर काम करने की प्रतिबद्धता और पर्फेक्शन के साथ हर काम को अंजाम देने का अंदाज इसे विश्व में प्रसिद्धि दिलाए हुए है।..."

पूर्व विज़िटिंग प्रोफेसर, टैगोर चेयर, यूनिवर्सिटी ऑफ लोसान, स्विटजरलैंड।

सम्पर्क: 3, टीचर्स फ्लैट्स, शिवाजी कॉलेज, राजा गार्डन, दिल्ली-110027
फोन - 9999429289 ई-मेल : checkjyoti@gmail.com

प्रवेश करने पर पता चला कि मेरे सामने प्रश्न और चुनौतियाँ कई थे। पहला प्रश्न यह था कि छात्र कई भाषायी पृष्ठभूमियों से थे। मसलन, कुछ फ्रेंच मूल के थे, कुछ जर्मन, कुछ इटालियन और एक-दो अमेरिकन भी। दूसरी बड़ी चुनौती थी—छात्र कक्षाओं के साथ पार्ट टाइम काम किया करते थे, अपने जीवनयापन के लिए। भारत की तरह पूर्णकालिक पढ़ते ही नहीं थे, जैसे यहाँ कुछ-एक को छोड़ दें तो कक्षाओं में मिलने वाले विद्यार्थी केवल पढ़ रहे हैं तो पढ़ ही रहे हैं। तीसरी चुनौती—ये छात्र केवल हिंदी नहीं, कई अन्य विषय जैसे—धर्म, इतिहास, भाषा, राजनीति की कक्षाएँ अलग-अलग शहरों में बने विश्वविद्यालयों में लेने जाते थे।

इन तमाम चुनौतियों और प्रश्नों के बीच जो एक सबसे बड़ा समाधान का आधार था वह थी इन विद्यार्थियों की मेहनतकश प्रवृत्ति, समय का सम्मान और हिंदी और हिंदुस्तान के प्रति आकर्षण। बस फिर क्या था! इन्हीं सकारात्मक बिंदुओं को पकड़कर हमने कक्षाओं में हिंदी शिक्षण की यात्रा शुरू की।

पावर प्वाइंट प्रज़ेन्टेशन, हिन्दी फिल्में, राजभाषा हिंदी की वेबसाइट, यू ट्यूब आदि द्वारा तैयार हिंदी शिक्षण की राहें दिलचस्प बनती चली गईं। हिंदी और हिंदुस्तान पर चर्चा ने ऐसा वातावरण बनाया जैसे सफेद बर्फ को चीरता सूर्य मौसम को माकूल बना रहा था।

हिंदी फिल्मों और यू ट्यूब पर उपलब्ध हिंदी वीडियो से हिंदी के बहुवचन रूपों को सिखाने के लिए जब मैंने 'एक चिड़िया अनेक चिड़िया' का सहारा लिया तो छात्रों को बहुवचन के साथ-साथ चिड़िया, गिलहरी, दाना आदि शब्द सीखते देर नहीं लगी। छात्रों ने खुद ही इन शब्दों के प्रयोग कर नए-नए वाक्य बनाने शुरू कर दिए। फिर एक-एक वाक्य जोड़ इन विषयों पर अपने अनुभव साझा करने शुरू किए। कुछ विद्यार्थियों ने तो अलग-अलग विषय पर अपने-अपने अनुभव के आधार पर पी.पी.टी. भी बनाई और प्रस्तुत की। फिर हमारा हौंसला जैसे हिंदी को पढ़ने और पढ़ाने के प्रति बुलंद हो गया। तकनीक के रास्ते आसान बनी राह ने जैसे हिंदी पढ़ने के हमारे इरादों को नए पंख दे दिए। हमने 'आई.एम.कलाम', 'जोधा अकबर', 'लगे रहो मुन्नाभाई' फिल्में विद्यार्थियों के साथ-साथ देखीं और उन पर बात की।

हिंदी भाषा शिक्षण और तकनीकी तालमेल का प्रयोग करते हुए भारत सरकार ने भी कई वेबसाइट्स बनाई हैं। जिनमें से एक है—www.rajbhasha.nic.in

इस साइट पर लॉगिन करने से आपको तीन स्तर पर भाषा सीखने को मिलेगी—1) प्रबोध, 2) प्रवीण, 3) प्राज्ञ।

प्रबोध मे बिल्कुल छोटे मॉडल्स हैं। वर्ण, शब्द और फिर छोटे वाक्य। जैसे—राम..... जाता है। सीता ..... खाती है।

प्रवीण में और फिर प्राज्ञ में भाषा के प्रयोगों का स्तर बढ़ता जाता है। यहाँ आप सुनकर भी हिंदी सीख सकते हैं। आपके उच्चारण को सही करने के लिए सही उच्चारण को सुनें। चित्रों, संबंधित शब्दों आदि के माध्यम से आसान तरीके से हिंदी सीखने की व्यवस्था है। साथ ही शब्द संसार को जानने के लिए चित्रों, वीडियो गेम्स, आदि का रोचक तरीका अपनाया गया है। जैसे-जैसे आप प्रबोध से प्रवीण और प्राज्ञ स्तर की ओर बढ़ते हैं। आपका हिंदी भाषा संबंधी ज्ञान भी प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ होता जाएगा।

स्विटजरलैंड यूरोप का ऐसा देश है जो क्षेत्रफल की दृष्टि से उत्तर प्रदेश से भी छोटा है। यह एक बेहद सुव्यवस्थित, सुन्दर और मनोरम प्राकृतिक दृश्यों से सजा खूबसूरत देश है, लगता है जैसे ईश्वर ने इस देश में जो प्राकृतिक सुंदरता का वरदान दिया है मनुष्य ने अपने भरपूर प्रयासों से उसे संजोया और पिरोया हुआ है। मैं तो कहूँगी कि यह देश मुझे प्रकृति और मनुष्य के अद्भुत सामंजस्य और अब तक के प्रयासों से सजा सँवरा पृथ्वी का एक छोटा-सा स्वर्ग प्रतीत हुआ। हालांकि शुरुआती दिनों में बर्फीली हवाओं के कारण बाहर का मौन और मार्गों पर मनुष्यों की कमी मुझ भारतीय को कुछ अखरी। दिल्ली की मैट्रो और मॉलों और मार्किटों में मनुष्य की भीड़ देखने वाले हम भारतीयों के लिए इतना चुप्पा माहौल एकाएक पचाने वाला नहीं था। किंतु यह चुप्पा माहौल भीतर के तारों को छेड़ने का अवसर था, अपने अध्ययन-अध्यापन में रमने का एक मौका था और आध्यात्मिक तेवर वाले के मौन में संगीत की अनुभूति का एहसास था।

धीरे-धीरे जब मैंने इस देश के मौन को पढ़ना सीखा, पता लगा कि यह छोटा-सा देश ऐसे ही विश्व में अपना नाम नहीं रखता या कहें कि यूँ ही प्रगतिशील देशों के क्रम में शुमार नहीं है। सतत् काम करने की बेचैनी, समय पर काम करने की प्रतिबद्धता और पर्फेक्शन के साथ हर काम को अंजाम देने का अंदाज इसे विश्व में प्रसिद्धि दिलाए हुए है।

अपने भीतर के राग, हिंदी के प्रति यहाँ छात्रों के अनुराग और सही समय के भाग को पहचानने के बाद हमने मिलकर तय किया कि 'एक शाम हिंदी के नाम' यूनिवर्सिटी ऑफ लोसान के कैम्पस में मनाई जाए।

इस कार्यक्रम के तहत लगभग दो महीने पूर्व 'एक बूंद' नाम से नाटक की एक स्क्रिप्ट लिखी गई। पात्र चुने गए। शुरू में हर हफ्ते, फिर हफ्ते में दो दिन और फिर हफ्ते में तीन या चार दिन भी कक्षाओं के बाद रिहर्सल का दौर शुरू हुआ। दफ्तर और घरों के बाहर बगीचों में रंग-बिरंगे ट्यूलिप खिल आए थे और यहाँ हमारे प्रयासों और रिहर्सलों में हिंदी के नए-नए रंग खिल रहे थे। दो सांझी संस्कृतियों के मेल से बने अद्भुत रंग। विद्यार्थियों ने कक्षाओं, अपने दैनिक कामों, कार्यालयी कामों के बीच से समय चुराकर इस रिहर्सल को वक्त दिया। अब उनको हिंदी लुभा रही थी। जैसे प्रेमी अपनी प्रेमिका से मिलने के लिए लाख बाधाओं के बाद

भी पहुंचता है, वैसे ही ये विद्यार्थी तमाम दैनिक चुनौतियों के बावजूद हिंदी में इस नाटक को तैयार कर पूरी प्रतिबद्धता के साथ प्रस्तुत करने के लिए कटिबद्ध थे।

कुछ विद्यार्थियों ने अपनी भारत यात्रा पर पॉवर पॉइंट प्रस्तुति तैयार की और कुछ विद्यार्थियों ने अपने मनपसंद कवियों की कविताएँ कंठस्थ की। नाटक की सामग्री विद्यार्थियों, अध्यापकों के घरों से इकट्ठी की गई। बुर्का, कुर्ते, धोती, टोपी, चूल्हा, तवा आ जुटा। देखते ही देखते समय बीता और वह शाम आ गई जिसका सबको इंतजार था। शुरूआत भारत यात्रा पर प्रस्तुति से हुई। छात्रों ने कविताएँ सुनाईं और फिर नाटक की प्रस्तुति हुई।

संगीत, अभिनय और अंकों में सजा यह नाटक जब खचाखच भरे सभागार में अंक दर अंक मंच पर उतरता जा रहा था, उसे मंच के एक कोने पर खड़ी देख मैं ऐसा ही सुख पा रही थी जैसे नवजात शिशु की माँ अपने शिशु पर बलिहारी जाती है। छात्रों के मुख से हिंदी के सही उच्चारण और अभिनयपूर्ण वाक्य सुनकर सभी मंत्रमुग्ध हो गए। तालियों की गड़गड़ाहट ने साबित कर दिया कि हिंदी लोसान को लुभाने में पूरी तरह सफल हुई है। इसके पश्चात् विद्यार्थियों और अध्यापकों द्वारा तैयार किए भारतीय-यूरोपीय व्यंजनों का आनंद सभी ने उठाया।

बर्न स्थित भारतीय दूतावास तक जब 'हिंदी की शाम' की सफलता की गूँज पहुंची तो अगले सत्र में संयुक्त रूप से विशेष करने का प्रस्ताव और सुझाव भी मिला। भारत के चीफ ऑफ मिशन से एक भारतीय शास्त्रीय संगीत और नृत्य के कार्यक्रम में प्यूयी (स्विटजरलैंड) में मुलाकात हुई। उन्होंने भी उत्साह बढ़ाया। यूनिल पुस्तकालय के लिए हिंदी की पुस्तकों की सूची बनाई गई। साथ ही भविष्य की रूपरेखा के रूप में भारत-स्विटजरलैंड संबंधों में हिंदी की भूमिका और महत्व को रेखांकित करने के खाके भी खींचे गए।

समय तो जैसे पंख लगाकर उड़ रहा था। देखते ही देखते एक सत्र का अल्पकाल कई सारी यादों, गतिविधियों और हिंदी शिक्षण की नई प्रविधियों को समझने-सँवारने के साथ बीत गया। हम समय को मुट्ठी में पकड़ना चाहते थे और वह रेत की तरह रीत रहा था।

बहरहाल, समय तो बीत रहा है, और बीत ही जाता है, लेकिन लोसान में बिताए समय ने सिद्ध कर दिया कि स्विटजरलैंड में भारतीय संस्कारों और भारत की भाषा हिंदी के प्रति एक विशेष आदर, स्नेह और आकर्षण है।

विद्यार्थी प्रतिवर्ष भारत को समझने के लिए भारत के अलग-अलग राज्यों में आते हैं। अपने देश की तकनीकी सुविधाओं और विकास के रूप में हिंदुस्तानी राग-रंगों और संस्कारों को भरना चाहते हैं। हमने मिल-जुलकर एक ब्लॉग लेखन का प्रावधान भी किया। जहाँ ये शुरू हुई रचनात्मक अभिव्यक्तियाँ प्रवाहित होती रहें और दो देशों के आपसी संबंधों का पुल बनी हिंदी अपना काम निरंतर करती रहे।

बचपन

बीना टोडी (यू.एस.ए.)

बचपन को बहुत दूर
छोड़ आये हम
नहीं उभरता कोई मानचित्र
जिसमें हो वो धूल सनी गलियाँ

और वो मैली-कुचैली गुड़िया
रोज देखते वर्तमान को
सुनहरे आगत के आईने में
कहाँ सजा पाते विगत को
किसी भी फ्रेम में?

ध्रुव के बचपन की विवशता ने
बनाया सम्राट उसे अटलता का
फिर याद न आई होगी सम्भवत:
उसे बेबसी अपनी

हम भी हैं कुछ तलाश कर रहे
छोड़ कर बचपन की बेकसी
दूर बहुत दूर।

सम्पर्क: ई-मेल: todib@isdscorp.com
फोन: 703-573-6938

अरमेनिया में हिंदी भाषा : अध्ययन-अध्यापन

डॉ. कविता सिंह

"...हिंदी भाषा का अध्ययन जिज्ञासा व उत्साहपूर्ण होते हुए भी कड़ी मेहनत की माँग करता है। अरमेनियन भाषा में स्वर व व्यंजन मिलाकर 33 अक्षर हैं और मात्राओं का प्रयोग नहीं होता है। अतः हिंदी की संपूर्ण वर्णमाला व मात्राएँ प्रारंभिक दौर में छात्रों को कठिन लगती हैं लेकिन हिंदी भाषा की वैज्ञानिकता, मधुरता व स्पष्टता के कारण धीरे-धीरे हिंदी भाषा छात्रों के लिए सरल हो जाती है।..."

सम्पर्क : हिंदी अध्यापिका
वाई.एस.एल.यू., येरेवान, अरमेनिया।
ई-मेल: kavitasinghabcd@gmail.com

वैश्वीकरण के इस युग में सांस्कृतिक आदान-प्रदान की प्रक्रिया अति सहज, सरल, स्वाभाविक, आवश्यक और महत्वपूर्ण हो गई है। सांस्कृतिक अभिव्यक्ति की सशक्त माध्यम भाषा है और सांस्कृतिक आदान प्रदान की सर्वाधिक महत्वपूर्ण कड़ी भी भाषा ही है। सांस्कृतिक संबंध को प्रगाढ़ और घनिष्ठतम बनाने में भाषा की भूमिका सदा सर्वदा सार्थक और सकारात्मक रही है और जब भाषा एक ही भाषायी परिवार से संबंधित हो, भाषा के प्रति रुचि और आकर्षण स्वतः ही बढ़ जाता है। हिंदी और अरमेनियन दोनों भाषा 'इण्डो यूरोपियन' समुदाय से संबंधित है। हिंदी भाषा में हिंदी, हिंदुस्तानी और हिंदुस्तान की तरह अरमेनिया भाषा में भी हाइरिन (अरमेनियन भाषा) हाई (अरमेनियनवासी) और हयस्तान (अरमेनिया देश) कहा जाता है। नवीनतम प्राप्त आँकड़ों के अनुसार विश्व में बोली जाने वाली सभी भाषाओं में हिंदी भाषा को सर्वप्रथम स्थान प्राप्त हो गया है। (1) आज के डिजिटल संसार में विभिन्न भाषाओं के बीच यह भविष्यवाणी की जा रही है कि डिजिटल संसार में तीन भाषाओं का वर्चस्व होगा—अंग्रेजी, चाइनीज़ और हिंदी। डिजिटल संसार में भाषा का आधिपत्य निश्चित ही उस भाषा की महत्ता को स्वतः ही स्थापित कर देता है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा भारतीय योग को 'अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस' (21 जून 2015 प्रथम योग दिवस) के रूप में मान्यता और विश्व के बहुसंख्यक देशों द्वारा भारतीय योग का अनुगमन हिंदी भाषा अध्ययन के उत्प्रेरक की भूमिका अदा कर रहा है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का जन्मदिवस 02 अक्टूबर को संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा सन् 2007 से 'विश्व अहिंसा दिवस' के रूप में घोषित किया जाना भी भारत और हिंदी भाषा के प्रति सम्मान और गरिमा में अभिवृद्धि करता है। वैश्विक पटल पर हिंदी भाषा की अभिव्यक्ति और प्रसार का व्यवहारिक प्रयास 'विश्व हिंदी सम्मेलन' के रूप में प्रत्यीक्षकृत है जिसका आदर्श वाक्य 'वसुधैव कुटुम्बकम्' है। हिंदी भाषा की इस आदर्श गरिमामय मानवीय संस्कृति के प्रति अगाध आस्था और विश्वास ही उसे विदेशियों के हृदय में अपना स्थान बनाने के लिए विवश कर देती है और विश्व में हिंदी भाषा के अध्ययन की पृष्ठभूमि का सशक्त आधार तैयार हो जाता है।

अरमेनिया देश की राजधानी येरेवान के केन्द्र में स्थित 'येरेवान स्टेट सोशल साइंस एंड लिंग्विस्टिक विश्वविद्यालय' में स्नातक स्तर पर हिंदी भाषा के 'अध्ययन-अध्यापन' की व्यवस्था है। इस विश्वविद्यालय के चार वर्षीय स्नातक पाठ्यक्रम में द्वितीय वर्ष से चतुर्थ वर्ष तक अर्थात् 3 साल विद्यार्थी हिंदी भाषा के अध्ययन का सुअवसर प्राप्त करते हैं। विश्वविद्यालय के 'विदेशी भाषा विभाग' के अंतर्गत 7 एशियाई

भाषाओं (हिंदी, चीनी, जापानी, अरबी, फारसी, कोरियन और रूसी) के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था है। स्नातक-स्तर के द्वितीय, तृतीय व चतुर्थ वर्ष में करीब 50 विद्यार्थी हिंदी भाषा का अध्ययन करते हैं। हिंदी भाषा समूह के अतिरिक्त विश्वविद्यालय के अन्य भाषा समूह जैसे चीनी, फारसी आदि भाषा समूह के कुछ विद्यार्थी भी भारतीय संस्कृति के प्रति जिज्ञासा व प्रेम के कारण हिंदी भाषा की कक्षा में पढ़ने आते हैं। भाषायी विश्वविद्यालय के अतिरिक्त 'येरेवान स्टेट विश्वविद्यालय' के 'इंटरनेशनल पालिटिक्स' विभाग में अध्ययनरत 15-20 विद्यार्थी भारतीय राजदूतावास में हिंदी भाषा अध्ययन के लिए आते हैं। भारतीय राजदूतावास में हिंदी भाषा का अध्ययन करके वापस लौटी कु. मान्या भी भारतीय राजदूतावास के सहयोग से अरमेनिया के 'इजेवान गॉलिक कॉलेज, इजेवान शहर' में अरमेनियन छात्रों को हिंदी भाषा पढ़ाने का कार्य कर रही हैं। वर्तमान में कु. सोना पेतरोस्यान हिंदी संस्थान आगरा में हिंदी भाषा का अध्ययन कर रही है। इस तरह हिंदी संस्थान, आगरा भारत से हिंदी भाषा सीख कर आयी हुई छात्राएँ भी अपने देश के दूर दराज़ इलाकों में हिंदी भाषा का अध्यापन कार्य करती हैं।

अरमेनिया में हिंदी भाषा के अध्यापन का सर्वाधिक पहलू यह रहा कि यहाँ भारतीय राजदूतावास में तमिल छात्र-छात्राओं को भी हिंदी पढ़ाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। येरेवान मेडिकल कॉलेज व आर्किटेक्ट कॉलेज में पर्याप्त संख्या में भारतीय विद्यार्थी अध्ययनरत हैं।

अरमेनिया में हिंदी भाषा के अध्ययन-अध्यापन के प्रयास के संदर्भ में 'अरमेनियन हिंदी शब्दकोष' मानवतावादी संस्थान द्वारा प्रकाशित (2006 ई. में लगभग 4000 शब्द) शब्दकोश भी महत्वपूर्ण है। भारतीय संस्कृति के प्रति प्रेम का उदाहरण यहाँ पर श्रीमद्भागवत गीता, महाभारत और पंचतंत्र की कहानियों का अरमेनियन भाषा के अनुवाद से भी मिलता है, जिनका अध्ययन अरमेनियन बुद्धिजीवी वर्ग बड़ी तन्मयता से करते हैं। हिंदी संस्थान, आगरा से हिंदी भाषा के अध्ययन करके लौटी कु. रिपसिमे द्वारा कुछ बाल हिंदी कविताओं का अरमेनियन भाषा में अनुवाद किया गया है जो हिंदी सीखने वाले अरमेनियन छात्रों के लिए बहुत सहायक होने के साथ अति लोकप्रिय भी है। हमसे पहले इस विश्वविद्यालय में हिंदी शिक्षण कार्य करने वाले श्री बलदेव सीकरवार ने 'हिंदी इंग्लिश आरमेनियन-सिम्पल कन्वर्सेशन' नाम से एक छोटी पुस्तक तैयार की है, जो पठन-पाठन के लिए उपयोगी है। हिंदी संस्थान, आगरा द्वारा प्रकाशित 'विदेशों में हिंदी शिक्षण हेतु निर्धारित मानक पाठ्यक्रम' पुस्तक के कुछ सरल व महत्वपूर्ण पाठों का मेरे द्वारा अरमेनियन भाषा में अनुवाद किया गया है, यह सारे प्रयास अरमेनिया में अरमेनियन हिंदी प्रेमी छात्रों को हिंदी सीखने में सहायक सिद्ध होंगे। इस कड़ी में भारतीय मूल की लेकिन अरमेनिया में निवास करने वाली डॉ. संतोष का उल्लेख भी आवश्यक हो जाता है जो अपने सुझावों से हिंदी प्रेमी अरमेनियन छात्रों को लाभान्वित करती रहती हैं। अरमेनिया में समय-समय पर आयोजित 'इंडियन एक्जिबिशन' में उमड़ी भीड़ भी भारतीय संस्कृति के प्रति लगाव को प्रदर्शित करती है।

हिंदी भाषा का अध्ययन जिज्ञासा व उत्साहपूर्ण होते हुए भी कड़ी मेहनत की माँग करता है। अरमेनियन भाषा में स्वर व व्यंजन मिलाकर 33 अक्षर हैं और मात्राओं का प्रयोग नहीं होता है। अतः हिंदी की संपूर्ण वर्णमाला व मात्राएँ प्रारंभिक दौर में छात्रों को कठिन लगती हैं लेकिन हिंदी भाषा की वैज्ञानिकता, मधुरता व स्पष्टता के कारण धीरे-धीरे हिंदी भाषा छात्रों के लिए सरल हो जाती है। विदेशी छात्रों को हिंदी सीखने में सर्वाधिक सहायक हिंदी भाषा की वैज्ञानिकता है जैसे उच्चारण और लेखन की एकरूपता, जैसा बोलते हैं वैसा ही लिखते हैं। स्वर और व्यंजनों के क्रमिक उच्चारण स्थान (कंठ्य, तालव्य, मूर्धन्य, दन्त्य, ओष्ठ) एक वर्ण के लिए एक ही ध्वनि और मात्राओं का तर्कसंगत प्रयोग आदि। अरमेनियन भाषा में उच्चारण और लेखन में अनुरूपता नहीं है, बहुत सारे शब्दों में वर्ण अंग्रेजी भाषा की तरह 'साइलेन्ट' अनुत्तरित (मौन) हैं। इस दृष्टिकोण से उन्हें हिंदी भाषा सीखना आसान लगता है। लेकिन उनके लिए 'टवर्ग' (मूर्धन्य) और 'तवर्ग' (दन्त्य) उच्चारण स्थान समूह के वर्णों का उच्चारण और अन्तर करना बहुत कठिन होता है विशेष रूप से 'ट-त', 'ट-ठ', 'त-थ', 'द-ड', 'ड-ढ', 'ड-र' आदि। इन वर्णों के बीच अधिकांश छात्रों द्वारा (कठोर) वर्णों का उच्चारण उनके द्वारा कोमल वर्णों के रूप में ही किया जाता है। अरमेनियन छात्र श, ष, स, श्र का उच्चारण बड़ी ही शुद्धता, स्पष्टता और सरलता से करते हैं। भाषायी विश्वविद्यालय के छात्र होने व विभिन्न भाषाओं का अध्ययन करने के कारण उनके लिए हिंदी भाषा सीखना कठिन नहीं होता, दूसरे अरमेनियन वर्णमाला के करीब 27-28 वर्ण जैसे अ, आ, ग, द, ऐ, ल, क, ख, छ, प, म, न आदि वर्णों का उच्चारण हिंदी भाषा के अक्षरों के समान ही है। अतः छात्र कुछ वर्णों के उच्चारण में कठिनाई के अलावा अन्य वर्णों का उच्चारण आसानी से करते हैं। हिंदी भाषा में जैसा बोलते हैं वैसा ही लिखते हैं, अतः लेखन में भी छात्रों को कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता। कारक प्रकरण का अच्छा ज्ञान कराने के बाद उन्हें वाक्य संरचना में भी आसानी हो जाती है क्योंकि हिंदी भाषा में कारकों के क्रम (कर्ता, कर्म, करण आदि) के अनुसार ही वाक्य संरचना होती है। भारत सरकार द्वारा हिंदी भाषा के अध्ययन के लिए भेजी गई पुस्तकें भी सुगम और आकर्षक हैं, जो हिंदी भाषा को सरलता से सिखाने में महत्वपूर्ण हैं। कुछ पुस्तकों में चित्र के साथ शब्द का अर्थ अंग्रेजी भाषा में भी लिखा है, जो छात्रों की शब्द-सम्पदा बढ़ाने में सहायक है लेकिन कुछ पुस्तकों में चित्र के साथ लिखे शब्दों का अर्थ केवल हिंदी भाषा में दिया गया है, अगर इन सभी प्रारंभिक हिंदी शिक्षण पुस्तकों में चित्रों के साथ लिखे हिंदी शब्दों का अर्थ अंग्रेजी भाषा में भी दिया जाए तो विदेशी छात्रों को हिंदी सिखाना और सीखना दोनों सुगम हो जाएगा—जैसे आ से आम के साथ आम

का चित्र और उदाहरण भी अंकित है, इससे छात्रों को समझाना और सिखाने का उत्साह बढ़ जाता है और छात्र जल्दी सीखते हैं लेकिन चित्र हैं पर उदाहरण लिखा न होने के कारण थोड़ी कठिनाई होती है। यहाँ पर 'सनशाइन सचित्र हिंदी व्याकरण तथा रचना' भाग-1 से 7 क्रम तक की पुस्तकें उपलब्ध हैं, लेकिन प्रारंभिक भाग 1, 2, 3 में उल्लिखित प्रकरणों में जैसे संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि विषयों की विषयवस्तु की पुनरावृत्ति से, बार-बार एक ही बात दुहराने से पुस्तक अरुचिकर हो जाती है। अतः इस व्याकरण पुस्तक में भाग 1 से 5 तक के क्रम को यदि संक्षिप्त और रोचक तरीके से विदेशी छात्रों के पाठन-पाठन के अनुसार हिंदी व्याकरण की पुस्तक तैयार की जाए तो यह उत्तम होगा। मेरे द्वारा इस दिशा में प्रयास किया जा रहा है। हिंदी भाषा व्याकरण के प्रारंभिक प्रकरणों का अरमेनियन भाषा में अनुवाद करने का प्रयास किया है, आशा है फलीभूत होगा। हिंदी भाषा व व्याकरण का ज्ञान कराने के बाद हिंदी संस्थान, आगरा द्वारा प्रकाशित विदेशी छात्रों के लिए 'मानक हिंदी पाठ्यक्रम' की पुस्तक में उपलब्ध पाठों का अध्ययन प्रारंभ होता है। इस पुस्तक में उल्लिखित सभी पाठ जैसे—भारत यात्रा की तैयारी, मॉल में, सब्जी की खरीदारी, मेरा परिवार, घर में मेहमान आदि बहुत उपयोगी व सार्थक हैं। इसमे दिया गया पाठ-परिचय, उद्देश्य, अभ्यास आदि भी सराहनीय हैं लेकिन कहीं-कहीं अति कठिन व अप्रचलित शब्दों का प्रयोग खटकता है, विशेष रूप से जब यह पुस्तक विदेशी छात्रों के लिए है, उनके स्थान पर सरल शब्दों को रखा जा सकता है जैसे विध्यर्थक की जगह विधानवाचक।

स्नातक होने के साथ ही छात्र हिंदी भाषा बोलने, लिखने, समझने और सामान्य वार्तालाप में सक्षम हो जाते हैं, जो कि शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों के लिए एक महत्वपूर्ण उपलब्धि हो जाती है। हिंदी भाषा की जानकारी के साथ ही भारतीय संस्कृति के बारे में जानने की छात्रों में बहुत जिज्ञासा और उत्सुकता है। इस विश्वविद्यालय की विशिष्ट बात यह है कि यहाँ पर अध्ययनरत विद्यार्थियों में 90 प्रतिशत छात्राएँ हैं, जिनका भारतीय वेशभूषा जैसे साड़ी, लंहगा, चूड़ीदार पाजामा-कुर्ता और अन्य परंपरागत परिधानों के प्रति व भारतीय आभूषणों व विशेष रूप से माथे की बिन्दी के प्रति अत्यधिक आकर्षण है। विश्वविद्यालय द्वारा प्रतिवर्ष 'Indo Armenian Friendship' का आयोजन किया जाता है, जिसमें सभी देशों के अध्यापक अपने एक व दो विद्यार्थियों के साथ 'राष्ट्रीय परिधान' पहनते हैं व अपने देश की भाषा व संस्कृति की विशिष्टता को प्रस्तुत करते हैं। मेरे लिए यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि हमारी वेशभूषा व आभूषणों का आकर्षण इतना जबरदस्त था कि सबसे ज्यादा आगंतुक व छात्र 'भारतीय संस्कृति व हिंदी भाषा के केन्द्र' में एकत्रित थे और सबसे खुशी और आश्चर्य की बात यह थी कि मेरे माथे पर लगी बिन्दी को देखकर सभी आगंतुक छात्राओं को अपने माथे पर बिन्दी लगानी थी, मैं अपने साथ दस-बारह पत्ते बिन्दी के लेकर गयी थी वे सब खत्म हो गए। इसके बाद भी इनकी माँग बनी ही रही और कुछ छात्राएँ अपने माथे पर बिन्दी लगाने से वंचित रह गयीं। उन सबके लिए जरी की सुन्दर शिल्पकारी की हुई चटग रंग की सिल्क की साड़ी अति सुन्दर और आकर्षक थी। इस एक्सपो में आए छात्रों द्वारा हिंदी भाषा में अपना नाम लिखना सीखने की भी बड़ी तमन्ना रहती है और अपनी नोटबुक में वे विभिन्न भाषाओं के साथ हिंदी भाषा में अपना और अपने परिवार के सदस्यों का नाम बड़े शौक से लिखते-लिखाते हैं। भारतीय धर्म विशेष रूप से बुद्ध धर्म व भारतीय जाति व्यवस्था के बारे में जानना उनके लिए बहुत रुचिकर होता है। भारतीय राजदूतावास द्वारा आयोजित 'भारतीय सांस्कृतिक सप्ताह' में भारतीय आभूषण, शृंगार-प्रसाधन व उनकी वैज्ञानिकता के बारे में जब हमने बताया तो इन सबके प्रति अरमेनियन महिलाओं की मंत्रमुग्धता गौरतलब थी। भारतीय सांस्कृतिक पर्व विशेष रूप से होली, दिवाली के बारे में जानना और रंगबिरंगी होली व प्रकाश पर्व दीपावली के उत्सव को हम सब के साथ मनाते हुए उनकी प्रसन्नता का पारावार नहीं रहता। आगरा स्थित ताजमहल की सुन्दरता से न केवल हिंदी सीखने वाले छात्र बल्कि अधिकांश अरमेनियनवासी अभिभूत हैं और एक पर्यटक के रूप में आगरा, जयपुर, दिल्ली, कोलकाता और हैदराबाद देखने और घूमने की हार्दिक अभिलाषा रखते हैं। बॉलीवुड सिनेमा, उसके गाने, नृत्य के प्रति इनकी दीवानगी चरम सीमा पर है, घर-घर में हिंदी चलचित्र लोग बड़े शौक से देखते हैं। मास दिसम्बर 2016 से अरमेनियन टी.वी. चैनल पर छोटे परदे के सीरियल 'उतरन' व 'इस प्यार को क्या नाम दूँ' के प्रसारण से छात्रों में हिंदी भाषा सीखने की ललक और उत्साह बढ़ गया है। जिन शब्दों का अर्थ वे नहीं समझ पाते उसको वे उसे अपनी नोट बुक में नोट करके रखते हैं और कक्षा में आकर उनका अर्थ पूछते हैं। इसी तरह भारतीय संस्कृति के विभिन्न पहलुओं, रीति-रिवाजों जैसे मेंहदी, कुंकुम, हल्दी, आरती, प्रसाद आदि के बारे में उनके जिज्ञासापूर्ण प्रश्न बड़ी खुशी और आत्मीयता से पूछे जाते हैं, जिसका उत्तर पाकर और उसमें निहित सुंदर भावों को सुनकर और समझकर हिंदी भाषा के अध्ययन के प्रति उनका रुझान बढ़ जाता है। भारतीय राष्ट्रगान 'जनगणमन' भी यहाँ की छात्राओं को अतिप्रिय है, सभी छात्राओं ने राष्ट्रगान बड़े शौक से सीखा और भारतीय राजदूतावास में आयोजित स्वतन्त्रता दिवस (15 अगस्त) व गणतन्त्र दिवस (26 जनवरी) समारोह में हम सबके साथ राष्ट्रगान का गायन भी करती हैं, जो उनके भारत के प्रति लगाव को भी दर्शाता है। भारतीय राष्ट्रीय पर्व पर भारतीय राजदूतावास में आयोजित समारोह में छात्राओं ने हमारे द्वारा सिखाए गए हिंदी राष्ट्रभक्ति गीत जैसे 'भारत हमको जान से प्यारा है', 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा', 'मेरा मुल्क मेरा देश मेरा ये वतन', हिन्द देश के निवासी सब जन एक हैं' आदि-आदि गीतों को सुमधुर स्वर में गाया भी है, जिसकी वीडियो रिकॉर्डिंग सहेज कर रखी है।

भारतीय राजदूतावास द्वारा विश्वविद्यालय में प्रतिवर्ष आयोजित 'विश्व हिंदी दिवस समारोह' के आयोजन के लिए भी सांस्कृतिक कार्यक्रम की हमने तैयारी करवाई जिसमें छात्राओं ने सरस्वती वन्दना—हे शारदे माँ, वर दे वीणा वादिनी वर दे, गणेश-वन्दना, स्वागत गीत आदि का गायन व बालीवुड के गानों पर जैसे—नगाड़ा संग ढोल बाजे, दीवानी मस्तानी आदि-आदि गानों पर सुन्दर नृत्य प्रस्तुति कर दर्शकों का मन मोहने के साथ समारोह की शोभा दुगुनी कर दी। विश्व हिंदी दिवस पर आयोजित प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय, तृतीय व दो सांत्वना पुरस्कार व सभी प्रतिभागियों को भारतीय राजदूतावास द्वारा प्रतिभागिता का प्रमाण-पत्र भी प्रदान किया जाता है, जिसे प्राप्त कर विद्यार्थी गौरवान्वित महसूस करते हैं।

अरमेनिया में हिंदी भाषा शिक्षण निश्चय ही सुखद होते हुए इस बात का एहसास भी कराता रहा कि भारतीय संस्कृति के प्रति लोगों की जिज्ञासा असीम और आकर्षण अत्यधिक है। वर्तमान मे डिजिटल क्रांति के कारण अपने देश में रहते हुए भी यहाँ के निवासी भारतीय संस्कृति के सुदंर व गरिमामय पहलुओं को देखते हैं, जिससे भारत दर्शन की उनकी लालसा और प्रबल हो जाती है जो कि दोनों देशों के बीच सांस्कृतिक सम्बन्ध को प्रगाढ़ बनाने तथा पर्यटन को बढ़ावा देने की दृष्टि से भी अति महत्वपूर्ण है और यही संस्कृति की संवाहिका भाषा का श्रेष्ठतम पक्ष व महत्वपूर्ण उपलब्धि भी है।

हमने इस विश्वविद्यालय में हिंदी भाषा अध्यापन के प्रथम दिन ही विद्यार्थियों से सहज भाव से हिंदी भाषा अध्ययन का कारण पूछा था इस पर विद्यार्थियों ने भारतीय संस्कृति के प्रति आकर्षण और बालीवुड से प्रभावित होकर ही हिंदी भाषा सीखने का स्वाभाविक कारण अंग्रेजी भाषा में बताया था क्योंकि उस समय उनको हिंदी नहीं आती थी, अतः विदेश में हिंदी भाषा का अध्ययन-अध्यापन रोचक होने के साथ ही उपनिषद के आदर्शों की दिशा की ओर पथ प्रदर्शित भी करता है, जो आज मानवता के हित में सर्वाधिक न्यायसंगत है।

संदर्भ—

1. विश्व हिंदी पत्रिका-2015, प्रधान संपादक—श्री गंगाधर सिंह सुखलाल। हिंदी: विश्व में भाषा-भाषियों की दृष्टि से प्रथम एवं सबसे लोकप्रिय भाषा—शोध रिपोर्ट 2015, डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल, पेज नं. 53

विचार

भीतरी संन्यास

कानन झींगन

'भक्ति' के मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति 'संन्यास' के आगे नहीं बढ़ पाता। यह दोनों विरोधी भाव नहीं हैं। संन्यास भक्त को ईश्वर के सम्मुख समर्पण के लिए तैयार करता है। महान के लिए खुद का स्थान संन्यास है। यह लक्ष्य नहीं बल्कि आत्मविश्वास का साधन है।

ईश्वर स्वयं एक दिव्य संन्यासी है। वह सृष्टि की सारी क्रियाएँ बिना लिप्त हुए संपन्न करता है। इसी आदर्श पर चलकर मुक्ति की कामना करने वाला भक्त, चाहे वह मठ में रहता हो, चाहे घर में गृहस्थी पालन करता हो—अपने सभी कर्म ईश्वर को अर्पित कर देता है। सृष्टि उसके लिए एक नाटक है, चलचित्र है। ब्रह्माण्ड के उस चलचित्र में वह एक पात्र है। जिसकी भूमिका देर-सवेर समाप्त होगी ही। एक सपने की तरह वह व्यतीत हो जाएगा। अपने वर्तमान की भूमिका में पग-पग पर होती परीक्षाएँ कभी-कभी एक भ्रम पैदा करती हैं। परंतु इस सांसारिक चेतना से ऊपर उठकर केवल ईश्वर से नाता जोड़ना ही वास्तविक चैतन्य या संन्यास है।

इस मानसिक स्थिति में जीवन रसहीन हो जाता है—यह सोचना एक भूल है। जीवन में आनंद का अनुभव करना भी एक रहस्य है। फूल की भरपूर सुगंध होते हुए भी उसमें ईश्वर के दर्शन करना, इस रहस्य का मूल है। अपनी सभी कर्मेन्द्रियों को ईश्वर से जोड़ना, जैसे आँखें उसके सौंदर्य के प्रसार को देखें। कान उसकी सर्वव्याप्त ध्वनि को सुनें। यही ईश्वर के साथ योग है। मिलन है।

प्रभु को पाने के लिए जंगल में, गुफाओं में जाना जरूरी नहीं। हमारी सांसारिक चेतना और आकर्षण हमें कहीं भी खोजकर जकड़ लेंगे। इनसे मुक्ति की कामना करने वाला योगी अपने दिल की गुफा में ईश्वर को खोज लेता है। तब वह कभी भी, कहीं भी चला जाए, वह चेतना उसके साथ जाती है। भीतर की ओर जाने की यात्रा में मनुष्य आनन्द का अनुभव करने लगता है। शरीर का सुख स्थायी नहीं। पर ईश्वर से एक होकर मिलने वाला आनन्द अनुपम है। सदा रहने वाला है।

'संन्यास' नकारात्मक नहीं सकारात्मक भाव है। दुःख के अतिरिक्त इस मनोदशा में कुछ भी छोड़ना नहीं होगा। यह बलिदान का मार्ग नहीं बल्कि दैवी निवेश है। इसमें कुछ पैसा लगाकर लाखों आध्यात्मिक रुपये मिल जाते हैं (परमहंस योगानन्द)। तो क्या जीवन के उड़ते जा रहे दिनों के सोने के सिक्के खर्च करके अमरत्व प्राप्त कर लेने में बुद्धिमानी नहीं?

सम्पर्क : 48, स्वस्तिक कुंज, सैक्टर-13, रोहिणी, दिल्ली-110085

चीनी और चाय का समाजशास्त्र

रीतारानी पालीवाल

"...जेन मत और चाय का संबंध लोक प्रसिद्ध है। ताओ मत प्रवर्तक लाओत्से का नाम चाय के इतिहास से बहुत अंतरंगता से जुड़ा है। आदतों और प्रथाओं के उद्भव के विषय में चीनी विद्यालय नियमावली है कि अतिथि को चाय परोसने के शिष्टाचार संबंधी रीतियों और प्रथाओं का प्रारंभ लाओत्से के सुप्रसिद्ध शिष्य क्वान्यिन से हुआ जिसने हान दर्रे पर 'वृद्ध दार्शनिक' को यह सुनहरा अमृत पेश किया।..."

पूर्व प्रोफेसर, इंदिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, दिल्ली।
सम्पर्क : ए-102/3, एस.एफ.एस. साकेत, नई दिल्ली-110017

चाय आज दुनिया का अत्यधिक पसंदीदा पेय है। हर जगह हर समय कोई भी इसे पीकर थकान उतार सकता है आतिथ्य कर सकता है। गंभीर विषयों पर चर्चा अक्सर चाय पर होती है। चाय आज एक ग्लोबल पेय है, भले ही इसके स्वाद की चुस्की सब अलग-अलग ढंग से अपने-अपने तरीके से लेते हों। चाय के इतिहास पर निगाह डालें तो हम पाते हैं कि चाय की कहानी चीन से शुरू हुई और दुनिया भर में फैलती गई। समाज, दर्शन, सौन्दर्य-बोध, व्यापार और शिष्टाचार का प्रतिमान बनी चाय शुरू-शुरू में एक औषधि थी। दक्षिणी चीन में पाया जाने वाला चाय का पौधा चीनी वनस्पति शास्त्रियों और चिकित्सा शास्त्रियों को पुराने समय से ज्ञात थी। चीन के प्राचीन क्लासिक ग्रंथों में इसका उल्लेख तोउ, त्सेह, चुंग, खा और मिंग आदि भिन्न-भिन्न नामों से मिलता है। थकान से राहत देने, चित्त को आनंद प्रदान करने, इच्छा-शक्ति को दृढ़ बनाने और आँखों की रोशनी बढ़ाने के लिए इसके गुणों के कारण इसका अत्यधिक महत्व था। औषधि की खुराक के रूप में दी जाने के अलावा संधिवात या गठिया रोगों के उपचार में चाय का उपयोग मरहम की तरह भी किया जाता था। ताओ मत के अनुयाइयों ने इसे मत्य मानव के लिए अमृत-स्वरूप घोषित किया तो बौद्ध भिक्षु इसका इस्तेमाल ध्यान के दौरान सताती निद्रा को भगाने के लिए करते।

चौथी-पाँचवीं शताब्दी तक आते-आते चाय यांगत्से-कियांग घाटी के निवासियों का प्रिय पेय बन गई। इसी समय इसके लिए आधुनिक चीनी चित्राक्षर (pictiriograph) 'चा' गढ़ा गया जो कि क्लासिक अक्षर 'ताउ' का अपभ्रंश रूप था। दक्षिण चीनी राजवंशों के समय में इसे कवियों के कविता-संसार में सम्माननीय स्थान मिला; चीनी सम्राट लोग अपने उच्चपदीय मंत्रियों की श्रेष्ठ सेवाओं के पुरस्कार स्वरूप उन्हें चाय पत्तियों से बना दुर्लभ पेय भेंट करते। मगर उस समय चाय बनाना कोई खास सुपरिष्कृत सांस्कृतिक कार्य नहीं था। आठवीं सदी में तांग राजवंश के काल में चाय एक अनगढ़ सामान्य पेय के स्थान पर एक सुसंस्कृत पेय बनी और जीवनादर्श के रूप में प्रतिष्ठापित होने की ओर बढ़ने लगी। आठवीं सदी के मध्य में लुवुह नामक कवि में हमें चाय के प्रथम प्रचारक और समर्थक के दर्शन होते हैं। लुवुह जिस समय में हुए उस समय चीन में बौद्ध धर्म, ताओवाद और कन्फ्यूशस मत परस्पर संश्लिष्ट हो रहे थे। उस काल की सर्वेश्वर-वादात्मक प्रतीकात्मकता विशिष्ट में सार्वभौमिक को देखने की माँग कर रही थी। कवि लुवुह ने चाय परोसने की प्रक्रिया में वही संगति और व्यवस्था दिखाई जो चराचर प्रकृति में दिखाई देती है। अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'चांकिंग' (चाय का पवित्र सद्ग्रंथ) में उन्होंने चाय बनाने, परोसने की पद्धति प्रतिपादित की। तभी से लुवुह

चीन में चाय उगाने और व्यापार करने वालों के अधिष्ठाता देवता माने जाने लगे।

'चाकिंग' तीन खण्डों में प्रस्तुत और दस अध्यायों में विभाजित है। चाय के पौधे के गुणस्वरूप, पत्तियां चुनने, छांटने, चाय सामग्री के चौबीस उपकरणों (अंगीठी से लेकर बर्तन रखने की बांस की पेटिका तक), चाय बनाने-परोसने-पीने और चीन के प्रसिद्ध चाय बागानों का विवरण विश्लेषण है। लुवुह का ताओ प्रतीकवाद के प्रति आकर्षण भी इस पुस्तक में दिखाई देता है। 'चाकिंग' की ख्याति संभवतया काफी व्यापक रही होगी। इसी ख्याति के चलते लुवुह का परिचय चीनी सम्राट ताईसुंग (763-779) से हुआ और सम्राट उनके अनुयायी हो गए। धीरे-धीरे चाय एक जनप्रिय पेय बनता गया। चाय के बड़े-बड़े पारखी हुए। कहा जाता है कि उनमें से कई तो लुवुह और उनके शिष्यों द्वारा बनाई गई चाय का अंतर बता देते थे। चाय को कूट कर चूर्ण बनाने और इस चूर्ण को उबलते पानी में डाल कर फेंटनी से मिलाने की पद्धति भी सुंग काल में ही विकसित हुई।

सुंग काल के लोगों के चाय के प्रति उत्साह की कोई सीमा न थी। श्रेष्ठ से श्रेष्ठ चाय पहचानने और उपलब्ध कराने की होड़ सी लगी रहती थी। सम्राट कियासुंग (1101-1124) की कलाभिरुचियाँ इतनी व्यापक थीं कि चाय की दुर्लभ किस्में पाने के लिए वे खजाने खोल दिया करते थे। उन्होंने स्वयं चाय की बीस किस्मों पर एक लघु प्रबंध की रचना की जिसमें 'श्वेत चाय' को सर्वाधिक दुर्लभ एवं श्रेष्ठ किस्म माना गया है।

सुंग राजवंश के समय के चाय-आदर्श, जिसे चायवाद भी कह सकते हैं, और तांग काल के चाय-आदर्श से वैसी ही भिन्नता थी जैसी कि उन दोनों के जीवनादर्शों में। सुंग काल में प्रतीकात्मकता की प्रधानता थी जबकि तांग काल में यथार्थ पर जोर दिया गया। तांग काल की नव-कन्फ्यूशसवादी मनोभूमिका दृश्य जगत को अलौकिक विधान का प्रतिबिंब मानने की बजाय इसे (दृश्य जगत को) वैश्विक विधान मानती थी। ताओवादियों की धारणा कि अमरता सतत परिवर्तन में निहित है—उनकी सभी विचार प्रणालियों में व्याप्त थी। उनके लिए स्वयं कार्य नहीं, उस कार्य की प्रक्रिया रोचक थी। इस तरह मनुष्य तुरंत

प्रकृति के आमने-सामने था। इस समस्त विचार एवं अनुभूति प्रक्रिया में जीवन जीने की कला का नया अर्थ विकसित हुआ था। अब तंग काल में चाय कलात्मक और काव्यात्मक विनोद न रह कर आत्म-बोध की एक पद्धति बन गई थी। वांग-यु-चेन ने चाय की प्रशंसा करते हुए लिखा, "यह प्रत्यक्ष आकर्षण की भाँति आत्मा में समा जाती है, इसकी नाजुक कड़ुवाहट अच्छी सलाह के बाद महसूस होने वाली स्थिति की याद दिलाती है।" सोतुम्पा ने चाय की निर्दोष शुद्धता की शक्ति का बखान करते हुए कहा कि यह एक सच्चे व्यक्ति की भाँति चुनौती देती है। दक्षिणी जेन बौद्ध मत ने—जिसमें ताओ मत के अनेक सिद्धांतों को शामिल कर लिया गया था—चाय का सुपरिष्कृत विधि-विधान निर्मित किया। भिक्षु लोग बोधि धर्म की मूर्ति के समक्ष इकट्ठे होते और पवित्र संस्कार की गहन औपचारिकता के साथ एक ही कटोरे से चाय पान करते। यही जेन अनुष्ठान ही जापान में आकर पंद्रहवीं सदी में 'चानोयू' के रूप में विकसित हुआ।

तेरहवीं सदी में चीन पर मंगोल जातियों के हमले और विजय के बाद यूएन शासकों के काल में सुंग संस्कृति के विनाश के साथ-साथ चाय से जुड़ा आत्म-बोध और आत्म-परिष्कार का दर्शन भी लुप्तप्राय हो गया। पंद्रहवीं सदी मे मिंग राजवंश के दौरान सांस्कृतिक पुनर्निर्माण के प्रयासों के बावजूद चाय केवल स्वादिष्ट पेय बन सकी, जीवनादर्श नहीं। आंतरिक उत्पातों और बाहरी हमलों के चलते जीवन का अर्थ खोजने का उत्साह जाता रहा। स्वाभाविक ही था कि चीनी लोगों के चाय के प्याले में फूलों जैसी ताजगी भरी सुगंध तो रही किन्तु तांग और सुंग कालीन आनुष्ठानिक आनंद शेष न रहा।

जेन मत और चाय का संबंध लोक प्रसिद्ध है। ताओ मत प्रवर्तक लाओत्से का नाम चाय के इतिहास से बहुत अंतरंगता से जुड़ा है। आदतों और प्रथाओं के उद्भव के विषय में चीनी विद्यालय नियमावली है कि अतिथि को चाय परोसने के शिष्टाचार संबंधी रीतियों और प्रथाओं का प्रारंभ लाओत्से के सुप्रसिद्ध शिष्य क्वान्यिन से हुआ जिसने हान दर्रे पर 'वृद्ध दार्शनिक' को यह सुनहरा अमृत पेश किया। एशियाई जीवन को ताओ मत की सबसे बड़ी देन सौंदर्यबोध के क्षेत्र में है। चीनी इतिहासकारों ने ताओवाद को "दुनिया में होने की कला" कहा है क्योंकि इसका संबंध वर्तमान से—स्वयं हमारे अपने आप से है। हमारे भीतर ही ईश्वर प्रकृति से तदाकार होता है, बीता हुआ कल हमारे भीतर ही आने वाले कल से मिलता है। वर्तमान एक गतिमान असीम है, काल की निरंतरता है, सापेक्षता का वैध क्षेत्र है। सापेक्षता सामंजस्य मांगती है और सामंजस्य ही कला है। जीवन जीने की कला परिवेश से हमारे निरंतर पुनः समंजन में निहित है। ताओवाद ऐहिक यानी सांसारिक को यथावत स्वीकार करता है और बौद्ध दर्शन तथा कन्फ्यूशस मत से इस मायने में भिन्न है कि यह दुखों और चिंताओं से भरी हमारी दुनिया में सुंदरता खोजने का प्रयास करता है। चाय के आतिथ्य की परिकल्पना जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं के भीतर महानता को देख पाने की जेन संकल्पना पर आधारित है।

पूर्व के चिंतन को जेन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान यही था कि इसने सांसारिक को उतना ही महत्व दिया जितना आध्यात्मिक को। इसने माना कि लघु और महत के बीच सापेक्ष संबंध है, कोई अंतर नहीं है। लघु उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि महत। अणु के भीतर भी विश्व की संभावनाएं हैं। पूर्णता अथवा आदर्श को तलाशने वाले को अपने भीतर के प्रकाश का प्रतिंबिंब तलाशना चाहिए। जीवन की छोटी से छोटी गतिविधियों में महानता की तलाश की जेन की संकल्पना ने पूर्व में चाय आतिथ्य की विशिष्ट संस्कृति विकसित की। इस चाय संस्कृति में चाय के आतिथ्य, चाय कक्ष, चाय के उपकरण, चाय बनाने और पीने की रीति और चाय पीते हुए कला के आस्वाद की प्राविधि के अंतर्गत छोटी-छोटी चीजों में सौंदर्य को तलाशने में आदर्श विकसित किए और जेन साधना ने उन्हें व्यावहारिक रूप प्रदान किया।

पंद्रहवीं सदी में जापान ने चाय के अनुष्ठान का उदात्तीकरण कर इसे सौंदर्योपासना के रूप में ढाल लिया। चाय के अनुष्ठान का मूलाधार है रोजमर्रा की जिंदगी के सामान्य से सामान्य, तुच्छ से तुच्छ तथ्यों और स्थितियों के भीतर सुंदर को देख पाने और उसे ऐप्रिशिएट कर पाने की साधना। यह वस्तुतः अपूर्ण की उपासना का दर्शन है। किन्तु यह चाय का दर्शन केवल सौंदर्योपासना मात्र नहीं है क्योंकि इसमें मनुष्य और प्रकृति के संबंध का संपूर्ण दृष्टिकोण अभिव्यक्त है। 'चानोयू' (चाय समारोह) एक अनुष्ठान मात्र न हो कर जापानी जीवन, जापानी चित्त और सौंदर्याभिरुचियों का पर्याय बन गया।

पश्चिम ने पूर्व को हमेशा अपने से हीनतर ही माना और उसे सभ्य बनाने के नाम पर उपनिवेशवाद का विस्तार किया तथा पूर्व को अपने अधीन बनाए रखने का औचित्य सिद्ध किया लेकिन चाय के प्याले के आगे पश्चिम अपनी श्रेष्ठता की डींग हांकना कायम न रख सका। 'चानोयू' एकमात्र एशियाई अनुष्ठान है जिसने वैश्विक सम्मान पाया है। गोरा आदमी एशिया के धर्म, नैतिकता, रहन-सहन की हंसी भले ही उड़ाता रहा हो, चाय को उसने बेझिझक अपनाया। तीसरे पहर की चाय पश्चिमी समाज का एक महत्त्वपूर्ण कार्यकलाप बनी; चाय की ट्रे और सौसरों की नाजुक खनक, क्रीम और चीनी की मात्रा के बारे में पूछने और उत्तर देने का आभिजात्य शिष्टाचार मिलकर सिद्ध करते हैं कि औपनिवेशिक दौर में चाय पश्चिमी संस्कृति में निर्विवाद स्थापित हो गई थी।

इतिहास में चाय का उल्लेख नवीं शताब्दी (879 ईसवी) का मिलता है। एक अरबी यात्री के यात्रा का विवरण जिसमें लिखा है कि वर्ष 879 के बाद केंटन (प्रान्त) में राजस्व के स्रोत नमक और चाय पर लगने वाले कर थे। मार्कोपोलो के विवरण के अनुसार एक चीनी मंत्री को 1285 में मनमाने ढंग से कर वृद्धि के कारण पदच्युत कर दिया गया था। यूरोप

के विभिन्न यात्रियों द्वारा एशिया के भूभागों की खोज तथा व्यापार और उपनिवेशवाद के विस्तार के बाद यूरोप के लोगों को पूर्व के बारे में तरह-तरह की जानकारियाँ मिलाने लगी। चाय भी इनमें से एक थी। सोलहवीं सदी के अंत में हौलेंडवासियों को पता चला कि चीन-जापान आदि पूर्वी देशों में एक खास झाड़ की पत्तियों से एक मनोहर पेय तैयार किया जाता है। गियोवान्नी बातीस्ता रेमुजियो (1559), एल. एल्मिदा (1576), मफेनो (1588), तरेइरा (1610) आदि पश्चिमी यात्रियों ने अपने यात्रा-विवरणों में चाय का जिक्र किया है। सन् 1610 में डच ईस्ट इंडिया कम्पनी के जहाज पहली बार चाय योरोप में लाए। फ्रांस में यह 1636 में और रूस में 1638 में पहुंची। इंग्लैंड में 1650 में पहुंचने पर इसका उत्साहपूर्वक स्वागत हुआ। इसे "श्रेष्ठ और सभी चिकित्सकों द्वारा मान्य चीनी पेय माना गया जो चीनी भाषा में 'त्वा' और अन्य देशों में 'ते' अथवा 'टी' कहलाती है।"

सभी नई चीजों की भांति शुरू-शुरू में चाय भी कुछ लोगों की भर्त्सना का उपादान बनी। हेनरी सेवाइल (1678), जोनस हेनावे (1757) ने इसकी बुराइयां गिनाईं। लेकिन चाय तो यूरोप का मन मोह चुकी थी। शुरू-शुरू में अत्यधिक महँगी होने के कारण इसकी पहुँच राजपरिवारों एवं कुलीन लोगों तक ही थी लेकिन थोड़े ही दिनों में चमत्कारिक ढंग से समाज में प्रसार पा गई। अठारहवीं सदी पूर्वार्द्ध तक लंदन के काफी हाउस वास्तव में टी हाउस में तब्दील हो कर एडिसन और स्टील जैसे वाग्विदग्धों के ठिकाने बने जहाँ चाय का स्वाद लेते हुए तैयार हुए 'कौवरली पेपर्स' शीर्षक निबंध, सामाजिक व्यंग्य और अंग्रेजी मद्य का मानक बने। चाय के स्वाद के विलक्षण आकर्षण ने पश्चिम बौद्धिक और सामान्य जन दोनों के चित्त को बाँध लिया। समुअल जौनसन और चार्ल्स लैम्ब जैसे व्यंग्य-विनोद लेखक इससे अभिभूत हुए। जल्दी ही चाय जीवन का एक जरूरी पेय बन गया और एक कर योग्य उपभोज्य।

पश्चिम के आधुनिक इतिहास को बनाने में चाय की अहम भूमिका रही। अमरीकी उपनिवेशों ने चाय पर लगे भारी कराधान को काफी समय तक बर्दाश्त करने के बाद अंततोगत्वा इसके विरुद्ध विद्रोह किया। याद रखने की बात है कि अमरीकी स्वतंत्रता का इतिहास बोस्टन बंदरगाह पर चाय की पेटियों को जहाज से समुद्र में फेंक दी जाने की घटना से शुरू होता है। भारत के औपनिवेशिक इतिहास में भी चाय की खास भूमिका रही। भारतीयों का चाय से परिचय अंग्रेजों के माध्यम से ही हुआ। यहाँ चाय बागान लगा कर ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपने व्यापार का विस्तार किया। अब चाय यहाँ एक लोकतांत्रिक पेय है गरीब-अमीर सबका चहेता।

रचनाकारों से अनुरोध

- कृपया अपनी मौलिक और अप्रकाशित रचना ही भेजें।
- कृपया अपनी रचना ए-4 आकार के पेज पर ही टाइप कराकर भेजें। ई-मेल द्वारा प्रेषित रचना यूनिकोड में टंकित करें या रचना के साथ टंकित फॉन्ट अवश्य भेजें।
- कृपया लेख, कहानी आदि एक से अधिक और कविता आदि दो से अधिक न भेजें।
- रचना अनावश्यक रूप से लंबी न हो। शब्द-सीमा 3000 शब्दों तक है।
- रचना के साथ लेखक अपना संक्षिप्त जीवन-परिचय भी प्रेषित करें।
- रचना के साथ विषय से संबंधित चित्र अथवा कहानी के साथ विषय से संबंधित कलाकृतियां (हाई रेज्योलेशन फोटो) अवश्य भेजें।
- यदि संस्कृत के श्लोक अथवा उर्दू के शेर आदि उद्धृत किए गए हैं तो वर्तनी को कृपया भली-भांति जांच लें।
- यदि फोटो कॉपी भेज रहे हों तो यह सुनिश्चित कर लें कि वह सुस्पष्ट एवं पठनीय हो।
- रचनाएं किसी भी दशा में लौटाई नहीं जाएंगी। अतः उसकी प्रतिलिपि (फोटो कॉपी) अपने पास अवश्य सुरक्षित रखें।
- स्वीकृत रचनाएं यथासमय प्रकाशित की जाएंगी।
- रचना के अंत में अपना पूरा पता, फोन नंबर (बैंक अकाउंट संख्या IFSC कोड सहित) और ई-मेल पता स्पष्ट शब्दों में अवश्य लिखें।
- आप अपने सुझाव व आलोचनाएं कृपया ddgnk.iccr@nic.in, pohindi.iccr@nic.in पर संपादक को प्रेषित कर सकते हैं।

हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के बीच सार्थक संवाद की आवश्यकता

रमेशचंद्र शाह

"...हिंदी का इतिहास कम से कम हजार साल का होगा। वह मात्र खड़ी बोली का इतिहास नहीं है। उसकी जड़ें बहुत गहरी है। एक ऐतिहासिक-सांस्कृतिक चुनौती यह थी, जिसके प्रत्युत्तर स्वरूप ही मध्ययुग की 'लिंग्वा फ्रैंका'-'भाखा'-उठ खड़ी हुई थी। और जब कालांतर याने 19वीं सदी में एक दूसरी विकट चुनौती प्रस्तुत हुई तो उससे निपटने के लिए, एक बार फिर से इस मध्यदेशीय 'भाखा' को नए सिरे से अपना कायाकल्प करना पड़ा।..."

सांस्कृतिक एकता का एक आधार अस्मिता बोध होता है और अस्मिता का भाषा के साथ बहुत गहरा संबंध होता है। स्वातंत्र्योत्तर भारत की बिडंबना यह है कि राष्ट्रीय एकता को केवल राजनैतिक दृष्टि से देखा गया, सांस्कृतिक नहीं। अनेक भाषाओं का प्रचलन होते हुए भी भारत एक समन्वित भाषा-क्षेत्र है। संस्कृत भाषा और समान संस्कृति के व्यापक प्रभाव के कारण सभी भारतीय भाषाओं के बीच एक गहरी समानता है, जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि किसी भी भारतीय भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद अनायास किया जा सकता है। ऐसे क्षेत्र में सांस्कृतिक आदान-प्रदान और व्यवहार के लिए ही भाषा सब जानते हों, यह आवश्यक नहीं है। आवश्यकता है दुभाषियों की, और पारस्परिक अनुवादों की, जिसकी ओर बहुत कम ध्यान दिया गया है। मैंने कभी साहित्य अकादमी की किसी गोष्ठी में कहा था कि 'नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा' से भी पहले हमारे नेताओं और बुद्धिजीवियों को 'नेशनल स्कूल ऑफ ट्रांसलेशन' खड़ा करने का विचार आना चाहिए था क्योंकि वह हमारी सबसे तात्कालिक और तुरंत फलदायी जरूरत थी। आखिर अनुवाद अपने आप में एक विशिष्ट, विशेषज्ञ गतिविधि (सांस्कृतिक) है। यह स्कूल एक साथ दो आयामों में सक्रिय होताः पहला आयामः स्वयं भारतीय भाषाओं के बीच; और दूसरा संसार की सर्वाधिक साहित्य-समृद्ध कुछ भाषाओं तथा राष्ट्रभाषा हिन्दी के बीच। तब हम पक्का और सही आत्मविश्वास उपलब्ध कर पाते अपनी भाषा की शक्ति के बारे में। देखते, कि कितने ऐसे शब्द हैं जिनका पर्याय विदेशी भाषाओं में नहीं मिलता। तब हम देख पाते कि हजार वर्षों की राजनैतिक गुलामी के बावजूद वह क्या चीज़ है जो भारतीय संस्कृति की अंतर्निहित प्राणशक्ति को अक्षुण्ण रख सकी। प्रामाणिक अनुवादों के अभाव में हिंदी की सृजनात्मक उपलब्धियों को लेकर खासा भ्रम और पूर्वाग्रह अहिंदीभाषियों में और विदेशों में भी फैला हुआ है, यह मैं अपने प्रत्यक्ष अनुभव से जानता हूँ।

हिंदी की वास्तविक शक्ति को लेकर—उसकी सर्जनात्मक उपलब्धियों को ही नहीं—उसकी सारे देश को आपस में जोड़ने वाली शक्ति समग्र भारतीय अस्मिता को वहन करने वाली उसकी इतिहास-सिद्ध भूमिका को लेकर भी व्यापक अज्ञान एवं पूर्वग्रह दिखाई देते हैं।

मेरी पीढ़ी के जाने कितने लोगों ने लड़कपन में कितने सारे महान् बांग्ला कथाकारों बंकिमचंद्र, शरतचंद्र, रवींद्रनाथ टैगोर के उपन्यासों को हिंदी में ही पढ़ा था। इतने आत्मीय थे वे हमारे, कि बहुत दिनों तक हम उन्हें हिंदी के लेखक ही समझते रहे थे। यानी, कि गैर-हिंदी भारतीय साहित्य का अनुवाद करने में हिंदी आरंभ से ही सबसे आगे रही। आज भी हकीकत यही है कि हिंदी का लेखक हीं नहीं—प्रबुद्ध पाठक भी इन्हीं अनुवादों के जरिए जानता है कि बांग्ला, कन्नड़ या मराठी मे क्या और

प्रसिद्ध चिन्तक, साहित्यकार
सम्पर्क : एम-4, निरालानगर, भदभदा रोड, दुष्यन्त मार्ग, भोपाल-462003
मोबाइल: 09424440574

कैसा साहित्य रचा जा रहा है। जहाँ तक उर्दू का प्रश्न है, हिंदी के औसत लेखक एवं पाठक भी उर्दू के तमाम अच्छे कवियों और कथाकारों के कृतित्व से परिचित होते हैं। एक भी लेखक आपको ऐसा नहीं मिलेगा जिसे बड़े उर्दू कवियों की कुछ रचनाएँ कंठस्थ न हो। किंतु, उर्दू के लेखकों-पाठकों में हिंदी के रचनाकारों के प्रति कुछ अपवादों को छोड़, वैसी जिज्ञासा एवं उत्सुकता नहीं दिखाई पड़ती। उनमें से अधिकतर अज्ञेय, निर्मल वर्मा या हजारी प्रसाद द्विवेदी से लेकर अधुनातन हिंदी लेखकों के कृतित्व के प्रति भी उदासीन दिखाई देते हैं। क्यों? कान पक गए यह सुनते-सुनते, कि भारत में पच्चीस राष्ट्रभाषाएँ हैं, हजारों लोक-भाषाएँ भी। यह हिंदी तो एक संपर्क भाषा भर है—कामचलाऊ राजभाषा के तौर पर स्वीकार की गई है। अभी दो वर्ष पूर्व प्राग गया था—वहाँ भी यही सुनने में आया। देश में भी हर जगह यही सुनने को मिलता है। हिंदी के अखिल भारतीय स्वरूप या संप्रेषण-शक्ति का और इस रूप में उसकी उपयोगिता या महत्व का खुला स्वीकार अगर हमारे भीतर होता, तो ऐसा कदापि नहीं होता।

हिंदी का इतिहास कम से कम हजार साल का होगा। वह मात्र खड़ी बोली का इतिहास नहीं है। उसकी जड़ें बहुत गहरी है। एक ऐतिहासिक-सांस्कृतिक चुनौती यह थी, जिसके प्रत्युत्तर स्वरूप ही मध्ययुग की 'लिंग्वा फ्रैंका'-'भाखा'-उठ खड़ी हुई थी। और जब कालांतर याने 19वीं सदी में एक दूसरी विकट चुनौती प्रस्तुत हुई तो उससे निपटने के लिए, एक बार फिर से इस मध्यदेशीय 'भाखा' को नए सिरे से अपना कायाकल्प करना पड़ा। स्वयं को यूनानी पुराकथा के फिनिक्स पक्षी की तरह कालाग्नि में झोंककर खड़ी बोली को हिंदी के चोले में पुनर्जन्म लेना पड़ा। इसका क्या मतलब हुआ? इसका मतलब यही हुआ कि यह जो अंतरभारतीय सांस्कृतिक आदान-प्रदान का केन्द्रीय सेतु और माध्यम है, इस पर कुछ विशेष दायित्व है—भारत की समग्र सांस्कृतिक अस्मिता को वहन करने का और फिर पूरे भारत में प्रसारित करने का। हिंदी को यह दोहरा दायित्व निभाना ही है और वह उसे सदा से निभाती भी आई है। उसे एक ओर 'कल्चरल क्लेयरिंग हाऊस' का भी काम करना है और दूसरी ओर स्वधर्म और कालगति को भी सबसे आगे बढ़कर पहचानना और पकड़ना है। इस अर्थ में हिंदी अपने जन्म से ही आधुनिक रही हैः दूसरे शब्दों में, आधुनिकता का संस्कार उसमें शुरू से सक्रिय रहा है।

एक से एक समृद्ध बोलियों का विस्तृत जलागम-क्षेत्र और साथ ही संस्कृत और प्राकृत की अंतःसलिला। हिंदी की जड़ें सचमुच बहुत गहरी हैं। चूंकि उसका देश (समूचा हिंदी क्षेत्र) बाहरी आक्रमणों-प्रभावों को भी सोखता और पचाता रहा है, अतः हमारे यानी भारतीय मानस के संस्कारगत अस्तित्व में गहरे पैठे होते हुए भी संवेदना के स्तर पर वह सर्वाधिक वेध्य और खुली संवेदना वाली रही है। एक ओर पुरातन परंपरा के संरक्षण और पुनर्नवीकरण का उसे लगातार उद्यम करते रहना पड़ा है तो दूसरी ओर तरह-तरह के विजातीय आघातों-प्रभावों को भी पचाने और अनुकूलित करते रहने की प्रक्रिया में भी वह निरंतर दीक्षित होती रही है। इस तरह वह आज से नहीं, अपने जन्म से ही आधुनिक, यानी आगे देखने वाली भाषा रही है। भावबोधपरक अग्रगामिता का संस्कार सदैव उसके साथ रहा है और इसी के बूते वह सारे देश के आत्म-नवीकरण हेतु आवश्यक परिवर्तनों का नेतृत्व भी करती रही है। संस्कृत कवि 'इदं कवेभ्यो पूर्वेभ्यो' कहके काम चला सकता था। किंतु, संस्कृत और 'भाखा' की सीधी उत्तराधिकारिणी हिंदी अपने महानतम कवि से भी यही कहलवाती है, कि "भये जे, अहहिं, जे होइहहिं आगे। प्रवनउँ सबहिं कपट सब त्यागे।"

आखिर कोई बात होगी कि दूसरी भाषाओं में ख्यात हो चुके कई लेखकों ने भी आत्माभिव्यक्ति के लिए हिंदी को चुना। बल्कि जो जितने ही तिरछे कोण से—जितने ही भिन्न भाषा-परिवेश का संस्कार ग्रहण करके हिंदी में आया वह हिंदी में औरों से भी ज्यादा दूरगामी टंकार पैदा करने वाला लेखक साबित हुआ—जैसे निराला, अज्ञेय और मुक्तिबोध। हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने की मांग भी सर्वप्रथम हिंदी प्रदेश से नहीं, बल्कि हिंदीतर प्रदेशों से—मुंबई और कोलकाता जैसे महानगरों से उठी थी, जो मराठी और बांग्ला प्रदेश थे। हिंदी के सार्वदेशिक चरित्र की, उसकी समूचे देश को जोड़ने की शक्ति ही स्वतः स्फूर्त स्वीकृति थी यह। स्वतंत्रता-सेनानी और हिंदी कविता में आधुनिक भावबोध के उन्नायक अज्ञेय ने अगर हिंदी को 'समग्र भारतीय अस्मिता की संवाहिका' और 'भारत के हृदय की कुंजी' निरूपित किया है, तो यूँ ही नहीं किया। यह हमारा सार्वजनिक दुर्भाग्य है कि हम हिंदी के अपने श्रेष्ठतम सर्जकों के अंतःप्रमाण पर ध्यान नहीं देते हैं। जबकि हिंदी के विचार-समर्थ सर्जकों की साखी ही हमारे लिए दिशा-निर्देशक होनी चाहिए। उसी से हम सही दिशा पा सकते हैं। वह दिशा है—हिंदी को संस्कृत की तरह राष्ट्रीय संस्कृति का निर्विवाद समृद्ध माध्यम बनाना, और साथ ही, उसे विश्व-संस्कृति का भी वैकल्पिक माध्यम स्वीकार करके विश्वभाषा बनाना। इस अभीप्सा और कार्य-योजना में हिंदी का किसी भी अन्य भाषा से कोई विरोध या होड़ नहीं है। डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ने इसी तथ्य को प्रमाणपुष्ट ढंग से रेखांकित किया था कि प्राचीनकाल के मध्यदेश और वर्तमान हिंदी-भाषी क्षेत्र भौगोलिक और सांस्कृतिक दृष्टि से लगभग एक हैं। इस तथ्य को भी, कि इतिहास के मध्यदेश में जो जनपद कहकर अभिहित किए गए, वे वस्तुतः आधुनिक हिंदी-प्रदेश के अठारह बोली-क्षेत्र हैं। आज के खंडनकारी बोली-आंदोलनों के विभाजनवादी अनर्थ को उसी निर्मल दृष्टि से उजागर किया जाना चाहिए—जहाँ हिंदी के मूलतः व्यापक, बहुरूपी और धर्मनिरपेक्ष चरित्र को यथातथ्य पहचाना और मूल्यांकित किया गया है। यानी, हिंदी की जातीय चेतना की उस विशेषता को, जिसके कारण समूचे भारत राष्ट्र को एक सुदृढ़ सांस्कृतिक सूत्र में बाँधे रखने की जिम्मेदारी यह हिंदी भाषी क्षेत्र ही निभाता रहा है।

भारतीय संस्कृति का मूल आधार 'अध्यात्म'

आचार्य डॉ. रामेश्वर प्रसाद गुप्त

"...सुखद सच्चिदानन्द योग और क्षेम स्वरूपिणी इस महत्महिमामयी भारतीय संस्कृति को शाश्वत और चिरन्तन सत्यशिवसौन्दर्य-समुपेत बनाए रखने के लिए सर्वद्रष्टा ऋषियों ने मानवसमाज द्वारा व्यवहार और आचरण में लाने के लिए सोलह संस्कारों का उल्लेख किया है। जो इस प्रकार हैं—गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णवेध, यज्ञोपवीत, वेदारम्भ, केशान्त, समावर्तन, विवाह, संन्यास एवं अन्त्येष्टि। ..."

सम्पर्क : निवास श्रीमती लक्ष्मीगुप्त भवन, उद्योग विभाग के पास,
सिविल लाइन्स, दतिया (म.प्र.)-475661
सम्पर्क सूत्र : 09826249448

भारतीय वाङ्मय में 'संस्कृति' शब्द विशिष्ट महत्व संधारण करता है। 'संस्कृति' शब्द सम् उपसर्गपूर्वक कृ धातु से क्तिन् प्रत्यय से बनता है। इसका अर्थ—परिष्कार, पूर्णता या मनोविकास है। पूर्णमनोविकास की परिचायिका भारतीय संस्कृति का आधार 'आध्यात्मिक' अर्थात् आत्मतत्त्व या परमतत्त्व है। अध्यात्मज्ञान अर्थात् वह विद्या, जो आत्मविषयक जानकारी प्रदान करे या परमात्मचिन्तन का अनुभव कराए।

चतुर्दश विद्यास्थान या चौदह विद्यायें भारतीय वाङ्मय में निरूपित हैं। यथा—

"पुराणन्यायमीमांसा धर्मशास्त्राङ्गमिश्रिता:।
वेदा: स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश॥" —याज्ञवल्क्य स्मृति।

अर्थात् पुराण, न्याय, मीमांसा, धर्मशास्त्र, छह वेदाङ्ग—शिक्षा, कल्प, निरुक्त, व्याकरण, छन्द और ज्योतिष तथा चार वेद—ऋक्, यजु, साम और अथर्व, ये चौदह विद्यास्थान हैं। 'मीमांसा' ही अध्यात्म या आन्वीक्षिकी है। इसकी श्रेष्ठता को प्रतिपादित करते हुए आचार्य कौटिल्य ने अपने 'अर्थशास्त्र' में लिखा है कि—

"प्रदीप: सर्वविद्यानामुपाय: सर्वकर्मणाम्।
आश्रय: सर्वधर्माणां शश्वदान्वीक्षिकीमता॥
—कौटिलीय—अर्थशास्त्र, 1-2-1

अर्थात् "यह 'आन्वीक्षिकी या अध्यात्मविज्ञान' समस्त विद्याओं का दीपक, सब कार्यों का साधक एवं सब प्रकार के वैदिक तथा लौकिक धर्मों का आश्रयरूप है।" अध्यात्म का विग्रह 'आत्मनि अधि' है। इसका अर्थ आत्मा में अथवा आत्मा-सम्बन्धी है। 'आत्मा' परमात्म या ब्रह्मस्वरूप है जिससे सृष्टि के पंचतत्त्वादि उत्पन्न हुए कहे गए हैं। यथा—''एतस्मादात्मन: आकाश: सम्भूत:'' —तैत्तिरीय उपनिषद्, 2-1.

आत्मा का स्वरूप वेदान्त में नित्य, शुद्ध, बुद्, मुक्त, सत्यस्वभाव, परमानन्द, अनंत और अद्वैत कहा गया है। यथोल्लेख है कि—

"नित्यशुद्धबुद्धमुक्तसत्यस्वभाव-परमानन्दानन्ताद्वयं ब्रह्म''।
—वेदान्तसार (सदानन्द) —अनुभववाक्यार्थान्तर्गत।

स्पष्ट है कि नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त, सत्यस्वभाव परमानन्द ही आत्मतत्त्व या अध्यात्मज्ञान है। यही 'अध्यात्म' भारतीय संस्कृति का प्राण है। इसे सच्चिदानन्द अथवा सत्यं, शिवं, सुन्दरम् से जाना जाता है। अध्यात्मभाव—आदृत, 'भारतीय संस्कृति' सम्यक् शोभन कृति है। यह सत्यशिवान्वित सौन्दर्य है। इसमें सत्य या सदाचार प्रधान है। सत्य ही

यहाँ धर्म के रूप में निर्दिष्ट है। आत्मा के प्रथम गुण 'सत्य' के विषय में उपनिषदों में इस प्रकार उल्लेख है कि—

1. सत्यमेव परं ब्रह्म, सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म —त्रि.म.ना. 3/3
2. सत्यं ज्ञानमनन्तं —दर्शनो.-1-32
3. सत्यज्ञानं सात्त्विकम् —शारीरको.-9
4. सत्यानन्दरूपोऽहं- चिद्घनानन्दविग्रह: —तेजोविन्दूपनिषद.-6-59
5. सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म —तैत्तिरीयोपनिषद् 2-1-1
6. सत्यं ज्ञानं सच्चिदानन्दरूपं। —शु.र. 2-5
7. सत्यमेवजयते। —मुण्डकोपनिषद्-3-1-6
8. सत्यंह्येव ब्रह्म। —बृह. 5-4-1
9. सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा। —मुण्डकोपनिषद् 3-1-5

अस्तु, स्पष्ट है कि 'सत्यात् ऋते न धर्म:' अर्थात् सत्य से रहित कोई श्रेष्ठ धर्म नहीं होता। जैसा कि गोस्वामी तुलसीदास ने कहा है कि—"धर्म न दूसर सत्य समाना।" —रा.च.मा. 2-94-5

अध्यात्मपरक इस भारतीय संस्कृति का प्रथम चरण—'सत्य' है, जो चित् या शिव स्वरूप को गति प्रदान करता है। यही 'सत्य' चिद्घनानन्द के रूप में साकार होता है। भारतीय संस्कृति में सत्य से ही 'शिव' की कामना की गई है। यथोक्त है कि—"तन्मे मन: शिवसंकल्पमस्तु''। यजुर्वेद, 34-1 से 6. यही शिवसंकल्पीय चेतना अनन्तसुख या आनन्द की राशि के रूप में प्राणिमात्र में विद्यमान है। जैसा कि गोस्वामी तुलसीदास ने उल्लेख किया है कि—"ईश्वर अंस जीवन अविनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी॥" रा.च.मा., 7-116 ख-2

सुखद सच्चिदानन्द योग और क्षेम स्वरूपिणी इस महत्महिमामयी भारतीय संस्कृति को शाश्वत और चिरन्तन सत्यशिवसौन्दर्य-समुपेत बनाए रखने के लिए सर्वद्रष्टा ऋषियों ने मानवसमाज द्वारा व्यवहार और आचरण में लाने के लिए सोलह संस्कारों का उल्लेख किया है। जो इस प्रकार हैं—गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णवेध, यज्ञोपवीत, वेदारम्भ, केशान्त, समावर्तन, विवाह, संन्यास एवं अन्त्येष्टि।

उक्त सभी संस्कार मानव-जीवन को निर्मल, पावन, शिष्ट, शीलवान एवं निश्छल बनाते हैं। ये आध्यात्मिक संस्कार भारतीय संस्कृति की आत्मा हैं। इसी प्रकार पंचमहाव्रत—'सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह' यह सभी अध्यात्म का स्वरूप संधारण करते हैं। ये सभी हमारी संस्कृति की धुरी हैं। एतद् विषयक उल्लेखनीय है कि—"ब्रह्मचर्येण (सत्येन) तपसा देवा: मृत्यमपाघ्नत"। (अर्थववेद 11-7-19) प्रकृति का स्वरूप भी अध्यात्म है। भारतीय दर्शन में प्रकृति और चेतनतत्व के सम्मिलन से क्रमश: आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी का प्रभवमान्य है। भारतीय संस्कृति इन पंचतत्वों की शान्ति या शुद्धता का गायन करती है। यथोक्त है कि—

"द्यौ: शान्तिरन्तरिक्षं शान्ति:। पृथिवी शान्तिराप: शान्तिरोषधय: शान्ति:। वनस्पतय शान्तिर्विश्वेदेवा: शान्तिर्ब्रह्मशान्ति:। सर्वशान्ति: शान्तिरेवशान्ति: सा मा शान्तिरेधि॥'' —यजुर्वेद, 36-17

उपर्युक्त से स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति में पंचतत्वों के शांतिमय पूर्णपावित्र्य को महत्व दिया गया है और यही अध्यात्म का भी सबल गुरूमन्त्र है। भारतीय संस्कृति मानवता की पोषक है। 'मनुर्भव' (अर्थात् सही मानव बनो)—ऋग्वेद 10-53-6, उक्त का प्रमाण है। हमारे अध्यात्म दर्शन में सबकी समानता का उद्घोष है। यथोक्त है कि —'पुरुष एवेदं सर्वं, यद्भूतं यच्च भव्यम्। (ऋग्वेद-पुरुषसूक्त, 90-2)

और भी—"ईशावास्यमिदं सर्वं, यत्किंच जगत्यां जगत्।" (ईशावास्योपनिषद्-1)

अन्यत्र भी—"समानी व आकृति: समाना हृदयानि व:।" (ऋग्वेद, 10-191-4)

अध्यात्म दर्शन के चार महावाक्य—'प्रज्ञानं ब्रह्म', 'अयमात्मा ब्रह्म', 'तत्वमसि' एवं 'अहं ब्रह्मास्मि' को भारतीय संस्कृति ने आत्मसात कर सभी मानवों में समत्व की उपादेयता प्रतिपादित की है। अध्यात्म प्रधान संस्कृति होने से हमारी संस्कृति सर्वकल्याण की प्रदेशिका एवं सर्वकल्याण कर्त्री भी है। यथानिरूपित है कि—

"न त्वहं कामये राज्यं न सौख्यं न पुनर्भवम्।
कामये दु:खतप्तानां प्राणिनामार्तनाशनम्॥ —*महाभारत*

तथा च—

"सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दु:खभाग्भवेत्॥" —*आनन्द रामायण*

अध्यात्म के अनुरूप सबका हित हमारी संस्कृति का सार है। हमारा दर्शन और हमारी संस्कृति एक सिक्के के दो पहलू हैं। एक के आधार पर ही दूसरे की सुस्थिति निर्भर है। दोनों ही सत्कर्म की संचेतना से सिंचित और संचलित हैं। दोनों की ही अपरिहार्य एवं उपादेय महत्ता प्रस्तुत उल्लेखों से स्पष्ट है। यथा—

अकर्मादस्यु: (कर्महीन व्यक्ति दस्यु है) –ऋग्वेद, 10-22-8

उत्तिष्ठ जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत। (कठोपनिषद्-14) अर्थात् आत्मा या अध्यात्म को जानने के लिए उठो, जागो और श्रेष्ठजनों का सत्संग कर परमात्मभक्ति या संस्कृति को समझो।

अनाश्रित: कर्मफलं कार्यं कर्म करोति य:। स सन्न्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रिय:॥ (गीता-6-1) अर्थात् जो पुरुष कर्मफल का आश्रय न लेकर करणीय कर्म करता है, वह संन्यासी तथा योगी है।

एवमेव—*"कर्मण्येवाधिकारस्ते''* —गीता 2-47 में अध्यात्म और संस्कृति एक साथ दृष्ट है।

'तस्मै नम: कर्मणे'। नीतिशतकम् (भर्तृहरि)–95

'करम प्रधान विश्व करि राखा'। रामचरितमानस, 2-218-4

इसी प्रकार पुरुषार्थ चतुष्टय—'धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष' अध्यात्मचिन्तन के घटक बनकर हमारी संस्कृति के अपरिहार्य सुदृढ़ स्तम्भ हैं, जो स्व–प्रज्ञानोन्मेष से नि:स्पृहता, अनासक्ति और आनन्दप्रदान का स्रोत एवं सम्बल हैं। उक्त सभी भारतीय अध्यात्म और भारतीय संस्कृति के समान 'विशिष्ट वैशिष्ट्य' हैं। भारतीय अध्यात्म और भारतीय संस्कृति के परिज्ञानार्थ अतिशय विनय, जिज्ञासा तथा सेवाभावना पूर्णतया अपेक्षित है। यथोल्लेख है कि—

"तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया''। —गीता, 4-34

अन्य भी उल्लेख्य है कि

"विनयेन सर्वं प्राप्यते''। —सुभाषितरत्नभाण्डागाराम्

उपर्युक्त विवेचना से भारतीय अध्यात्म और भारतीय संस्कृति प्राय: एक रूप ही प्रतीत होते हैं। दोनों का ही मानवसमाज के समुन्नयन, अभ्युदय और उत्कर्ष के साथ राष्ट्रधर्म के निर्वहण हेतु एक ध्येय एवं एक ही लक्ष्य परिलक्षित होता है। ''हम विद्यावान् बनकर श्रेष्ठ हों'' यह आध्यात्मिक उद्घोष हमारे उपनिषद् करते हैं। यथा—

"विद्या अमृतमश्नुते।" —ईशावाष्योपनिषद्-11

इसी पृष्ठभूमि पर हमारी संस्कृति राष्ट्र के योग-क्षेम-हितार्थ प्रतिवद्ध कराती है कि—

"वयं राष्ट्रे जागृयाम्" —(यजुर्वेद, 9-23)

अर्थात् हम राष्ट्रोत्थान हेतु जाग्रत रहें।

तथा च—

"माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या:। —(अथर्ववेद, 12-1-12)

अर्थात् राष्ट्र हमारी माँ है, हम इसके सभी पुत्र इसका सम्यक् योग और क्षेम करें।

और भी उल्लेख है कि—*"यतेमहि स्वराज्ये''।* (ऋग्वेद, 5-66-6) अर्थात् हम राष्ट्रस्वातन्त्र्य हेतु संलग्न रहें।

अस्तु, भारतीय अध्यात्म की अंक में मानवीय जीवनमूल्यों परिपुष्ट 'भारतीय संस्कृति' आत्मा के सच्चिदानन्द या सत्य, शिव और सौन्दर्य को अपने में संजोए हुए परमानन्दित विग्रह से वरेण्यता को प्राप्त हैं। इसी से यह विश्व की सभी संस्कृतियों में प्रथम एवं उत्कृष्ट परिगणित है। यथोल्लेख है कि—

"सा प्रथमा संस्कृति: विश्ववारा:॥" —(यजुर्वेद, 7-14)

स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति का मूल आधार आत्मा या परमानन्द स्वरूप 'अध्यात्म' हैं, जो चिरन्तन, शाश्वत एवं अजरामर बना हुआ इस देश 'भारतवर्ष' को विश्वगुरू के पद पर प्रतिष्ठित कराता हुआ प्रस्तुत सूक्ति को सदैव चरितार्थ करता रहेगा। यथा—

"एतद्देश-प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन:।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षरेन् पृथिव्यां सर्वमानवा:॥'' —मनुस्मृति, 2-20

संदर्भ ग्रन्थ—

1. ऋग्वेद
2. यजुर्वेद
3. अथर्ववेद
4. याज्ञवल्क्य स्मृति
5. त्रिपाद्विभूतिमहानारायणोपनिषत्
6. दर्शनोपनिषद्
7. शारीरकोपनिषद्
8. तेजोविन्दूपनिषद्
9. तैत्तिरीयोपनिषद्
10. मुण्डकोपनिषद्
11. बृहदारण्यकोपनिषद्
12. कौटिलीय अर्थशास्त्र
13. मनुस्मृति
14. वेदान्तसार
15. महाभारत
16. आनन्दरामायण
17. श्रीमद्भगवद्गीता
18. नीतिशतकम्
19. ईशावास्योपनिषद्
20. श्रीरामचरितमानस
21. सुभाषितरत्न-भाण्डारगारम्।

हिन्दी ग़ज़ल का परिदृश्य

ज्ञानप्रकाश विवेक

हिन्दी ग़ज़ल एक ऐसी सशक्त विधा का स्वरूप हासिल कर चुकी है, मितकथन जिसकी विशेषता है। ग़ज़ल के प्रायः हर शेर में कथ्य का ताप। विचार की आँच। अनुभति की हरारत और शब्दों की लय और अर्थ की ध्वनियाँ होती हैं।

दो मिसरों यानी, दो पंक्तियों की तंग गली से भावनाओं का लश्कर गुज़ारने की सलाहियत हिन्दी ग़ज़लकारों ने पैदा की है।

हिन्दी ग़ज़ल, काव्य का एक ऐसा ताकतवर काव्यरूप बन चुका है जिसमें सुसंस्कृत और सभ्य विचारों को तरजीह दी गई है। आक्रोश को भी, कभी व्यंजना तो कभी तंज़ के रूप में प्रस्तुत किया गया। हिन्दी ग़ज़ल में तरक्क़ीपसंद विचार और जनवादी रुझान भी अहिंसक और शिष्ट प्रतिवाद को रचते हैं।

हिन्दी ग़ज़ल ने इतनी व्यापकता हासिल कर ली है कि जीवन और समाज के गलियारे (और मन के तलघर) में घटने वाली हर छोटी-बड़ी घटना को शेर के ज़रिए व्यक्त किया जाने लगा है। हिन्दी ग़ज़ल में महत्त्वपूर्ण घटना यह घटित हुई है कि ग़ज़लों में अनुभवों का उत्पाद के विपरीत अनुभवों की पुनर्रचना होती है और इसी के माध्यम से, नुकीली एकाग्रता के साथ शेर कहे और लिखे जाने लगे हैं। ग़ज़ल में तासीर पैदा करने के लिए तग़ज़्ज़ुल और ग़ज़ल का मिज़ाज ज़रूरी तत्व हैं तो अनुभवों की पुनर्रचना, स्मृतियों का सरमाया तथा यथार्थ और कल्पनाशीलता भी ग़ज़ल जैसी सिन्फ़ (विधा) को सशक्त बनाने में अहम भूमिका निभाते हैं।

ग़ज़ल एक ऐसी विचित्र और अनोखी विधा है जो विभिन्न अश्आर के बिखरे हुए (या फैले हुए) विचारों को समेट कर एक इकाई (एक रचना) में बदल देती है।

बीसवीं सदी के अंतिम दशकों और इक्कीसवीं सदी का आरंभ—यह समय, विचित्र, अनोखा और हैरान करने वाला ऐसा कालखण्ड है जिसमें हर पल दुनिया और उसका यथार्थ बदल रहा है। मूल्यों की सबसे ज्यादा उथल-पुथल या कहें कि तोड़फोड़ इसी दौर में हुई है। इसी दौर में एक नया मध्य वर्ग पैदा हुआ है जो आत्मकेंद्रित, महत्वाकांक्षी, अधीर, चतुर, चौकन्ना तथा शाहखर्च है। इस नए मध्य वर्ग ने, समाज में एक नया समाज निर्मित किया है जिसकी अपनी जीवन शैली है और अपने जीवन मूल्य। वह मध्य वर्ग जिसमें खुद को उपभोक्ता कहलाने में कोई संकोच नहीं। हिन्दी ग़ज़लकारों ने ऐसे नए मध्य वर्ग को केंद्र में रखकर, समाजशास्त्रीय तत्व के साथ अभिव्यक्ति दी है। यथा—

"...हिन्दी ग़ज़ल में लगभग सभी ग़ज़लकार शोषित मनुष्य की कराहें तथा अकेले होते जाते आदमी के अवसाद को भरपूर संवेदना के साथ व्यक्त कर रहे हैं। यहाँ असहमति और अस्वीकृति के स्वर, कभी सीधे सरल अश्आर में तो कभी व्यंजना, वक्रोक्ति और तन्ज़ के रूप में बयान होते हैं।..."

सम्पर्क : 1875, सेक्टर-6, बहादुरगढ़-124507 (हरियाणा)

''सोची समझी होती हैं बेध्यानियाँ इनकी?
ऐसे लोगों को अक्सर बेखबर नहीं कहते। —*कुलदीप सलिल*

नए समय में, यांत्रिक होते समाज के अंदर संवेदना की जगह कम बची है तो दूसरी तरफ़ इस नए समाज ने स्मृतियों को ख़ारिज कर दिया है।

यह उत्तर-आधुनिक सदी है जहाँ तकनीक हावी है। पिछली सदी ने मनुष्य को यांत्रिक होना सिखाया था। नई सदी में टेक्नालोजी के साथ जीता मनुष्य, सूचनाओं के अम्बार पर खड़ा, हैरानकुन है। यह समय जिसमें तकनीक है, सूचनाएँ हैं, लेकिन स्मृतियाँ ख़ारिज हो चुकी हैं।

''मैं गीली रेत पर लड़ते-झगड़ते घर बनाता था
मगर अब याद करता हूँ तो नादानी-सी लगती है। —*महेन्द्र अग्रवाल*

नए समाज की नई संरचना यही है—वाचाल और द्रुतगामी समय में, पीछे मुड़कर, ठिठक कर, पुराने समय को याद करने, निशानियों को ढूँढ़ने की फुर्सत किसी के पास नहीं है। हिन्दी ग़ज़लकारों ने इस उत्तर-आधुनिक स्थितियों का तथा नए समाज की संरचना को गहरे अनुभवों के साथ अपने अश्आर में अभिव्यक्ति दी है—

''न पहले जैसा घर न घर के आदमी यारो
न ये मकान रहा वो मकान पहले-सा'' —*माधव कौशिक*

ऐसा प्रतीत होता है यह नया समाज एक अदद तदर्थ जीवन जीने को अपना जीवन मान बैठा है। यही वजह है कि इस नए यथार्थ में समाज के भीतर की रागात्मकता का बेहद क्षरण हुआ है। यह एक ऐसा अनात्म समय है जिसमें जीवन राग नहीं बचा, बेशक मॉल, रेस्तरां, शादी-ब्याह में पाप म्यूज़िक का शोर बहुत है। यह शोर मनुष्य के धीरज और धैर्य को पराजित कर रहा है।

यह समय बिखरते-टूटते संबंधों का नव-यथार्थ है। इस समय में वस्तुओं से रिश्ता ज़्यादा प्रगाढ़ हुआ है, मनुष्य से कम। संबंध खंडित हो रहे हैं और यह चिन्ता के रूप में नहीं, नए जीवन शिल्प के रूप में देखा जा रहा है। हिन्दी ग़ज़लकारों ने संबंधों को लेकर बेहद सार्थक अभिव्यक्ति दी है। दुष्यंत का बेहद प्रचलित शेर भी इसी संबंधों के विखण्डन की ओर संकेत करता है। पूरा शेर एक बिम्ब के रूप में उभरता हुआ-सा—

''तू किसी रेल-सी गुज़रती है
मैं किसी पुल-सा थरथराता हूँ'' —*दुष्यंत*

इस बाजारवादी समय में एक और हैरान करने वाली बात घटित हुई है, वह है प्राक्सी एक्ज़िस्टेंस! जो उपस्थित है वह भी अपने समाज से अनुपस्थित दिखाई देता है। यह समय मौलिक जीवन शैली के क्षरण का ऐसा समय है जिसमें सबके सब एक-दूसरे की दुर्बल प्रतिलिपि प्रतीत होते हैं। इन्हीं चिंताजनक स्थितियों पर हिन्दी ग़ज़लकारों ने ज़रूरी हस्तक्षेप पैदा किया है—

''सारे चश्में उतार कर फेंकूँ
और फिर ख़ुद में झाँककर देखूँ'' —*विकास शर्मा राज़*

एक गहरी हलचल भरी द्वंद्वात्मकता का समय है। विडम्बनाएँ इस समय और समाज के तलघर में विश्राम करती प्रतीत होती हैं। इस नए समाज ने ज़िंदगी की नई चिमनियाँ ईजाद की हैं जिसमें वो कोयला सुविधाओं का डालता है लेकिन आग तनाव और अवसाद की निकलती है। अकेलापन, इस नए समाज का ऐसा कटु सत्य है जिसे कोई उपकरण, कोई गेजेट कम नहीं कर पाता।

''मज़ा लेते हैं सब एक दूसरे के ज़ख्म गिन-गिन कर
मगर हर शख़्स है अपने लहू में तर जहाँ मैं हूँ'' —*बुद्धिसेन शर्मा*

समाज एक सड़क की तरह है। बीच में डिवाइडर है। यह डिवाइडर समाज को दो समाजों में बाँट देता है। एक समाज अमीर... बेहद अमीर। दूसरा समाज दुख, दर्द, कष्ट, अभाव, भूख, बेकारी, निराशा, बीमारी, संशय और बेघरी को जीता समाज! इस समाज के हर मनुष्य में एक अदद अश्वत्थामा अपने ज़ख़्मों, व्यवस्था द्वारा दी गई आश्वासनों की मौखिक पट्टियों को रखता हुआ। हिन्दी ग़ज़लकारों ने ऐसे उपेक्षित समाज को केंद्र में रख ग़ज़लें लिखी हैं। शुरुआत बेशक दुष्यंत ने की लेकिन सिलसिला जारी है—

''न हो कमीज़ तो पैरों से पेट ढक लेंगे
ये लोग कितने मुनासिब हैं इस सफ़र के लिए'' —*दुष्यंत*

''वो जिनकी मुट्ठियों में अंधेरे की फसल है
सूरज को देखते ही पकड़ने की ज़िद करें'' —*हृदयेश मयंक*

हिन्दी ग़ज़ल में लगभग सभी ग़ज़लकार शोषित मनुष्य की कराहें तथा अकेले होते जाते आदमी के अवसाद को भरपूर संवेदना के साथ व्यक्त कर रहे हैं। यहाँ असहमति और अस्वीकृति के स्वर, कभी सीधे सरल अश्आर में तो कभी व्यंजना, वक्रोक्ति और तन्ज़ के रूप में बयान होते हैं। हिन्दी ग़ज़ल का यह आधुनिकताबोध, उत्तर आधुनिक समय की स्थितियों का आकलन करने में सक्षम हुआ है। जब अदम गोंडवी कहते हैं—काजू भुने प्लेट में व्हिस्की गिलास में/उतरा है रामराज विधायक निवास में—यह लहजा उर्दू की ग़ज़ल में कहीं नहीं था। यह लहजा हिन्दी में बड़ी प्रबलता से आया है। इस लबो-लहजे ने दुष्यंत की ग़ज़लों से यात्रा आरंभ की और यह लहजा प्रतिवाद व्यक्त करती हिन्दी ग़ज़ल का सशक्त माध्यम बना।

भूमंडलीकरण और उदारीकरण के रहते लोक संस्कृति और लोक तत्वों पर भी संकट गहराने लगा है। बाज़ारवाद संस्कृति और लोक संस्कृति को न केवल भयभीत कर रहा है बल्कि लोक तत्व, लोक जनजीवन को किसी 'मंडी' के रूप में बदलने पर आमादा है। हिन्दी ग़ज़ल में जहाँ लोक संस्कृति से जुड़े तत्वों को अश्आर का कथ्य बनाने में सफलता अर्जित की है, वहीं, लोक जीवन के दुख, कष्ट, अभावों को भी अभिव्यक्ति दी है।

"कोर्ट कचहरी दाख़िल ख़ारिज थाना-मुंशी-चकबंदी
जोत बही पटवारी के घर, बैनामा दरबार में गुम" —मनोज अबोध

हिन्दी ग़ज़ल में लोक चेतना, लोक संस्कृति तथा लोकवार्ता पर सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। उर्दू ग़ज़ल में लोक-चेतना और लोक संस्कृति का निरंतर अभाव है। यह विस्तार हिन्दी ग़ज़ल में हुआ है और लोक संस्कृति के विराट स्वरूप की अनदेखी किए बगैर, गहरी संवेदना से शेर कहे गए हैं। हिन्दी ग़ज़ल ने इस तरह से अपना मुहावरा और परिसर निर्मित किया है।

स्त्री-विमर्श को भी इसी रूप में देखा जाना चाहिए। उर्दू ग़ज़ल में स्त्री की उपस्थिति अब भी प्रेमिका के रूप में अधिक है। बेशक, उर्दू की जदीद ग़ज़ल में स्त्री के अन्य रूप का भी विस्तार हुआ है लेकिन हिन्दी ग़ज़ल में स्त्री, समाज का सशक्त पात्र है। ग़ौरतलब है, बाज़ारवाद ने जो अराजक स्थितियाँ उत्पन्न की हैं उसका सबसे बुरा असर स्त्रियों पर पड़ा है। वे पहले से अधिक असुरक्षित हुई हैं। लेकिन बिलकुल यहीं, वे पहले से अधिक सचेत और अपने अधिकारों के प्रति समझदार भी हुई हैं। हिन्दी ग़ज़लों से जुड़े अनेक प्रश्नों से जूझते हुए शेर कहे गए हैं। यह खण्ड जितना संवेदनशील था इसे उतनी संवेदना से अभिव्यक्ति दी गई है। शेर है—

"कोई न डाले निगाहे-ग़लत कि मैं ख़ुद को
निहत्थे हाथों की तलवार करने वाली हूँ" —सिया सचदेव

हिन्दी ग़ज़लों में पुरुष तथा स्त्रियाँ दोनों स्त्री विमर्श को केंद्र में रखकर सशक्त शेर लिख रहे हैं। लेकिन जब स्त्री स्वयं लिखती है तो वे मनोभाव ज़्यादा मानीख़ेज़ हो जाते हैं—

"ख़्वाहिशें तो हज़ार कर लूँ मैं
काश, पूरी भी कोई कर जाऊँ" —सोना रूपा विशाल

जितनी संवेदना और जज़्बे के साथ हिन्दी ग़ज़लकारों ने स्त्री विमर्श को अपनी ग़ज़लों में निष्ठापूर्वक स्थान दिया है उतनी जीवंतता, संवेदना, आंतरिकता और रागात्मकता के साथ दलित आदिवासियों के उपेक्षित और शोषित जीवन पर चिंता व्यक्त करते हुए शेर लिखे हैं। यथा—

"आप कहते हैं सरापा गुलमुहर है ज़िंदगी
हम ग़रीबों की नज़र में इक कहर है ज़िंदगी" —अदम गोंडवी

इन वैश्विक विमर्शों का हिन्दी साहित्य ने संज्ञान लेते हुए, सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक बदलाव से जीवन के परिवर्तनों को शिद्दत से तहरीर किया है। बिलकुल वहीं, हिन्दी ग़ज़लकारों ने इन विमर्शों को व्यर्थ नहीं जाने दिया। हिन्दी ग़ज़ल इन विमर्शों से प्रभावित हुई है। समाज प्रभावित हुआ है तो समाज की बदलती छवियों को हिन्दी ग़ज़ल ने निरंतर अभिव्यक्ति दी है। हिन्दी ग़ज़ल की भूमिका दुष्यंत के समय से ही समाज सापेक्ष और विमर्शों के केंद्र में रही है। दुष्यंत जब कहते हैं—रोज़ जब रात को बारह का गजर होता है/यातनाओं का अंधेरे में सफ़र होता है।"

तब वे सामाजिक यांत्रिकता से छनकर आए एलिएनेशन को ही व्यक्त कर रहे होते हैं जिसकी चिंता जेमेसन अपनी पुस्तक—वैश्विक पूँजी का सांस्कृति तर्क—में करते हैं और वाल्टर बेंजामिन के लिए शहरी जटिलता आधुनिकता का सार तत्व है। (अतिरेकी यथार्थ के युग में—लेख में)

हिन्दी ग़ज़लों में शहर की जटिलताएँ, महानगरीय विस्थापन का बोध, अजनबीयत, घर के भीतर बेघरी और बेगानेपन का अवसाद—ये तमाम तत्व व्याकुलता के साथ व्यक्त होते रहे हैं। तो इसके समानान्तर (या फिर साथ) प्रतिवाद के स्वर भी हिन्दी ग़ज़लों में सुनाई देते रहे हैं। हिन्दी ग़ज़ल ने हमेशा अपने प्रतिपक्ष की रचना की जिसमें राजनीति के प्रपंच, सामाजिक विषमता, अभाव, तकलीफें, बेरोज़गारी, भ्रष्टाचार, शोषण, मनुष्यहीनता जैसे विषयों को केंद्र में रखकर ग़ज़लें लिखी जाती रही हैं। कहीं कहीं स्थूलता, सपाटवादिता और इकहरापना भी ग़ज़लों में दिखाई दिया है। समाज का जब खुरदरा यथार्थ ग़ज़ल के केंद्र में हो तो ग़ज़ल के लिए ये तमाम सीमाएँ सामने खड़ी हो जाती हैं। इसके बावजूद, हिन्दी की ग़ज़ल यात्रा आश्वस्तकारी है।

इन विमर्शों के अतिरिक्त लोकचेतना (लोक संस्कृति तथा भारतीय मिथकों की हिन्दी ग़ज़ल में उपस्थिति) जैसे तत्वों की भी बिलकुल नए बोध के साथ हिन्दी ग़ज़ल में चर्चा हो रही है। हिन्दी ग़ज़ल में यह नए समय का नया समाज जिसके पास सूचनाओं का अम्बार है, ज्ञान कम है।

इस बदलते समय के समाज और नए यथार्थ ने हर शय को प्रभावित किया है। हिन्दी साहित्य में इस नए सामाजिक शिल्प को कहानी, कविता, उपन्यास में लेखकों ने अपने-अपने कथा कौशल से तहरीर किया है। यह सिलसिला अब भी जारी है। हिन्दी में इस प्रश्नाकुल स्थिति तथा जटिल सामाजिक संरचना जिसमें बाज़ारवादी छवियाँ चकाचौंध के साथ उपस्थित हैं—कुशल, सार्थक और प्रखर ग़ज़लें लिखी जा रही

हैं। यानी, हिन्दी ग़ज़ल कहीं भी अपने समय से न छिटकी है न पिछड़ी है। यह बात भरपूर विश्वास के साथ कही जा सकती है कि हिन्दी ग़ज़ल, आधुनिक और उत्तर-आधुनिक समय की सशक्त और सार्थक विधा है। विभिन्न विमर्शों के ज़रिए, हिन्दी ग़ज़ल में नई चुनौतियों, कालगत सच्चाइयों, अवाम की समस्याओं, सामाजिक विडम्बनाओं, संबंधों के क्षरण, बाज़ार के तिलिस्म, विज्ञापनों के विभ्रम, राजनीति के प्रपंच तथा मनुष्य के अकेले होते चले जाने को प्रखर रूप से व्यक्त किया है।

वैश्विक अवधारणाएँ और विमर्श को हिन्दी ग़ज़ल ने अश्आर के ज़रिए सार्थक अभिव्यक्ति दी है। बिलकुल यहीं, हिन्दी ग़ज़ल ने यह अहसास भी निरंतरता से कराया है कि हिन्दी कविता की तरह हिन्दी ग़ज़ल भी समय सापेक्ष है। कुछ अश्आर—भूमंडलीकरण, बाज़ारीकरण और उत्तर आधुनिक स्थितियों पर तपसरा करते हुए—

''जाल सय्याद फिर से बिछाने लगे
क्या परिन्दे यहाँ आने-जाने लगे।'' —*वीनस केसरी*

''हमारे दौर के बच्चे कला की कापियों में अब
कोई चेहरा बनाएँ सब में आँखें नम बनाते हैं'' —*अवनीश यादव*

लोक संस्कृति तथा भारतीय मिथकों की हिन्दी ग़ज़ल में क्या भूमिका रही है—इस ओर ध्यान ही नहीं दिया गया था।

भारतीय मिथकों ने उर्दू ग़ज़ल तथा हिन्दी ग़ज़ल—दोनों विधाओं को आकर्षित किया है। हिन्दी तथा उर्दू ग़ज़ल में भारतीय मिथकों का प्रयोग बिलकुल नए संदर्भों में हुआ है। ये शक्तिशाली मिथक (स्मृतियों का आख्यान रचते हुए) जब नए संदर्भों में प्रयुक्त हुए तो ग़ज़ल के शेर, नए पुराने, दोनों कालखण्डों की गूँज के साथ अभिव्यक्त हुए—

''अभी यहाँ से गुज़रा है फिर नया ग़ज़ला सोने का
सीता जी अब ज़िद मत करना अब लक्ष्मण अब राम नहीं''

—*दिनेश ठाकुर*

रिल्के ने कहा था कि रचना तभी अच्छी होती है जब किसी अनिवार्यता से पैदा होती है। यानी, जब ग़ज़लकार में अपने विषय/कथ्य/विचार को ग़ज़ल के ज़रिए व्यक्त करने की शिद्दत की बेचैनी होती है।

हिन्दी ग़ज़लकारों ने शिद्दत की अनिवार्यता के साथ, नए मुहावरे, शब्दावली, नए प्रतीक और नई शैली का निर्माण करते हुए ग़ज़लें लिखी हैं। हिन्दी ग़ज़ल के लिए इतने व्यापक परिसर का सृजन इसी वजह से संभव हो सकता है कि ग़ज़लकार हमेशा नए संदर्भों, नए विषयों, नए विमर्शों, नई बहसों, नए यथार्थ से न सिर्फ़ जुड़े रहे बल्कि पूरी चेतना के साथ हिन्दी ग़ज़ल को समकालीनता भी प्रदान करते रहे।

हिन्दी ग़ज़ल तमाम नए विमर्शों में अपनी सक्रिय भूमिका निभाते हुए, अपनी मानवतावादी सोच के साथ आगे बढ़ रही है।

मेरे पूर्वज कौन थे

कमला प्रसाद मिश्र (फिजी)

पाँच हज़ार वर्ष पहले
मेरे पूर्वज थे कौन?
क्या रहस्य है,
सोच रहा हूँ मैं एकाकी मौन

वे भारत के आदि-निवासी
या वे मध्यपूर्व के वासी
या वे मिस्र देश से आये
भारत-दर्शन के अभिलाषी
शक वे थे, या चीनी थे वे,
हूण थे कि मंगोल
जम्बू द्वीप कहाँ तक था,
अब बदल गया भूगोल

किस पूर्वज का मेरे तन में
रक्त बह रहा है क्षण-क्षण में
नये रक्त कितने आये हैं
समझ न सकता मैं जीवन में

व्यर्थ सोचना इस रहस्य को
इसीलिये मैं मौन
पाँच हज़ार वर्ष पहले
मेरे पूर्वज थे कौन?

साभार: फिजी की कवितायें

ज़िन्दग़ी की उड़ान : एक ख्वाब

डॉ. कृष्ण कुमार रत्तू

"...क्रांति के इस महासमर में क्रांति की आग को नमन करो, यही वह ऊर्जा है जो तुम्हें क्रांति की नई परिभाषा से रूबरू करती है। इसी में है अनन्त कण जहाँ पर सब कुछ बदलता जाता है।..."

अथर्ववेद में कहा गया है कि—

"ये पृथ्वी ये आकाश
ये जल ये आकार
सब उसके हैं, बनाए उसने
तीनों लोग समाए उसमें
फिर भी रहता है वह
एक छोटे से तालाब तल में।"

इस छोटे से तालाब में से जीवन की संरचना का अंकुर फूटता है। तभी तो कहा गया है कि भाषा का श्रीगणेश आदमी की आँख खुलने की परिकल्पना के साथ ही शुरू हो गया था। जो पहला अक्षर उस आदिकालीन, पुराणिमाक मानव की जुबान पर आया वही तो ब्रह्मांड का साया था जिसे समझने में हमने इतनी शताब्दियों का सफर तय कर लिया है।

समय की इस आँधी ने विश्व के इतिहास को पता नहीं कितनी भाषाएँ दी। इस इक्कीसवीं शताब्दी तक पहुँचते-पहुँचते पता नहीं कितनी भाषाएँ, बोलियाँ इत्यादि खत्म हो गईं। वे तमाम लोग खुशकिस्मत हैं कि अभी तक जिनके पास दादी, माँ अथवा नानी की मीठी लोरियाँ तथा पुरखों के लोक आख्यान अभी तक ज़िन्दा हैं।

आज जब विश्व मे भाषाएँ विलुप्त हो रही हैं तो भाषा की अस्तित्व की लड़ाई का संघर्ष जिस तरह से, इस इक्कीसवीं सदी के इन दिनों में देखा जा रहा है वह सचमुच भाषा के जिन्दा रहने की अंदाज़ेबयां ही तो है।

आज हाइटैक जीवनशैली तथा इंटरनेट की संचार क्रांति ने जिन क्षेत्रीय भाषाओं को हाशिए पर ला खड़ा किया है, उन 234 भाषाओं में हमारे यहाँ की भाषाएँ भी सम्मिलित हैं। 1995 में टोक्यों में हुए भाषाओं के सम्मेलन में यह माना गया कि अभी भी वर्तमान में, समूचे विश्व भर में 6760 भाषाएँ बोली जा रही हैं परन्तु आने वाले दिनों में जिस तरह से भाषाई अस्मिता से खिलवाड़ हो रहा है उसके चलते सत्तर प्रतिशत भाषाएँ खत्म हो जाएँगी।

अगले 25 वर्षों में एक बड़ा भाषा संचार नष्ट हो चुका होगा। जब पूरी दुनिया के भाषाविद तथा चिंतक अपने-अपनी भाषा को बचाने के लिए प्रयासरत हैं, हमारे यहाँ राजनीति तथा भाषाई उठा-पटक के चलते विगत में इस संवेदनशील मुद्दे पर सब मौन रहे हैं। सूचना तंत्र का वर्चस्व

सम्पर्क : निदेशक मीडिया एवं अध्यक्ष, पत्रकारिता
एवं जनसंचार विभाग, डीएवी यूनिवर्सिटी,
एनएच-44, जालंधर-144012
Mob. :09478730156

विश्व में कुछ ही भाषाओं को संरक्षण दे रहा है। आज तीसरी व चौथी दुनिया की भाषाएँ इसी विस्थापन के दर्द में खत्म हो जाएँगी।

बदलते भारतीय समाज संदर्भों में मात्र भाषा के प्रति हीन भावना एवं आधुनिकता की दौड़ मुख्य ऐसे कारण हैं जो ऐसी अन्य भाषाओं को भी खत्म करते जा रहे हैं। हालांकि विश्व के कई देशों में जैसे जापान, कोरिया, चीन इत्यादि में इस विषय पर महत्त्वपूर्ण कार्य हुआ है तथा उन्होंने अपनी भाषाओं की पहचान को बचाया है।

भारत भर में जहाँ 4635 समुदाय से ज्यादा लोग अनेकता में एकता का राग अलापते रह रहे हैं वहीं पर वह 1652 से ज्यादा भाषाओं को बोलते हैं। यह अपने आप में एक महत्त्वपूर्ण बात है परन्तु प्रश्न यह उठता है कि इसके बावजूद भी हम, हमारी भाषाएँ विलुप्त कैसे हो रही हैं।

सूचना तथा संचार क्रांति के इन दिनों में जब सब कुछ तेजी से बदलता जा रहा है तो सृजन स्रोत भी बदल रहे हैं। भाषाई रिश्ते भी बदल रहे हैं। अब सूचना जन संचार प्रसारण माध्यम अर्थात् मीडिया इन भाषाओं को अपने ढंग से वैश्वीकरण एवं बाजारवाद के पाश्चात्य रंग में रंग रहा है। आप अंदाजा लगा सकते हैं कि ऐसे में भाषा का कौन-सा स्वरूप बाकी रह सकता है। फिर भी जब तक मानव का अस्तित्व इस धरती पर बाकी है तब तक भाषा का स्वरूप तथा अस्तित्व बाकी रहेगा।

अपनी बात मैं राष्ट्रपति भारत रत्न डॉ. अब्दुल कलाम की इस कविता से करना चाहता हूँ—

''अग्नि में मत ढूँढ़ो
शत्रु को भयग्रस्त करता
शक्ति का स्तंभ कोई।
यह तो है एक आग
दिल में जो सुलगती
हर भारतीय के,
सभ्यता के स्रोत-सी।
एक छोटी सी प्रतिमा है यह
भारत के गौरव की
आभा से प्रदीप्त जो।''

या फिर यह पंक्तियाँ—

''ये कोहरा फिजा का पिघल जाएगा,
किसी को नजर में बसा के चलो।
जो माजी है उसको भुला के चलो
हर एक हाल में मुस्करा के चलो।
देखना तुम कि बीज बीज न रह जाए''

ओशो एक जगह कहते हैं कि क्रांतिबीज, मैं तो बो चला देखना तुम कि बीज बीज न रह जाए।

ओशो का यह क्रांतिबीज का फलसफा आज उन भारतीयों के चिंतन को नई सृजनशीलता का केनवास प्रदान करता है जिन्होंने इस विशाल देश के उर्वर धरा को अपने चिंतन व नजरिए से महानतम श्रेणी में ला खड़ा किया।

जिन्दगी की इस यात्रा में कौन कहाँ छूट गया यह किसे याद रहता है। सच तो यह है कि किसी के पास इतनी फुर्सत एवं समय ही नहीं बचा कि इस तरह की बहस को आगे बढ़ाया जा सके। इन दिनों तो बस जिन्दगी इतनी सी ही है कि सुबह होती है, शाम होती है, बस फिर जिन्दगी तमाम होने पर सूर्यास्त दिखाई देने लगता है।

जिन्दगी उन दिनों की हाशिए के बाहर लिखी गई इबारत भी है, जहाँ पर नजर ही नहीं जाती। खैर, अब समय निकलने पर किस दीवार की इबारत को पढ़ें अथवा किस दीवार के साथ सिर टकराएँ। कभी-कभी गांधी जी का लिखा हुआ पूर्ण सत्य भी अधूरा लगता है जब वह कहते हैं कि ईश्वर द्वारा निर्मित हवा-पानी की तरह सब चीजों पर सबका समान अधिकार होना चाहिए।

जिन्दगी की इबारत में मौन शब्द ऐसा ही है जिसकी व्याख्या आदमी उसी तरह करता है जैसे अपने मन को पढ़ने का प्रयास।

ओशो मन की ऐसी स्थिति में लिखते हैं कि मैं तीन शब्दों पर आदमी की समग्र चेतना को घूमते हुए देखता हूँ। वे शब्द है—विवेक, बुद्धि और वृत्ति।

विवेक से श्रेष्ठतम चलते हैं। बुद्धि से वे जो मध्य में हैं। और वृत्ति चेतना की निम्नतम दशा है। वृत्ति पाशविक है। बुद्धि मानवीय है। विवेक दिव्य है।

वृत्ति सहज और अंधी है। वह निद्रा है। वह अचेतन का जगत है। वहाँ न शुभ है, न अशुभ। कोई भेद वहाँ नहीं है। इससे कोई अंतर्संघर्ष भी नहीं है। वह अंधी वासनाओं का सहज प्रवाह है।

बुद्धि न निद्रा है, न जागरण। वह अर्ध-मूर्छा है। वह वृत्ति और विवेक के बीच संक्रमण है। वह दहलीज है। उसमें एक अंश चैतन्य हो गया है। लेकिन शेष अचेतन है। इससे भेद बोध है। शुभ-अशुभ का जन्म है। वासना भी है, विचार भी है।

विवेक पूर्ण जागृति है। वह शुद्ध चैतन्य है। वह केवल प्रकाश है। वहाँ भी कोई संघर्ष नहीं है। वह भी सहज है। वह शुभ का, सत का, सौंदर्य का सहज प्रवाह है।

जिन्दगी की इसी सहज प्रवृत्ति और प्रवाह को फैज अहमद फैज के एक शेर द्वारा भी प्रतिपादित किया जा सकता है। जिसमें वो कुछ इसी तरह की इबारत का इशारा कर रहे हैं।

''जख्म जब तुम्हारी यादों को भरने लगते हैं,
किसी बहाने तुम्हें याद करने लगते हैं''

जिन्दगी को किसी बहाने से याद करना ठीक वैसा ही है जैसे किसी बहती शीतल पुरवइया से पिछले मौसम में हुए हादसों का विवरण माँगना। खैर, यह जिन्दगी की अन्तर कथा यात्रा के कई पहलू हैं जिन्हें पढ़ते जाना है। तथा यह सफर भी जारी रहेगा।

''जिन्दगी ही तो किसी इबारत को पढ़ने का ही नाम है।
पर हम हैं कि पढ़ते जाते हैं, भूलते जाते हैं।

फिलहाल इतना ही। इन शब्दों के साथ—

"कभी कुछ नहीं होता,
कुछ भी नहीं होता तो भी लगता है—
दुनिया में बहुत कुछ बदल गया है
बदला तो कुछ भी नहीं
सोचते-सोचते मौसम बदल गया
कारवाँ दूर चले गए
फिर अचानक लगा
कहीं कुछ नहीं
वो इतना ही अपना था
जो उस कारवाँ के साथ चला गया।
क्रांति की आग के अमृत कण
वो जो, तुम्हें दिखाई दे रहा है—
वो सत्य से बहुत दूर है
उदास मंडेरे मन के भीतर बहुत भीतर
जब बहुत गहरी हो जाती है
एक अमृत कण क्रांति की आग का
उगता है—
तब मन, आँगन, मस्तिष्क में
एक सच और झूठ के आर-पार तुम देखते हो
एक लौटते हुए पराजित योद्धा की तरह-चुपचाप
अगले क्षण, ढूँढ़ने लगते हो
अपने ही अन्दर से क्रांति के आग के अमृत कण... ।''

इन दिनों में जिन्दगी के प्रति नजरिया ठीक उसी तरह बदलता जाता है जैसे कोई महज आनन्द में उस सौन्दर्य की कल्पना के गीत गाता हुआ इस ब्रह्माण्ड को उदास निगाहों से देख रहा हो। नए मूल्यों की चकाचौंध उसे तुष्ट-संपुष्ट से दूर उदासी के उस आलम से साक्षात्कार कराती है जिसमें वह डूबना नहीं चाहता। परन्तु यह शाश्वत सत्य है कि इस अनन्त गहरे उदासी के गहरे महासमुद्र में डूबने के अलावा कुछ भी शेष नहीं बचता जो आदमी की नई संरचना को दुबारा से लय तथा ताल में गठित न कर दे।

समय के इस घमासान में जब इस ब्रह्माण्ड तथा धरती पर अकाल, गरीबी, भुखमरी, बीमारी जैसी तमाम त्रासदियाँ आदमी को उसकी जिज्ञासा के प्रति रूबरू कराती है तो उसे अपने ही बनाए हुए एटम बम, परमाणु विस्फोट और दहशतयदा स्थितियों में ले जाते हैं। क्या आप जान सकते हैं कि ऐसी तेज दौड़ में हाँफ रहा डरा हुआ आदमी किस समाज की सृजन की नई सुबह में आँख खोल सकेगा।

हमारे उपनिषद्, धार्मिक आख्यान, हमारे समूचे पीर-फकीर, योगीराज तथा चिंतक यही तो कहते हैं कि आदमी को कभी प्रकृति खत्म नहीं कर सकती, अलबत्ता वह तो उसके विकास के लिए अनादिकाल से सृष्टि से अन्न, जल की तुष्टि करते हुए विकास की यात्रा के प्रवाह को आगे बढ़ाती है।

ज़िन्दग़ी के इस फलसफे का पुनर्पाठ करते हुए यदि उन अपराजित योद्धाओं के इतिहास में से रोशनी का कोई चिराग़ अभी भी शेष मिल जाए तो वह आने वाली पीढ़ियों के लिए एक नई रोशनी देने के लिए उतना ही ताजा है जितना दौड़ते हुए आदमी के लिए हवा और पानी का संकल्प।

मैं तुम्हें किसी धर्म, किसी संप्रदाय, संगठन में बदलने की कोशिश नहीं कर रहा हूँ। मेरे पास किसी तरह के विकास के लिए कोई जगह नहीं है। मेरी कोई फिलॉसफी नहीं है, मेरा कोई धर्म नहीं है। यहाँ मैं अपने सत्य के अनुभव को तुम्हारे साथ बाँट रहा हूँ। यदि यह तुम्हारे किसी काम आ सकता है तो उपयोग कर सकते हो। यदि तुम्हें लगता है कि यह तुम्हारे किसी काम का नही है तो यह भी पूरी तरह से ठीक है। यह तुम्हारी स्वतंत्रता है, मैं तुम्हारी स्वतंत्रता में दखल नहीं दूँगा। मैं तुम्हारी वैयक्तिकता के बीच में नहीं आऊँगा। मैं तुम्हारा सम्मान करता हूँ, मैं तुम्हें प्रेम करता हूँ। मैं किसी का धर्मान्तरण कैसे कर सकता हूँ?

जिन्दगी के इस इंद्रधनुषी रंगमच पर शून्य अब संक्षिप्त नहीं रह गया। अंधेरे के इस महाकाल में रोशनी के दिये को कहाँ-कहाँ तलाश कर रहे हो। कभी उसे तो ढूँढ़ो जो तुम्हारे अन्दर हर क्षण जल रही है, तुम्हें ऊर्जा दे रही है। तुम्हारी अनन्त यात्राओं को गतिशील और प्रवाहमान कर रही है।

''एक चेतना की क्रांति है तुम्हारे भीतर—
उस चेतना को जगाने की कोशिश में
क्रांति के किसी चेहरे को पहचान कर तो देखो

तुम्हें दिखाई देगा तुम्हारे अन्दर का क्रांति का
सतरंग रंगमंच"

यही तो वो क्षण है जब क्रांति के आग के अमृतकण तुम्हारे मन-मस्तिष्क में रोशन होते हैं।

आइए, क्रांति की आग के इन रौशन चिरागों की रोशनी में एक नए समाज की संरचना का अगला पृष्ठ लिखें। जिसमें मुंडेरों पर सच के चिराग हों, एक नई सुबह और एक नई शाम के साथ...। यही है क्रांति की ओर चलने का पहला कदम। तुम चलते चलोगे, एक नई दुनिया बनती चलेगी तुम्हारे आस-पास।

क्रांति के इस महासमर में क्रांति की आग को नमन करो, यही वह ऊर्जा है जो तुम्हें क्रांति की नई परिभाषा से रूबरू करती है। इसी में है अनन्त कण जहां पर सब कुछ बदलता जाता है।

"इस कालचक्र में,
तुम जब उड़ना चाहोगे तो
एक नया आकाश तुम्हारी आंखों में
क्रांति के कई नए अध्याय लिख देगा
—पीढ़ियां याद करेगी, इस इतिहास की कथा को
जिसमें समाई है नई क्रांति की आग की अनन्त ऊर्जा
नए सूर्य का उदय, तो—
इसी क्रांति की आग में तय है—
जरा-सा रुककर अपनी आंखों को देखो तो सही—"

स्वदेश की मिट्टी

महाकवि हरिशंकर 'आदेश' (कनाडा)

तुम कहीं रहो पर स्वदेश की
प्रिय मिट्टी तुम्हें बुलाती है।

तुम भले नागरिकता बदलो,
सुख-सुविधाओं में भले पलो।
बदलो जीवन की प्रणालियाँ,
तुम करो नमन कह 'हाय हैलो'।

पर मोह न जाता स्वदेश का,
अन्तिम क्षण तक सुधि आती है।

मैं जहाँ स्वदेशी छवि पाता,
मैं जहाँ स्वभाषी कवि पाता।
बढ़ जाता उर उस ओर स्वयं,
मैं जहाँ स्वदेश-सुरभि पाता।

जानूँ स्वदेश के समाचार,
जिज्ञासा जग-जग जाती है॥

शैशव-स्मृतियाँ न भुला सकते,
घर औ' गलियाँ न भुला सकते।
प्रिय मातृभूमि की ममता को,
तुम कदापि नहीं भुला सकते।

जितना ही करो यत्न, भूलो,
उतनी ही याद सताती है॥

धन-धर्मवीर हो सकते हो,
तुम दानवीर हो सकते हो।
पर जननी-जन्म-भूमि ऋण से,
तुम उऋण नहीं हो सकते हो।

सुनते ही स्वदेश की संज्ञा,
उर धड़कन बढ़-बढ़ जाती है॥

फल आम जहाँ भी जाता है,
संज्ञा को बदल न पाता है।
हर देश-काल औ' पीढ़ी में ही,
आम - आम कहलाता है।

रस और स्वाद बदले न कभी,
छवि-आकृति बदल न पाती है॥

तुम भारतीय हो, भारत हो,
अतएव न कायरता-रत हो।
हर राष्ट्रीयता पनप रही,
तुम भी संगठित, समुन्नत हो।

अस्मिता तुम्हारी भारत से ही,
सदैव मानी जाती है॥

साभार: 'प्रवासी की पाती' से

आर्यों का मूल निवास-स्थान

प्रो. योगेश चन्द्र शर्मा

"...वेदों में जिस प्रकार जातिसूचक के रूप में 'आर्य' शब्द नहीं है, उसी प्रकार आर्य देश के रूप में आर्यावर्त का नाम भी नहीं है। आर्यावर्त शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम मनुस्मृति के श्लोक संख्या 2-22 में हुआ है। दूसरी तरफ मनुस्मृति के ही श्लोक संख्या 2-17 में आर्यावर्त के स्थान पर 'ब्रह्मावर्त' शब्द का प्रयोग किया गया है।..."

सम्पर्क : 10/611, मानसरोवर, जयपुर-302020 (राजस्थान)
मोबाइल: 9828662214

विश्व का सर्वाधिक प्राचीन और प्रथम ग्रंथ ऋग्वेद है। इस ग्रंथ के मंत्र-सृष्टा थे आर्य ऋषि, जिन्होंने इन मंत्रों की रचना हमारी पवित्र नदियों के किनारे बैठकर की। ऋग्वेद सहित हमारे संपूर्ण वैदिक साहित्य ने यह प्रमाणित किया है कि प्राचीन विश्व में आर्य सर्वाधिक प्रतिभाशाली, शौर्यवान और साहसी थे। उन्होंने ही एक महान् संस्कृति को जन्म दिया, जिसकी श्रेष्ठता को लगभग सभी आधुनिक विद्वान् स्वीकारते हैं लेकिन इस स्वीकृति के पीछे पाश्चात्य विद्वानों की यह झिझक भी रही है कि इससे भारत का सम्मान कहीं पश्चिमी देशों से आगे न बढ़ जाए। संभवतः इसीलिए कुछ पाश्चात्य विद्वानों ने बार-बार इस बात को दुहराया है कि आर्य भारत के मूल निवासी नहीं थे। वे बाहर से आए थे और यहाँ के मूल निवासियों को आक्रमण द्वारा भगाकर स्वयं यहाँ बस गए थे। वैदिक साहित्य की रचना यहीं उत्तर भारत में की गयी, इसे तो पाश्चात्य विद्वान भी अस्वीकार नहीं कर पाते। हमारे वेदों की प्रत्येक ऋचा में इस देश की मिट्टी की सुगंध समायी हुई है। मगर इन विद्वानों के अनुसार वैदिक ऋचाओं की रचना से पूर्व, आर्यों का निवास कहाँ था, वह स्पष्ट रूप से प्रमाणित नहीं है। इसी को आधार बनाकर पाश्चात्य विद्वानों ने कतिपय अन्य स्थानों की कल्पना की है, जो आर्यों के मूल निवास स्थान हो सकते थे। इनमें सर्वाधिक चर्चित और पाश्चात्य विद्वानों द्वारा स्वीकृत स्थान है मध्य एशिया। इस विचार के प्रमुख सूत्रधार थे प्रसिद्ध जर्मन विद्वान मैक्समूलर। 1857 के हमारे स्वतंत्रता समर ने भी अंग्रेजों को काफी बौखला दिया था। ऐसी स्थिति में इस मान्यता को अस्वीकारना कठिन है कि आर्यों को विदेशी बतलाकर अंग्रेज भारतवासियों के मस्तिष्क में यह बात जमाना चाहते थे कि अगर आर्यों ने बाहर से आकर यहाँ अपनी सत्ता जमा ली और यहाँ के मूल निवासियों पर अत्याचार किया, अंग्रेज भी ऐसा करके कोई गलत काम नहीं कर रहे। आर्यों को भारत से बाहर से आया बतलाने के साथ ही कुछ अंग्रेजों ने आर्य संस्कृति की खिल्ली उड़ाकर उसे स्वयं भारतवासियों की दृष्टि में नीचा दिखलाने की भी कोशिश की। इस प्रकार के षड्यंत्र की शुरुआत 9 अप्रैल, 1866 को संपन्न लंदन की एशियाटिक सोसायटी की बैठक में हुई थी। इस बैठक में एडवर्ड थॉमस नामक एक अंग्रेज ने इन शब्दों में षड्यंत्रों की आग सुलगाने की कोशिश की थी—"आक्सस नदी के किनारे से पशु चराने वाले आर्य-आक्रमणकारियों की लहरें आरियाना प्रदेश से होती हुई हिन्दूकुश के रास्ते पहले पंजाब में उतरी, जहाँ से वेदों के गँवारू गीत गाते हुए वे सरस्वती नदी की ओर आगे बढ़े। यहाँ पर उन्होंने ब्राह्मणी संस्थाओं की रचना की और तक्षशिला में संस्कृत का व्याकरण रचा। अपनी भाषा के लिए आर्यो के पास कोई लिपि नहीं थी। अतः वे जिसके

भी सम्पर्क में आए, उसी की लिपि अपना ली!" थॉमस ने अपने इस कथन के पक्ष में कोई ठोस प्रमाण या तर्क नहीं दिए।

अंग्रेज विचारकों द्वारा अपनायी गयी यह षड्यंत्र की नीति इस आधार पर समझ में आ सकती है कि इसमें उनका साम्राज्यवादी और जातिवादी स्वार्थ निहित था, लेकिन भारत के जिन विचारकों ने इस षड्यंत्र को सहज रूप में स्वीकार कर लिया और अंग्रेजों के स्वर में स्वर मिलाकर आर्यों को विदेशी बतलाने लगे, उन्हें समझना कठिन है। इस षड्यंत्र में देश के भावी नागरिकों को भी सम्मिलित किया गया। तदनुसार बच्चों की पाठ्यपुस्तकों में भी जोर-शोर से यह प्रचारित किया गया कि आर्य भारत के मूल निवासी नहीं थे। वे बाहर से आए थे।

भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार में प्राच्यविद् मैक्समूलर के योगदान की उपेक्षा नहीं की जा सकती। उन्होंने फ्रांस के यूजीन बर्नूफ के मार्गदर्शन में 26 वर्षों तक संस्कृत भाषा और वैदिक साहित्य का अध्ययन किया और 1849-74 की अवधि में ऋग्वेद का अंग्रेजी भाषा में अनुवाद करके उसे छः खंडों में प्रकाशित करवाया। इस प्रकार विश्व साहित्य में ऋग्वेद का प्रथम परिचय मैक्समूलर के माध्यम से ही संभव हो पाया। उन्होंने ही विश्व को सर्वप्रथम यह बतलाया कि ऋग्वेद विश्व का प्राचीनतम ग्रंथ है और विश्व की सभी आर्य भाषाओं के शब्द, संस्कृत की सिर्फ पांच सौ धातुओं से निकले हैं। अंग्रेजी भाषा में आर्य शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग भी मैक्समूलर ने ही सन् 1853 में किया। अपने शोध और अध्ययन के आधार पर उन्होंने जैसा समझा, वैसा लिख दिया, लेकिन उनके विचारों पर तत्कालीन परिस्थिति और अंग्रेज-मित्रों के प्रभाव को भी नकारा नहीं जा सकता। संभव है कमोबेश रूप में जातीयता की भावना ने भी उन्हें उकसाया हो।

मध्य एशिया को आर्यों का आदिदेश मानने वाले पाश्चात्य विद्वानों में मैक्समूलर, जे.जी. रोड, प्रो. सेउस एडवर्ड मेयर, ओल्डेन बर्ग, ए.बी. कीथ और ब्रैण्डेस्टीन आदि हैं। इनका कहना है कि मध्य एशिया से ही आर्यों का विभाजन और विस्तार प्रारम्भ हुआ। उनकी एक शाखा पूर्व की ओर गयी, जिसे इण्डो ईरानी शाखा कहते हैं। अपने कथन के पक्ष में ये मध्य एशिया और वैदिक सभ्यता की अनेक समानताओं की ओर संकेत करते हैं। एशिया माइनर में बोगजकोई नामक स्थान पर प्राप्त लगभग 1400 ई.पू. के एक लेख में मित्र, वरुण, इन्दु आदि वैदिक देवताओं का उल्लेख है। मिस्र में पक्की मिट्टी की कुछ प्राचीन पट्टिकाएँ मिली हैं, जिन पर यशदत्त, अर्जविय, अर्तमन्य तथा शुत्तर्न आदि राजवंशों के नाम उत्कीर्ण हैं। ये राजवंश स्पष्टतः वैदिक युग से साम्य रखते हैं। पश्चिमी एशिया में विभिन्न स्थानों पर की गयी खुदाई में अनेक ऐसे मन्दिरों के अवशेष मिलते हैं, जिनमें इरैक या ऐर्यक नामक देवता का पूजन किया जाता था। विद्वानों के अनुसार कालांतर में इरैक या ऐर्यक नामक इस देवता के उपासकों को ही एर्य या आर्य कहा जाने लगा। एक मान्यता यह भी है कि पश्चिमी एशिया में फलने-फूलने वाले पारसी धर्म के पैगंबर जरथोस्त्र के पिता शैव ब्राह्मण थे, जो शिव और गणपति का पूजन करते थे। पारसी धर्म के प्राचीन धर्मग्रंथों में इंद्र तथा वरुण आदि देवताओं की चर्चा है तथा उनकी पूजा के शब्दों का उच्चारण, वैदिक मंत्रों के उच्चारण से अद्भुत साम्यता रखता है। फारसी के अनेक शब्द भी संस्कृत शब्दों से काफी मिलते हैं। उदाहरणार्थ अस्त (अस्ति), नीस्त (नास्ति), मादर (मातृ), पिदर (पितृ), होम (सोम) तथा शीर (क्षीर) आदि। ईरान के अंतिम शहंशाह रजाशाह पहलवी ने सम्राट् कुरूष के शासनकाल की 2500वीं जयंती पर प्राचीन निर्देशानुसार जो उपाधि धारण की, वह थी 'आर्यमिहिर'। यह उपाधि स्वयमेव ईरान को आर्य संस्कृति के साथ जोड़ देती है। यह भी तथ्य है कि मुसलमानों के आक्रमण से पूर्व ईरान के लोग अग्निपूजक थे, जो वैदिक युग के प्रमुख देवता रहे हैं। ईराक की राजधानी बगदाद का ईसा पूर्व नाम ओपिस (उपस) था। कतिपय विद्वानों के अनुसार यह नाम संस्कृत का प्रतीत होता है। इसी प्रकार पूर्वी अरब राष्ट्र ओमान तथा पश्चिमी अरब राष्ट्र जोर्डन की राजधानी अम्मान आर्य संस्कृति के पवित्र शब्द 'ओम्' से प्रभावित दृष्टिगत होते हैं। 'आमीन' और 'अमन' शब्दों की भी ओम् से साम्यता है। लगभग 2700 वर्ष पूर्व इराक में अस्तित्व में आए और और 1600 ई.पू. ध्वस्त हुए प्रसिद्ध सांस्कृतिक नगर 'उर' के नामकरण के पीछे भी संस्कृत का प्रभाव है। यह शब्द ऋग्वेद में भी आया है।

कुछ अन्य क्षेत्र भी आर्यों के मूल निवास स्थान के बारे में बतलाये जाते हैं, लेकिन उनके पक्ष में दलीलें बड़ी कमजोर हैं। इन क्षेत्रों में हंगरी, जर्मनी, दक्षिण रूस तथा उत्तरी ध्रुव आदि हैं।

अलग-अलग पीढ़ियों के ऋषि उनकी रचना करते रहे और उन्हें अगली पीढ़ियों को सौंपते रहे। बाद में महर्षि वेदव्यास ने उन्हें संकलित करके व्यवस्थित रूप प्रदान किया। यदि आर्य सचमुच ही बाहर से आए, वेदों की अनेक ऋचाएँ उन स्थानों पर रची गयी होंगी। तब क्या कारण है कि वेदों की सभी ऋचाएँ यहीं की नदियों के किनारे बैठकर रची गयीं। उनमें भारत की ही मिट्टी और वातावरण की गंध है, किसी दूसरे देश का उल्लेख तक नहीं। अवश्य ही मध्य एशिया अथवा अन्य स्थानों पर आर्य संस्कृति के चिह्न मिले हैं, परंतु इससे यह प्रमाणित नही होता कि आर्य वहाँ के मूल निवासी थे। इससे यह प्रमाणित अवश्य होता है कि आर्य वहाँ पहुँचे थे। आर्य वास्तव में भारत के ही मूल निवासी थे और यहीं से उनकी शाखाएँ ईरान, इराक तथा अन्य स्थानों पर पहुँची। संभव है आर्यों को ही पश्चिम एशिया में 'इरैक' या 'ऐर्यक' कहा जाने लगा हो और बाद में इसी नाम से ईरान और इराक का नामकरण हुआ हो। यह भी उल्लेखनीय है कि उन दिनों भारत का भूगोल अफगानिस्तान से भी आगे तक फैला हुआ था। इसलिए उन क्षेत्रों में आर्य सभ्यता के चिह्न प्राप्त होना सहज स्वाभाविक है।

विश्व की अन्य प्राचीन सभ्यताओं पर यदि दृष्टि डालें, उनके प्राचीन ग्रंथों या दंतकथाओं में प्रायः उन स्थानों की चर्चा है, जहाँ से वे मूलतः आए। ट्यूटन जाति की गाथाओं के अनुसार ओदनि के नेतृत्व में पूर्व से आए थे। फारस में वहां के निवासियों को हिन्दुकुश के पूर्व से आया बतलाया गया है, जहां से उन्हें निष्कासित कर दिया गया था। सुमेरी सभ्यता में भी वहां के निवासियों को जल मार्ग से पूर्व से आना बतलाया गया है। मिस्र में कहा गया है कि दक्षिण से आयी किसी जाति ने वहां सभ्यता फैलायी थी (भारतीय पुरा इतिहास कोश-अरुण)। भारत के प्राचीन ग्रंथ वेदों में ऐसे किसी अन्य स्थान का उल्लेख नहीं मिलता, जो उनका मूल निवास स्थान हो और जहां से वे भारत में आए हों।

अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने भी आर्यों को भारत का ही मूल निवासी मानते हुए इस बात से इन्कार किया है कि उन्होंने कभी भी भारत पर आक्रमण किया था। इनमें बरो, बाशम, एलफिन्स्टन तथा म्यूर आदि का नाम लिया जा सकता है। टी. बरो ने अपने एक लेख 'अर्ली आर्यन्स' में स्पष्ट शब्दों में लिखा, "भारत पर आर्यों के आक्रमण का कहीं कोई लिखित उल्लेख नहीं मिलता। पुरातत्व की दृष्टि से भी इसकी पुष्टि नहीं होती।" एलफिन्स्टन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ इण्डिया' में लिखा—"न तो वेदों में, न मनुस्मृति में, न अन्य किसी ऐसी पुस्तक में जो मनुस्मृति से प्राचीन हो, कोई ऐसा प्रसंग आया है कि आर्य भारत के बाहर किसी अन्य देश के निवासी थे।" इसी प्रकार प्रसिद्ध विद्वान म्यूर ने अपने ग्रंथ 'ओरिजिनल संस्कृत टैक्स्ट' के द्वितीय खंड में लिखा—"मैं निष्ठापूर्वक यह स्वीकार करता हूँ कि संस्कृत के किसी भी ग्रंथ में ऐसा कोई उल्लेख नहीं मिलता, जिसमें आर्यों को विदेशी मूल का माना गया हो। ऋग्वेद में प्रयुक्त दास, दास्य या असुर आदि शब्दों से भी इस बात का कोई संकेत नहीं मिलता कि इनका प्रयोग भारत के आर्येतर मूल निवासियों के लिए किया गया हो।"

पृथ्वी के निर्माण के आदिकाल से ही यदि परिस्थिति पर विचार करें तो प्रारंभ में अग्नि का तपता हुआ गोला, फिर उस पर भाप से निकली पानी की हल्की फुहारें और तत्पश्चात् तेज वर्षा। इस बीच पृथ्वी के आकार-प्रकार में भी परिवर्तन चलता रहा। उन वर्षों में संपूर्ण पृथ्वी नहा गयी, जिसने उसे शीतल बनाया और मनुष्य के रहने लायक बनाया। तब धरती के ऊंचे भाग ही उस जल प्लावन से बाहर रहे और जलीय क्षेत्र से खिसक कर कुछ प्राणियों ने वहां पर सर्वप्रथम धरती का स्पर्श किया। तरह-तरह की वनस्पतियां भी सर्वप्रथम वहीं पनपीं। स्पष्ट है कि हिमालय का क्षेत्र सबसे ऊंचा क्षेत्र माना गया है। तब उस क्षेत्र में ही सर्वप्रथम मानव सृष्टि की बात करना असंगत और तर्कहीन नहीं कहा जा सकता। अनेक विद्वानों ने इस तथ्य को स्वीकारा है कि समय-समय पर होने वाली खोजों ने भी इसे प्रमाणित किया है। पं. रघुनंदन शर्मा 'साहित्य भूषण' द्वारा लिखित 'वैदिक संपत्ति' के अनुसार प्रथम मानव की सृष्टि हिमालय के 'मानस' स्थान पर हुई। हिमालय की शिवालिक पहाड़ियों में प्राचीनतम उपमानव 'रामपिथिकस' के अवशेष मिले हैं। यहीं पर स्तनपायी पशुओं के एक लंबे सिलसिले की भी जानकारी मिली है। आधुनिक मनुष्य के विकास की पहली सीढ़ी के रूप में 'रामपिथिकस' को ही स्वीकारा जाता है। इसका जीवाश्म सर्वप्रथम 1910 ई. में एक भारतीय वैज्ञानिक श्री विनायक राव को शिवालिक पहाड़ियों में प्राप्त हुआ था। इसे 1963 में अंग्रेज वैज्ञानिक साइमन ने सही ढंग से जांच-पड़ताल करके 'रामपिथिकस पंजीबीकस' का नाम दिया। इससे सहज ही यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भारत में विकसित हुए मनुष्य ही अपने अनुभव और योग्यता के आधार पर प्रगति की ओर श्रेष्ठ आर्यों के रूप में यहाँ स्थापित हुए। भारत में आदि मानव की उत्पत्ति के बारे में हमारे पौराणिक साहित्य में भी पर्याप्त चर्चा है।

स्पष्ट ही इस विकास क्रम में लंबा समय लगा। पृथ्वी की आयु लगभग 470 करोड़ वर्ष मानी गयी है और उस पर मानव को रहते हुए लगभग 20 लाख वर्ष हो गए। आज से 4 करोड़ वर्ष पहले पृथ्वी पर मैमलों में प्राइमेट का जन्म हुआ, जो मानव और एप के समान पूर्वज थे। एक करोड़ 40 लाख वर्ष पूर्व भारत में शिवालिक की घाटियों में रामपिथिकस की उपस्थिति रही, जो आज के मानव का पूर्वज था। इसके बाद विश्व के अन्य देशों में भी मानव विकास के प्रमाण मिले हैं। इस प्रकार धीरे-धीरे मानव का विकास हुआ, जिसमें भारत की विशेष भूमिका रही।

भारत का प्राचीन इतिहास हमारे पुराणों में विद्यमान है। इनमें अनेक वंशावलियों और उनके प्रमुख कार्य भी स्पष्ट रूप में दिए हुए हैं। कहा जाता है कि हमारे यहाँ मूलतः एक ही पुराण था। जो मौखिक रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता था। बाद में इसमें नयी-नयी घटनाएं जुड़ती रहीं और यत्र-तत्र अतिशयोक्तियों की भरमार हो गयी। तब, इसका वर्गीकरण करके 18 भागों में बांट दिया गया। यदि पुराणों से अतिशयोक्तियां निकाल दी जाएं तो हम सत्य के निकट पहुंच सकते हैं। वैदिक साहित्य के समान पौराणिक साहित्य में भी कहीं किसी ऐसे स्थान की चर्चा नहीं है, जो प्राचीन भारत से बाहर हो और जिसे आर्यों का कूल निवास स्थान कहा जा सके। आर्यों के मूल में देव और असुर दो जातियों की चर्चा पढ़ने को मिलती है, जो मूलतः एक ही पिता महर्षि कश्यप की संतान थे। उनकी माताएं अलग-अलग थी दिति और अदिति। एक ही पिता की सन्तान होने के कारण, प्राचीन साहित्य में यत्र-तत्र देवताओं को भी असुर कहा गया है। देवताओं और असुरों में अक्सर संघर्ष होते थे, जिनमें प्रारंभ में असुरों का पक्ष ही भारी रहता था। इसलिए उस समय असुर अधिक प्रभावशाली थे। प्रारंभ में असुरों का राजा होता था, जिसके नेतृत्व में वे देवताओं पर अत्याचार करते थे। बाद में देवताओं ने भी द्यौस के पुत्र इन्द्र को अपना राजा बनाया और उसके नेतृत्व में उन्होंने असुरों पर विजय प्राप्त की। कालांतर में देवताओं के प्रत्येक राजा की पदवी ही इन्द्र हो गयी और देवताओं के सभी राजाओं को इन्द्र कहा गया।

देवजाति हिमालय क्षेत्र में निवास करती थी। अथर्ववेद (11-5-19 तथा 4-11-6) तथा शतपथ ब्राह्मण में आए उल्लेख के अनुसार देवता भी आम मानवों के समान ही थे। उनका अपना सुदृढ़ और शक्तिशाली राज्य था। इसलिए मनुष्य अक्सर उनकी प्रशंसा में मंत्र पढ़कर उनसे सहायता की अपेक्षा करते थे। ये मंत्र वैदिक साहित्य में काफी बड़ी मात्रा में हैं।

धीरे-धीरे देव जाति की संख्या बढ़ने लगी और पर्वतीय क्षेत्र उनके लिए कम पड़ने लगा। तब एक देव समूह अपने राजा इन्द्र की स्वीकृति लेकर स्वायम्भुव मनु के नेतृत्व में पर्वत से नीचे उतरा और वहां सरस्वती के किनारे अपनी बस्ती बसाई। स्वायम्भुव मनु, प्रथम मनु थे। अभी तक कुल सात मनु हुए हैं। अन्तिम मनु वैवस्वत मनु हुए, जिनके समय पर जल-प्रलय हुई। समाज को नियमबद्ध और व्यवस्थित करने के लिए वैवस्वत मनु ने ही 'मनुस्मृति' की रचना की, जो विश्व की आदि संहिता है। तत्कालीन सामाजिक परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में यदि इसका निष्पक्ष अध्ययन किया जाए तो पता चलेगा कि वैवस्वत मनु ने उस समय एक अत्यन्त उपयोगी ग्रंथ की रचना की थी। मनु के नाम से ही देवजाति के इस अंश को मानव कहने लगे। मानव सभ्यता के प्रारंभ में वैवस्वत मनु की उल्लेखनीय भूमिका रही।

स्वायम्भुव मनु के नेतृत्व में जब देव जाति का एक समूह यहाँ समतल भूमि पर आया, तब यहाँ अनेक जातियां निवास करती थीं—नाग, गन्धर्व, यक्ष, दानव, मत्स्य, वानर, गरुड़ और निषाद् आदि। इनमें नाग जाति सबसे शक्ति संपन्न और प्रभावशाली थी। वे कश्मीर से लेकर बंगाल तक फैले हुए थे। इनके अनेक कुल थे। इन जातियों में कुछ कुलों से मानवों की मित्रता हो गयी और कुछ से उनके संघर्ष चलते रहे। यक्ष जाति के एक अंश से बनी राक्षस जाति से मानवों का लंबा संघर्ष चला। चूंकि असुरों के समान राक्षस भी मानवों के शत्रु थे, इसीलिए अक्सर असुर और राक्षस शब्दों को एक ही अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है। वास्तव में ये दोनों जातियां अलग-अलग थीं। इसी प्रकार दानव जाति भी अलग थी, लेकिन उनकी राक्षसों से मित्रता हो जाने के कारण दानव भी उसी रूप में स्वीकारे जाने लगे।

मानवों को यदा-कदा आवश्यकतानुसार संघर्ष अवश्य करना पड़ा, परन्तु उनकी मूल भावना सदैव मित्रता की रही। इसीलिए यक्ष, गंधर्व, नाग जैसी अनेक जातियां मानवों में शामिल हो गयीं। संस्कृति के आदान-प्रदान और समन्वय के दौर में मानवों ने इन जातियों की अनेक परंपराओं और आदर्शों को अपने अंदर शामिल कर लिया। आज ये विभिन्न संस्कृतियां मिल-जुल कर इतनी अधिक एकाकार हो गयी हैं कि अब यह कहना कठिन है कि हमारा कौन सा देवता या कौन सी परंपरा, किस जाति की देन है। मानव सभ्यता केवल उत्तरी भारत तक सीमित नहीं रही, अपितु यह दक्षिण भारत तक फैल गयी और इसकी शाखाएं विश्व के सुदूर क्षेत्रों तक पहुंची।

स्वायंभुव मनु के नेतृत्व में जो देव समूह नीचे समतल पर उतरा, उसने मानव संस्कृति का प्रसार किया। इनकी जाति मानव कहलायी, आर्य नहीं। आर्य तो इनके एक-दूसरे को संबोधन करने का शब्द था। इसलिए प्रारंभ में आर्य गुणवाचक शब्द था, जातिवाचक नहीं। हमारे प्राचीन साहित्य में भी 'आर्य' शब्द का प्रयोग गुणवाचक शब्द के रूप में ही हुआ है। आर्य का अर्थ होता है श्रेष्ठ व्यक्ति। यह उसी प्रकार से एक संबोधन है, जिस प्रकार आजकल हम श्रीमान् या महोदय आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं। ऋग्वेद में कहा गया है—'आर्यव्रता विसृजन्तो अधिक्षमी' (10-65-11) अर्थात् भूमि पर सत्य, अहिंसा, पवित्रता, परोपकारादि व्रतों को धारण करने वाले ही आर्य हैं। इसी प्रकार ऋग्वेद में ही एक अन्य स्थान पर कहा गया है, 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' अर्थात् संपूर्ण विश्व को आर्य (श्रेष्ठ) बनाएं। वैदिक साहित्य में बार-बार आए इस आर्य शब्द के कारण ही संभवतः मैक्समूलर ने सर्वप्रथम जातिसूचक रूप में 'आर्य' शब्द का प्रयोग किया। बाद में मैक्समूलर ने भी अपनी गलती स्वीकारी और 1889 में उसने एक भाषण में कहा—"आर्य से मेरा मतलब रक्त या अस्थि, बाल या मस्तिष्क की रचना से नहीं है। मेरा मंतव्य केवल भाषा से है।" इसी प्रकार 'द्रविड़' कोई अलग जाति नहीं थी, अपितु वह आर्यों की ही एक शाखा थी, जो दक्षिण में जा बसी थी। पश्चिमी इतिहासकारों ने भी संभवतः उत्तरी और दक्षिणी भारत के बीच वैमनस्य उत्पन्न करने के उद्देश्य से इस प्रकार की बातें गढ़ीं। संस्कृत में 'द्रविड़' शब्द का अर्थ धन होता है। इससे यह प्रतीत होता है कि व्यापार करने वाले या अन्य किसी प्रकार से धन से संबंधित मानवों को द्रविड़ कहा जाने लगा। नालंदा अद्यतन कोष के अनुसार द्रविड़ ब्राह्मणों का ही एक वर्ग होता है।

वेदों में जिस प्रकार जातिसूचक के रूप में 'आर्य' शब्द नहीं है, उसी प्रकार आर्य देश के रूप में आर्यावर्त का नाम भी नहीं है। आर्यावर्त शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम मनुस्मृति के श्लोक संख्या 2-22 में हुआ है। दूसरी तरफ मनुस्मृति के ही श्लोक संख्या 2-17 में आर्यावर्त के स्थान पर 'ब्रह्मावर्त' शब्द का प्रयोग किया गया है। स्वामी दयानन्द सरस्वती के अनुसार आर्यावर्त की सीमाएं उत्तर में हिमालय और दक्षिण में विंध्याचल तक है। डॉ. राजबली पाण्डेय (हिन्दू धर्मकोष) के अनुसार ब्रह्मावर्त का क्षेत्र कुरुक्षेत्र के आसपास तक था। इन विद्वानों के विचारों से तो ऐसा लगता है कि आर्यावर्त और ब्रह्मावर्त दोनों क्षेत्र अलग-अलग थे। वैसे आर्यदेश के बारे में जो सीमाएं इस समय स्वीकार की जाती हैं, उसे ये दोनों ही व्याख्याएं बहुत सीमित कर देती हैं। मनुस्मृति में आए शब्द आर्यावर्त से यह प्रतीत होता है कि आर्य अपनी भूमि को श्रेष्ठ और पवित्र मानते थे। संभवतः इसी गुणवाचक शब्द के रूप में मनुस्मृति में 'आर्यावर्त' शब्द का प्रयोग किया गया। कालांतर में इस शब्द का धीरे-

धीरे देश के रूप में भी प्रयोग किया जाने लगा। प्राचीन ग्रंथों में देश के नाम के रूप में 'हिमवर्ष' और 'कुमारिका' नाम भी देखने को मिलते हैं।

आर्यावर्त की सीमाएं सुदूर क्षेत्रों तक फैली हुई थीं। मनुस्मृति के अनुसार पूर्व समुद्र से लेकर पश्चिम समुद्र तक का क्षेत्र आर्यावर्त है (मनुस्मृति 2/22)। मार्कण्डेय पुराण (54) के अनुसार आर्यावर्त के दक्षिण-पश्चिम और पूर्व में महासागर है तथा उत्तर में धनुष की प्रत्यंचा के समान हिमालय है। वायुपुराण (13/4) तथा कुछ अन्य प्राचीन ग्रंथों के अनुसार इसके पूर्व में किरात, पश्चिम में यवन, दक्षिण में आंध्र और उत्तर में तुरुक निवास करते हैं। इस प्रकार अफगानिस्तान तथा इराक तक का क्षेत्र उस समय आर्यावर्त में सम्मिलित था। कतिपय अन्य शोधकर्ताओं के अनुसार प्राचीन भारत की सीमा चीन-सागर से लाल-सागर पर्यन्त विस्तृत थी। उत्तर में हिमालय, दक्षिण-पूर्व में बर्मा, थाईलैंड, मलेशिया, वियतमान आदि, पश्चिम में शिनाई पर्वतमाला तथा जम्बू नदी (आम दरिया-तुर्किस्तान) आदि तक क्षेत्र इसकी सीमाओं में शामिल था। प्रसिद्ध वेदज्ञ श्री मधुसूदन ओझा के अनुसार आर्य-संस्कृति की सीमा मध्य एशिया से बर्मा तक थी। ब्रह्मपुराण, मार्कण्डेय पुराण तथा स्कन्द पुराण में भारत (जम्बू द्वीप) के नौ उपद्वीप बतलाये गए हैं। वे थे इन्द्र द्वीप (एंडमन द्वीप), कशेरूमान (सेलेवीस), ताम्रपर्ण (श्रीलंका), गर्भस्तिन (मलुकका), नागद्वीप (निकोबार), सौम्यद्वीप (सुमात्रा), गान्धर्व (जावा द्वीप समूह), वारुण (बोर्निया), कुमारिका (भारत खंड उज्जेयिनी से पूर्व की ओर)। भागवत पुराण में प्राचीन भारत के आठ उपद्वीप इस प्रकार बतलाए गए हैं—स्वर्णप्रस्थ (बोर्नियो, जावा, सुमात्रा, अंडमान-निकोबार, सिंगापुर), चन्द्रशुक्ल (फिलोपीन द्वीप समूह), आवर्तन (बरतानिया), नारमणक (नार्वे), मन्दहरिण (नेविया जेमल्या), पांचजन्य (जापान), सिंहल (श्रीलंका) तथा लंका द्वीप (लक्केदीव-मालदीव)। इस विवरण से ऐसा प्रतीत होता है कि भारत भूमि पर अपनी व्यवस्था मजबूत करके आर्यों के वंशज सुदूर क्षेत्रों में गए और मानव संस्कृति के प्रसार के निमित्त वहां अपने राज्य स्थापित करके वहीं बस गए। स्थान और वातावरण में परिवर्तन होने से शनैः-शनैः उनकी भाषा, खानपान और पूजा पद्धति में भी परिवर्तन आया। उन स्थानों के मूल निवासियों के संपर्क में आने से भी ये परिवर्तन सहज स्वाभाविक थे। प्रवास के प्रारंभिक दौर में यहाँ के ऋषि-महर्षि आवश्यकता के अनुसार उन क्षेत्रों में जाते भी रहते थे। उदाहरण के लिए पारसियों के धर्म ग्रंथ 'जेंडअवस्ता' में महर्षि व्यास के ईरान आगमन की, 65वीं आयत में इस प्रकार चर्चा की गयी है 'अकनू बिरहमने व्यास नाम अज हिन्द बसदान के अकिल चुनानस्त'। इसी प्रकार 163वीं आयत में लिखा गया—"चूँ व्यास हिन्दी बलखं आमद गतस्य तरतुश्तरा बखवांद'। अर्थात् जब हिन्द का रहने वाला व्यास बलख (ईरान) आया तब राजा गस्तास्य ने व्यास से बातचीत हेतु जरतुश्त को बुलाया। इन उदाहरणों से यह भी स्पष्ट है कि पारसी भाषा, संस्कृत से आश्चर्यजनक साम्यता रखती है। संभवतः इस साम्यता के पीछे प्रवासी आर्यों का ही योगदान रहा होगा। इन उद्धरणों से यह भी स्पष्ट है कि महर्षि व्यास के समय पर ही आर्यावर्त को पश्चिमी एशिया के लोग 'हिन्द' के नाम से संबोधित करने लगे थे। यह भी उल्लेखनीय है कि इन सब बातों में कुछ वर्ष नहीं, अपितु हजारों वर्ष लगे।

ऋग्वेद में हमारे देश के लिए सर्वप्रथम सप्त सिन्धव (सप्त सिन्धुषु) शब्द का प्रयोग किया गया—

"य ऋक्षादंहसोमुचद यो वार्यात् सप्तसिन्धुषु।
वद्यर्दासस्य तुवि नृम्ण नीनमः॥ —*(ऋग्वेद, 8-24-27)*

यद्यपि कुछ विद्वानों ने सप्तसिंधु का अर्थ शिरःस्थान की सात इन्द्रियों (2 आंख, 2 कान, 2 नासा छिद्र, 1 मुख) के लिए भी किया है, परंतु अधिकांश विद्वानों को यह स्वीकार नहीं। 'सप्तसिन्धु' का स्वीकार्य अर्थ सात नदियों वाले देश से ही है। इन सात नदियों के बारे में विद्वानों में मतभेद है। अधिकांश विद्वान् सात नदियों में पंजाब की पांच नदियों के अतिरिक्त सिन्धु तथा सरस्वती नदियों को शामिल करते हैं। चूंकि ऋषि महर्षियों ने अपना अधिकांश साहित्य इन नदियों के क्षेत्र में ही लिखा, संभवतः इसीलिए उन्होंने अपने क्षेत्र को सप्तसिंधु का संबोधन दिया। कालांतर में जब सिन्धु शब्द अधिक प्रचलित हो गया तो विदेशी भी हमारे देश को सिन्धु-प्रदेश कहकर पुकारने लगे। अलबरूनी अलबसनी ने अरब सागर को भी सिन्धु सागर लिखा। प्राचीन पारसियों की जेन्द भाषा में प्रायः 'स' को 'ह' के रूप में उच्चारित किया जाता था। इसी क्रम में उन्होंने संस्कृत के अनेक शब्दों के 'स' को 'ह' बनाकर अपनी जेन्द भाषा में सम्मिलित किया।

'स' को 'ह' कहने के इसी क्रम में, सिन्धु नदी के नाम पर आर्यावर्त के निवासियों को हिन्दू कहा जाने लगा और हमारे देश को 'हिन्द' कहा जाने लगा। यहाँ यह भी स्पष्ट करना आवश्यक है कि 'स' को 'ह' कहने का अर्थ यह कदापि नहीं कि पारसी भाषा में 'स' अक्षर है ही नहीं। वहां अब भी अनेक शब्दों में 'स' का उच्चारण होता है। उच्चारण की सुविधा के अनुरूप कुछ ही शब्दों से 'स' को उन्होंने 'ह' में ढाला। आम व्यवहार में भी यह बात अक्सर देखी जा सकती है। उदाहरणार्थ राजस्थान के कुछ क्षेत्रों में व्यक्ति के नाम के साथ जुड़े 'सिंह' शब्द को हींग कहा जाता है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि राजस्थानी भाषा में 'स' अक्षर है ही नहीं।

पारसियों के धर्म ग्रंथ 'जेंडअवस्ता' में 'हिन्द' शब्द का उल्लेख है, जो इस बात का प्रमाण है कि यहाँ के निवासियों को उस समय 'हिन्दू' ही कहा जाता था। पारसियों के वेद 'अवेस्ता' में स्पष्ट रूप में 'हिन्दू' शब्द का प्रयोग किया गया है—"अजम यो अहुरो मज्दाओं यो हप्त हिन्दु' (वंदिदात, 1-18) ईसा पूर्व 522-486 के बेहिस्तून के शिलालेखों में

भी हिन्दू शब्द का प्रयोग किया गया है। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भी भारत को हिन्दू देश के रूप में संबोधित किया है।

प्राचीन चीन में भारत का एक नाम 'इन्तुकों' भी मिलता है। चीनी भाषा में इस शब्द का अर्थ होता है यज्ञ का देश। यज्ञ के लिए वैदिक साहित्य में 'इन्दु' शब्द भी है। संभवतः इस 'इन्दु' शब्द से ही इन्तुको शब्द बना। चीनी यात्री ह्वेनसांग का विचार है कि हिन्दू शब्द की उत्पत्ति 'इन्दु' शब्द से हुई है। चन्द्रमा से 'इन्दु' का अर्थ लेते हुए और उसे महात्मा बुद्ध के साथ जोड़ते हुए उसने लिखा कि महात्मा बुद्ध रूपी सूर्य के अस्त हो जाने के उपरांत यहाँ के अन्य महात्मा इन्दु के समान हैं और विश्व के अन्य महात्मा उनके सामने केवल तारों के समान हैं।

जिस प्रकार से हिन्द, हिन्दू और हिन्दुस्तान के पीछे सिन्धु नदी की विशेष भूमिका रही, उसी प्रकार 'इंडिका' नाम के पीछे भी इसी नदी की भूमिका रही। यूनानी भाषा में 'ह' तथा 'द' का लोप होने के कारण 'हिन्द' वहां जाकर 'इंड' हो गया और हमारी सिन्धु नदी को 'इंडस' कहा जाने लगा। सम्राट् चंद्रगुप्त के शासन काल में भारत आए यूनानी राजदूत मेगस्थनीज ने भारत पर लिखी अपनी पुस्तक का नाम 'इंडिका' रखा था। यही नाम आगे चलकर 'इंडिया' बन गया। भाषा विज्ञान के अनुसार सिन्धु, हिनदू, इंड, इंडीस, इंडिया शब्द एक-दूसरे से संबंधित हैं और इनके मूल संस्कृत शब्द सिन्धु, सैन्धव अथवा सिन्धव हैं। भारत में 'हिन्दू' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग संभवतः संस्कृत ग्रंथ 'मेरुतंत्र' में ही आठवीं शताब्दी में किया गया। महाराज शान्तनु के पुत्र भरत के नाम पर इस देश का नाम भारत पड़ गया। इस प्रकार हिमवर्ष, कुमारिका, आर्यावर्त और ब्रह्मावर्त आदि नामों से संबोधित किए जाने वाले हमारे देश के नाम अब तीन हो गए—हिन्दुस्तान, भारत और इंडिया।

देव (मानव) जाति के समान असुरों ने भी देश के बाहर अपना प्रसार किया और साम्राज्य बनाए। इराक, असुर संस्कृति का केन्द्र था। वहां का राजा असुर बानीपाल (ई.पू. 650) एक प्रसिद्ध राजा हुआ है, जिसने मिट्टी की पट्टिकाओं पर इतिहास तथा संस्कृति की बातें अंकित करवाई थीं। इस प्रकार की 40,000 पट्टिकाएं अंग्रेज इंग्लैंड ले गए थे, जिनके बारे में अब कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है। असुर सम्राट सलमान नसर (शालिवाहन असुर) ने इजरायल पर विजय प्राप्त की थी (ई.पू. 859-825)। यह जानकारी छः फुट लंबे एक स्तंभ पर उत्कीर्ण दृश्य में दी हुई है, जो इराक में नामरूद नामक स्थान पर खुदाई में पाया गया था और जो अब लंदन के संग्रहालय में रखा हुआ है। पश्चिमी एशिया में भारतीय सेना के जाने और वहां युद्ध में भाग लेने के भी प्रमाण मिले हैं। असीरिया में 850 ई.पू. का एक चौकोर प्रस्तर स्तंभ प्राप्त हुआ है, जिसमें भारतीय यात्री और हाथी आदि उत्कीर्ण किए गए हैं। 1300 ई.पू. इजराइल के इतिहास में लोहे के नौ सौ रथों वाली एक सेना (नवशत रथ) का वर्णन है जो हेरोसेश हगोयम नामक स्थान पर पड़ाव डाले रहती थी। इस सेना का नेतृत्व सिरोरा (शिशिर) के हाथों में था। विद्वानों की मान्यता है कि यह सेना हिन्दुस्तान की थी, जो युद्ध में मित्रों की सहायता के लिए इजराइल गई थी।

दुर्भाग्यवश प्राचीन साहित्य तथा पुरातत्व महत्व की सामग्री का काफी बड़ा भाग बर्बर आक्रमणकारियों द्वारा या तो नष्ट कर दिया गया, या उसे ले जाकर इधर-उधर दबा दिया गया। पारसी धर्म के अनुयायी सम्राट कुरुष को जब सिकन्दर ने पराजित किया तो उनके पारसी पानिस नगर में स्थित पुस्तकालय में आग लगा दी गयी, जिसमें लगभग एक माह तक दुर्लभ हस्तलिखित पुस्तकें निरंतर जलती रहीं। यदि वह पुस्तकालय आज हमारे पास होता, निश्चित ही हमारे पास पारसी, असुर और आर्यों के बारे में आज से कहीं अधिक प्रमाणिक जानकारी होती। इसी प्रकार सन् 1851 में एक अंग्रेज सर आस्टिन लेयर्ड, इराक के निनवे नगर से इतनी अधिक पुरा सामग्री अपने साथ इंग्लैंड ले गया कि अगर उन्हें एक साथ रखकर नापा जाए तो उसकी लंबाई लगभग सवा तीन किलोमीटर होगी। इराक की प्राचीन असुर राजधानी नमरूद से भी काफी अधिक पुरा सामग्री यूरोप के लोग अपने यहाँ उठा ले गए।

प्राप्त तथ्यों से यह निश्चिततः प्रमाणित हो जाता है कि आर्य मूलतः भारत के ही निवासी थे। उन्होंने मानव संस्कृति का प्रसार किया तथा श्रेष्ठ होने के कारण उन्हें आर्य कहते थे। मानव सभ्यता के प्रचार और प्रसार के लिए ही वे सुदूर क्षेत्रों तक गए और अपने राज्य स्थापित किए।

ध्वनि में रस, रस में जीवन तलाशते—अभिनव गुप्त

डॉ. उदय प्रताप सिंह

"...कश्मीर के शैव संप्रदाय की प्रतिभिज्ञा-शास्त्र शाखा के प्रवर्तक आचार्य सोमानंद थे; पर इस दर्शन के प्रमुख आचार्य अभिनव गुप्त थे। उनका प्रतिपादन था कि हम सब ईश्वर के अंश या वस्तुतः ईश्वर हैं, पर हम इस तथ्य की प्रतिभिज्ञा नहीं कर पाते हैं—जान नहीं पाते हैं। उनका विचार था कि जीव ईश्वर के स्वरूपगत विशुद्ध आनंद का अनुभव नहीं कर पाता, क्योंकि उसे यह ज्ञात नहीं होता कि वह स्वयं ईश्वर है और जो गुण ईश्वर में हैं वे उसमें भी हैं।..."

सम्पर्क : बी.एफ.एस. 13, हरनारायण विहार, सारनाथ, वाराणसी-221007
मोबाइल: 09415787367

आचार्य अभिनव गुप्त कश्मीर के निवासी थे। उनका जीवन काल दसवीं से ग्यारहवीं (990-1015 ई.) शती माना जाता है। वह प्रतिभिज्ञा दर्शन के प्रमुख आचार्य थे। यद्यपि इस दर्शन का प्रवर्तन आचार्य सोमानंद ने किया था पर इसे लोक और काव्य के व्यावहारिक धरातल पर लाने का गंभीर प्रयास अभिनव गुप्त ने ही किया था। अभिनव गुप्त ने ध्वनि रस और आनंद का एक त्रिकोण बनाया था। 'अभिनवभारती', 'ध्वन्यालोकलोचन' और 'तन्त्रालोक' इत्यादि 37 ग्रंथों की रचनाकर उन्होंने साहित्य में 'आनन्दवाद' की प्रतिष्ठा की थी। हजार वर्ष पूर्व का कश्मीर उनके इस दर्शन से पर्याप्त प्रभावित था। बाद में कई आचार्यों और अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्यकारों ने इसका अनुगमन किया। आज उनके जीवन के हजार वर्ष बीत चुके हैं। शैवागम (आनंदवाद) का गढ़ कश्मीर आज जल रहा है। जरूरत है अभिनव गुप्त के दर्शन को जीवन में उतारने की। वह काव्यशास्त्र के आचार्य थे। काव्य को सीधे लोकजीवन से जोड़ देने में उन्हें महारत हासिल थी। उनके सहस्राब्दि पर इसी की चर्चा आगे की गयी है।

समाज के विकास के साथ साहित्यिक सृजन के प्रतिमानों का परीक्षण और निरीक्षण एक सहज प्रक्रिया है। इस उपक्रम में कविता क्या है? काव्य के उद्देश्य क्या हैं? काव्य के सिद्धान्त और काव्य के प्रयोजन क्या हैं? जैसे स्वाभाविक प्रश्न उठते रहते हैं। साहित्य के प्रतिमान और परंपरा के मूल्यांकन में नए विचार जन्म लेते हैं, समीक्षा की नई समस्याएं और कविता के नए प्रतिमानों के प्रश्न उठते हैं, पुराने सिद्धान्तों का समयानुकूल विमर्श भी होता है। इस दौरान साहित्य के विकास में सृजन एवं आलोचना के बीच सहभागिता, तनाव और परिपक्व संबंधों की एक सहज प्रक्रिया भी चलती रहती है। यही कारण है कि सर्जना की ऐतिहासिक परंपरा, समसामयिकता, गतिशीलता, सांस्कृतिक कसौटी और वैचारिक सत्ता से आलोचना अथवा समीक्षा का विस्तार भी होता रहता है। वस्तुतः आलोचना (काव्य-सिद्धांत) सृजन के विधात्मक अनुशासन में बँधी हुई मानव सत्य की खोज और उसका सामाजिक प्रक्षेपण है, परंतु इस सत्य की तलाश में तल्लीन आलोचना से प्रायः हर कालखंड के साहित्यकारों को शिकायत रही है।

साहित्य में स्थित मूलपरक विचार आलोचना की कसौटी बन सकते हैं। साहित्य की अबाधित परंपरा होती है और उसके साथ जीवन का एक इतिहास बोध भी। भारतीय वाङ्मय पर दृष्टि डालते ही ऐसे अनेक प्रश्न उठते हैं, जिनका संबंध इस बोध से जुड़ा रहता है।

हिंदी ही नहीं अन्य भारतीय भाषाओं में बाहरी आलोचना के बढ़ते दबाव ने साहित्य को कमजोर किया है। कहा जा सकता है कि भारतीय साहित्य पर तमाम आड़ी-तिरछी बहिरागत रेखाओं ने उसकी स्वाभाविकता को अपहृत कर लिया है। इन सिद्धान्तों ने आलोचना के एक पक्षीय स्वरूप को उभरने का अवसर दिया है जिसका मूल स्वर 'साहित्य का समाजशास्त्र' है। बाहरी चकाचौंध में हमें सहस्राब्दियों के अपने साहित्य सिद्धान्त विस्मृत हो गए हैं। आचार्य अभिनव गुप्त (990-1015 ई.) का ध्वनिवादी रसवाद अप्रासंगिक लगने लगा है। काव्यप्रकाशकार मम्मट (1050 ई.) को हम कालबाह्य मान चुके हैं। महत्त्वपूर्ण यह है कि इन्हीं हजार वर्षों में साहित्य चिंतन के निगूढ़ तत्वों का विशद विवेचन भारतीय आचार्यों ने किया है। इन विमर्शों के इतने आयाम हैं कि पाश्चात्य काव्यशास्त्री वहाँ तक पहुँच ही नहीं सके हैं। भरतमुनि (300 ई.पू.), दण्डी (650 ई.), भामह (700 ई.), वामन (800 ई.), उद्भट (800 ई.), आनंदवर्द्धन (850 ई.), रुद्रट (850 ई.), मुकुलभट्ट (883-925 ई.), भट्टनायक (935-985 ई.), अभिनव गुप्त (990-1015 ई.), क्षेमेन्द्र (1010-1050 ई.), धनंजय (1000 ई.), भोजराज (1005-1050 ई.), कुंतक (950-1000 ई.), मम्मट (1050 ई.) इत्यादि आचार्यों ने काव्य सिद्धान्तों की एक से अधिक विशेषताओं का उद्घाटन अपने जीवन काल में किया है। वक्रोक्तिकाव्यजीवितं लिखकर कुंतक ने काव्य-चिंतन का अद्यतन स्वरूप प्रस्तुत कर दिया। उनका मत था कि काव्य की भाषा लोक-व्यवहार और शास्त्र दोनों से अलग होती है। इसे वह विचित्र अभिधा कहते हैं। कुंतक सिद्धांतकार के साथ आलोचक भी थे। अतः उनके विचार आधुनिक आलोचना के लिए भी प्रेरणास्रोत हैं। अभिनव गुप्त ने ध्वनिवाद के माध्यम से रस को काव्य की जिस केंद्रीय धुरी में स्थापित किया था उस मत के समर्थक आचार्यों की संख्या सर्वाधिक है।

भारतवर्ष में काव्य-सिद्धांतों के विमर्श ईसा पूर्व सदियों से होते रहते हैं। यही कारण है कि इसके विकास के विविध आयाम दिखते हैं। यद्यपि पाश्चात्य काव्यशास्त्र को अधिक व्यापक, सुनिर्दिष्ट और अद्यतन माना जाता है, पर भारतीय काव्यसिद्धांतकारों ने कुछ ऐसे निष्कर्ष दिए हैं जहाँ यूरोपीय सिद्धांतकार खड़े होने में भी असमर्थ हैं। यह स्वीकार करने से परहेज नहीं करना चाहिए कि भारतीय काव्य सिद्धांतों में आधुनिक चिंतन की आवश्यकता है। इसके बावजूद रस के आस्वादपरक विवेचन की विशदता और ध्वनि संबंधी विविधि चिंतन पाश्चात्य काव्यशास्त्र को बहुत पीछे छोड़ देते हैं। कहना है कि पश्चिम में रस के आस्वाद, ध्वनि के वर्गीकरण और काव्य भाषा का इतना सूक्ष्म विश्लेषण नहीं मिलता है। यद्यपि भारतीय काव्यशास्त्र के सिद्धांत अत्यंत पुराने हैं। उनमें समयानुकूल नया चिंतन करने की आवश्यकता तो है ही वर्तमान समाज व लोक की चित्तवृत्तियों को आधुनिक संदर्भ में व्याख्या करने की भी जरूरत है। मात्र प्राचीन काव्य-सिद्धांतों से बँधकर आज के साहित्य का मूल्यांकन अधूरा होगा। एक बात और है—आज पश्चिमी काव्यसिद्धांतों के आलोक में भारतीय काव्य-सिद्धांतों की उपेक्षा की जा रही है। यह प्रवृत्ति काव्य के व्यापक उद्देश्य में घातक है। हिंदी आलोचना पर इसका प्रभाव दिखने लगा है। पश्चिमी काव्यालोचन से कुछ सीखना, ग्रहण करना एक बात है और उसे अपना प्रतिमान घोषित कर देना पूर्णतः दूसरी बात। इस प्रवृत्ति से अपनी चिंतन परंपरा संकटग्रस्त दिखती है और काव्यशास्त्र के सिद्धांतों का विकास भी बाधित होता है। हमें काव्य के क्षेत्र में रुढ़िवादिता से मुक्त होते हुए अपनी परंपरा में निहित जीवन मूल्यों को स्मरण रखना होगा।

भारतीय काव्य सिद्धांतों का निर्माण, भरतमुनि (300 ई. पूर्व) से माना जाता है। उनका 'नाट्यशास्त्र' भारत में प्रचलित सभी काव्य सिद्धांतों का मूल स्रोत है। यही कारण है कि 'नाट्यशास्त्र' का विमर्श प्रतिविमर्श हजारों वर्षों से चल रहा है। आज भी उसकी प्रक्रिया बंद नहीं है। भरतमुनि के बाद भामह को (6ठी-7वीं शती) अलंकारवादी आचार्य कहा जाता है, पर डॉ. शंकरन इत्यादि विद्वानों का मत है कि भामह का कोई अलग संप्रदाय नहीं है। इसी प्रकार भरतमुनि कृत 'नाट्यशास्त्र' में रस का सांगोपांग विवेचन हुआ है। ध्वनिवादी आचार्य अभिनव गुप्त के ध्वनि सिद्धांत का पर्यवसान रस संप्रदाय में दिखायी पड़ता है। भिन्न-भिन्न नाम और चिंतन के होते हुए भी रस की उपेक्षा किसी भी आचार्य ने नहीं किया है। अलंकार, रीति, ध्वनि, वक्रोक्ति तथा औचित्य इत्यादि का काव्य-क्षेत्र में अपना विशिष्ट महत्त्व है; पर रस सिद्धांत का अद्वितीय महत्त्व है। रस रहित काव्य शुष्क व नीरस होता है। इस प्रकार सभी काव्यसिद्धांतों का रस से प्रगाढ़ संबंध है। यह संबंध अदृश्य होते हुए भी महत्त्वपूर्ण है।

भारतीय मनीषा की इसी भावभूमि में आचार्य अभिवन गुप्त का 'ध्वन्यालोकलोचन' ध्वनिवाद के प्रवर्तक आनंदवर्धन के काव्यसिद्धांत को पर्याप्त विस्तार के साथ महत्त्वपूर्ण बना देता है। यह विस्तार 'ब्रह्मानंद सहोदर' एवं 'रसो वै सः' की व्यंजना तो करता ही है व्यावहारिक जीवन में रस के महत्त्व और उपयोगिता को प्रतिष्ठित भी करता है। अभिनव गुप्त की आलोचना की जाती है कि वह स्वयं ही शिव बन जाते हैं और स्वयं आनंद के उपभोक्ता भी।[1] पर यह नहीं भूलना चाहिए कि 'लोचन' ग्रंथ (भाष्य) लिखकर उन्होंने जीवन में रस को व्यापक प्रतिष्ठा दिलायी। वह प्रतिभाशाली आचार्य थे। अतः ध्वनि को रस (आनंद) में बदल देने का जबरर्दस्त संकल्प उन्हें अग्रणी आचार्यों में परिगणित करा देता है। उन्होंने आदर के साथ अपने पूर्ववर्ती आचार्यों का स्मरण किया है। उनकी इस बौद्धिकता से ध्वनिवाद को जटिल बनाने का आरोप भी लगता है, पर ध्वनियों से रस की पूर्ण प्रतीति कराने में वह अद्वितीय आचार्य रहे हैं। रसानंद की यह अनुभूति हजारों वर्ष बाद हिंदी के सुप्रसिद्ध कवि जयशंकर प्रसाद के काव्य में उतरती दिखायी पड़ती है। इससे प्रतिभिज्ञा दर्शन के प्रभाव का आकलन सहज ही हो जाता है—

"समरस थे जड़ या चेतन सुंदर साकार बना था।
चेतनता एक बिलसती आनंद अखंड घना था॥

—(कामायनी, आनंदसर्ग)

कश्मीर के शैव संप्रदाय की प्रतिभिज्ञा-शास्त्र शाखा के प्रवर्तक आचार्य सोमानंद थे; पर इस दर्शन के प्रमुख आचार्य अभिनव गुप्त थे। उनका प्रतिपादन था कि हम सब ईश्वर के अंश या वस्तुतः ईश्वर हैं, पर हम इस तथ्य की प्रतिभिज्ञा नहीं कर पाते हैं—जान नहीं पाते हैं। उनका विचार था कि जीव ईश्वर के स्वरूपगत विशुद्ध आनंद का अनुभव नहीं कर पाता, क्योंकि उसे यह ज्ञात नहीं होता कि वह स्वयं ईश्वर है और जो गुण ईश्वर में हैं वे उसमें भी हैं। परंतु जब गुरु के उपदेशों से मनुष्य को ज्ञान हो जाता है कि वह भी ईश्वर के गुणों से युक्त है, तब वह स्वयं में ईश्वर की प्रतिभिज्ञा करने में समर्थ हो जाता है। ऐसी स्थिति में उसमें उत्कृष्ट आनंद का उदय होने लगता है। कश्मीर के शारदाधाम में अभिनव गुप्त के इस आनंदवादी दर्शन का हजार वर्षों से निरीक्षण और परीक्षण हो रहा है। उनके इस दर्शन से लोकजीवन में उपजे आनंद के साथ साहित्य पर भी जबर्दस्त प्रभाव दिखाई देता है। उसका एक बड़ा कारण था आचार्य अभिनव गुप्त के व्यक्तित्व में वैदुष्य एवं कवित्व का अद्भुत संयोग। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'तंत्रालोक' में अभिनवगुप्त ने इसकी स्थापना की है। यही कारण है कि भारतीय विद्वत् जगत में उनकी प्रतिभा का विशेष सम्मान किया जाता है। ध्वनिवाद के प्रवर्तक आनंदवर्धन के वह प्रमुख भाष्यकार और प्रतिभिज्ञा दर्शन के तत्कालीन सबसे बड़े पंडित थे। यद्यपि उनके चिंतन में पूर्ववर्ती आचार्यों की उपेक्षा का संकेत मिलता है, पर उनकी तर्कणा शक्ति की प्रशंसा किए बिना उनसे मतभेद रखने वाला आचार्य भी नहीं रह सकता है। ऐसा भी नहीं कि वह परंपरा व अध्यात्म के विरोधी थे; पर अपनी प्रतिभा से वह नवीन मार्ग का अन्वेषण कर लेते थे। अतः परंपरावादी होते हुए भी वह गतानुगतिक नहीं थे। उनके कतिपय शिष्य भी उनसे सहमत नहीं थे, पर विद्वानों का एक बड़ा समुदाय था जो उनके ध्वनिवाद की नयी और सुग्राह्य व्याख्या से प्रभावित था। उनका अनुगमन करते हुए इन विद्वानों ने ध्वनिवाद को काव्य-समीक्षा के केंद्र में रखा। कालांतर में मम्मट, रुय्यक, शोभाकरमित्र, जयरथ, जयदेव, वाग्भट्ट, श्रीविद्यानाथ, अप्पय दीक्षित इत्यादि परवर्ती आचार्यों ने ध्वनि को काव्य की आत्मा स्वीकार करते हुए अभिनव गुप्त के तर्क, प्रमाण और गुणवत्ता को आगे बढ़ाया। काव्य में ध्वनि के माध्यम से रसानुभूति कराने के संदर्भ में स्वयं अभिनव गुप्त लिखते हैं—"तेन रस एव वस्तुतः आत्मा। वस्त्वलंकारध्वनी तु सर्वदा रसं प्रति पर्यवस्येते इति वाच्यात् उत्कृष्टौ तौ, इत्यभिप्रायेण ध्वनि काव्यस्यात्मा इति सामान्येन उक्तम्"—अर्थात् रस ही काव्य की आत्मा है। वस्तुध्वनि और अलंकार ध्वनि का तो इनमें पर्यवसान हो जाता है, इसलिए ये वाच्य से उत्कृष्ट अवश्य होते हैं। ध्वनि को काव्य की आत्मा कहना तो औपचारिक है। रसध्वनि के अंतर्गत नवरस आते ही हैं—भाव, भावभास, भावोदय, भावसबलता, भावसन्धि इत्यादि सभी का इसमें समावेश किया जाता है। इसीलिए रसनिष्पत्ति के संदर्भ में आचार्य मम्मट अभिनव गुप्त का नाम बड़े आदर के साथ लेते हैं—"इतिश्रीमद् भिनवगुप्तपादाचार्याः"।

अभिनव गुप्त ने 'नाट्यशास्त्र' पर लिखी हुई अपनी टीका 'अभिनवभारती' और आनंदवर्धन के ध्वन्यालोक पर 'ध्वन्यालोकलोचन' लिखकर ध्वनि के माध्यम से से काव्य में रस की बलवती प्रतिष्ठा की है। इन भाष्यों में रसविषयक विवेचना को बहुत महत्त्व दिया गया है। अभिनव गुप्त ने भट्टनायक द्वारा खोजे गए शब्दों के दो क्रिया व्यापारों को अमान्य सिद्ध करते हुए उन्हें व्यंजना का अभिन्न अंग स्वीकार कर लिया है। उनकी दूसरी आपत्ति रस के सम्बन्ध में भट्टनायक की रसप्रतीति पर है। भट्टनायक ने प्रतीति को 'स्वगत' और 'परगत' भेदों में विभक्त किया है। वस्तुतः रसानुभूति और 'रसप्रतीति' में अर्थ के स्तर पर कोई भेद नहीं है। उदाहरण के लिए कहा जा सकता है कि—"वह भात पकाता है"—में चावल पर भात का आरोप किया जाता है वैसे ही रस पर प्रतीति का। यह प्रतीति सहृदय में उत्पन्न होती है। रस प्रतीति का कारण घनन व्यापार होता है न कि अभिधा-व्यापार। अतः रस भुक्ति नहीं अभिव्यक्ति है। रस के संबंध में आचार्यों ने प्रायः तीन तर्कों को प्रतिष्ठित किया है—1. रस की स्थिति की पात्रता, 2. उसकी प्रक्रिया एवं 3. उसका स्वरूप क्या है? इस संदर्भ में लोल्लट और शंकुक की अवधारणाएँ प्रायः समान हैं। दोनों ने रस प्रसंग को नाटक के प्रसंग में उठाया है। आचार्य भरतमुनि तो मंच पर घटित होने वाले समस्त क्रिया-कलाप को नाट्य या रस ही मानते हैं। लोल्लट रस की स्थिति को अनुकृति या नाट्याभिनय में स्वीकार करते हैं। उनकी दृष्टि में अनुकार्य का स्थायी होना ही रस है—यह विभावादि के संयोग से बनता है। नट रामादि के रूप का आरोप करता है। उसमें वासनावश रस का जन्म होता है। वह स्वयं भी रसास्वादन करता है। दर्शक बाहर से उसे ग्रहण करता है। शंकुक का दर्शक नट में रस का अनुमान 'चित्रतुरंग' न्याय से करता है। पर अभिनव गुप्त रस की निष्पत्ति सहृदय में स्वीकार करते हैं। सहृदय उसका आनंद भोक्ता होता है। अभिनव गुप्त ने रसानुभूति को नाट्य क्षेत्र के आगे काव्यक्षेत्र तक पहुँचाया और शब्दों के प्रयोग-अनुप्रयोग का महत्त्व बताया। उन्होंने रस को आनंदवाद से अभिन्न कर दिया। वह 'ब्रह्मानंद' का सगा भाई बन गया।

आज एक बड़ा प्रश्न आनंद, अनिर्वचनीयता, लोकोत्तर आनंदानुभूति को लेकर उठाया जाता है। कहा जाता है कि काव्य और नाटक में वर्णित रसानुभूति जीवन की जटिलता में कितनी उपयोगी बन सकती है? इस अवधारणा के मूल में, साहित्य को समाज-सापेक्ष्य घोषित करना है। इस स्थिति में आनंदानुभूति का औचित्य कितना रह जाता है? रस को अलौकिक, चिन्मय, ब्रह्मानंद इत्यादि दार्शनिक शब्दावली से इतना बाँध दिया गया है कि जटिल जीवन और प्रपंचपूर्ण जगत से उसका सीधा संपर्क ही भंग हो जाता है। सहृदय भले ही काव्य का श्रवण

कर, नाटक को देखकर लोकोत्तर अनुभूति करे पर वास्तविक जीवन से उसका विलगाव हो जाता है। फिर भी जीवन में आनंद की उपेक्षा संभव नहीं। विज्ञान जगत की नीरसता, उद्योग जगत का शोरगुल और भौतिक जीवन की आपाधापी में काव्य और नाटक से उत्पन्न आनंद, जीवन में शांति और समचित्तता का सृजन करता है। इस दृष्टि से अभिनव गुप्त का चिंतन आज भी प्रासंगिक है।

किसी भी नए चिंतन में तत्कालीन कारकों का अपना प्रभाव व दबाव होता है। इस दृष्टि से अभिनव गुप्त को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखने से उनके काव्यमत की सार्थकता समझ में आती है। उनका जीवन काल 10वीं से 11वीं शती ई. माना जाता है। उस समय का जन-जीवन आज की अपेक्षाकृत अधिक स्थिर, निश्चिंत और शांत था। राजा-महाराजा और सामंत समाज की लोकवृत्ति और चिति को भी प्रभावित करते थे। लोक जीवन के साथ राजन्य वर्ग में भी आनंद की प्रतिष्ठा थी। अतः अभिनव गुप्त का शैवागम दर्शन भी जीवन-जगत के आर-पार आत्मानंद में लीन था। यदि समकाल के दबाव से साहित्य प्रभावित होता हो तो अभिनव गुप्त का काव्य सिद्धांत इसका अपवाद क्यों बने? आनंद की प्राप्ति मनुष्य ही नहीं प्राणिमात्र की प्रियतम मनोभूमि होती है। इन अर्थों में आनंदवाद को कैसे अस्वीकृत किया जा सकता है? किसी भी कला की प्राथमिकता उसके सृजन से उपजे आनंद में निहित होती है। सृजनात्मकता में वास्तविक आनंदानुभूति होती है। हिन्दी के कवि तुलसीदास 'स्वान्तःसुखाय रघुनाथगाथा' लिखकर इसी तर्क को पुष्ट करते हैं, पर प्रतिभिज्ञा दर्शन में आनंद की सीमा यहीं रुक नहीं जाती। जीवन के विविध क्षेत्रों में इसका न्यूनाधिक प्रभाव देखा जा सकता है। रसानुभूति में जिस साधारणीकरण की अहम भूमिका होती है वह आज पेचीदा बन गई है। स्थायीभाव तो सनातन हैं। बदले नहीं, पर विभाव आदि में व्यापक परिवर्तन देखा जा रहा है। इस परिवर्तन में संचार माध्यमों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। शब्दों के अर्थ तेजी से बदल रहे हैं—उनका अभिप्राय भी कम परिवर्तनशील नहीं है। अतः कविकर्म के समक्ष पहाड़ जैसी समस्याएँ खड़ी हैं। राम-सीता, दुष्यंत-शकुंतला, राधा-कृष्ण जैसी आदर्शप्रियता कहाँ है? न वह मर्यादा है न प्रेम की एकनिष्ठता, सरलता व सहजता तो गायब ही है। अतः रसानुभूति वही न होकर समस्याओं एवं प्रश्नों के कूटजाल में उलझ गई है। पहले की अपेक्षा आकुलता बढ़ी है, विश्वास डिगे हैं और विश्वसनीयता घटी है। अब वह तन्मयता नहीं है। काव्य पढ़कर और नाटक देखकर रसानुभूति के साथ एक बेचैनी भी बनी रहती है—उसका कारण है समकाल की समस्याओं का मकड़जाल।

हिंदी के प्रसिद्ध आलोचक रामचंद्र शुक्ल काव्य की काल्पनिक रसानुभूति (आनंदमयता) विरुद्ध थे। वह काव्य के आनंद को लोकजीवन से जोड़कर देखते हैं। अतः समूचा तुलसी साहित्य उन्हें लोकजीवन का प्रेरणास्रोत दिखता है। वह कहते हैं कि "मेरी समझ में रसास्वादन का प्रकृत स्वरूप आनंद शब्द से व्यक्त नहीं होता। लोकोत्तर, अनिर्वचनीय आदि विशेषणों से न तो उसके अवाचकत्व का परिहार होता है और न प्रयोग का प्रायश्चित्त। क्या क्रोध, शोक जुगुप्सा आदि आनंद के रूप धारण करके ही श्रोता के हृदय में प्रकट होते हैं, अपने प्रकृत रूप का सर्वथा विसर्जन कर देते हैं, उसे कुछ भी लगा नहीं रहने देते? क्या कोई दुखांत कथा पढ़कर बहुत देर तक उसकी खिन्नता नहीं बनी रहती? चित्त का द्रुत होना क्या आनंदगत है? इस आनंद शब्द ने काव्य के महत्त्व को बहुत कम कर दिया है।" स्पष्ट है कि शुक्ल जी काव्य के आनंद को लोकजीवन के बीच में ही देखना चाहते हैं। रसानुभूति के संदर्भ में उनकी आधुनिक व्याख्या विशेष महत्त्व रखती है। वह रस के आनंद को लोकजीवन की प्राणवायु मानते हैं।

अभिनव गुप्त का अभिव्यक्तिवाद—ध्वनि अपने प्रौढ़तम रूप में रसानुभूति की व्यंजना कराने लगती है—यह महत्त्वपूर्ण स्थापना है अभिनव गुप्त की। 'अभिनवभारती' में भरतमुनि के रससूत्र की व्यापक व्याख्या हुई है। 'नाट्यशास्त्र' के रस संबंधी भाष्यकारों में अभिनव गुप्त चौथे विद्वान् हैं। वे अपने पूर्ववर्ती आचार्य भट्टनायक के भुक्तिवाद का खंडन करते हैं और रस के संदर्भ में अभिव्यक्तिवाद की स्थापना। आनंदवर्द्धन व्यंजना के आधार पर रसाभिव्यक्ति की स्थापना पहले ही कर चुके थे, पर बाद में भट्टनायक उसका विरोध करते हुए भावना और भोगीकरण की कल्पना करते हैं। अभिनव गुप्त इसे खारिज करते हुए व्यंजना से ही काम चला लेते हैं और दोनों शब्दों को अनावश्यक मानते हैं। भट्टनायक द्वारा प्रयुक्त दो शब्दों—'भावना' और 'भुक्ति' पर अभिनव गुप्त को विशेष आपत्ति है। अभिधा उनके यहाँ विचारणीय नहीं है, जबकि भट्टनायक की अभिधा विशिष्ट प्रकार की है जो शास्त्रीय अभिधा से एकदम अलग है। निष्कर्षतः अभिनव गुप्त का अभिव्यक्तिवाद इसी रूप में देखा जा सकता है। भावना और भोग का अंतर्भाव व्यंजना में ही हो जाता है। रस का आस्वादन करते समय सहृदय मुक्तावस्था में रहता है। स्थायी भाव सहृदय में समान रूप से विद्यमान होते हैं और 'ब्रह्मानंद सहोदरत्व' भी उसमें विद्यमान होता है। सब मिलाकर यह स्मरण रखना अपेक्षित है कि अभिनव गुप्त काव्य को लोक की सामान्य भावभूमि पर ही प्रतिष्ठित करने के समर्थक हैं। यदि सहृदय में अपेक्षित संस्कार का अभाव है तो वह काव्य को सही ढंग से समझने में असमर्थ होता है। उसमें रसानुभूति की मात्रा भी सीमित होती है।

आचार्य अभिनव गुप्त की नवता यही है कि आनंदवर्द्धन के ध्वनिवाद को उन्होंने रसवाद के विशाल फलक पर फैला दिया और ध्वनि को रसरूप में पर्यवसित कर दिया। काव्यसिद्धांत के क्षेत्र में यह स्थूल से सूक्ष्म की ओर बढ़ने की यात्रा है। आगे उन्होंने यह भी इंगित किया कि ध्वनि तो वस्तुरूप है ही अलंकार रूप भी है। 'ध्वन्यालोकलोचन' में वह ध्वनि प्रवर्तक आचार्य आनंदवर्द्धन से भी आगे दिखते हैं। अभिनव गुप्त

की दूसरी सबसे बड़ी देन आनंदवर्द्धन के मौन को मुखर बनाना है। ध्वनिकार आनंदवर्द्धन ने ध्वनियों की गणना छोड़ दी थी—उसे पूरा किया अभिनव गुप्त ने। उन्होंने ध्वनियों की संख्या अनंत बताकर विराम लगा दिया; पर अभिनव गुप्त ने शैवागम की 35 संख्या को ध्वनि में अंतर्भुक्त कर उनकी संख्या गुणीभूतव्यंग्य इत्यादि के रूप में 7420 तक पहुँचा दिया है। इस परिगणन शैली मे विद्वानों ने उनकी कमियों की ओर संकेत तो किया ही, उन पर इस सिद्धांत को जटिल बनाने का आरोप भी मढ़ दिया।

भरतमुनि के 'नाट्यशास्त्र' पर अभिनव गुप्त की लिखी 'अभिनवभारती' उनकी विद्वता का सबसे बड़ा प्रमाण है। यह भाष्य, मूल पुस्तक 'नाट्यशास्त्र' से भी विशाल है। यद्यपि यह खंडित रूप में ही प्राप्त है; पर इसी व्याख्या ने रसशास्त्र पर एक प्रामाणिक, त्रुटिरहित स्थापना से ध्वनि और रस को सहोदर बना दिया, परस्पर पूरक सिद्ध कर दिया। रसशास्त्र पर इस पुस्तक के कुछ अंश का उल्लेख हेमचंद्राचार्य ने 'काव्यानुशासन' में किया है। अभिनव गुप्त ने साहित्य का पाठ भट्टेन्दुराज नामक महामनीषी से पढ़ा था। वह चाहते तो साहित्यशास्त्र पर ग्रंथ लिख सकते थे, पर उन्होंने अपनी दो टीका पुस्तकों 'ध्वन्यालोकलोचन' व 'अभिनवभारती' द्वारा काव्य सिद्धांतों के दो प्रमुख संप्रदायों पर पर्याप्त प्रकाश बिखेरकर आचार्यों की अग्रणी पंक्ति में अपना नाम अंकित करा लिया है।

कश्मीरवासी पं. अभिनव गुप्त का कश्मीर आज जल रहा है। उनका 'तंत्रालोक' आज उदास पड़ा है। उसका कारण है—कश्मीरपुत्र अभिनव गुप्त को भूल जाना। जीवन में आनंद को नकारकर भोग को महत्त्व देना, अनिर्वचनीयता को भूल कर विलासिता में डूब जाना। ध्वनि, नाटक एवं जीन में रस के जबर्दस्त साधक आचार्य अभिनव गुप्त और उनके दर्शन में निमग्न तमाम विशेषताएँ पुनः दिखने लगी हैं। यह देख मन व्यथित हो जाता है। आज आवश्यकता है उनके पुनर्पाठ की, उन्हें पुनः स्मरण करने की।

संदर्भ—

1. संस्कृत काव्यशास्त्र का आलोचनात्मक इतिहास, पृ. 180, रेवाप्रसाद द्विवेदी।

लघुकथा

परिंदे

रेखा राजवंशी (ऑस्ट्रेलिया)

वक्त जाने कहाँ उड़ गया, पता ही नहीं चला। अब रामकुमार सत्तासी वर्ष के हो गए थे। उन्होंने अखबार में नज़र गड़ाई, आज 21 नवंबर है, बीस साल पहले जब इकलौता बेटा ऑस्ट्रेलिया आया था, तब वे फूले नहीं समाए थे। शीघ्र ही उसने रामकुमार जी को बुला लिया। घर में सभी सुख-सुविधाएँ थीं। बहू, बच्चों के साथ वक्त अच्छा कट रहा था, बहू उनका ख्याल रखती, काम पर जाती तो खाना बना जाती, फोन करके हाल पूछती रहती। काम-काज से जितना वक्त मिलता, बेटा उनके साथ बिताता। रामकुमार खुश थे। वक्त बीतता गया, पर पिछले दो वर्षों ने पूरा शरीर झिंझोड़ डाला, बीमार रहने लगे। बच्चों की पढ़ाई, बहू-बेटे की नौकरी, अचानक अकेले से हो गए। बेटे ने कुछ दिन नर्स रखी, फिर डॉक्टर्स के कहने पर उन्हें नर्सिंग होम आना पड़ा। हफ्ते में चार-पाँच बार बेटा, बहू, बच्चे आ जाते, फोन पर बात होती रहतीं, पर जब रात होती तो भारत के सपने दिखने लगते। तीन बेटियाँ भारत में थीं, उनको देखने का मन होता। मन मजबूत था, लेकिन शरीर में ताकत नहीं थी। मन परिंदे-सा उड़कर जाता और उन्हें प्यार से सहलाकर आ जाता।

इस नर्सिंग होम में सभी व्यक्ति टर्मिनल अवस्था में भर्ती किए जाते हैं। चाहे-अनचाहे शायद सभी मौत की प्रतीक्षा कर रहे थे, उससे ज्यादा ज़िंदगी की लड़ाई लड़ रहे थे। कमरे में दो पलंग थे। पास वाले पलंग पर लैरी नाम का एक व्यक्ति था। कभी-कभी उससे बतिया लेते, उसकी जिंदादिली उन्हें अच्छी लगती।

एक रात रामकुमार किसी के रोने की आवाज से उठ गए, लैरी रो रहा था, पहली बार... डगमगाते पैरों से रामकुमार उठे, उन्होंने लैरी को पानी दिया, टिशू का डिब्बा दिया। लैरी ने उन्हें बताया कि वह 'स्टोसेन जेनेरेशन' का व्यक्ति है, यानि कि उस पीढ़ी का, जिसे अंग्रेज उनके माता-पिता से छीनकर ले गए थे। तब वो सिर्फ दो साल का था। उसके बाद उसने अपने माता-पिता भाई-बहिन किसी को नहीं देखा। लैरी एक बार अपने गाँव जाना चाहता था, वह घर जिसमें वह कभी नहीं रह सका, ढूँढ़ना चाहता था। वे लोग जिन्हें वह जानता तक नहीं था, उनसे जुड़ना चाहता था। कभी वक्त नहीं था तो कभी पैसे नहीं थे, और अब...

रामकुमार हतप्रभ से देखते रहे, जाने कब लैरी की पीड़ा उनकी पीड़ा बन गई, उनका दर्द उनके मन में उठ आया। उनकी आँखों से आँसुओं की धार बह निकली। वे आगे बढ़े और लैरी के गले लग गए। नर्सिंग होम के सन्नाटे में अब दो लोगों के सुबकने की आवाज गूँज रही थी।

सम्पर्क: rekhalok@hotmail.com

महादेवी वर्मा का गद्य: चिन्तन और संवेदना

राजेन्द्र परदेसी

"...कलात्मक चित्रण शैली के साथ वे भक्तिन का स्वभाव कुछ इस प्रकार दर्शाती हैं कि आकार-प्रकार ही नहीं मानसिक बोध, भावनाएँ भी सामने आ जाती हैं— ''भक्तिन के गोल नथुने कुछ फैल जाते हैं, भृकुटियाँ कुछ कुंचित हो उठती हैं, माथे पर खिंची रेखाएँ सिमटने लगती हैं और होंठों के आसपास बिखरी झुर्रियाँ उलझ जाती हैं। पर वह उसे चाय देती है अवश्य। हाँ, यह सत्य है कि गिलास वही ठूंठ निकालती है जिसकी मुरादाबादी कलई के भीतर से पीतल झाँकने लगी है।'' ..."

सम्पर्क : 44, शिव विहार, फरीदी नगर, लखनऊ-226016
मोबाइल: 09415045584

आधुनिक हिन्दी कविता में छायावाद अपनी काव्यात्मकता एवं दार्शनिकता के लिए उल्लेखनीय है। स्वाधीनता की चेतना, सौंदर्यबोध, आत्मा की अनुभूति आदि के लिए छायावाद को आज भी चर्चा का विषय स्वीकार किया जाता है। महादेवी वर्मा (1907-1987) इसी छायावाद की एक महत्त्वपूर्ण कवयित्री हैं। अपनी गंभीरता, चिंतनशीलता, करुणा, अनुभूति के कारण महादेवी वर्मा ने गीतात्मक चेतना को नया स्वरूप प्रदान किया। कलात्मकता और संवेदना के संगम से जो काव्य महादेवी जी की कलम से सामने आया वह उन्हें आँसुओं और विरह का पोषक सिद्ध करता है। इसके ठीक विपरीत संवेदना और आत्मीयता के धरातल पर खड़े होकर वे गद्य रचना भी करती हैं, जो चिन्तन, स्मरण, अनुभूति के पलों को व्यक्त करता है।

महादेवी वर्मा का गद्य किसी भी दृष्टि से काव्य से कम नहीं है। गद्य की अपनी एक स्वतंत्र और मौलिक सत्ता है और वह महादेवी वर्मा के संवेदनशील कवि हृदय का साथ लेकर और भी मनोहर रूप में प्रस्फुटित हुआ है। उनके गद्य संसार को जानने-समझने की दृष्टि से तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। पहले भाग में संस्मरणों और रेखाचित्रों को शामिल किया जाता है। इसमें प्रमुख रूप से 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ', 'पथ के साथी', 'मेरा परिवार', प्रदर्शित होते हैं। नारी विषयक लेखों के रूप में संकलित 'शृंखला की कड़ियाँ' को दूसरा भाग तथा 'साहित्यकार की आस्था का अन्य निबन्ध' के रूप में संकलित निबन्धों को तीसरे भाग के तौर पर देखा जा सकता है।

गद्य लेखक के रूप में महादेवी वर्मा का स्नेह ममत्व सामने आया तो सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध आक्रोश भी प्रदर्शित हुआ है। कविता उनके निजी जीवन का आधार बनी तो गद्य में सामाजिक ताना-बाना दिखाई देता है। संस्मरणों को देखें तो आसानी से ज्ञात होता है कि पात्रों की स्थिति, मनोदशा, सामाजिक स्थिति और उनका सम्पूर्ण चित्र प्रस्तुत कर उनके परिवारजन अथवा सहयोगी रचनाकार मात्र ही नहीं रहे हैं बल्कि समाज के उपेक्षित-शोषित लोगों को अपना स्नेह देने के साथ-साथ निरीह पशु-पक्षियों को भी आत्मीयता प्रदान की है। 'अतीत के चलचित्र' और 'स्मृति की रेखाएँ' सामान्य जन के मर्म और भावबोध को छूने की शक्ति रखती हैं। इसका कारण इन दो संग्रहों में महादेवी का स्नेह पाने वाले प्राणी हैं। कोई क्षीण काया वाला है, कोई रोगी, कोई विधवा, कोई नेत्रहीन है; सभी प्राणी साकार व्यक्तित्व के साथ पाठकों के हृदय को प्रभावित करते हैं। रामा नौकर, मातृविहीना बालिका 'बिन्दा', परित्यक्ता सबिया, बाल विधवा माता, पितृहीन घीसा, नेत्रहीन अलोपी,

विधुर बदलू, भक्तिन, चीनी फेरी वाला, ठकुरी बाबा, बिबिया धोबिन और गुँनिया तेलिन आदि करुणा, ममता, सरलता की साकार मूर्ति बन कर सामने आतीं हैं। महादेवी जी का करुण-सिक्त व्यक्तित्व इन निरीह प्राणियों को भी आभासित करता है।

'पथ के साथी' में महादेवी वर्मा के सहयोगी तथा अग्रज छवियों के साथ संजोकर महादेवी के व्यक्तित्व और उनके गद्य लेखन का परिचय देते हैं। अपने साथियों के व्यक्तित्व को महादेवी ने बेधने का प्रयास किया और वे इसमें सफल भी रही हैं। महादेवी वर्मा के गद्य का विकास या तो पद्य के साथी में दिखता है जहाँ उनकी भाषा का लालित्य अपने सहयोगियों के व्यक्तित्व को आभा देता है, या फिर यह विद्रोही स्वर के रूप में 'शृंखला की कड़ियाँ' में सामने आता है। महादेवी वर्मा का गद्य लेखन उनके काव्यात्मक व्यक्तित्व की आभा से निखरा है। इसी से अनुभूति की अभिव्यक्ति में चित्रात्मकता और भाव व्यंजना एक साथ संशलिष्ट रूप में प्रदर्शित हुई हैं। अपनी मार्मिक और भाषागत व्यंजना के कारण महादेवी ने अपने साथियों का व्यक्तित्व कहीं विशद कथाचित्र के रूप में रखा है या फिर सूक्ष्म बिम्ब-रेखा के रूप में। प्रसाद के व्यक्तित्व का वर्णन करते समय महादेवी का कल्पना चित्र विराट कथाचित्र का रूप धारण कर लेता है-'हिमालय के ढाल पर उसकी गर्वीली चोटियों से समता करता हुआ सीधा ऊँचा देवदारू का वृक्ष था। उसका मस्तक हिम-आतप-वर्षा का प्रहार झेलता था। उसकी विस्तृत शाखाओं को आँधी तूफान झंकझोरते थे और उसकी जड़ों से एक छोटी पतली जलधारा आँखमिचौनी खेलती थी। ठिठुराने वाले हिमपात, प्रखर धूप और मूसलाधार वर्षा के बीच भी उसका मस्तक उन्नत रहा और आँधी और वर्फीले बवंडर के झकोरे सहकर भी वह निष्कम्प निश्चल खड़ा रहा; पर जब एक दिन संघर्षों में विजयी के समान आकाश मस्तक उठाये, आलोक-स्नात वह उन्नत और हिमकिरीटनी चोटियों से अपनी ऊँचाई नाप रहा था, तब एक विचित्र घटना घटी'।" इसके विपरीत 'निराला' के व्यक्तित्व की व्यंजना एक सूक्ष्म बिम्ब रेखा के रूप में कुछ इस तरह प्रदर्शित की है-'वे उस झंझा के समान हैं जो हल्की वस्तुओं के साथ भारी वस्तुओं को भी उड़ा ले जाती है। उस मन्द समीर जैसे नहीं जो सुगन्ध न मिले तो दुर्गन्ध का भार भी ढोता फिरता है।' महादेवी ने यथासम्भव अपने पात्रों का रेखांकन निस्संग रूप में किया है। अपनी सशक्त भाषा शैली के चलते महादेवी ने पात्रों को जीवन्तता तो प्रदान की ही है उनको स्नेह एवं एक विशिष्ट शैली से भी सँवारा है।

कलात्मक चित्रण शैली के साथ वे भक्तिन का स्वभाव कुछ इस प्रकार दर्शाती हैं कि आकार-प्रकार ही नहीं मानसिक बोध, भावनाएँ भी सामने आ जाती हैं—"भक्तिन के गोल नथुने कुछ फैल जाते हैं, भृकुटियाँ कुछ कुंचित हो उठती हैं, माथे पर खिंची रेखाएँ सिमटने लगती हैं और होंठों के आसपास बिखरी झुर्रियाँ उलझ जाती हैं। पर वह उसे चाय देती है अवश्य। हाँ, यह सत्य है कि गिलास वही ठूंठ निकालती है जिसकी मुरादाबादी कलई के भीतर से पीतल झाँकने लगी है।" इसी तरह का एक और बिम्ब विधान—"इस बार रुककर उत्तर देने वाले को ठीक से देखने की इच्छा हुई। धूल से मटमैले सफेद किरमिच के जूते में छोटे पैर छिपाये, पतलून और पैजामे का सम्मिश्रित परिणाम जैसा पैजामा और कुरते तथा कोट की एकता के आधार पर सिला कोट पहने, उधड़े हुए किनारों से पुरानेपन की घोषणा करते हुए हैट से आधा माथा ढँके, दाढ़ी-मूँछ विहीन दुबली नाटी जो मूर्ति खड़ी थी, वह तो शाश्वत चीनी है।" महादेवी की तूलिका ने उज्ज्वलता और विशालता के साथ प्राणियों के व्यक्तित्व को स्वर दिया तो स्मृति के साथ प्राणियों के अतिरिक्त पशु-

पक्षियों को भी व्यक्तित्व प्रदान किया है। 'मेरा परिवार' उनकी अद्भुत गद्यकृति है जो उनकी सोच, स्मृति, स्नेह, करुणा के कई रूप लेकर हिन्दी साहित्य की धरोहर बनी है। अपने आप में अमूल्य और एकमात्र कृति के रूप में स्वीकार्य 'मेरा परिवार' में महादेवी का संसार नीलकण्ठ मोर, गिल्लू गिलहरी, सोना हिरणी, दुर्मुख खरगोश, गौरा गाय, रानी घोड़ी, रोजी कुतिया, नीलू कुत्ता, निक्को नेवला के साथ सजा-सँवरा है। महादेवी वर्मा का इनके साथ पारिवारिक सदस्यों की भाँति घुल-मिलकर रहने से ही वे इनके बारे में स्पष्ट रूप से अपनी कलम चला सकी हैं। गौर गाय की दुःखद मृत्यु हो अथवा गिल्लू गिलहरी का प्राण त्यागना, सभी को महादेवी ने करुणा के साथ कलम के द्वारा जीवित रखा है।

महादेवी वर्मा के गद्य को संश्लिष्ट रूप से परखा जाए तो भाषा विकास का चरम नारी-विषयक लेखों को लेकर सामने आया है। चिन्तन और अनुभूति के क्षणों को क्षणदा, संकल्पित, संभाषण और भारतीय संस्कृति के स्वर में महादेवी ने सजाया है तो आक्रोश एवं विवशता को शृंखला की कड़ियाँ में दर्शाया है। देखा जाए तो महादेवी वर्मा के गद्य चिन्तन की चार शैलीगत विशेषताएं अथवा स्वरूप सामने आते हैं। ये हैं—चिन्तन प्रधान विवेचनात्मक गद्य, चित्रण प्रधान कलात्मक गद्य, ओज प्रधान विचारात्मक गद्य तथा इतिवृत्तप्रधान वस्तु वर्णनात्मक गद्य। संस्कृति के संबंध में वे विवेचना करते हुए लिखती हैं कि वह ऐसी नदी है जिसकी गति अनंत है। वह विशेष देश, काल, जलवायु में विकसित मानव-समूह की व्यक्त और अव्यक्त प्रवृत्तियों का परिष्कार करती है और उस परिष्कार से उत्पन्न विशेषताओं को सुरक्षित रखती है।" महादेवी के गद्य की यह एक प्रमुख विशेषता रही है कि उन्होंने किसी भी शैली को लेकर गद्य रचना की हो पर सभी में चित्रात्मक वर्णनात्मकता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। जीते गाते प्राणियों का रूप हो या उछलते-कूदते जानवरों का रूप, सभी को तो साकार रूप दिया है वहीं बेजान वस्तुओं का स्वरूप भी साकार किया है। कुछ इसी तरह का उदाहरण काशी वर्णन करते समय मिलता है—"आकाश को नीले कपड़े की चीरों में विभाजित कर देने वाली काशी की गलियों में प्रवेश कर मुझे सदा लगता है मानो मैं किसी विशालकाय अजगर के उदर में घूम रही हूँ, जिसने अपनी साँसों में मुझे ही नहीं, कुछ दुकानों को भी अपने भीतर खींच लिया है और अब बाहर आने का एकमात्र द्वार उसका मुख बंद हो गया है।" गद्य लेखन में ध्वनियों की इतनी गहरी पकड़ और अद्वितीय सांकेतिकता के साथ महादेवी चित्रात्मकता और काव्यात्मक संगीतात्मकता के द्वारा अनुपम गद्य रचना कर सकी हैं। इसके अतिरिक्त भाषा की भंगिमापूर्ण व्यंजना महादेवी के गद्य को और भी समर्थ बनाती है।

सशक्त विषयवस्तु और विचार प्रवाह में महादेवी का नारी चिंतन अधिक मुखर और प्रभावी रूप लेकर सामने आया है। नारी की मूक पीड़ा को महादेवी ने अपनी पीड़ा समझ कर मुखर अभिव्यक्ति दी है। नारी के शोषित स्वरूप से वे हमेशा परेशान रही हैं। दास्य रूप में नारी की छवि को तोड़ने की अकुलाहट उनके भीतर उठती दिखती है। वे स्त्री को आर्थिक आजादी की पक्षधर रहीं साथ ही उसके शोषण और प्रदर्शन की वस्तु के विरुद्ध भी रहीं। वे इस बात से चिंतित रहीं कि समाज के सभी क्षेत्रों में पुरुष की सहयोगी रही नारी को भारतीय समाज ने उचित स्थान नहीं दिया। नारी के शोषण का एक अप्रत्यक्ष रूप वे विवाह पूर्व उसके दिखाने के चलन को स्वीकारती हैं और कहती हैं—"जिस प्रकार भावी पति-परिवार के व्यक्ति उसे चलाकर, हँसाकर, लिखा-पढ़ा कर देखते हैं तथा लौटकर उसकी लंबाई-चैड़ाई, मोटापन, दुबलापन, नखशिख आदि के विषय में अपनी धारणाएँ बनाते हैं उसे सुनकर दास प्रथा के समय बिकने वाली दासियों की याद आए बिना नहीं रहती।" वे मानती हैं कि यदि नारी को आगे बढ़ना है तो उसे अपना अस्तित्व पहचानना होगा, स्वीकारना होगा। नारी की स्थिति को लेकर उनके मन में तीव्र आक्रोश रहा है। 'शृंखला की कड़ियां' में वे एक स्थान पर लिखती हैं—"शताब्दियों की शताब्दियाँ आती जाती रहीं, परंतु स्त्री की स्थिति की एकरसता में कोई परिवर्तन न हो सका। किसी भी स्मृतिकार ने उसके जीवन की विषमता पर ध्यान देने का अवकाश न पाया; किसी भी शास्त्रकार ने पुरुष से भिन्न करके उसकी समस्या को नहीं देखा।" नारी स्थिति पर लिखे इन निबंधों में महादेवी वर्मा की सहानुभूति की अभिव्यक्ति मात्र नहीं है, बल्कि समाज शास्त्रीय विश्लेषण प्रमुखता से उपस्थित है। विधवा नारी की दशा को उन्होंने स्वयं देखा, समझा है साथ ही वेश्या नारी के नारकीय जीवन को भी अपनी विश्लेषणात्मक दृष्टि से ओझल नहीं कर सकीं। अपनी सशक्त क्षमता के गद्य आधार पर वे वेश्याओं के बारे में भी लिखती हैं—"यदि स्त्री की ओर देखा जाए तो निश्चय ही देखने वाला काँप उठेगा। उसके हृदय में प्यास है परंतु भाग्य ने उसे मृग-मरीचिका में निर्वासन कर दिया है। उसे जीवन भर आदि से अंत तक सौंदर्य की हाट लगानी पड़ी...।" महादेवी का यह गद्य करुणा से ओत-प्रोत है, जिसमें स्नेह है तो समाज की व्यवस्था को तार-तार करने वालों के विरुद्ध आक्रोश का भाव भी है। पुरुषों को नारी जाति के अपमान का जिम्मेवार मान कर वे लिखती हैं—"पुरुष बेचारे की उम्र तपस्या और अखंड साधना स्त्री के द्वारा प्रायः भंग होती रही है, इसी से उसने इस मायाविनी जाति के स्वभाव की व्याख्या करने के लिए पोथे रच डाले।"

महादेवी वर्मा के गद्य का चिंतनपरक अध्ययन किया जाए तो ज्ञात होगा कि उनमें जितनी करुणा है उतना विद्रोह भी, समन्वय की भावना है तो स्नेह का सागर भी है। इन सबके साथ महादेवी ने चिंतक की दृष्टि से, विश्लेषक की दृष्टि से तथा परीक्षक की दृष्टि से गद्य रचनाएँ की हैं। उनके विचार उनकी भोगी जीवन तपस्या का प्रसाद हैं न कि बांची गई पोथी का परिणाम। गद्य के प्रस्तुतिकरण में चित्रात्मकता प्रदर्शित कर देना महादेवी की कवि हृदयशीलता से उपजा है। वे मात्र गद्य रचना करने को रचना करती नहीं लगीं वरन् लगा कि इस समाज में विचारों का, स्नेह सहयोग का, संवेदना का जो अभाव पैदा होता जा रहा है वे उसको पहचानवाने और मिटाने की नीयत से गद्य रचना करती रहीं। डॉ. नगेन्द्र एक स्थान पर कहते है—"सारतः महादेवी के ये निबंध काव्य के शाश्वत् सिद्धान्तों के अमर व्याख्यान हैं। आज साहित्यिक मूल्यों के बवण्डर में भटका हुआ जिज्ञासु इन्हें आलोक स्तंभ मान कर बहुत कुछ स्थिरता पा सकता है।" महादेवी वर्मा ने मानवीय संवेदनाओं की भावभूमि का विस्तार किया। इसमें सभी सहयोगी मानवों के अतिरिक्त तिरस्कृत, शोषित मनुष्य तथा पशु-पक्षी भी महादेवी का स्नेह पाते हैं। उपेक्षित चरित्रों को नए उपमानों का सौंदर्य ओढ़ा कर महादेवी ने नया प्रतिमान प्रस्तुत किया है—यह सौंदर्य शारीरिक न होकर भावात्मक-संवेदनात्मक है। इस भावभूमि पर तैयार महादेवी का गद्य हिन्दी साहित्य का सर्वोत्तम अंश स्वीकारा जाता है। जो पाठकों के हृदय में काव्यात्मक और चित्रात्मकता के साथ सदैव सजीव रहता है।

ज्ञानपीठ विजेता ओ.एन.वी. कुरुप का काव्य

डॉ. प्रमोद कोवप्रत

"बचपन से जिन सागर एवं झीलों को मैं देखता आ रहा हूँ उनका और उधर मुसीबत झेलने वाले मनुष्य के आँसुओं का नमक आदि का मिश्रण है मेरी कविता। थोड़ा सी मिठास भी है। नमक और मीठापन जो मनुष्य जीवन से शब्दबद्ध करने वाला एक मामूली कवि हूँ मैं। टैगोर की कविता में एक पंक्ति है—"सदा विनम्रता ही मेरा मुकुट हो। यह मैं मुझे याद दिलाता हूँ मैं एक साधारण कवि मात्र हूँ। पर मात्र कवि कहना बड़ी जिम्मेदारी होती है। सभी प्रलोभनों के परे रहकर हम अक्षरों को संभालने वाले हैं। अक्षरों की उस अंजुरी में मनुष्य की भावना एवं आशाओं को भरना है यह समझता हूँ।"

ज्ञानपीठ से सम्मानित मलयालम के लोकप्रिय कवि ओ.एन.वी. कुरुप के ये शब्द खुद प्रमाणित करते हैं कि समय एवं समाज के प्रति वे कितने प्रतिबद्ध हैं। माटी का स्वर जरूर परिवर्तन एवं स्थिरता का स्वर है। ओ.एन.वी. कुरुप ऐसे ही प्रतिबद्ध एवं प्रतिभाशाली कवि हैं जिन्होंने सर्वहारा के स्वर को बुलंद करने के साथ-साथ सामाजिक परिवर्तन की दिशा की ओर अपनी वाणी को मोड़ दिया।

ओ.एन.वी. कुरुप की खासियत यही है कि उन्होंने मनुष्य के दुख को अपना ही दुख बना दिया। जनप्रिय शैली में संगीतात्मकता के साथ वे लिखते थे। समत्वपूर्ण एक समाज का सपना उन्होंने देखा तो कविता में विप्लव की ज्वाला भड़कने लगी। नया सामाजिक बोध, कृषक संस्कृति एवं सर्वहारा के प्रति निष्ठा की भावना उनकी कविता को कालजयी बनाती है। मानव हृदय को गहराई से परखने वाले कवि के रूप में वे उभर आए। सामाजिक यथार्थ की तरह रोमांटिक भावना भी हम यहाँ देख सकते हैं। 'प्यासा पेय पात्र, एक बूँद रोशनी, नील आँखें, मरुस्थल, अक्षर, काले पक्षी का गीत, नमक, भूमि के लिए एक मृत्यु गीत, अग्निशलभ, अपराहन, मृगया, उज्जयिनी, स्वयंवर आदि कृतियाँ अत्यंत चर्चित हैं। फिल्मों के लिए जितने भी गीत लिखे गए वे लोकप्रिय ही नहीं, कालजयी भी हैं।

बच्चे को दुग्धपान कराने वाली माँ के रूप में वे प्रकृति एवं धरती को देखते हैं। माँ रूपी मिट्टी एवं प्रकृति को पुरुष वर्चस्व वाले आभिजात्य स्वभाव से मुक्त करना ही क्रांति है। मानवीय एकता एवं समता को वे महत्त्व देते हैं। 'हँसिया एवं कोयल' में यही भाव प्रकट है। 'मिट्टी का स्वप्न' में वे धरती को बार-बार जोतने तथा नये फसल के लिए यहाँ बोने का आह्वान करते हैं। धर्मनिरपेक्ष दृष्टि के साथ सभी को कवि देखते हैं। पर धरती तरुणाई के साथ खड़ी है। 'भूमि, एक बूँद रोशनी' की पंक्तियाँ हैं—

"देखते देखते बुढ़ा बनेगी संतानें
मगर माँ तेरी नव तरुणाई

"...हमारे समाज की बड़ी त्रासदी विडंबना है कि आज हम कई संकटपूर्ण क्षणों से गुजर रहे हैं। खाने के लिए, पानी के लिए, आवास के लिए, समता के लिए, न्याय के लिए तरसने वाली जनता की लंबी कतार देख सकते हैं। सच में हम अपने पेट भरने के मामले तक में मर रहे हैं।..."

सम्पर्क : प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
कालिकट विश्वविद्यालय, मलापुरम जिला, केरल-673635
मोबाइल: 09447887384

गरिमामय तेरे तन पर वीणा
का नाद बजा रही है''

फूल, चिड़िया, पेड़, नदी सभी माँ के रूप में कवि के सम्मुख उपस्थित हैं। ऐसी माताओं से भरा मातृसत्तात्मक घराना है प्रकृति। दूसरों के लिए खुद जलने वाला सूरज ओ.एन.वी. के लिए सुस्नेह की मूर्ति है।

ओ.एन.वी. ने नवोत्थान के मूल्यों को बढ़ा दिया। रूमानियत के साथ विप्लव से भी गले लगाया। भारतीय संस्कृति के प्रति आस्था दिखायी। मानवता के खिलाफ जो भी अत्याचार होता है उसका खुला विरोध किया। 'कविता से' शीर्षक कविता की पंक्तियाँ हैं—

''दिल में कभी संजोये रखे
आदर्श मधुर इच्छाएँ, विश्वास

छिपके से कोई निषाद द्वारा
छोड़े बाण से
आहत होकर निस्संग बन
यही जीवजगत की गति है
यह गाने को
मैं तैयार हूँ निषाद को शाप दूँगा''

'मोरपंख' ओ.एन.वी. की प्रारंभिक कविताओं में चर्चित है। कवि यहाँ से जीवन की समस्त दिशाओं की ओर प्रयाण शुरू करते हैं। मानवता के नये जीवन दर्शन की उद्घोषणा यहाँ देख सकते हैं। केरलीय प्रकृति का सौंदर्य ही नहीं पारिस्थितिक भावबोध भी यहाँ प्रकट है। 'गुलाब की बूँद' जैसी कविता हमें विश्वप्रेम की विशालता की ओर ले चलती है। शरण की अवधारणा देखिए 'शरणार्थी' कविता में। शरणार्थी पूछता है शरण कैसे तब कवि—

''बंदूकें इधर मूक हो जाए सदा
वाणी इधर सत्य मंत्र हो जाए''

'अग्निशलभ' नामक संकलन में कई श्रेष्ठ कविताएँ हैं—'वाग्दत्त भूमि', 'तानसेन' 'बाँझ मेघ', छोटे फूल, लाल फूल आदि। वर्तमान की त्रासदी पर कवि का प्रश्न है—

''कहाँ है वह वादा की गयी धरती
कहाँ है वह स्वर्णिम धरती?''

'अक्षर' नामक संकलन की अक्षर, फीनिक्स, तूफान के पहले, सोपान संगीत, कबूतर, बस के इंतजार में, निशागंधी, तू कितना धन्य आदि कई कविताएँ महत्त्वपूर्ण हैं। फीनिक्स में कवि बताते हैं—

'चिता से मैं पुनर्जन्म लूँगा
पंख, फूल जैसा पसारकर
खिलकर जाग उठूँगा''

दूसरी एक कविता में तूफान को गाकर जागने वाले समुद्री पक्षी के साथ अनंतता की ओर उड़ने के लिए चाहने वाला कवि मन देख सकते हैं—

''तेरे साथ उड़ना चाहता हूँ मैं
फिर भी मेरे उपेक्षित अहाते के फूल
से प्यार करता हूँ''

'नमक' नामक कविता सशक्त है। वह बिंब अपने आप में विलक्षण है। कवि के शब्दों में—

''नमक डालने पर ही स्वाद है
चावल की माँड में नमक
का कण गिरकर
गायब होगा, उसी तरह मेरा लाडला
तेरी नानी भी एक दिन गायब होगी
तो भी तेरे अंदर का नमक होगी नानी
हमेशा, मेरे लाडले को
छोड़ कहाँ जाएगी''

भूमि के लिए एक मृत्यु गीत, गेहूँ के दाने, सूर्य गीत आदि काफी लोकप्रिय कविताएँ हैं। वर्तमान समय की त्रासदी तृष्णा है। सबकुछ लूटने एवं मुनाफा कमाने की तृष्णा। उपभोक्ता संस्कृति में सबसे अधिक दोहन धरती का हो रहा है। ओ.एन.वी. कुरुप की दृष्टि में हमारी धरती मरने वाली है। आसन्न संकट पर कवि बताते हैं—

''अब तक नहीं मरी धरती तेरी
आसन्न मृत्यु पर तुझे आत्मशांति''

धरती का सर्वनाश हो रहा है। यहाँ जंगल का विनाश हो रहा है, नदी गायब हो रही है, पहाड़ों को धराशायी कर रहे हैं। कवि को लगता है कि धरती मुंडित सिर के साथ भ्रष्ट होकर चल रही है। बलात्कार की गंदी गांठ लेकर, संतानों के पाप की गंदगी को ढोकर चल रही है। धरती के आधा खाली मन में तीव्र वेदना की ज्वाला है। यह बेहद त्रासद स्थिति है। 'गेहूँ के दाने' में एक कृषक लड़की का निरीह चित्र है, उसके झुलसे हुए सपने हैं। भय और आशंकाओं के बीच जीने वाली भोली भाली लड़की को कवि संबोधित करते हैं—

''अरे लड़की तेरा नाम मैं नहीं जानता
पर तेरी हालत जानता हूँ और गाता हूँ
गेहूँ की बालियों का रंग है
डरे हुए हिरण की आँखें हैं
हाथ में कंगन नहीं, पैर में पाजेब नहीं
शरीर पर कोई भी आभूषण नहीं
और बढ़ते यौवन को ओढ़ने के लिए
फटी साड़ी ही बची है।''

ओ.एन.वी. कुरुप के 'उज्जयिनी' और 'स्वयंवर' मिथकीय आधार पर लिखे गये खंडकाव्य हैं। 'उज्जयिनी' में कालिदास का जीवन है। कवि ने मौलिक उद्भावना यहाँ दिखायी है। कवि के शब्दों में "यह शोध से मिलने वाला ऐतिहासिक सत्य नहीं है, कालिदास की कृतियों से एक बेचैन आत्मा की यात्रा के दौरान इकट्ठे किये भावना फल मात्र है। यह इतिहास अंधेरे में पड़ते समय हृदय की आंख द्वारा दीखने वाला सत्य है।" 'स्वयंवर' महाभारत का कथा बीज है। यहाँ गालव और माधवी की प्रस्तुति द्वारा सशक्त रूप से कवि ने स्त्री शोषण एवं उत्पीड़न का विरोध किया है। ययाति की पुत्री माधवी का भव्य चरित्र यहाँ प्रस्तुत है। साथ ही पुरुष वर्चस्व का काला पक्ष, गुरु-शिष्य संबंध तथा राजदरबारों में जिस तरह की सामंती जर्जरता फैली थी उसका खुला चित्र मिल जाता है।

'मैं अग्नि' ओ.एन.वी. कुरुप की सुंदर कविता है। अग्नि की गरमी और रोशनी देखिए—

"किसी भी दिये में मैं रोशनी हूँ
किसी भी अंगीठी में
मैं एक ही गरमी हूँ"

ओ.एन.वी. कुरुप की कविता वर्चस्व का विरोध करती है। स्त्री के प्रसंग में भी यह दृष्टव्य है—

"कण्णकी जब शाप देती है
तब जल जाते हैं महानगर
महान पैसे और गृह की कतारें
सेना के कर रथ, बेकार सिंहासन
जल जाते हैं, और ज्वाला फैलती है"

उत्थान के मुहूर्त के लिए अंधेरे में कवि हवा या बादल के रूप मे भटक रहे हैं। दुख के कड़वेपन को अमृत के रूप में परिवर्तित करते हैं। आज के युग की दुर्गति देखिए—

"वृद्ध को स्वस्थ होकर
सोने के लिए एक
ड्रग की तलाश लेने वाली
आवाज़ है इस सदी की"

हमारे समाज की बड़ी त्रासदी विडंबना है कि आज हम कई संकटपूर्ण क्षणों से गुजर रहे हैं। खाने के लिए, पानी के लिए, आवास के लिए, समता के लिए, न्याय के लिए तरसने वाली जनता की लंबी कतार देख सकते हैं। सच में हम अपने पेट भरने के मामले तक में मर रहे हैं। ओ.एन.वी. की कविता 'दोस्त के लिए एक पत्र' की पंक्तियाँ देखिए—

"चावल के लिए, दवा के लिए
गाड़ी के लिए लाइन में खड़े होकर
अब भी हम मर तो नहीं रहे हैं
हम एक ही हैं न?"

वास्तव मे ओ.एन.वी. कुरुप का काव्य-संसार एक साथ विशाल और गहरा है। प्रगतिशील आन्दोलन से प्रेरणा ग्रहण करना, रूमानियत को बरकरार रखना, अपनी मिट्टी एवं धरती को माँ जैसा प्यार करना, समाज के हाशियेकृत सर्वहारा को आवाज देना, पारिस्थितिक आतंक पर सचेत कराना, मिथक एवं इतिहास के प्रति सही दृष्टिकोण, स्त्री के प्रति आदर की भावना, देश की संस्कृति से प्यार सर्वोपरि मानव मुक्ति का आग्रह ये सब ओ.एन.वी. की कविता को अति विशिष्ट बना देते हैं। प्रतीतात्मकता, संगीतात्मकता, लयात्मकता, गेयता, लोकप्रियता, भाषा शैली की सहजता आदि कविता के विशिष्ट गुण यहाँ द्रष्टव्य हैं। केरल के समाज से ही ओ.एन.वी. कविता के लिए खाद एवं पानी लेते हैं। शोषकों के प्रति सहानुभूति के साथ सामंतवादी-पूँजीवादी व्यवस्था का विरोध भी उन्होंने किया। कविता को सामयिक यथार्थ से जोड़ने की कला वे जानते हैं। अपनी काव्य रचना की प्रक्रिया पर खुद ओ.एन.वी. ने बताया है—"कुछ लोग भीड़ में अकेले बैठकर लिख सकते हैं। मैं भी ऐसा लिख पाया। किंतु, अब मुझे ज्यादा एकांतता और एकाग्रता की जरूरत लगती है क्योंकि हमारे ही अंदर छिपे पड़े, ओढ़े हुए कुछ दैनिक जीवन की घटनाओं के कविता बाह्य वाली बातों से कुछ को छोड़कर, कविता के लिए जरूरी कुछ को इकट्ठा करके अक्षर के रूप में बदलने के लिए अत्यधिक एकाग्रता चाहिए। एक मधुमक्खी के छत्ते से हम मधु पीते हैं, जो कई दिनों से मधुमक्खी द्वारा इकट्ठा हुआ है। शायद, हमारी दृष्टि न पड़ने वाले बहुत छोटे से फूल के अंदर पड़े, बाह्य दृष्टि से ओझल, मधु कणों को बटोरकर मधु भर दिया जाता है। उसी तरह दैनिक जीवन के अनेक अनुभव मन में ओढ़े हुए पड़े हैं। वह दूसरे अनुभवों से मिट गए या गायब हो गए। किंतु एकांतता वं एकाग्रता में मन के अंदर के अंधेरे गलियारे से, पैदल चलकर बटोर कर रखी चीजों को पुनः संचय करके काव्य सृजन किया जाता है। अक्षर सिर्फ उसका माध्यम है।

सर्वेश्वर की सृजन-चेतना एवं सौन्दर्य बोध

दानबहादुर सिंह

> *...सर्वेश्वर का सौन्दर्य बोध भावुकता और बौद्धिकता से ओतप्रोत दिखाई देता है। यद्यपि उनकी काव्य-दृष्टि प्रकृति की ओर भी झाँकती है। किन्तु वह रूमानी न हो कर यथार्थवादी ही दिखाई देती है।...*

सम्पर्क : कोठी नं. 3/16/3, ए.जी. कॉलेज रोड, पड़रा, रीवा-486001 (म.प्र.)
मोबाइल नं.: 097138-34483

समकालीन कवियों में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की सृजन-चेतना एवं सौन्दर्य बोध सादगी एवं यथार्थ से आप्लावित है। मानवीय संवेदना, आत्म-संघर्ष एवं नैराश्यपूर्ण क्षणों से निकली उनकी कविता जुझारू एवं व्यंग्यात्मक है। 'काठ की घंटियाँ', 'बांस का पुल', 'एक सूनी नाव', 'गर्म हवाएँ', 'कुआनो नदी', 'जंगल का दर्द', 'खूंटियों पर टंगे लोग' और 'कोई मेरे साथ चले', आदि काव्य-संग्रहों का मूल स्वर निम्नलिखित है—

"दुःख तुम्हें क्या तोड़ेगा
तुम दुःख को तोड़ दो
केवल अपनी आँखें
औरों के सपनों से जोड़ दो।"

ये काव्य-पंक्तियाँ उनके जीवन के साक्ष्य से जुड़ी हैं जिनमें से हो कर वह वैयक्तिक आत्म-संघर्षों और नाना चुनौतियों से जूझते रहे और कभी हार नहीं खाई। अपनी रचनाओं में कहीं तो वह निजी अनुभूतियों और कहीं सामाजिक ऊहापोह जैसे राजनैतिक और आर्थिक विषमताओं की बखिया उधेड़ते दिखाई देते हैं। वह अपनी रचनाओं का उद्देश्य एकमात्र सौन्दर्यबोध को जीवन में आगे बढ़ाना और एक कर्मशील व्यक्तित्व के साथ-साथ निर्भय होकर सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करना मानते थे। डॉ. रघुवंश अपने एक आलेख में सर्वेश्वर के बारे में लिखते हैं, "सर्वेश्वर समसामयिक होकर भी अपने युग-जीवन की गहरी सम्पृक्ति को गहन अनुभवों के स्तर पर ग्रहण करने में समर्थ हो सके हैं; नए काव्य में उनकी यह बहुत बड़ी सफलता है। उनके अनुभव में व्यक्ति और युग जीवन इस प्रकार सम्पृक्त हैं कि चरम अनुभूति और संवेदन के क्षणों में भी युग-जीवन के स्पंदन सम्मिलित हो गए हैं।" जीवन में ज्ञान और एकता की महत्ता को स्वीकारते हुए शोषण के विरुद्ध लड़ना, सामाजिक विद्रूपताओं से घृणा करना और उन्हें दूर करने के उपायों पर गहन चिन्तन करना ही वास्तविक समाज-सेवा है। परंपरागत चली आ रही सामाजिक व्यवस्थाओं पर भी उन्होंने धारदार व्यंग्यात्मक आलेख लिखे। यही नहीं; बल्कि सामाजिक समस्याओं पर भी उन्होंने टीका-टिप्पणी की। उनके काव्य-संग्रहों में प्रकाशित व्यंग्यात्मक पंक्तियों के संदर्भ में डॉ. जगदीश गुप्त ने "नई कविता-स्वरूप और समस्याएँ, पृष्ठ सं. 273 में लिखा है;" "'जीवन' और 'समाज' इसमें अलग-अलग स्थित नहीं हैं कि एक को कवि से संबद्ध किया जाए और दूसरे को कथाकार से।...'लड़ाई', 'पागल कुत्तों का मसीहा', 'सोया हुआ जल' की परिकल्पना वही व्यक्ति कर सकता था जिसने 'गर्म हवाएँ' की

'स्थिति यही है' अन्य संग्रहों की 'पंख दो; 'काठ की घंटियाँ;' 'युद्ध की स्थिति,' 'जब-जब सिर उठाया' इत्यादि कविताएँ लिखी हों।"

सर्वेश्वर की आरंभिक दौर की कविताएँ 'काठ की घंटियाँ' (1959) तथा 'बाँस का पुल' (1963) रोमानी भावबोध से ओतप्रोत हैं। उनमें यत्र-तत्र आंतरिक घुटन और अकेलेपन की अनुभूति दिखाई देती है। कहीं-कहीं आत्म संघर्ष भी खुल कर सामने आ जाता है, किन्तु उनकी रचनाएँ कल्पना लोक अथवा स्वप्नलोक से दूर हैं। 'एक सूनी नाव' (1966) तथा 'गर्म हवाएँ' (1969) वैयक्तिक उलझनों से दूर होकर सामाजिक एवं राजनैतिक दायरे की ओर बढ़ता हुआ दिखाई देता है। उनकी कतिपय नवीन रचनाओं में आत्मान्वेषण और निराशा की मानसिक स्थितियाँ खुलकर सामने आ जाती हैं। 'कुआनो नदी', (1973) में कवि ग्रामीण परिवेश की बदहाली और कस्बाई जिन्दगी की दुर्दशा का वर्णन करता है। दिल्ली में भी कवि सड़कों पर भागती हुई जिन्दगी का यथार्थ दिखाता है। स्वातंत्र्योत्तर भारत में उसे कहीं भी खुशहाल जिन्दगी नजर नहीं आती। चारों तरफ उसे संत्रास दिखाई देता है। उसे देश के किसी कोने में भी विकास दिखाई नहीं देता।

'कुआनो नदी' एक लम्बी कविता है जिसमें राजनीतिक चेतना उभर कर सामने आ गई है। कवि समाजवाद से प्रभावित दिखाई देता है। कवि वादों से दूर है और उसकी रचनाओं में संवेदनशीलता मुखर रूप से दिखाई देती हैं। 'जंगल का दर्द' (1976) में कवि एक बार रोमानी भावना से घिरा हुआ दिखाई देता है। अपनी आन्तरिक पीड़ा को दिखाने के लिए वह प्रतीकात्मक रूप से 'आग' और 'रोशनी' का सहारा लेता है। वह आग के माध्यम से आन्तरिक अन्धकार को दूर करना चाहता है। 'भेड़िया', 'कुत्ता', 'तेंदुआ', आदि के माध्यम से नूतन विंब की सृष्टि करता है। वह जीवन में 'जय' और 'आस्था' को प्रकट करना चाहता है। डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव ने लिखा है, "सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने 'जंगल का दर्द' में एक पशुलोक की विंब-जाति का सीधा सामना किया है—पहले खण्ड की 'भेड़िया', 'कुत्ता', 'काला तेंदुआ', सीरीज की कविताएँ पाठकों का ध्यान सबसे पहले आकृष्ट करेंगी। समकालीन दुनिया के अन्य कई महत्त्वपूर्ण कवियों ने भी पशुलोक के बहुत जीवित, हरकत और तनाव-भरे आक्रामक बिंबों का निर्माण किया है। भेड़िए की पहचान में आततायी की पहचान खोजने की व्यग्रता सर्वेश्वर की कविताओं में आग के आदमी की लड़ाई की दिशा का पता देती है।" (डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव समकालीन कविता व्याकरण, पृष्ठ 53-54) सर्वेश्वर के देहांत के बाद उनकी कविताओं का संकलन 'कोई मेरे साथ चले' (1985) प्रकाश में आया। इन कविताओं में कवि पीड़ित, निराश सामाजिक जीवन के प्रति मानवीय दृष्टिकोण और संवेदना प्रकट करता हुआ दिखाई देता है।

वह अपने जीवन में घुटनशील समाज और दुनिया की जिंदगी में परिवर्तन लाना चाहता है जिसके लिए वह संघर्षशील है। आजादी के बाद भी समाज और मानव जीवन में कोई परिवर्तन नहीं दिखाई देता। उसे जनाक्रोश, दीनता, घूसखोरी, लूट-खसोट और निराशा भरे दृश्य दिखाई देते हैं। वास्तव में वह सामाजिक बदलाव चाहता है। स्वतंत्रता के बाद नई कविता की सृष्टि हुई। उसमें सामाजिक परिवर्तन को लेकर एक प्रतिक्रिया दिखाई देती है। लेकिन मुक्तिबोध लिखते हैं, "नई कविता इस प्रकार की आइवरी टॉवर की, रोमेंटिक स्वप्नशीलता की एकान्त प्रिय, आत्मरतिमय आध्यात्मिकता की कविता नहीं है, जैसी कि

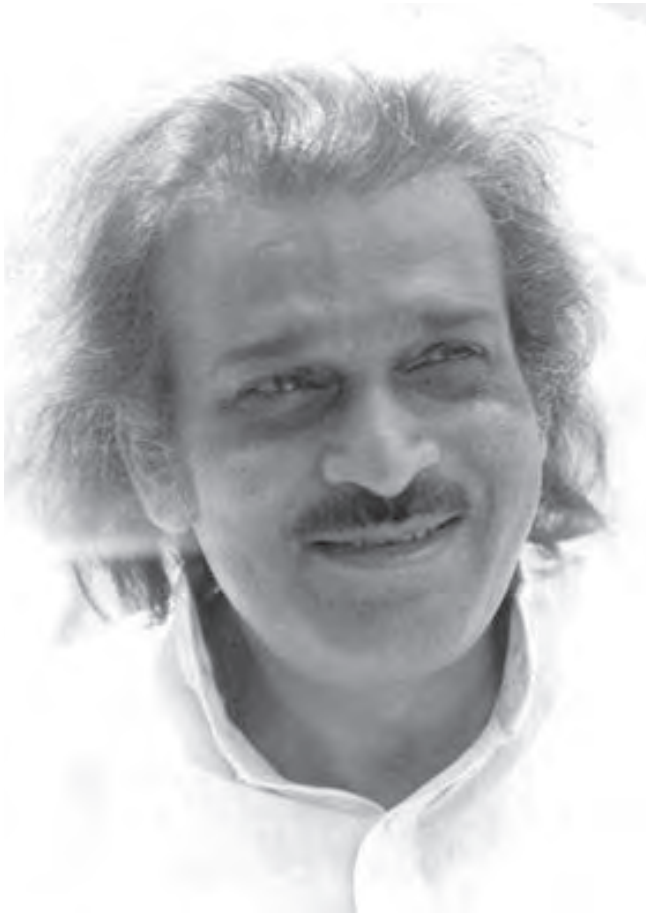

पुराने रोमेंटिक युग में हुआ करती थीं। वह मूलतः एक परिस्थिति के भीतर पलते हुए मानव-हृदय की पर्सनल सिचुएशन की कविता है।" (मुक्तिबोधः 'नए साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र', पृष्ठ 54)

'तीसरा सप्तक' के प्रकाशनोपरान्त नई कविता का अन्त हो गया। 'नई कविता' के महत्त्वपूर्ण कवि हैं—अज्ञेय, मुक्तिबोध, गिरिजाकुमार माथुर, शमशेर, नरेश मेहता, भवानी प्रसाद मिश्र, रघुवीर सहाय, सर्वेश्वर, साही आदि। 'नई कविता' की राग में राग मिलाते केदारनाथ अग्रवाल तथा नागार्जुन जैसे प्रगतिशील कवि भी जुड़े दिखाई देते हैं।

धीरे-धीरे 'नई कविता' से लोगों का मोह-भंग हो गया और उसके स्थान पर 'अकविता' की रचनाधर्मिता प्रकट हो गई। सातवें दशक से अकविता संवेदना शून्य अकाव्यात्मक रूप ले कर काव्य-जगत में उतर आई। इसी दौरान अकविता का रूप-रंग 'धूमिल' की रचनाओं में दिखाई देने लगा। उन्होंने अपनी रचनाओं में जनाक्रोश को एक नए ढंग और नई शैली में लिखना आरंभ किया। इसी बीच रघुवीर सहाय और सर्वेश्वर ने सामाजिक यथार्थ से संपृक्त कविताएँ लिखनी आरंभ कर दीं। उनकी कविताओं में सामाजिक यथार्थ बोध खुल कर सामने आ गया और उनकी रचनाओं में प्रौढ़ता और परिपक्वता के दर्शन होने लगा। उन्होंने अन्याय, शोषण और विषमता की दूषित सामाजिक व्यवस्था और संस्कृति को नकारने की नई अभिव्यक्ति दी। समय की मांग को स्वीकारते हुए वह लिखते हैं: "जो सत्य है उसे चुपचाप अपनाने भर से काम नहीं चलेगा; बल्कि जो असत्य है, उसका विरोध करना पड़ेगा और मुँह खोल कर कहना पड़ेगा कि वह गलत है।" (सर्वेश्वर, 'वक्तव्य', तीसरा सप्तक, सं. अज्ञेय, पृ. 203) वह समझौते के नहीं, बल्कि विद्रोह और आक्रोश के कवि हैं। इसीलिए निम्नलिखित पंक्तियाँ उसकी साक्ष्य हैं:

"एक गलत भाषा में गलत बयान देने से
मर जाना बेहतर है, यही हमारी टेक है।"

सर्वेश्वर की इन पंक्तियों में दृढ़ संकल्प एवं आत्मविश्वास दिखाई देता है। आज विश्व में अमानवीयता और असहिष्णुता की भावना पनपती दृष्टिगोचर हो रही है। वह इसे दूर करने का बीड़ा उठाते हैं। कवि समाज में समतावादी की भावना भरना चाहता है। वास्तव में कवि सामाजिक जीवन में प्रेम जैसे अनुपम भाव को उजागर करना चाहता है। इसीलिए उनका कहना है: "बल्कि यह जरूर लगता रहा कि सब कुछ के साथ ही उसे जिया जा सकता है। इसीलिए मेरी कविताओं में प्रेम के उतार-चढ़ाव के साथ-साथ राजनीतिक-सामाजिक उतार-चढ़ाव भी अक्सर अभिव्यक्त हैं। कहीं-कहीं यह भाव मानवीय नियति की चिन्ता से जुड़ गया है और उस क्षण अपना सुख-दुःख जैसे दब गया है।" (सर्वेश्वर, 'क्या कह कर पुकारूँ', पृष्ठ 9) उनकी कविताओं में अनभोगे प्रेम की ललक और आन्तरिक पीड़ा के दर्शन होते हैं। वह लिखते हैं' "दूसरों की मैं नहीं जानता, मेरे लिए प्रेम कविता बस यही एक प्रक्रिया है—उड़ते रंगों को अपने मन की गंध से पकड़ने की प्रक्रिया—और बस।" (सर्वेश्वर, 'क्या कह कर पुकारूँ', पृष्ठ 9)

उनकी कविताओं में प्रेम और उसकी पीड़ा के दर्शन यथार्थ रूप में होते हैं। इसके अलावा, यत्र-तत्र दुराव-छिपाव, सुख-दुःख के भी दर्शन होते हैं। कवि के जीवन में अकेलापन विषाद पैदा करता है। किन्तु वह उसे सहर्ष स्वीकार करता है:

"दर्द घिरता नहीं;
हवा लगते ही लहर
निरुपाय हिलती है;
स्वप्न मरता नहीं,
पत्थरों पर सर पटकने में
शान्ति मिलती है;

'तुम नहीं हो-तुम नहीं हो शेष....,
हर घड़ी आवाज आती है;
किन्तु फिर भी
नई आकृति ग्रहण करने को
टूटती काया संवरती है।"

आज के सामाजिक ऊहापोह में प्रत्येक व्यक्ति अपने को अकेला पाता है। यही अकेलापन उसके लिए बोझ बनता जा रहा है और उसका दुःख दैनंदिन बढ़ता जा रहा है। परिस्थितियाँ ऐसी बनती जा रही हैं कि उसका कोई निराकरण नहीं है। इस सन्दर्भ में कवि की निम्न पक्तियाँ दृष्टव्य हैं:

"यह जानते हुए भी
कि आगे बढ़ना
निरंतर कुछ खोते जाना
और अकेले होते जाना है
मैं यहाँ तक आ गया हूँ
जहाँ दरख्तों की लंबी छायाएँ
मुझे घेरे हुए हैं।"

'अकविता' के अनेक कवि निराशा, कुण्ठा और अकेलापन महसूस करते रहे हैं और उनकी वैयक्तिक पीड़ा अथवा दुःख उनकी रचनाओं में उतर आया है। ऐसे ही क्षणों की कुछ पंक्तियाँ देखिए:

"कुछ देर और बैठो....
और एकटक मेरी ओर देखो
कितनी बर्फ मुझमें गिर रही है।
इस निचाट मैदान में
हवाएँ कितनी गुर्रा रही हैं।
और हर परिचित कदमों की आहट
कितनी अपरिचित ओर
हमलावर होती जा रही है।"

(सर्वेश्वर, 'खूँटियों पर टँगे लोग', पृष्ठ 107)

"अँधेरे में संघर्षरत लहरें ही
नहीं चमकती

निराशा से लड़ता आदमी भी
रोशनी देता है।''

(सर्वेश्वर, 'खूंटियों पर टंगे लोग', पृष्ठ 80)

अकविता से जुड़ा व्यक्ति इस प्रकार के सौन्दर्य बोध को महत्त्व नहीं देता। वह तो स्वयं इस प्रकार की वृत्तियों से जूझता हुआ अपने लिए अथवा व्यक्तियों के लिए 'प्रकाश' उत्पन्न करता है। वह निराशा से जूझते हुए दूसरों के लिए आशा की किरण बन जाता है। मुक्तिबोध कहते हैंः "ये सौन्दर्यवादी लोग यह भूल गए कि बंजर काले स्याह पहाड़ में भी एक अजीब वीरान भव्यता होती है, गली के अँधेरे में उसे छोटे से जंगली पौधे में भी एक विचित्र संकेत होता है। विशाल व्यापक मानव-जीवन में पाए जाने वाले भयंकर संघर्ष के रौद्र रूप तो उनकी सौन्दर्याभिरुचि के फ्रेम के बाहर थे।" देखिएः (मुक्तिबोध, 'नई कविता का आत्मसंघर्ष')

सर्वेश्वर का सौन्दर्य बोध भावुकता और बौद्धिकता से ओतप्रोत दिखाई देता है। यद्यपि उनकी काव्य-दृष्टि प्रकृति की ओर भी झांकती है। किन्तु वह रूमानी न हो कर यथार्थवादी ही दिखाई देती है। उनकी अधिकांश रचनाएँ 'उगते पेड़-सा हाथ', 'हर पत्ती' 'आहिस्ता गुनगुना रही है', 'सारा जंगल झूम रहा है मेरे भीतर', 'रंगीन चिड़ियाँ थीं मुझमें', 'नदी' का बाँध कर सिर पर मुरैठा, जिधर जाऊँ उधर फसलें उगाऊँ आदि प्रकृति को निहारती दृष्टिगोचर होती हैं। सर्वेश्वर लोक भूमि के कवि हैं। वह सामंती, जमींदारी और पूँजीवादी व्यवस्था से कोसों दूर हैं। देखिए—

''हम तो जमीन ही तैयार कर पाएँगे
क्रांतिबीज बोने कुछ विरले ही आएँगे।
कल जब फसल उगेगी लहलहाएगी
मेरे न रहने पर भी हवा से इठलाएगी
तब मेरी आत्मा सुनहरी धूप बन बरसेगी
जिन्होंने बीज बोया था उन्हीं के चरन परसेगी।''

(सर्वेश्वर, 'खूँटियों पर टँगे लोग', पृष्ठ 18)

कवि जमीन तैयार करने में कुशल है और उसे सार्थक बना सकता है; किन्तु उसमें प्राण फूँकने का कार्य तो एकाध ही कुशल व्यक्ति कर पाएगा। यह कार्य ऐतिहासिक कहा जाएगा क्योंकि समाज में परिवर्तन लाना कोई आसान कार्य नहीं कहा जा सकता। पीढ़ियों से समाज विषमता की आग में झुलसता रहा है। उसके लिए दृढ़ विश्वास और आस्था की आवश्यकता पड़ेगी। कविवर मुक्तिबोध के निधन पर सर्वेश्वर ने श्रद्धांजलि रूप में निम्नांकित पंक्तियाँ अपनी शोक-संवेदना में इस प्रकार प्रकट की थी—

''तुम्हारा टूटना
हम सबके आकारों का टूटना है।
नहीं..... नहीं
जीवित हैं हम सब अभी भी
और हम सब में जीवित हो तुम।
ये लहरें जाने कहाँ से आती हैं
जो हमारी पसलियों पर
अपने को तोड़ती चली जाती हैं;
हमें निरन्तर गढ़ती जाती हैं-
तुम्हारे अनुरूप
एक ऐसी मृत्यु में
जो जीवित से दिव्य है।''

(सर्वेश्वर, 'कविताएँ—दो', पृष्ठ 52)

'तीसरे सप्तक' की एक टिप्पणी में सर्वेश्वर ने कहा हैः "यह माना गया है कि संसार का कोई भी विषय कविता का विषय है और कवि की दृष्टि इतनी व्यापक होनी चाहिए कि वह उसे उस कोण से भी देख सके जहाँ से वह संवेदना को छूता हो; यह सत्य स्वीकार कर लिया जाता कि भावनाओं की नई परतें खोलने के और संवेदना के गहनतम् स्तरों को छूने के लिए कविता ने सदैव नए रूप विधान धारण किए हैं।" (सर्वेश्वर, 'तीसरा सप्तक', सं. अज्ञेय, पृष्ठ 208)

सर्वेश्वर का विचार है कि प्रत्येक कवि के पास अपना एक जीवन-दर्शन होना चाहिए। 'सामाजिक अभिव्यक्ति', शीर्षक अपनी कविता में इसी आकांक्षा का उल्लेख किया गया हैः

''कमल आत्मनिष्ठ है
अहं से भरा,
सतह से ऊपर उठकर
अकेला डोलता है।''

सामाजिक दायित्व बोध की महत्ता स्वीकारते हुए सर्वेश्वर ने अपने आसपास के लोगों के साथ एक आत्मीय सम्पर्क बनाए रखा जिसके बारे में अज्ञेय कहते हैं—

"समकालीन सत्य और यथार्थ को जो कवि सफल हाथों से पकड़ सके हैं, जो सच्चे अर्थ में समकालीन जीवन से संपृक्त हैं—उनमें सर्वेश्वर जी का विशेष स्थान है।" (अज्ञेय, 'सर्वेश्वर दयाल सक्सेनाः परिचय', नई कविता (पत्रिका), सं. डॉ. जगदीश गुप्त, पृ. 33)

सर्वेश्वर की आरंभिक कविताओं में रोमानी भावुकता के दर्शन होते हैं जिससे उनकी कविताओं का प्रभाव कम दिखाई देता है। यद्यपि उनका विचार कल्पना लोक में उड़ना नहीं था। वह तो भाव लोक से ऊबकर यथार्थ के धरातल पर उतर आए थे और यही कारण है कि उन्होंने

सामाजिक विद्रूपताओं को जड़ से उखाड़ फेंकने का बीड़ा उठाया था। वह कहते हैंः

''यदि दुर्बलता दर्द में बदल जाए,
व्यथा अन्तर्दृष्टि दे,
खण्डित आत्माएँ
संचित कर सकें शक्ति की समिधाएँ
जो जल कर अग्नि को भी
गंध-ज्वार बना दें,
तो मैंने अपना कवि-धर्म पूरा किया
चाहे मर्म सहलाया न हो, कुरेदा हो।''

(सर्वेश्वर, 'कविताएँ—एक', पृष्ठ 166)

सर्वेश्वर की कविताओं की लय गति और संवेदना इतनी सूक्ष्म है कि सामान्य व्यक्ति जिसे कविता की समझ नहीं है, उसके लिए गहराई का पता लगाना कठिन-सा प्रतीत होगा। उनकी भाषा सीधी और सरल है, परन्तु उसकी मारक क्षमता असाधारण है। उनका चिन्तन इतना प्रगाढ़ है कि उसके भीतर सार्वभौमिक सत्य ढूँढ़ा जा सकता है। उनका सूक्ष्म भावबोध और सौन्दर्य-चेतना उनकी रचनाओं की ऊँचाइयों को पाठकों के सामने ला देती है। 'सुरों के सहारे', 'मत कहो', 'सुर मयूर', 'नाचो और रचो', 'यह हाथ', 'चाँदनी की पाँच परतें', 'स्वामीनाथन के चित्र देखकर' आदि में उनकी कविताओं की ऊँचाई नापी नहीं जा सकती। देखिएः

''लेकिन भीतर कहीं बहुत गहरे
शाखों में फँसा
बेचैन छटपटाता रहा
एक बारहसिंगा।
सारा जंगल काँपता हिलता रहा।
लो वह मुक्त हो
चौकड़ी मारता
शून्य में विलीन हो गया
जो धमनियों से
अनन्त तक फैला हुआ है।''

(सर्वेश्वर, 'खूँटियों पर टँगे लोग', पृष्ठ 88)

सर्वेश्वर की कविताएँ सहज और सरल हैं। परन्तु शब्दों का चयन और उनकी गहराई बहुत दूर तक है। कवि के भीतर की बेचैनी उसे सोने नहीं देती और वह मानसिक रूप से संघर्षरत है। सर्वेश्वर के शब्द बड़े तीखे और चुटीले हैं। वे सीधे अन्तस में घुसते चले जाते हैं और अपने पाठकों अथवा श्रोताओं को देर तक गहराई से सोचने पर मजबूर कर देते हैं। उनका यथार्थ जनता से जुड़ा हुआ है और सीधे जनता के लिए है। उनकी काव्य-भाषा की गहराई और चिन्तन को ले कर प्रख्यात् आलोचक डॉ. विद्यानिवास मिश्र कहते हैंः "सच्चा काव्यार्थ बाण की तरह सीधा होता है, उसमें कृत्रिम संरचना की जटिलता नहीं होती, काव्य के काल-विजयी, निरपेक्ष और अखण्ड रूप को वर्तमान और प्रत्यग्र बनाने में वह बाण जैसी ऋजुता मुख्य साधन है। दूसरे शब्दों में इस सादगी के द्वारा ही अतीत और अनागत को जोड़कर उनको वर्तमान में समाहित किया जा सकता है।" (डॉ. विद्यानिवास मिश्र, 'रीति विज्ञान', पृ. 61)

निस्संदेह सर्वेश्वर का यथार्थ जन-जीवन से जुड़ा हुआ है। मजदूर वर्ग की आशा-निराशा सुख-दुःख और उतार-चढ़ाव संघर्ष ही उनकी काव्य-भाषा के विषय हैं।

■■■

प्रगति क्षणिका

धूप हो,
या छांव।
चलते रहें,
सबके पांव।

डॉ० नरेन्द्र नाथ लाहा
27 ललितपुर कॉलोनी
डॉ० पी० एन० लाहा मार्ग, ग्वालियर (मप्र)

ये वादियाँ ये फिजायें, बुला रही हैं तुम्हें—साहिर लुधियानवी

जितेन्द्र निर्मोही

शायर का फलक बड़ा वसीह होता है, वह जब गीत लिखने लगता है तो पूरी कायनात का सौंदर्य चुनचुन कर उसमें पिरोता जाता है। सच कहें तो पचास, साठ, सत्तर के दशक में जो गीत हमारे सामने आए उनमें सारा सौंदर्य शास्त्र जैसे हमारे सामने रख दिया गया। महबूब-महबूबा का रोमांस, उनकी शाइस्तगी, नरम लहजा, उनका बेरहम होना, उनकी तकरार, उनकी उलफत, उनका इकरार आदि सारे मंजर इन गीतों में दिखाई देते हैं। आजादी के बाद जिन फिल्मी गीतकारों ने हमें गीतों का सुहाना सफर दिया उनमें से एक हैं साहिर लुधियानवी, साहिर यानी जादूगर, इस जादूगर गीतकार ने हमें तिलस्मी गीतों में बाँध लिया इसलिए ही तो वो लिखते हैं—"कभी देखी न सुनी ऐसी तिलस्मात की रात, जिंदगी भर नहीं भूलेंगे यह बरसात की रात"। जब वो महबूबा का तस्सवुर लेकर उसे याद करते हैं तो पूरा सौंदर्य प्रकृति से लेकर हमारे सामने रूपायित कर देते हैं—"ये वादियाँ ये फिजाएँ बुला रही हैं तुम्हें, ये खामोशियों की सदाएं बुला रही हैं तुम्हें, तुम्हारी जुल्फों से खुशबू की भीख लेने को, झुकी-झुकी सी घटाएँ बुला रही हैं तुम्हें"। जब वे झूमकर लिखने लगे तो कहने लगे—"उड़ें जब जब जुल्फें तेरी, कुंआरियों का दिल मचले, दिल मेरी ए।" ये बंजारा मिजाज़ी वाला गीतकार उस समय लिख रहा था—"बस्ती-बस्ती पर्वत-पर्वत गाता जाए बंजारा"। उस जमाने के प्रेमिका प्रेमी के मिलन का अहसास लिए वे लिख रहे थे—"अभी न जाओ छोड़कर कि दिल अभी भरा नहीं। अभी-अभी तो आई हो" साहिर लुधियानवी यानी अब्दुल हुई की जिंदगी का सफर बड़ा कष्टप्रद रहा और उसने जिंदगी से बहुत कुछ सीखा—

"न कोई वादा न मंजिल न रोशनी न सुराग
भटक रही है खलाओं में जिंदगी मेरी
इन्हीं खलाओं में रह जाऊँगा कभी खोकर
मैं जानता हूँ मेरी हमनफस मगर यूँ ही
कभी कभी मेरे दिल में खयाल आता है"

और वो शायर यकीनन खलाओं में खोकर ही रह गया। साहिर आजन्म कुंवारे रहे। कहते हैं उनके जीवन में चार स्त्रियाँ आयीं महिन्द्रा चौधरी, ईश्वर कौर, अमृता प्रीतम और सुधा मल्हौत्रा पर वे घर न बसा सके। जबकि अमृता प्रीतम उनके अत्यंत निकट रहीं। अमृता प्रीतम साहिर के संबंधों के बारे में कहती हैं, "वह (साहिर) लाहौर में जब भी मिलने के लिए आता कुछ देर बैठकर चला जाता, वो चुपचाप बैठकर सिगरेट पीता रहता।" शायद जिंदगी के इस रद्दे अमल ने उनसे लिखवाया—

"चंद कलियाँ नशात की चुनकर
मुद्दतों महवे यास रहता हूँ

"...उन्होंने हताश लोगों को एक रोशनी दी। वह कह बैठे "रात भर का मेहमां है अंधेरा किसके रोके रुका है सवेरा" और "ना मुँह छुपा के जियो, न सर झुका के जियो, गमों का दौर भी आये तो मुस्कुरा के जियो" क्योंकि जिंदगी बंजारा मिजाज़ी जैसी होनी चाहिए "परवत परवत बस्ती बस्ती गाता जाए बंजारा" लेकिन साथ ही उन्होंने वक्त के प्रति सचेत भी किया "आदमी को चाहिए वक्त से डर कर रहे कौन जाने किस घड़ी वक्त वक्त का बिगड़े मिज़ाज"।..."

सम्पर्क : बी-422, आर.के. पुरम, कोटा-324010
मोबाइल: 09413007724

तेरा मिलना खुशी की बात सही
तुझसे मिलकर उदास रहता हूँ''

उनकी पहली कृति ही 'तल्खियाँ' थी जो वर्ष 1945 में लाहौर प्रवास में सामने आई उसके बाद 'परछाईयाँ' 1955 में आई वे प्रतिष्ठित हो चुके थे। इसके बाद उनके फिल्मी गीतों का संग्रह 'गाता जाए बंजारा' (1957) व आओ कोई (1959) तथा (1971) में प्रकाशित हुए।

उन्होंने बच्चों के लिए *''बच्चो तुम तकदीर हो कल के हिन्दुस्तान की बापू के वरदान की, नेहरू के अरमान की''* से लेकर बुढ़ापे के रोमांस *''ऐ मेरी जोहरा जबीं तुझे मालूम नहीं तू अभी तक है हसीं और मैं जवान''* तक के गीत लिखे। उनके दो सदाबहार गीत शादी ब्याह के लिए हर घर में काम आए नौजवानों के लिए *''ये देस है वीर जवानों का''* और दुल्हन की विदाई के लिए *''बाबुल की दुआयें लेती जा, जा तुझको सुखी संसार मिले''*। वो रूमानियत के शब्द शिल्पी रहे, उन्होंने लिखा तो खूब लिखा—

''रंगों में तेरा अक्स ढला तू न ढल सकी
साँसों की आँच में तेरे जिस्म की खुशबू न ढल सकी

तुझमें जो लोच है तेरी तहरीर में नहीं
जो बात तुझमें है तेरी तस्वीर में नहीं''

शाहजहाँ और मुमताज के प्यार को उन्होंने शिद्दत तक महसूस किया और उसके फिल्मांकन में मोहब्बत की तफसील सामने रख दी और बतौर नायक (शाहजहाँ) और नायिका (मुमताज) की ये दो गीत अंदर तक हरकत पैदा कर देता है—

नायक—*"पाँव छू लेने दो फूलों को इनायत होगी, वरना हमको ही नहीं उनको भी शिकायत होगी।"*

नायिका—*"आप जो फूल बिछाएं उन्हें हम ठुकरायें, हमको डर है कि ये तौहीने मोहब्बत होगी।"*

यही कारण है कि ताजमहल के इस अमरगीत *''जो वादा किया वो निभाना पड़ेगा''* ने उन्हें फिल्मफेयर अवार्ड दिलाया। सच तो यह है साहिर लुधियानवी मोहब्बत करने वाले शायरों में थे *''तुम मुझे भूल भी जाओ तो यह हक है तुमको, मेरी बात और है मैंने तो मोहब्बत की है''*। और मोहब्बत करने वाला हमेशा अपने महबूब से कहता है, *''तुम अपना ग़म अपनी परेशानी मुझे दे दो।''*

सच तो यह है कि शायर दिल से बच्चा होता है यह दौर वह दौर था जब शायरों ने बच्चों को भगवान माना, उस समय के शायर *''मोहे पनघट पर नंद लाल छेड़ गयो रे''* लिख रहे थे साहिर कैसे पीछे रहते उन्होंने लिखा, *''तोरा मन दर्पण कहलाये, भले-बुरे सारे कर्मों को देखे और दिखाये''*। इसी शायर ने लिखा, *''बच्चे मन के सच्चे सारी जग की आँख के तारे, ये वो नन्हें फूल हैं जो भगवान को लगते प्यारे''*। सच तो यह है उस समय के शायर भारतीय दर्शन में रंगे हुए थे। साहिर की एक नज्म इस संदर्भ में देखी जा सकती है—

''कृष्ण एक जात नहीं एक अमल होता है
आज होता है कोई उसका न कल होता है
कृष्ण हर दौर में आता है नये रूप लिए
कृष्ण हर दौर के अरमानों का फल होता है''

साहिर का शायर सूफी दर्शन की ओर भी कहीं कहीं दिखाई देता है, मुझे उनकी इस नज्म की अभिव्यक्ति में अमीर खुसरो के भाव दिखाई देते हैं—

"जब जब कृष्ण की बंसी बाजी निकली राधा सज के
जान अंजान का ध्यान भूला के लोक लाज तज के
वन वन डोली जनक दुलारी पहन के प्रेम की माला
दर्शन जल की प्यासी मीरा पी गई विष का प्याला''

जब आप ईश्वर से प्रेम करते हैं तो देशप्रेम भी निहित होता है। भारत की अपनी पहचान है और आप यहाँ हिन्दुस्तानी होते हैं। यही राष्ट्रीय प्रेम सामने आता है शायर का, साहिर ने लिखा—

''उस मुल्क की सरहद को कोई छू नहीं सकता
जिस मुल्क की सरहद की निगेहबान हैं आँखें''

आजाद हिन्दुस्तान हालांकि हिन्दु-मुस्लिम के विभाजन के आधार पर निर्मित हुआ था पर यहाँ सबसे पहले इंसान था, इंसानियत थी, हिन्दू-मुसलमान बाद में, साहिर ने इस भावना को गीतों में ढाल दिया—

"तू हिन्दु बनेगा न मुसलमान बनेगा
इंसान की औलाद है इंसान बनेगा"

इस इंसानियत के पुजारी ने कत्लो गारद को बड़े करीब से देखा। 1947 के विभाजन पर मुस्लमान पाकिस्तान गये लेकिन साहिर लाहौर से दिल्ली आये उस सुबह की तलाश में *"वो सुबह कभी तो आएगी"* गीत से उन्होंने अपनी मंशा जाहिर की *"जब अंबर झूम के नाचेगा, जब धरती नगमे गाएगी"*।

उन्होंने हताश लोगों को एक रोशनी दी। वह कह बैठे *"रात भर का मेहमां है अंधेरा किसके रोके रुका है सवेरा"* और *"ना मुँह छुपा के जियो, न सर झुका के जियो, गमों का दौर भी आये तो मुस्कुरा के जियो"* क्योंकि जिंदगी बंजारा मिजाज़ी जैसी होनी चाहिए *"परवत परवत बस्ती बस्ती गाता जाए बंजारा"* लेकिन साथ ही उन्होंने वक्त के प्रति सचेत भी किया *"आदमी को चाहिए वक्त से डर कर रहे कौन जाने किस घड़ी वक्त वक्त का बिगड़े मिज़ाज"*। साहिर की गज़लों और नज्मों का दायरा बड़ा है, वो अपने समय के उस्ताद शायर माने गए। उनकी पहली कृति 'तल्खियाँ' ने पहचान बना ली थी वे तरक्की पसंद विचारधारा के शायर माने गए। वो एक जागीरदार के पुत्र थे जिन्होंने गरीबी व पूरी आजादी की लड़ाई करीब से देखी, खंडित हिन्दुस्तान का खून खराबा देखा। गरीबी और सल्तनत के बीच के अंतर को उन्होंने अपनी एक नज्म मादाम (मेडम) के माध्यम से प्रस्तुत की है जो महारानी विक्टोरिया को संबोधित किया है, यहाँ उन्होंने गरीब तबके की बात की है—

"लोग कहते हैं तो लोगों पे ताअज्जुब कैसा
सच तो कहते हैं कि नादारों की इज्जत कैसी
लोग कहते हैं मगर आप अभी तक चुप हैं
आप भी कहिए गरीबों की शराफत कैसी"

लेकिन उन्होंने उस समय मेडम को गरीबों के जीवन मूल्यों (जीस्त के अद्वार) के बाबत् बता दिया था—

"नेक मादाम! बहुत जल्द ही दौर आएगा
जब हमें जिस्त के अदबार परखने होंगे
अपनी जिल्लत की कसम आपकी अजमत की कसम
हमको ताजीम के मेआर परखने होंगे"

उनकी खास नज्में हैं 'मादाम', 'नूरजहाँ की मजार पर', 'एक तस्वीर के रंग', 'इसी दोराहे पर' आदि। मजदूर, किसान, गरीब, बेकस, बेसहारा को देखकर नज्में लिखने वाला साहिर इस संसार की दौलत को अपनी मानता है—

"ये लहराते हुए पौधे, ये लहराते हुए खेत
पहले अजदाद की जागीर थे अब मेरे हैं
ये चारागाह ये भेड़ ये मवेशी ये किसान
सबके सब मेरे हैं बस मेरे हैं बस मेरे हैं"

साहिर अमन व शांति का पैगाम देने वालों में से थे। वे कहते थे जंग खुद एक मसला है, जंग क्या मसला हल कर सकेगी? इसलिए हे शरीफ इंसानो जंग टलती रहे तो बेहतर है। इसलिए उन्होंने प्रकृति को देखकर गीत गाए—

"ए नीले गगन के तले धरती का प्यार पले
ऐसे ही जग में आती है सुबहें ऐसे ही शाम ढले"

"ओ नीले पर्वतों की धारा, आई ढूँढ़ने किनारा बड़ी दूर से" उन दिनों शायर प्रकृति के बड़ी करीब रहते और प्रकृति को गीतों में कहते थे। उन दिनों प्रकृति का परिवेश करीब होने से घटायें, बहारें, फूल, शबनम, नदी, पर्वत शायरों की कलम से चित्रित होते रहते थे। साहिर लुधियानवी ने भी प्रकृति को खूब रूपायित किया।

साहिर लुधियानवी का जन्म 8 मार्च, 1921 को लुधियाना में चौधरी फजल मुहम्मद के घर हुआ। उनकी माँ का नाम सरदार बेगम था जिनकी मृत्यु साहिर की इस दुनिया से रुखसती से दो वर्ष पूर्व ही हुई। उनके पिता की कई पत्नियाँ थीं। सरदार बेगम जागीरदार बाप की बारहवीं शादी थी।

सरदार बेगम ने पति के खिलाफ मुकदमा भी लड़ा। वर्ष 1949 में साहिर लुधियानवी ने मुम्बई में फिल्मों के लिए गीत लिखे, उनका जन्म नाम अब्दुल हुई था। उनकी पहली फिल्म आजादी की राह (1949) थी जिसके लिए उन्होंने गीत लिखे, अंतिम फिल्म 'लक्ष्मी' थी जो उनकी मृत्यु 25 अक्टूबर, 1980 के बाद रिलीज हुई। उनका एक गीत सुधा मल्हौत्रा ने *"तुम मुझे भूल भी जाओ तो ये हक है तुमको मेरी बात और है मैंने तो मोहब्बत की है"* मुकेश के साथ गाया। मुम्बई में उनके पड़ौसी गीतकार गुलजार व कृष्ण चंदर रहे।

उनके अंतिम दिनों से पूर्व कैफी आजमी ने उनके बारे में बताया "आजकल फिल्मी दुनिया पर जितने खतरे मंडरा रहे हैं 'साहिर' उन सबसे शदीद है, मालूम नही फिल्मी गीत लिखते लिखते वो कब डायरेक्टर बन जाए"। लेकिन प्रकाश पंडित ने, जो उन्हें बड़े करीब से जानते थे लिखा "मैं जब उससे पहली बार मिला तो साहिर शायर था केवल शायर मैं अंतिम बार मिलूंगा तब भी वह केवल शायर ही होगा।"

वे अंतिम समय से पूर्व कैंसर के मरीज थे उनका इलाज चल रहा था। 25 अक्टूबर, 1980 को दोस्तों के साथ ताश खेलते हुए हृदयाघात हुआ और वे चिरनिद्रा में सो गए। उन पर बहुत कुछ लिखा जा सकता है, जितना लिखा गया उतना कम है। हिन्दुस्तान के बड़े गीतकारों में उनका नाम बड़े अदब से लिया जाता है। उनकी ही कलम से उन्हें खिराज ए अकीदत—

"जिस्म की मौत कोई मौत नहीं होती है
जिस्म मर जाते हैं इंसान नहीं मर जाते
धड़कने रुकने से अरमान नहीं मर जाते
सांस थम जाने से ऐलान नहीं मर जाते"

उस्ताद अब्दुल हलीम जाफर खां का सितार वादन

डॉ. राजेश कुमार व्यास

"...कर्नाटकी राग किरवानी, कनाकंग, लतंगी को हिंदुस्तानी संगीत की संवेदनशीलता में घोल सिरजी 'जाफरखानी बाज' शैली में बहुतेरी बार वह ऐसे तोड़े डालते कि सुनकर मन भाव विभोर हो जाता। सितार के अपने फन का श्रेय वह अपने परदादा गैरत खां, दारा मुरब्बत खां को देते। वह बंदेहली बीनकार घराने से थे परन्तु कहते, ''असल घराना तो एक है, और वह है ऋग्वेद। सभी ने वहीं से लिया है। प्यार-मोहब्बत के सिवा कोई और घराना संगीत में नहीं होना चाहिए।''..."

सम्पर्क : 3/29, गाँधीनगर, न्याय पथ,
जयपुर-302015 (राजस्थान)

उस्ताद अब्दुल हलीम जाफर खां का सितार भाव दृश्यों के अनूठे भव में ले जाता है। सुनेंगे तो लगेगा, संगीत श्रव्य ही नहीं है बल्कि दृश्य सौंदर्य का भी हेतु है। सधा हुआ आलाप। गतकारी में लयकारी की बारीकियां।... मुझे लगता है, खयाल गायन की तरह सितार में गायकी अंग को किसी ने चरमोत्कर्ष पर पहुंचाया है तो वह उस्ताद अब्दुल हलीम जाफर खां ही थे। रागों की कंठ संकल्पना में माधुर्य का जैसे वह आकाश रचते। सितार की जवारी से ही भान हो जाता, उस्ताद अब्दुल हलीम जाफर खां साहब का संगीत सज रहा है। राग पीलू, मुल्तानी, पहाड़ी और राग अभोगी और ऐसे ही दूसरी रागों में उनका सितार सुनते लगेगा, उन्हें सुनें और बस सुनते ही रहें।

यह सच है, उस्ताद अब्दुल हलीम जाफर खां साहब का सितार सुरों का समन्दर था। ऐसा जिसमें आती और जाती लहरों की तरह सितार की तानें और लयकारी हृदय को छूती है। आकर्षक स्वर समूहों का वह सितार में माधुर्य छंद रचते। संगीत में 'जाफरखानी बाज' उन्हीं की देन है। यह ऐसा है जिसमें वीणा वादन की पारंपरिक भारतीय परंपरा के साथ ही कर्नाटकी और हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत का रस माधुर्य है। सितार बजाने का उनका यह बाज या कहें शैली अत्यधिक लोकप्रिय हुई। गतकारी में लय के चक्रव्यूह रचते वह संगीत के अनंत में ले जाते। श्रोता जैसे स्वरों के प्रवाह में भावों की गहराई में बहे से चले जाते। स्वयं की अंगुलिचालित उनकी यह तकनीक ऐसी ही थी जिसमें परंपरा के मिले संस्कारों के साथ दृश्य भावों का अनूठा भव निर्मित होता था।

सितार वादन में नवाचार से अपनी शैली ही उन्होंने नहीं बनाई बल्कि कुछ पारिभाषिक शब्दों हिक्का, लचक, लहक, मसक आदि का भी अपने तई प्रचलन किया। यही नहीं, किरवानी, हेमावती, मारवा, राग लतांगी आदि को सितार में लोकप्रिय करने का कार्य किसी ने किया तो वह भी उस्ताद अब्दुल हलीम जाफर खां साहब ही थे। संगीत में उनकी इस प्रयोगधर्मिता पर विचारते औचक महान संगीतज्ञ पलुस्कर जी की याद आती है। कभी उन्होंने कहा था, "हमें तानसेन नहीं बनाने हैं, हमें कानसेन बनाने हैं।" सच भी है। संगीत की बंधी-बंधाई शब्दावली और शास्त्रीयता में परम्पराएं इस कदर जड़ हो रही हैं कि आम जन से संगीत की निरंतर दूरी होती जा रही है। इस दृष्टि से भी उस्ताद अब्दुल हलीम जाफर खां साहब को याद किया जाता रहेगा कि उन्होंने अपने तई शास्त्रीय संगीत की रागों में नवाचार करते उन्हें आम जन के करीब पहुंचाया। उन्हें सुनेंगे तो यह अनुभूत भी होगा, राग का स्वरूप निश्चित करने के लिए वह स्वरों का सुमधुर आरंभिक प्रयोग करते। यह ऐसा

होता, जिसमें सुनने वाला माधुर्य की राह का राही बनने को आरंभ से उत्सुक हो उठता।

याद रहे, वह पहले हिंदुस्तानी वादक रहे हैं जिन्होंने कर्नाटकी परंपरा के वीणा उस्ताद डॉ. एमनी शंकर शास्त्री के साथ संगत की। सितार और शहनाई की जुगलबंदी की राह पहले पहल उन्होंने ही बनाई। महफिलों में सितार और शहनाई की उनकी जुगलबंदी आज भी कायदे से याद की जाती है। फिल्म 'गूँज उठी शहनाई' में उस्ताद बिस्मिला खां साहब की शहनाई के साथ सितार की उनकी संगत आज भी कहां कोई भूला होगा! नौशाद, अनिल विश्वास, सी. रामचन्द्र, वसंत देसाई, मदन मोहन आदि संगीतकारों के साथ उन्होंने काम किया। अनारकली, मुगल-ए-आज, कोहिनूर, झनक झनक पायल बाजे आदि फिल्मों में बजाया उनका सितार दृश्य संवेदना के अनूठे भव से ही तो साक्षात् कराता है। विश्वास नहीं है तो फिर से सुनिए, "झनक झनक पायल बाजे' फिल्म में बजाया उनका यह सितार जिसमें ऋषि विश्वामित्र की तपस्या भंग करने मेनका आकाश से उतरी है। सितार बज रहा है... मेनका नृत्य कर रही है। सितार के स्वर समूहों को सुनें... थिरकन, लावण्य का सौंदर्य भाव जैसे मन में उतरने लगा है। मुझे लगता है, उनका सितार शब्दों के भीतर के मौन को भी अलंकृत करता था। याद करें, फिल्म 'अनारकली' में लता के गाए 'ये जिंदगी उसी की है...' गीत में बजाया उनका सितार। राग भीम पलासी, काफी थाट और किरवानी के घोल में जैसे मन भी झंकृत हो उठा है। पहले लता का आलाप और फिर सितार का अद्भुत माधुर्य। उनके सितार की यही विशेषता है। वहाँ उपज और सृजन का अनूठा भाव भव है।

कर्नाटकी राग किरवानी, कनाकंग, लतंगी को हिंदुस्तानी संगीत की संवेदनशीलता में घोल सिरजी 'जाफरखानी बाज' शैली में बहुतेरी बार वह ऐसे तोड़े डालते कि सुनकर मन भाव विभोर हो जाता। सितार के अपने फन का श्रेय वह अपने परदादा गैरत खां, दारा मुरब्बत खां को देते। वह बंदेहली बीनकार घराने से थे परन्तु कहते, "असल घराना तो एक है, और वह है ऋग्वेद। सभी ने वहीं से लिया है। प्यार-मोहब्बत के सिवा कोई और घराना संगीत में नहीं होना चाहिए।" जुगलबंदी शब्द से वह इतेफाक नहीं रखते इसलिए कहते जुगलबंदी नहीं भाईबंदी कहिए। यही सही है।

जावरा, मध्यप्रदेश में 1929 में जन्मे उस्ताद अब्दुल हलीम जाफर खां ने 9 वर्ष की उम्र से ही रेडियो पर गाना प्रारंभ कर दिया था। बाद में 12-13 वर्ष की उम्र के जब वह हुए तभी से सितार बजाना भी प्रारंभ कर दिया। उन्होंने हलीम एकेडमी ऑफ सितार की भी स्थापना की। उन्हें पद्मभूषण, संगीत नाटक अकादेमी, तानसेन अवार्ड सहित बहुत सारे सम्मान भी निरंतर मिलते रहे। संगीत शास्त्र में भी उनका खासा दखल था। कभी उन्होंने अमीर खुसरो के सांगीतिक पक्ष को लेकर वृहद

शोध लेखन भी किया था। अक्सर अपने शिष्यों से वह कहते, "कर्ता वो उस्ताद ना कर्ता वो शागिर्द"। इसी तरह ईश्वर को कहीं और नहीं मन में ढूँढ़ने का भी वो प्रायः बातचीत में आग्रह करते, यह कहते "ढूँढ़ना तो कायदा था, देहरोहरम में तुझे। मगर पहले लाजमी था, अपने घर के अंदर ढूँढ़ना तुझे।"

वीणा वादन की भारतीय परंपरा को उस्ताद विलायत खां और पंडित रवि शंकर की जोड़ी के बाद जिसने आगे बढ़ाया वह उस्ताद अब्दुल हलीम जाफर खाँ ही थे। उनका जाना संगीत की उस परंपरा की लयी का बिछोह है। उनके जाने से सितार में भाव दृश्यों की सौंदर्य सर्जना करने वाले अप्रतिम संगीतकार के एक युग का अवसान हो गया है।

अर्धांगिनी

दिव्या माथुर

गोल्डी और एलिज़ाबेथ के विवाह को लगभग दो वर्ष बीत चुके हैं किन्तु वह आज भी आशंकित है कि उसका पति अपने वैवाहिक संबंध को लेकर गंभीर भी है या नहीं। दोनों लिवरपूल-स्ट्रीट पर स्थित लौएड्स-औफ़-लन्दन में काम करते हैं। गोल्डी की सक्रेटरी रीटा, जो लिज़ की सहेली भी है, एलिज़ाबेथ को कई बार चेतावनी दे चुकी है कि गोल्डी एक ऐसा दिल-फैंक आशिक है, जो कभी सुधर नहीं सकता। रीटा के अनुसार, गोल्डी आजकल हाल ही में नियुक्त हुई ऑडिटर लीना अय्यर के साथ इश्क़ फ़रमा रहा है। लिज़ अमूमन रीटा की बात को हँसी में उड़ा देती है क्योंकि रीटा ही नहीं, दफ्तर की अधिकतर महिलाएँ एलिज़ाबेथ के भाग्य से रश्क करती हैं और क्यों न करें; उसका शौहर है ही इतना हैंडसम।

एलिज़ाबेथ के अधिकतर सहकर्मियों के वैवाहिक संबंध ठीक नहीं चल रहे; एक न एक क़िस्सा लगभग हर रोज़ सुनने में आता है—खूसट मैनेजर क्रिस्टोफर ने अपनी पच्चीस वर्षीय निजी सचिव लौरेन के संग ब्याह रचा लिया; जीन और पीटर का तलाक हो गया; जूडी ने बच्चों की कस्टडी के लिए जैक पर मुक़दमा ठोक दिया, अथवा अली की, जिसकी पहली बीवी पाकिस्तान में है, दूसरी और तीसरी बीवियों ने पुलिस में उसके ख़िलाफ़ अलग-अलग रपट दर्ज की है—आदि आदि। एलिज़ाबेथ नहीं चाहती कि उसके और गोल्डी के निजी संबंध भी दफ्तर में इसी तरह उछाले जाएं।

"लिज़, तुम मेरी बात पर विश्वास क्यों नहीं करती? तुम्हारा गोल्डी जौन डुआन से कम नहीं; सुन्दर लड़की देखकर उसके मुँह में झट पानी भर आता है", ऐसी ही बातें रीटा प्रायः एलिज़ाबेथ से कहती रहती है। ना चाहते हुए भी पूरी इस बात से इनकार नहीं कर सकती कि रीटा पूरी तरह गलत है। इश्क़ का इज़हार गोल्डी अपने सामने पड़ने वाली हर लड़की के साथ करता है और युवतियां भी कुछ कम नहीं हैं, वे हैंडसम पुरुषों को देखकर न केवल आहें भरती हैं बल्कि किसी बहाने से उनसे टकराने का प्रयत्न भी करती हैं। एलिज़ाबेथ ऐसी नहीं है। उसे यह सब इतना बेहूदा लगता है कि चाहते हुए भी इस बारे में गोल्डी से कुछ भी नहीं कह पाती। उसे यह भय भी है कि रोज़-रोज़ की चिकचिक से कहीं वह गोल्डी को खो न दे। वैसे भी, झिकझिक करना उसके स्वभाव में नहीं है। फिर, इस ज़माने में अच्छे लड़के कहाँ मिलते हैं? क्या हुआ जो गोल्डी ख़ूबसूरत लड़कियों के आगे बेबस हो जाता है, उसका इरादा उन्हें कोई नुकसान पहुंचाने का या बरगलाने का नहीं होता और न ही एलिज़ाबेथ को दुःख पहुंचाने का।

"...कृष्ण जी देवता के रूप में प्रेमी हैं पर वह एक महानायक भी हैं। महाभारत के रणक्षेत्र में जब अर्जुन ने अपने नाते-रिश्तेदारों से युद्ध करने के बजाय अपने राज्य का परित्याग करना बेहतर समझा तब कृष्ण जी ने उन्हें उपदेश दिया था कि युद्ध करना उनका कर्तव्य है।"...

कहानीकार: सम्पर्क : E-mail: divyamathur1974@gmail.com
अनुवादक: मनोज मोक्षेंद्र
सी-66, न्यू पंचवटी, जी.टी. रोड, गाजियाबाद-201001 (उ.प्र.)
मो.: 9910360249

"लिज़, क्या तुम इतने से ही संतुष्ट हो कि वह रोज़ शाम को तुम्हारे पास लौट आता है और तुम्हें हर जगह अपने साथ् चलने का आग्रह करता है?" इसे सौभाग्य कहें या दुर्भाग्य, एलिज़ाबेथ की सबसे पुरानी सहेली है रीटा, जो उसकी ख़ैर-ख़्वाह बन बैठी है और गोल्डी की हर हरक़त के बारे में उसे जानकारी देना अपना परम कर्तव्य मानती है।

"लिज़, तुम्हें मेरी बात पर यक़ीन नहीं होगा लेकिन कल शाम मैंने अपनी आँखों से गोल्डी और लीना को वैस्टफ़ील्ड में बाँहों में बाँहें डाले चहलकदमी करते हुए देखा''।

सुबह-सुबह रीटा ने अपनी गोल-गोल आँखें नचाते हुए एलिज़ाबेथ के कान में फुसफुसा कर कहा था। चुनांचे, वह जानती है कि 'बाँहों में बाँहें डालकर चहलकदमी करना' रीटा की मनगढ़ंत कहानी है लेकिन, उसका दिल फिर भी कसक उठा। आखिर, गोल्डी वैस्टफ़ील्ड में लीना के साथ क्या कर रहा था? क्या हमारी शादीशुदा ज़िंदगी सचमुच खत्म होने जा रही है? यह बात साफ है कि हमारे रोमांस के दिन शायद अब लद गए हैं। यदि गोल्डी उसे छोड़, लीना को अपना लेगा तब वह क्या करेगी? बावजूद इसके कि वह लगातार उसे पीड़ा पहुंचाता रहा है, वह आज भी उसी से ही प्यार करती है। वह सीधे-सीधे लीना से पूछना चाहती थी पर यह भी तो हो सकता है कि रीटा यह सब उसे भड़काने के लिए कर रही हो। उसने यह अफवाह सुन रखी थी कि रीटा खुद गोल्डी के प्रति आसक्त रह चुकी है।

"मीट माई बैटर-हाफ़', गोल्डी ने एलिज़ाबेथ का परिचय अपने नए सहकर्मी, हैनरी कॉक्स से करवाते हुए कहा तो हाथ मिलाते हुए हैनरी ने उसका गाल चूम लिया। गोल्डी के इस संबोधन पर उनकी मित्र-मंडली एक दूसरे को देखते हुए मुस्कराने लगी और एलिज़ाबेथ शर्म से पानी-पानी हो उठी। उनकी शादी को अभी कुछ ही दिन हुए थे कि एलिज़ाबेथ ने गोल्डी से अनुरोध किया कि उसका परिचय सीधे-सादे तरीके से देना चाहिए तो वह भड़क उठा था, "यू आर माई वाइफ़, तुम्हें अर्द्धांगिनी कहने में मुझे कोई प्रॉब्लम नहीं है, शायद तुम चाहती हो कि लोग तुम्हें अब भी कुंवारा समझें, इज़ दैट राइट?" एलिज़ाबेथ ठीक से उसे समझा नहीं पाती कि उसके 'मीट माई बैटर-हाफ़' कहने का अंदाज़ गलत है, ऐसा लगता है कि जैसे वह दोस्तों को अपनी कोई ट्रॉफी दिखा रहा हो।

एलिज़ाबेथ को यह सोचकर प्रायः अचंभा होता है कि क्या गोल्डी के बारे में उड़ रही सारी अफवाहें सही हैं। यह कैसे हो सकता है कि जो शौहर अपनी बीवी का परिचय 'माई बैटर-हाफ़' के रूप में कराता है, वह अपनी शादीशुदा ज़िंदगी को लेकर गंभीर न हो? कहीं ऐसा तो नहीं है कि गोल्डी उसके विश्वास और भोलेपन का लाभ उठा रहा है?

शादी की पहली सालगिरह तक तो सब कुछ ठीक-ठाक चल रहा था हालांकि शुरू शुरू में एलिज़ाबेथ की सहेलियों और उसके सहकर्मियों ने गोल्डी के छिछोरेपन की ओर उसका ध्यान खींचा था किन्तु उसने उनकी बात को हँसी में उड़ा दिया था क्योंकि वह सांगोपांग गोल्डी के प्रेम में आसक्त थी। अगर लड़कियाँ उसका हर जगह पीछा करती हैं तो क्या हुआ; आखिर, वह है तो एलिज़ाबेथ का ही न? क्या हुआ अगर वह 'शुक्रिया', 'खेद है' और 'माफ़ कीजिएगा' जैसे लफ़्ज़ों का प्रयोग नहीं करता? इंडियंस औपचारिकताओं में विश्वास नहीं करते। क्या हुआ जो वह सूप को सुड़क-सुड़क कर पीता है; वह मेरे बनाए भोजन की तारीफ़ तो करता है, वह किसी बात को लेकर कभी गंभीर नहीं है तो क्या हुआ, वह सरल स्वभाव का आदमी है। एलिज़ाबेथ को गोल्डी को कोई कमी नहीं नज़र आती थी; उसका लड़कपन एलिज़ाबेथ के मन में अपराध-बोध पैदा कर देता था कि उसने गोल्डी के खिलाफ़ अपनी सहेलियों और ख़ासकर बकबक-मशीन—रीटा की बातें क्यों सुनी।

गोल्डी की माँ संतोष बचपन में उसे गोल्डी कहकर पुकारा करती थी और वह चाहता था कि इंग्लैंड में हर व्यक्ति उसे इसी नाम से बुलाए। गोल्डी के माँ-बाप उसके विवाह के सिलसिले में इंग्लैंड आए थे तथा उनके साथ एक महीने से ज़्यादा समय तक ठहरे थे; अचानक संतोष उसे उसके वास्तविक नाम—गोपाल—कहकर बुलाने लगी थी।

"अब हमारा बेटा सचमुच बालिग हो गया है", संतोष ने घोषणा की पर वह उसके साथ बच्चे जैसा ही व्यवहार करती रही। "मेरा गोपाल आज ब्रेकफास्ट में क्या लेगा? और बिना उसका जवाब सुने, वह सभी के लिए आलू, मूली या गोभी के परांठे बनाने में जुट जाती।

"लिज़, बेटा, तुम्हें गोल्डी की पसंद की सारी चीज़ें बनानी सीख लेनी चाहिए। उसे पिज़्ज़ा और पास्ता पसंद नहीं है। यू नो न, हज़्बैंड का दिल तुम उसकी फेवरेट डिशेस बना कर जीत सकती हो।"

'लिज़ की पसंद और नापसंद के बारे में भी तो पूछो", वहाँ मौजूद गोपाल के पापा बोले।

"बेचारी सारी ज़िंदगी पिज़्ज़ा और पास्ता ही तो खाती रही है। अब उसे हमारे असली इण्डियन खाने का टेस्ट मालूम होना चाहिए?"

लंदन से बड़ौदा लौटने से पहले संतोष को तसल्ली थी कि उसने एलिज़ाबेथ को सभी प्रकार की करीज़, चपाती, परांठा, चटपटी चीजें और मिठाइयाँ बनानी सिखा दी थीं। हालांकि संतोष का बस चलता हो वह रोज़ उनके लंच के लिए भी उन्हें परांठे बाँध देती, शुक्र था कि गोल्डी ने स्वयं ही उन्हें ऐसा करने से रोक दिया था। एलिज़ाबेथ अपनी सास का निरादर कभी नहीं कर सकी, हर रोज़ तली हुई चीज़ें खा-खाकर जब वह ऊब जाती तो ऑफिस में रोस्ट-लंच या सैंडविच खाकर तसल्ली कर लेती।

उनके लंदन-प्रवास के दौरान, जब जब एलिज़ाबेथ को ऑफिस से घर पहुँचने में देर हुई, तब-तब संतोष ने उसे आगाह किया, "लिज़ बेटा, टाइम से घर आ जाया करो; मैरिज इस बात की कोई गारंटी नहीं कि लड़का कहीं और मुँह नहीं मारेगा।"

बहरहाल, कोई एलिज़ाबेथ की माँ से पूछे तो वह भी उसके बारे में यही बताएगी कि उसके लिए ऐसे लड़कों की कोई कमी नहीं थी जो उसके लिए अपने स्थायी प्यार का इज़हार किया करते थे। एक समय था जब गोल्डी भी उसके पीछे पागल हुआ फिरता था। वे विवाह-सूत्र में क्या बंधे कि वह अचानक बदल गया।

"चाइल्डहुड से ही वह गर्ल्ज़ का दुलारा था", संतोष बड़े फ़ख्र के साथ सबको बताया करती थी, "लंदन आने के पहले भी उसका हमारे नेबर की लड़की के साथ सीरियस अफ़्फ़ेर चल रहा था। उस लड़की का नाम भी राधा था, यू नो, कृष्नाज़ गर्ल-फ्रैंड। उसके माँ-बाप भी गोपाल को बहुत पसंद करते थे। बड़ौदा में सब कहते थे कि ये दोनों एक-दूजे के लिए बने हैं।"

"जब उसने हमें तुम्हारे बारे मे बताया तो हमने पहले तो उसका बिलीव ही नहीं किया। हमने सोचा कि प्यार का यह भूत जल्दी ही उसके सिर से उतर जाएगा पर जब हमने तुम दोनों की इंगेजमेंट की फोटोज़ देखीं तो हमें राधा के पेरेंट्स को इन्फॉर्म करना ही पड़ा। उन बेचारों पर तो जैसे पहाड़ ही टूट पड़ा; पूरे बड़ौदा में शोर मच गया कि आखिर इतनी लंबी और गहरी दोस्ती के बाद गोपाल राधा को कैसे छोड़ सकता है?" संतोष के किस्से सुन-सुनकर एलिज़ाबेथ को भी राधा से सहानुभूति हो चली थी।

"यू नो, राधा की दादी कहती थी कि हिस्ट्री इज़ रिपीटिंग इटसेल्फ, गोकुल छोड़कर मथुरा में रहने के लिए जाते समय कृष्ण ने भी राधा को छोड़ दिया था। राधा का घर से बाहर निकलना मुहाल हो गया। यू नो, फैमिली पर इतना बड़ा कलंक! अब राधा से कौन शादी करेगा?"

"क्यों, कोई लड़का राधा से शादी क्यों नहीं करेगा?" हैरान होते हुए एलिज़ाबेथ ने पूछा।

"इंडिया में, शादी से पहले लड़के-लड़कियों को एक साथ घूमने की इजाजत नहीं है न।"

"यू नो, लिज़, बड़ौदा की लेडीज़ तुम्हारे बारे में क्या सोचती हैं?" संतोष ने अपनी नज़रें एलिज़ाबेथ के चेहरे पर टिका दीं।

"यही कि तुमने हमारे गोपाल पर सम्मोहिनी डाल रखी है, यू नो, बिविचड। इज़ इट टू कि अंग्रेज लड़कियाँ इंडियन लड़कों को फंसा लेती हैं?" उसने किंकर्तव्यविमूढ़ एलिज़ाबेथ से सवाल किया, "गोरे-चिट्टे लड़कों के बजाय तुम हमारे सॉवले बॉयज़ को ज्यादा पसंद करती हो?"

"हाउ फन्नी, मेरी मम्मी भी यही कहती है कि इंडियन बॉयज़ गोरियों को फांस लेते हैं", पास ही बैठा गोल्डी उनकी बातचीत सुन रहा था पर ऐसे खामोश था जैसे कि उसका इन किस्सों से कोई सरोकार ही न हो।

तीन महीने बाद एलिज़ाबेथ ने चैन की सांस ली; उसके सास-ससुर को बड़ौदा लौटना पड़ा क्योंकि वहाँ उनके बहुत से काम रुके पड़े थे। एलिज़ाबेथ को अपना घर अपने तरीके से सजाने-धजाने का मौका मिला था किन्तु गोल्डी हर चीज़ को उसी रूप में देखना चाहता था, जिस रूप में उसकी माँ रख कर गई थी। वह एलिज़ाबेथ को बात-बात पर टोकता और जब उसकी नहीं चलती तो वह मुंह सुजा कर बैठ जाता या उसके पकाए खाने में खामियाँ ढूँढ़ता अथवा उसके पहनावे की नुक्ताचीनी करता।

सालाना छुट्टियों में गोल्डी ने बड़ौदा जाने का प्रस्ताव रखा, एलिज़ाबेथ सहर्ष मान गयी, यह उसकी पहली भारत-यात्रा थी और वह काफी उत्साहित थी। बजाय इसके कि वह एलिज़ाबेथ को शहर घुमाता, सर्वप्रथम गोल्डी ने उसके सम्मुख राधा तथा उसके परिवार से मिलने का प्रस्ताव रखा। ज़ाहिर है, जहाँ तक राधा और उसके परिवार का संबंध था, काफी कुछ दांव पर लगा हुआ था।

"गोपाल बेटा, तुम उनसे क्यों मिलना चाहते हो? राधा के पेरेंट्स अभी भी तुमसे बेहद खफ़ा हैं", संतोष भी उतनी ही परेशान थी।

"मम्मी, अगर हम उनसे मिलने नहीं गए तो उन्हें बहुत बुरा लगेगा। राधा ने मुझे कई बार फोन किया है कि वह लिज़ से मिलना चाहती है।"

"देख लो, पर...", संतोष की त्योरी चढ़ी को गोल्डी ने नजरअंदाज कर दिया।

"मम्मी, फॉर गोड्स सेक, राधा और मैं बचपन के फ्रैंड्स हैं।" गोल्डी ने संतोष का इतना जबरदस्त प्रतिवाद किया तो एलिज़ाबेथ को अपना खामोश रहना ही बेहतर लगा, वैसे भी, गोल्डी ने अपनी 'बैटर हाफ़' की राय लेने की जहमत भी नहीं उठाई पर एलिज़ाबेथ हैरान थी कि इतना कुछ हो जाने के बावजूद राधा को गोल्डी से मिलने में क्या दिलचस्पी हो सकती है, विशेषतः जब उसने अविवाहित रहने की कसम खा रखी है?

संतोष चाहती थी कि एलिज़ाबेथ कीमती भारतीय पोशाक और गहने पहनकर अच्छे ढंग से सज-धज कर जाए ताकि राधा और उसके घरवालों को अहसास हो कि आखिर गोल्डी ने राधा के बजाय एलिज़ाबेथ को ही क्यों चुना।

"मीट माई बैटर हाफ़', गोल्डी ने कुछ हेकड़ी से एलिज़ाबेथ का परिचय राधा और उसके घरवालों से करवाया। जहां एलिज़ाबेथ स्पष्ट रूप से सोच रही थी कि उस जैसी स्मार्ट और शिक्षित लड़की राधा पर कहीं भारी पड़ेगी, वहीं राधा की एक पैनी नज़र ने एलिज़ाबेथ के नखशिख का खूब जायज़ा लिया। जैसी एलिज़ाबेथ ने कल्पना की थी, राधा उसके बिलकुल विपरीत निकली, आकर्षक, चुस्त, मुखरित, उसमें एक कशिश थी। अच्छा ही हुआ कि संतोष ने एलिज़ाबेथ को भारतीय परिधान में सजा-धजा कर भेजा था क्योंकि राधा ने एक पश्चिमी डिजाइनर पोशाक पहन रखी थी। दफ्तर के प्रोफेशनल-अटायर के अतिरिक्त, एलिज़ाबेथ के पास ऐसी कोई ड्रेस नहीं थी।

उस रंग-बिरंगे हवेलीनुमा घर मे एलिज़ाबेथ ने स्वयं को असुविधाजनक एवं कुछ-कुछ असुरक्षित सा महसूस किया। राधा गोल्डी से ऐसे बात कर रही थी जैसे कि कुछ हुआ ही न हो। एलिज़ाबेथ को एकदम नजरअंदाज करते हुए, वे लगातार अपने कॉलेज के दिनों और दोस्तों के बारे में बात कर रहे थे। उसे लगा कि जैसे उन दोनों में या तो बड़ा प्रगाढ़ संबंध है या फिर उसे छोटा दिखाने अथवा उसका अपमान करने के इरादे से राधा ऐसा प्रदर्शन कर रही है। राधा की बातों से यह भी स्पष्ट था कि उसे गोल्डी और एलिज़ाबेथ की निजी और घरेलू ज़िंदगी के विषय में अच्छी जानकारी थी। क्या दोनों के बीच अभी भी कुछ चल रहा है?

अपरिचितों की तरह बैठी हुई एलिज़ाबेथ उन सबकी बातें सुन रही थी। वे उसे बड़ी अजीब नज़रों से घूर रहे थे; जैसे गोल्डी से विवाह करके उसने कोई बड़ा अपराध कर दिया हो। अंतः परेशान होकर वह एक पत्रिका उठा कर बाहर दालान में जाकर झूले पर तब तक बैठी रही, जब तक कि उसे चाय के लिए अंदर नहीं बुलाया गया। चाय का आयोजन भव्य था। एलिज़ाबेथ ने इतने प्रकार के व्यंजन लंदन के नीसडन-मंदिर में ही देखे थे जहां जन्माष्टमी मनाई जा रही थी। संतोष ने उसे और गोल्डी को सख्त हिदायत दी थी कि यदि वे घर में पूजा नहीं कर सकते तो उन्हें मंदिर ज़रूर जाना होगा।

"तो आप लोग कृष्ण का जन्मदिन मना रहे हैं..." एलिज़ाबेथ ने व्यंग्यात्मक लहजे में सवाल किया। गोल्डी ने उसे वहीं रोक दिया और कहा यह उपहास का विषय नहीं है, उसे 'कृष्ण' को हमेशा 'कृष्ण जी' कहकर संबोधित करना चाहिए। उसे अचानक याद आया कि प्रार्थना करते समय, संतोष ईसा मसीह को 'ईसा मसीह जी' कहकर संबोधित किया करती है।

"कृष्ण जी देवता के रूप में प्रेमी हैं पर वह एक महानायक भी हैं। महाभारत के रणक्षेत्र में जब अर्जुन ने अपने नाते-रिश्तेदारों से युद्ध करने के बजाय अपने राज्य का परित्याग करना बेहतर समझा तब कृष्ण जी ने उन्हें उपदेश दिया था कि युद्ध करना उनका कर्तव्य है।"

"आई नो, प्रेम और युद्ध में सब जायज़ है।"

"तुम्हें गीता पढ़नी चाहिए, जिसमें उनके व्याख्यान संकलित हैं।" कृष्ण जी के बारे में बात करते हुए एलिज़ाबेथ ने गोल्डी को पहली बार गंभीर पाया था।

गोल्डी के इस निर्देश के बावज़ूद कि एलिज़ाबेथ चाय में चीनी नहीं लेती, राधा ने उसकी चाय में ढेर सारी चीनी डाल दी। पहले घूँट में ही एलिज़ाबेथ को लगा कि जैसे उसे उल्टी हो जाएगी। खाने में भी उसे कुछ अच्छा नहीं लगा पर लोग बिना उससे पूछे उसकी प्लेट में किस्म-किस्म की चीज़ें रखे चले जा रहे थे।

विदा करते समय राधा की दादी ने गोल्डी को कुरता-पाजामा और एलिज़ाबेथ को एक साड़ी दी, जो संतोष ने गुस्से में सफ़ाई करने वाली बाई को यह कह कर दे दी कि इतनी घटिया साड़ी उसकी बहू नहीं पहन सकती जबकि गोल्डी के कपड़े सबको अच्छे लगे।

शाम को एलिज़ाबेथ की तबियत कुछ और नासाज हो गयी; उसे उबकाइयां आने लगीं। संतोष ने कहा कि लिज़ को राधा के घरवालों ने निश्चित रूप से बुरी नज़र लगा दी थी। अपने हाथ में साबुत लाल मिर्च और नमक लेकर संतोष ने उसके चेहरे के आसपास घुमाया और फिर मिर्च और नमक को अखबार में लपेट कर गोल्डी से कहा कि वह बाहर जाकर उसमें आग लगा दे, "अब कोई तुम्हारा बाल बाँका नहीं कर सकता।"

गोल्डी बाहर से खाँसता और छींकता अंदर लौटा। उसकी आँखें बह रही थीं और गले में खराश थी। माँ को भला बुरी सुनाते हुए वह गुसलखाने में जा घुसा।

"लिज़ बेटे, तुम्हें जल्दी ही माँ बन जाना चाहिए", संतोष ने एलिज़ाबेथ को गंभीरता से सलाह दी, "इससे गोपाल का मन राधा से हट जाएगा।" संतोष ने कहा। अपनी सास की ऐसी झिकझिकबाजी के बावजूद, एलिज़ाबेथ को वह अच्छी लगती थी, वह जो भी कहती थी, उसके भले के लिए ही कहती थी।

"मम्मी, क्या आपका यह सुझाव सही है? इधर मैं बच्चे की नैपीज़ बदलूँगी, उधर गोल्डी लड़कियों के साथ इश्क फरमाएगा," एलिज़ाबेथ हँस पड़ी।

जब तक वे बड़ौदा में थे, हर जगह राधा उनके साथ जाती। एलिज़ाबेथ गुजरात की चित्रकला और वास्तुकला का आनन्द लेना चाहती थी पर उसका ध्यान लगातार गोल्डी और राधा पर रहता, जिन्हें एलिज़ाबेथ या आसपास के माहौल में तनिक भी दिलचस्पी नहीं थी। एलिज़ाबेथ चाहती थी कि उसे अकेला छोड़ दिया जाए परंतु गोल्डी को हर जगह

साथ चलना था और वह भी राधा को संग लेकर। राधा के लिए घर से निकलने का इससे अच्छा बहाना और क्या हो सकता था? एलिज़ाबेथ की छुट्टियाँ बर्बाद करना ही शायद उसका मकसद था।

लंदन लौटकर भी एलिज़ाबेथ को चैन नहीं था क्योंकि गोल्डी चाहता था कि एलिज़ाबेथ उसके सहकर्मियों और दोस्तों तथा ख़ासतौर से लीना से मिलने-जुलने वक्त हमेशा उसके साथ रहे। एलिज़ाबेथ अपने काम में इतनी मशगूल रहती थी कि उसे पब में पहुँचने में हमेशा देरी हो जाती थी जहाँ वे शाम को मिला करते थे। लिज़ कोई ऐसी नई दोस्ती की शुरुआत करना नहीं चाहती जिसे वह निभा न सके। लीना जब तब उसे पिकनिक या फिल्म के लिए दावत देती रहती है और एलिज़ाबेथ के इन्कार पर गोल्डी खफ़ा हो जाता है कि जैसे एलिज़ाबेथ की ज़िंदगी को गोल्डी और उसके दोस्तों के इर्दगिर्द ही घूमना चाहिए। घर के काम-काज के समय भी वह केवल उसकी लल्लो-चप्पो से काम चलाया करता है। न तो वह सफाई कर सकता है, न ही कपड़े-लत्तों की धुलाई। इन सब बातों के अलावा वह महाकंजूस भी है, क्योंकि घर के खर्चे के अलावा, मॉर्गेज और बिल्स भी वही देती है, पैसे मांगना उसकी फ़ितरत में नहीं है।

"जान, यू आर वन इन ए मिलियन पर तुम मेरे दोस्तों के साथ बाशऊर पेश क्यों नहीं आती?" गोल्डी ने एलिज़ाबेथ से फिर शिकायत की।

"डार्लिंग, मेरे पास तो अपनी ही फ्रैंड्स के लिए फ़ुर्सत नहीं है; मैं तुम्हारे दोस्तों के साथ दोस्ताना निभाने के लिए कहाँ से समय लाऊँ?" एलिज़ाबेथ तपाक से बोली; वह उसकी मान-मनौव्वल से ऊब चुकी थी।

"तुम कितनी अनसोशल हो!"

"सौरी डार्लिंग, इस समय मेरे पास ढेरों काम हैं।"

"मैं भी तुम्हारी ही कंपनी का मुलाज़िम हूँ; मुझे पता है कि तुम कितनी व्यस्त हो, डार्लिंग!"

"पर डार्लिंग, हमारे काम पूरी तरह से अलग-अलग हैं;" कहते ही एलिज़ाबेथ को खेद हुआ, उसे काम का जिक्र नहीं करना चाहिए था। उसे हाल ही में एक बड़ा प्रमोशन मिला था और गोल्डी तब से कलप रहा था।

"मैं यह कैसे भूल सकता हूँ?" गोल्डी ने तेवर में आते हुए उत्तर दिया।

बजाय एलिज़ाबेथ को बधाई देना, गोल्डी कहता फिर रहा था कि वह प्रमोशन लिज़ को एक अंग्रेज होने के नाते दिया गया था। उसके बॉस नस्लवादी थे; वे कैसे किसी भारतीय को अपना बॉस बना सकते थे? पर सच्चाई यह थी कि एलिज़ाबेथ ने अपनी सभी बीमांकिक परीक्षाएं पास कर ली थीं जबकि गोल्डी को अभी तीन और मापदंडों पर खरा उतरना था।

एलिज़ाबेथ किसी अन्य कंपनी में नौकरी पाने की कोशिश कर रही थी ताकि उसे यहाँ रहकर गोल्डी और उसकी महिला प्रशंसकों की बकबकबाज़ी न सुननी पड़े। गोल्डी का व्यक्तित्व यहाँ हर शख़्स को आकर्षित करता है जबकि उसे अहसास होने लगा है कि उसके ऊपरी आकर्षण के पीछे कोई ठोस शख़्सियत नहीं है। जब वह यहाँ नवागंतुक था, एलिज़ाबेथ ने ही उसे आर्थिक दुनिया के तौर-तरीकों के बारे में बताया था—सादी कमीज़ों के स्थान पर डबल-कफ़-शर्ट्स, किस रंग और डिजाईन के सूट्स, किस सूट के साथ कौन सी टाई और कफ़लिंक्स इत्यादि। अन्य बहुत से भारतीयों की तरह वह भी मॉस-ब्रदर्स के सूट खरीद लाया था लेकिन वह लंदन के लॉयड्स में कार्यरत था, उसे वहाँ के चलन का पालन करना था—जो कपड़े सी.ई.ओ. पहनते हैं, वो उसके जूनियर नहीं पहन सकते, जो पोशाक ऑडिटरस पहनते हैं, वो बीमांकिक नहीं पहन सकते और जो बीमांकिक पहनते हैं, प्रशिक्षु नहीं पहन सकते—इत्यादि। एलिज़ाबेथ उसे कमीज़ दिलाने के लिए टी.एम. ल्युइन और सूट खरीदने के लिए रोडरिक-चाल्ज़ ले जाती; और कभी कभी उसके बिल्स भी भर देती।

शादी की पहली सालगिरह पर एलिज़ाबेथ ने गोल्डी को सिटिजन-घड़ी भेंट की किन्तु उसने एक बार भी उस कीमती गिफ़्ट की तारीफ नहीं की; न ही अपने किसी दोस्त और सहकर्मी से उसकी चर्चा की। जबकि एलिज़ाबेथ को गोल्डी ने एक कंबल भेंट किया था, जो वह वेम्बली की सन्डे-मार्केट से खरीद कर लाया था, वो भी एक पॉलिथीन बैग में। फिर भी एलिज़ाबेथ खुश थी और सबको यही बताया करती थी कि गोल्डी उसका कितना खयाल रखता है। लेकिन, ये बातें इतनी अहम नहीं हैं कि इनका ज़िक्र किया जा सके। एलिज़ाबेथ इन सब बातों को दिल में छुपाकर रखती है और सोचती है कि उसकी अपनी ही भीरुता के कारण उसकी भावनाओं की कद्र नहीं करता।

विवाह के बाद उन दोनों ने ही एक ऐसी दुनिया में प्रवेश किया जिससे वे दोनों ही अपरिचित थे।

गोल्डी के भारतीय दोस्त आमतौर पर एलिज़ाबेथ और गोल्डी को नई लाइफ़ स्टाइल का 'गोरा-बस्ती' कह कर मजाक उड़ाते थे। उधर, एलिज़ाबेथ ने भी जब गोल्डी के दोस्तों को बहुत करीब से देखा तो उसके मन पर कोई अच्छा असर नहीं पड़ा। बड़ी सूझ-बूझ और कोशिश के बाद वह अपने ससुराल वालों के साथ अच्छी तरह घुल-मिल गयी थी लेकिन गोल्डी ने उसके परिवार के साथ आत्मीय संबंध बनाने के लिए थोड़ी सी भी जद्दोजहद नहीं की। परिणामस्वरूप, एलिज़ाबेथ ने स्वयं ही उनसे बिल्कुल मिलना-जुलना बंद कर दिया क्योंकि जब भी वह गोल्डी से पीहर चलने को कहती, एक बखेड़ा खड़ा हो जाता।

एक दिन रीटा ने एलिज़ाबेथ को बताया कि गोल्डी भारत में किसी लड़की से रोज़ बातें करता है और अब उसने रीटा से उस लड़की को इंग्लैंड

में बसाने के लिए मदद भी माँगी है। एलिज़ाबेथ का दिल डूबने लगा; गोल्डी ने उसे यह बात कभी भी नहीं बताई। डिनर के समय, एलिज़ाबेथ ने इस बात की चर्चा हल्के से की।

"डार्लिंग इसमें बताने वाली क्या बात है? तुम तो जानती ही हो; राधा मेरे बचपन की दोस्त है, वह अपने घरवालों से बेहद नाखुश है। उसने यहाँ बसने के लिए मेरी मदद मांगी है।" गोल्डी ने बताया।

एलिज़ाबेथ हैरान थी कि गोल्डी को दफ्तर में निजी कामों के लिए समय कहाँ से मिल जाता है? उसे अपने मॉम-डैड से हफ़्तों-हफ़्तों बात करने की फुर्सत नहीं मिल पाती। गोल्डी है कि भारत से लोगों को बुलाने और इस देश में उन्हें बसाने के बंदोबस्त में लगा हुआ है। तभी तो वह ऑफिस का काम भली-भाँति न कर पाने के कारण बदनाम है और ऐसी स्थिति में उसे प्रमोशन भी चाहिए। तिस पर, क्या रीटा इमीग्रेशन-ऑफिसर है जो राधा का वीज़ा दिला सकती है?

"तुम तो मुझे कुछ बताना ही नहीं चाहते, ठीक वैसे ही जैसे तुम दोस्तों को मुझे बताए बग़ैर डिनर पर आमंत्रित कर लेते हो।"

"ओह अच्छा किया, डार्लिंग जो तुमने मुझे याद दिला दिया, डिकी और उसकी नई पत्नी सारा इस शनिवार को डिनर पर आ रहे हैं," गोल्डी ने वार्तालाप को एक नया आयाम देने की कोशिश की।

"क्या? तुम यह कैसे भूल सकते हो, डार्लिंग, कि पापा ने इस शनिवार को हमें थियेटर और डिनर के लिए निमंत्रित किया है।"

"लिज़ मेरी जान, हम उनसे मिलने अगले हफ्ते भी तो जा सकते हैं," गोल्डी को फिक्र हुई कि मेहमानों के लिए खाना कौन बनाएगा।

"लेकिन, अगले हफ्ते तुम्हारे बॉस और उसकी बहन आ रहे हैं। यही वज़ह है कि मैंने पापा से कहा कि वह इस शनिवार के लिए थियेटर के टिकट बुक करा लें। हम उनसे महीनों से नहीं मिले हैं।"

"भगवान के वास्ते लिज़, तुमने अपनी सारी ज़िंदगी उनके साथ गुजारी है..." गोल्डी अपना आपा खोने लगा।

"डार्लिंग, मुझे अफ़सोस है; पापा ने बहुत पहले ही टिकट बुक करा रखे हैं। हालांकि तुम्हारा मेरे साथ न चलना अशिष्टतापूर्ण होगा पर मैं अकेले चली जाऊँगी, केवल सौ पाउंड्स ही बर्बाद होंगे। तुम अपने दोस्तों को डिनर पर बाहर ले जा सकते हो।" एलिज़ाबेथ जानती है कि गोल्डी अपना गुज़र-बसर खुद कर ही नहीं सकता।

"मैंने उन्हें डिनर के लिए घर पर बुलाया है, न कि किसी रेस्तरां में।"

"डार्लिंग, किसी को इनवाइट करने से पहले डायरी तो देखे लेते, मुझे अफ़सोस है कि मैं पापा-मामी को लास्ट मिनट पर मना नहीं कर सकती।" एलिज़ाबेथ को खुद पर आश्चर्य हुआ कि पहली बार उसने गोल्डी का सामना करने की हिम्मत की।

"ठीक है, तुम अपने मम्मी-पापा के साथ मौज करो, मैं कुछ और बंदोबस्त कर लूँगा," गोल्डी ने 'मम्मी-पापा' शब्दों पर जोर देते हुए कहा। उसे अब भी विश्वास था कि शाम तक एलिज़ाबेथ मान जाएगी।

एलिज़ाबेथ को झक मार कर अकेले ही जाना पड़ा। उन्हें गोल्डी का टिकट बेचना पड़ा।

'लिज़्ज़ी डार्लिंग, क्या गोल्डी हमारा साथ पसंद नहीं करता?" मम्मी ने पहले भी कई बार बेटी से यह सवाल पूछा था।

"मॉम, खाहमखाह, तुम चिंता करती हो। गोल्डी के इतने ढेर सारे दोस्त हैं कि..." लिज़ इतनी विचलित हो गई कि वह अपना वाक्य भी पूरा नहीं कर सकी। उसके पापा अपनी लाडली की मनोदशा बिना कहे ही समझते हैं। वह कितना चाहती थी कि गोल्डी कभी-कभी उसके पापा के साथ उठे बैठे, टेनिस खेले पर न जाने क्यों वह उसके माम और डैड दोनों से ही खार खाता है।

मुश्किल से एक माह भी नहीं गुजरा कि राधा अचानक लंदन पहुँच गयी, उसे सिटी-युनिवर्सिटी में एम.बी.ए. में दाख़िला मिल गया था। गोल्डी 'बैटर-हाफ़' को इतनी बड़ी बात बताना भी भूल गया था। गोल्डी के जोर देने और किटकिट से बचने के लिए एलिज़ाबेथ उसके साथ राधा से मिलने गई। उसके चाचा-चाची, जयेश और सुशीला, का मकान हैरो की एक पॉश कॉलोनी में था। एलिज़ाबेथ ने देखा कि हर तरफ मार्बल की टाइल्स और ट्यूब-लाइट्स लगी थीं, लाउन्ज में देवी देवताओं की तस्वीरें लगी थीं और सस्ती मूर्तियां सजी थीं; न जाने क्यों गोल्डी इस सजावट से बहुत प्रभावित नज़र आ रहा था; या फिर यह राधा की उपस्थिति का कमाल था?

जैसा कि एलिज़ाबेथ ने अनुमान लगा रखा था, गोल्डी और राधा के बीच अधिक बातचीत नहीं हुई। शायद उनकी सारी बातें फोन पर हो चुकी थीं। गुजराती नमकीन और मिठाइयों के साथ चाय पीने के बाद, गोल्डी चलने को उठ खड़ा हुआ।

"भाई-भाभी कह रहे थे कि तुम लोग राधा के लिए एक सूटेबल ब्वाय ढूँढ़ने मे हमारी मदद करोगे?" अचानक सुशीला ने फुसफुसाकर पूछा।

"ओह, मैंने समझा कि राधा यहाँ पढ़ाई के लिए आई है", एलिज़ाबेथ ने कहा।

"वो तो उसे यहाँ आने का बहाना चाहिए था न, हम सब चाहते हैं कि जल्दी से अपना घर बसा ले," जयेश बोल पड़े।

"ऐसी क्या जल्दी पड़ी है, अंकल जी, पढ़ाई खत्म करने के बाद भी तो उसकी शादी हो सकती है," गोल्डी बोला।

"यू डोंट नो, कितना पैसा लगाया है मोटा भाई ने इसे यहाँ भेजने पर? पढ़ाई तो ये शादी के बाद भी कर सकती है, बस एक अच्छा लड़का मिल जाए", लगा कि वे बहुत जल्दी में थे।

"राधा, क्या तुम भी यही चाहती हो?" गोल्डी ने तल्ख़ी से पूछा तो राधा उसकी ओर बेचारगी से देखने लगी। खामोश रही; खोई-खोई सी; हो सकता है कि वह थकी हुई हो।

"लिज़ डार्लिंग, रात में पढ़ने के लिए इन साइड-लैंपों की रोशनी नाकाफ़ी है", बिस्तर पर बैठते हुए गोल्डी बोला, "अपने लाउंज और बेडरूम में हमें भी ट्यूब-लाइट्स लगवा लेनी चाहिए।"

एलिज़ाबेथ के कान खड़े हो गए। गोल्डी के रिश्तेदारों ने शादी के उपहार में उन्हें शीशे और धातु की चमचमाती वस्तुएं भेंट की थीं। लिज़ ने उनमें से ज़्यादातर को यह कहते हुए वहीं छोड़ दिया कि वे इतना भारी सामान अपने साथ लन्दन नहीं ले जा सकते। गोल्डी की ज़िद पर कुछ सामान उनके फ्लैट पर पहुँच ही गया, जिसे एलिज़ाबेथ ने अपने खाली कमरे में रखवा दिया; गोल्डी को यह बिलकुल अच्छा नहीं लगा था।

"अगर तुम्हें वो चीज़ें पसंद नहीं हैं तो हम उन्हें अपने दोस्तों को खास मौकों पर उपहार में दे सकते हैं।"

"डार्लिंग, यहाँ उपहार किसी की ज़रूरत या हॉबी के मुताबिक़ दिए जाते हैं न कि जो घर में बेकार पड़ा है वो उठा के दे दो। तुम बेशक उन्हें अपने दोस्तों को उपहार में दे सकते हो।"

चाहे राधा की शादी का मसला हो या उसकी पढ़ाई का, फोन पर उन दोनों की लगातार बातचीत से एलिज़ाबेथ ऊब चुकी थी, न जाने दोनों के बीच चल क्या रहा है? एलिज़ाबेथ से क्षमायाचना सहित, जब तक वह उठकर लाउंज अथवा बालकनी में जाकर राधा को फोन किया करता; ऐसे में नाश्ता बासी हो जाता अथवा डिनर ठंडा। एलिज़ाबेथ ने अब परवाह करना ही छोड़ दिया था; वह घंटे आध घंटे में लौटता तो अपना खाना खुद माइक्रो में गर्म करके चुपचाप खा लेता।

एक शाम जब घर लौटी तो एलिज़ाबेथ ने राधा को अपने दरवाज़े के आगे बैठा पाया। उसकी आँखें सूजी हुई थीं; शायद चाचा-चाची से लड़-झगड़ कर आई थी। एलिज़ाबेथ के पूछने के बावजूद, वह चुपचाप चाय नाश्ता करती रही किन्तु गोल्डी के आने पर जो उसने बोलना शुरू किया तो देर रात तक बोलती ही रही। जो कुछ एलिज़ाबेथ के पल्ले पड़ा वह यह था कि वह चाचा-चाची से आज़िज़ आ चुकी थी, जो उसे पश्चिमी स्टाइल के कपड़े पहनने, शाम को बाहर जाने और घर देर से लौटने आदि पर एतराज़ करते थे।

"राधा, मैंने तुमसे कहा था न कि अभी तुम लो-प्रोफाइल में रहो, थोड़ा सब्र और कर लो..." गोल्डी ने उसे शांत करने का प्रयत्न किया।

"गोल्डी, तुम जानते हो, मैंने कितना सब्र किया है पर लोग मेरा पीछा नहीं छोड़ते।"

एलिज़ाबेथ सोच रही थी कि राधा के इस कथन के कहने का क्या मतलब था? क्या वह शादी नहीं करना चाहती? गोल्डी पर उसका किस तरह का अंकुश है? उसकी बकबक वह इतना सहन कैसे कर लेता है? वे उसे अपनी बातचीत में शामिल क्यों नहीं करते? जब कभी वह गोल्डी से पूछती है, वह यह कहकर उसे टाल देता है कि "अरे, इंडियन गर्ल्ज़ ऐसी-ही होती हैं" या "लिज़ डार्लिंग, तुम अपना दिमाग़ खराब क्यों कर रही हो, मैं सम्हाल लूंगा।"

एलिज़ाबेथ ने खुद को इतना उपेक्षित अनुभव किया कि अपना दिल हल्का करने के लिए उसने रीटा को फोन करके पास के ही पब में बुलाया, हालांकि वह जानती थी कि रीटा उसे क्या सुनाएगी, "काश! किस तुमने मेरी बातों पर पहले ध्यान दिया होता तो आज यह दिन देखने को तो नहीं मिलता।"

"लिज़ डिअर, कंपनी की बदहाली ने निपटना तुम्हारा रोज का काम है। तुम अपनी इस छोटी सी समस्या को क्यों नहीं सुलझा पा रही? न तुम किसी से कुछ कहती हो और न ही किसी की सुनती हो"; जैसे ही रीटा आई, उसने अपना गुबार उंडेल दिया।

"मैं यहाँ अपना ग़म ग़लत करने आई हूँ..."

"लिज़, जब तक तुम किसी समस्या को समझोगी ही नहीं, उसे सुलझाओगी कैसे? जब तुम हमारी मल्टी-मिलिनेयर कंपनी की समस्याओं को सुलझा सकती हो तो अपनी छोटी सी गृहस्थी...", रीटा झुंझलाते हुए ड्रिंक्स लेने को उठ खड़ी हुई।

एलिज़ाबेथ के दिमाग में यक-ब-यक एक तूफान-सा उठ खड़ा हुआ। क्यों नहीं चाहती वह अपनी मुसीबत से निपटना? अमरीका में आए तूफान-केटरीना से निपटना उसके लिए कोई मुश्किल बात नहीं, यह उसके पेशे की बात है; कंपनी के नुकसान और फायदे को मद्देनजर रखकर ही उसे निर्णय लेना होता है, निजी तौर पर उसे कोई फर्क नहीं पड़ता, गलत हुआ तो अधिक से अधिक उसका बोनस कम हो जाएगा। वह यह भी जानती है कि उसकी अपनी मुसीबतों की जड़ में कौन है पर उस जड़ को उखाड़ फेंकने के लिए क्या उसे अपने वैवाहिक संबंधों

को दांव पर लगा देना चाहिए? उसके इसी डर का फायदा उठा रहा है गोल्डी।

"लिज़्ज़ी डिअर, जीवन में तुम्हें मैने इतना स्ट्रेस्ड कभी नहीं देखा, गोल्डी निश्चित रूप से तुम्हारे लायक नहीं है, समय बर्बाद न करो तो बेहतर होगा।" माँ ने भी उससे यही बात कही थी।

एलिज़ाबेथ घर लौटी कि वह इसी वक्त गोल्डी से सफाई मांगेगी किन्तु वहाँ तो चारों तरफ खामोशी पसरी हुई थी; वह देर तक जागती रही। सुबह उठी तो राधा चादर ताने सो रही थी।

"उसे सोने दो डार्लिंग, उसके चाचा-चाची ने उसकी ज़िंदगी को जहन्नुम बना रखा है। वे उसकी शादी के लिए बार-बार लड़के दिखाते हैं जबकि वह शादी करना ही नहीं चाहती।" गोल्डी ने उसके कान में फुसफुसा कर कहा और दफ्तर के लिए निकल गया।

उसी शाम को डारचेस्टर में क्रिसमस के उपलक्ष्य में कोई जलसा था। दफ्तर का काम निपटा कर एलिज़ाबेथ और रीटा वहाँ कुछ देर में पहुँची तो देखा गोल्डी, राधा, डिक, सारा और लीना एक ही मेज़ पर बैठे हुए शराब पी रहे थे। एलिज़ाबेथ का हाथ थामे रीटा सीधा बार की ओर चल दी। रीटा ने आज एलिज़ाबेथ को खूब अच्छे से तैयार किया था; डिजाइनर सुर्ख ड्रेस में वह सचमुच इतनी खूबसूरत लग रही थी कि उनकी प्रतिद्वंद्वी कंपनी के कई अधिकारी उसकी ओर विशेष रूप से खिंचे आ रहे थे। रीटा ने उससे वादा लिया था कि आज वे दोनों पार्टी का पूरा लुत्फ़ उठाएंगी और गोल्डी एवं राधा को लेकर कोई माथापच्ची नहीं करेंगी। सो, दुश्चिंताओं का छूमंतर करने और सारी समस्याओं को भुलाने के लिए वे दोनों खाने-पीने लगीं।

"गोल्डी को देखो। वह अपनी निगाहें तुम्हीं पर जमाए है।" रीटा ने लिज़ के कान में फुसफुसाकर कहा।

"रीटा, तुम तो कह रही थीं कि हम इस बारे में कोई बात नहीं करेंगे"।

"हाँ यार, पर गोल्डी को चिंता में देख कर दिल ठंडा हो गया।"

"गोल्डी जैसा है, वैसा ही रहेगा। मैं जान गयी हूँ कि मैं उसके साथ कभी खुश नहीं रह सकती इसलिए मैंने उसे आज़ाद छोड़ देने का फैसला ले लिया है।"

"रीटा, ज़िंदगी बैंक में जमा पाउंड्स से कहीं अधिक कीमती है।" तभी उनके बॉस पीटर हेज़ ने उन्हें अपनी मेज़ पर आकर बैठने की दावत दी तो रीटा बहुत खुश हुई। जैसे ही एलिज़ाबेथ को छूने के लिए पीटर उस पर झुका, गोल्डी से और अधिक बरदाश्त नहीं हुआ, वह दौड़ कर उनकी मेज़ पर पहुँच गया।

"लिज़ डार्लिंग, तुम्हारी सीट हमारी मेज़ पर है, चलो।"

"मैं यहाँ ठीक हूँ डार्लिंग, तुम अपनी राधा के पास जाकर बैठो, तुम्हारी जोड़ी अच्छी लगती है।"

"यह तुम क्या कह रही हो?" गोल्डी हक्का-बक्का रह गया; एलिज़ाबेथ ने पहले कभी उससे इस तरह से बात नहीं की थी।

"बनो मत गोल्डी, तुम अच्छी तरह जानते हो कि लिज़ किसके बारे में बात कर रही है;" रीटा बीच में ही टपक पड़ी, "आज क्रिसमस है, लीव हर अलोन।"

"तुम चुप रहो रीटा, मुझे पता है, मेरी भोली-भाली लिज़ को तुम ही भड़काती रही हो। लिज़ डार्लिंग, चलो, हमें यहाँ से चलना चाहिए।"

एलिज़ाबेथ बॉस के सामने तमाशा बनना नहीं चाहती थी इसलिए 'माफ कीजिएगा' कहती हुई गोल्डी के साथ चल दी पर वापिस अपनी मेज़ पर लौटने के बजाय, गोल्डी बाहर लाउन्ज में रखे सोफे पर आ बैठा। यहाँ से उसका घर खिसक लेने का इरादा था।

"लिज़ डार्लिंग, तुम्हारे दिमाग में यह बात आई भी कैसे? तुम अच्छी तरह से जानती हो कि यू रियली आर माई बैटर-हाफ़।"

"आई डोंट वांट टु हिअर एनी मोर लाइज़, गोल्डी, प्लीज़ लीव मी अलोन", गोल्डी जान गया था कि उसका खेल खत्म होने को है।

"मुझे पहले ही तुम्हें सच बता देना चाहिए था, लिज़ डार्लिंग", गोल्डी एलिज़ाबेथ के कान में फुसफुसाया, "राधा इज ए लेस्बियन। मैंने राधा से वादा किया था कि मैं किसी को इस बारे में कुछ भी नहीं बताऊँगा, तुम्हें भी नहीं। इसी वजह से उसके माँ-बाप ने उसे यहाँ भेज दिया लेकिन उसके चाचा-चाची उसकी शादी पर अड़े हैं। आई एम सो सो सौरी, प्लीज़ मुझे माफ कर दो, डार्लिंग।"

"सच कह रहे हो?" गोल्डी की सच्चाई को सहर्ष स्वीकार करके एलिज़ाबेथ अपनी दुश्चिंताओं से निजात पाना चाहती थी; जबकि उसका मन कुछ और ही कह रहा था।

दोनों के पीछे खड़ी राधा और रीटा ने गोल्डी की सारी बातें सुन ली थीं। राधा गुस्से से काँप रही थी। गोल्डी का सिर अपनी तरफ जबरदस्ती घुमाते हुए उसने पूछा, "गोल्डी, तुमने लिज़ से अभी-अभी क्या कहा?"

गोल्डी को काटो तो खून नहीं, उसके चेहरे का रंग पीला पड़ चुका था।

"बस यही कि हम बचपन के दोस्त हैं और इसलिए मैं तुम्हारी मदद करना चाहता हूँ। तुम जाकर टेबल पर बैठो, मैं लिज़ को लेकर आता हूँ।" एलिज़ाबेथ का हाथ पकड़ वह हड़बड़ा कर उठ खड़ा हुआ।

"गोल्डी ने लिज़ को बताया है कि तुम..." रीटा ने कुछ कहना चाहा बीच में ही राधा ने कहा, "मैंने सुन लिया है, थैंक यू रीटा, मैं गोल्डी के मुँह से दोबारा सुनना चाहती हूँ।" यकायक राधा ने गोल्डी का गला पकड़ लिया। गोल्डी अपने को छुड़ाने की कोशिश करने लगा।

"मैं इन झूठे इल्ज़ामों से तंग आ चुका हूँ, यू आर ऑल मैड...।" गोल्डी तीन क्रोधित महिलाओं से बच निकलने का रास्ता ढूँढ़ रहा था।

"राधा, तुम्हें इतने दिन हो गए यहाँ आए हुए, तुमने मुझसे कुछ कहा क्यों नहीं?" एलिज़ाबेथ ने अपना गुस्सा राधा पर निकालना चाहा।

"इस आदमी ने हमें बताया कि तुम्हें बदनामी से बचाने के लिए इसे तुमसे विवाह करना पड़ा और तुम इसे जल्दी ही तलाक दे दोगी ताकि ये मुझसे शादी कर सके।"

"व्हाट डू यू मीन, मुझे किस बदनामी से बचा रहे थे तुम, गोल्डी?" किंकर्तव्यविमूढ़ एलिज़ाबेथ ने गोल्डी से पूछा।

"लिज़ डार्लिंग, उसकी बात मत सुनो। यह पूरी मेन्टल है। इसी की वजह से मुझे बड़ौदा से भागना पड़ा ताकि मैं...।" गोल्डी ने एक आखिरी दॉव फेंका।

"शट-अप, इस झूठे ने हमें बताया था कि तुम एक षड्यंत्र की शिकार हो गयी थी और जब तुम्हारे पेरेंट्स ने इससे इल्तजा की कि तुम्हारी इज्जत बचाने के लिए वह तुमसे शादी कर ले...। इसने कर ली।"

"लिज़ डार्लिंग, यह हमारी शादी-शुदा ज़िंदगी बरबाद करना चाहती है। इसके पहले कि बहुत देर हो जाए, मेरी बात सुनो...।" एलिज़ाबेथ के आगे गोल्डी अपने घुटनों के बल बैठ गया।

"इसके पहले कि हम पुलिस को बुलाएँ, दूर हो जाओ गोल्डी, तुम्हारा खेल खत्म हो चुका है।" रीटा ने लड़खड़ाती हुई एलिज़ाबेथ को अपनी बाँहों में जकड़ लिया।

"लिज़, माई डार्लिंग, मैं मन से तुम्हें अपनी अर्धांगिनी मानता हूँ, प्लीज़ फॉरगिव मी, जानू।" गोल्डी इस वक्त भी यही सोच रहा था कि आज क्रिसमस है, शायद लिज़ उसे माफ कर दे।

"ही इज़ एं कंपलसरी लायर, लिज़," रीटा बोली, "चलो अंदर चलकर बात करते हैं।" रीटा लिज़ और राधा को खींचते हुए अंदर हॉल में ले आई। इस समय रात के पूरे बारह बजे थे, बगल में बिग-बेन का घंटा जोर-जोर से टनटना उठा। गाते-नाचते मेहमान एक दूसरे को बधाई दे रहे थे। लिज़, राधा और रीटा भी इन्हीं में शामिल थीं और गोल्डी, कौन गोल्डी? "बिट्टर हाफ?"

मूल अंग्रेजी से अनुवाद: मनोज मोक्षेन्द्र

औरों की किताब को पढ़ते

डॉ. श्याम बिहारी श्रीवास्तव

औरों की किताब को पढ़ते जीवन निकल गया।
अपनी पढ़ने को अपने को समय कहाँ मिलता?

अपनी पढ़ लें तो अपने कुछ रोग समझ आएँ।
फिर उनके निदान का कुछ उपाय मन में लाएँ॥
औरों की बखिया उधेड़ते जीवन निकल गया।
अपनी सीवन सिल पाने का समय कहाँ मिलता?

बाहर की तिकड़म में डूबे भीतर भूल गये।
इतने पलटे पन्ने कि आमुख भूल गये॥

औरों की गोटी फिट करते जीवन निकल गया।
अपनी गोटी बैठाने का समय कहाँ मिलता?

चलती मिलती बातों की कविता कितनी गढ़ ली।
जीवन की कविता से खुद ही कहा सुनी कर ली॥
छंद दूसरों के गढ़ते तो जीवन निकल गया।
खुद को छंद बना पाने का समय कहाँ मिलता?

सम्पर्क : अनन्य कॉलोनी, सेंवढ़ा, जिला दतिया-475682 (म.प्र.)
फोन: 9327815769

अभिमानी-निराभिमानी

पुष्पा सक्सेना

शेखर भैया के सुझाव पर आज सुमन लाइब्रेरी के लिए अकेली ही निकल पड़ी थी। अब वह एम.ए. प्रीवियस में एडमीशन ले चुकी है, इतनी हिम्मत तो उसमें होनी ही चाहिए। रास्ता तो भैया ने समझा ही दिया था। अचानक राह में बने एक बंगले की गार्डेन देख सुमन ठिठक गई। ऐसा लगता था गार्डेन में दुनिया भर के फूलों का मेला सजा हुआ था। हवा में झूमते फूल खुशी से इतराते से लग रहे थे। बचपन से ही सुमन को फूलों से बहुत प्यार था। अपने छोटे से घर के गमलों में कुछ फूलों के पौधे लगा कर ही वह खुश रहती। फूलों पर दृष्टि गड़ाए सुमन की नज़र घर से बाहर आ रहे एक युवक पर पड़ी थी।

"यह घर तुम्हारा है?" अचानक ही सुमन उस कीमती वस्त्रों में आए युवक से पूछ बैठी।

"मेरे कपड़े देख कर भी तुम्हें ये सवाल पूछने की ज़रूरत है?" अभिमान से उसने कहा।

"अक्सर कपड़ों से इंसान की पहचान नहीं होती। हमने सीधा सवाल किया था, क्या तुम सीधा जवाब नहीं दे सकते?" सुमन ने निर्भय सवाल किया। परिस्थितियों ने सुमन को साहसी बना दिया था।

"हाँ ये मेरा बंगला है। पूरे शहर में ऐसा दूसरा बंगला नहीं है। आजकल मॉम और डैड तीन महीनों के लिए लन्दन गए हैं। अब इस घर का मैं अकेला ही मास्टर हूँ। वैसे तुम यहाँ क्यों खड़ी हो?"

"तुम लकी हो तुम्हारी गार्डेन में इतने सुन्दर फूल खिले हैं। लगता है तुम्हें भी फूलों से बहुत प्यार है। इन फूलों को देखकर हम रुक गए थे।" भोलेपन से सुमन ने सच बयान कर दिया।

"ओ नो, मेरे पास फूल जैसी चीजों को एप्रिसिएट करने के लिए टाइम नहीं है। इंजीनियरिंग के फाइनल इयर में हूँ। इंजीनियर बन कर हाई क्लास आकाश छूती बिल्डिंग्स बनाना मेरा मकसद है।" हिकारत से युवक ने कहा।

"क्या तुमने कभी अपनी गार्डेन के फूलों से प्यार ही नहीं किया? फूलों पर उड़ती रंग-बिरंगी तितलियों को नहीं देखा, भंवरों के गुनगुन गीत नहीं सुने, कली की एक-एक पांखुरी को खिलते नहीं देखा? फिर क्यों इतनी सुन्दर फूलों की गार्डेन बनाई है?" सुमन के सुन्दर चेहरे पर ढेर सारा विस्मय था।

"...अपने सपनों को सपने ही रहने दो, अमन। अमीरों से भारी रकम ले कर ऊंची-ऊंची इमारतें बनाने वाले हज़ारों बिल्डर्स होते हैं। काश कोई ग़रीबों के लिए घर बनवाता उसके लिए मेरे दिल में सच्ची इज़्ज़त होती...."

Contact : 12819 NE 37th PL Bellevue, WS 98005 USA
819 NE 37th PL, Bellevue, WA 98005, USA
My blog : www.hindishortstories.blogspot.com

"क्या तुम कविता लिखती हो? तुम्हारी बातें समझ में नहीं आतीं। ये गार्डेन हमारा स्टेटस-सिम्बल है। इसे देखने के लिए माली हैं। यहाँ से अगर कुछ फूल मुफ्त में ले कर अपने पैसे बचाना चाहती हो तो, ले सकती हो, पर रोज़-रोज़ फूल लेकर बाज़ार में बेचने की कोशिश मत करना।" अमन के चेहरे पर व्यंग्य स्पष्ट था।

"इतने सुन्दर फूलों के बीच रहने वाले तुम इतनी छोटी बात सोच भी कैसे सकते हो? आक्रोश से सुमन का गोरा चेहरा लाल हो उठा।

"सॉरी, अक्सर लोग यहाँ के फूलों से बुके बना कर फायदा उठाते हैं। वैसे तुम्हारा नाम क्या है?"

"सुमन, हमारा नाम जान कर क्या करोगे?"

"सु-मन—इसका मतलब जिसके पास अच्छा मन हो।" अपने हिन्दी ज्ञान के आधार पर युवक ने कहा।

"वाह तुम तो बहुत अच्छी हिन्दी जानते हो, सुमन का अर्थ फूल होता है, समझे। इस तरह से तो तुम्हारा नाम अमन होना चाहिए, यानी जिसके पास मन ना हो।" सुमन के ओंठों पर मुस्कान आ गई।

"क्या, तुमने कैसे जाना मेरा नाम रियेलिटी में अमन ही है।" अब उसके विस्मित होने की बारी थी।

"जिसके पास फूलों के सौन्दर्य को सराहने वाला मन नहीं है, उसका तो यही नाम होना चाहिए।" सुमन के चेहरे पर शरारती मुस्कान थी।

"मैंने अपनी पूरी पढ़ाई इंगलिश मीडियम से की है, फिर भी जानता हूँ, अमन का अर्थ शान्ति और चैन होता है और मेरे पास भी मन है।" अमन ने शान से जानकारी दी।

"तुम्हारे साथ बातें करते हुए टाइम वेस्ट हो गया, अब चलती हूँ।"

"तुम क्या कहीं कोई काम करती हो? अगर चाहो तो किसी हॉरटीकल्चर डिपार्टमेंट में तुम्हें जॉब दिला सकता हूँ हमारे बहुत रिसोर्सेस हैं।" अमन के चेहरे पर स्टेटस का अभिमान स्पष्ट था।

"थैंक्स अमन, अपनी योग्यता पर मुझे इतना यकीन है कि जो चाहूँगी पा लूँगी। किसी की सिफारिश की उन्हें जरूरत होती है जिन्हें अपने ऊपर विश्वास नहीं होता।" गर्व से सुमन ने कहा।

"अभी कहाँ जा रही हो, तुम्हें कार से ड्रॉप कर दूंगा। आखिर मेरी वजह से तुम्हारा टाइम जो वेस्ट हुआ।"

"भगवान् ने ये जो दो पाँव दिए हैं, इनका इस्तेमाल ना करूं तो इनमें जंग लग जाएगी, ऑफर के लिए धन्यवाद।" सुमन के चेहरे पर आत्मविश्वास था।

"तुम मिडिल क्लास वालों की यही कमजोरी होती है, अवसर का फायदा उठाने में अपनी तौहीन मानते हैं, इसीलिए आगे नहीं बढ़ पाते।" अमन ने अपनी राय दी।

"इन मिडिल क्लास वालों ने ही प्रेमचंद जैसे साहित्यकार ही नहीं देश के प्रधानमंत्री को भी दिया है। धूल-मिट्टी में खेलने वालों में से भी हीरे और मोती निकलते हैं।" गर्व से सुमन का सुन्दर चेहरा चमक उठा।

अपनी बात समाप्त करती सुमन तेजी से मुड़ कर वापस घर के लिए चल दी। अमन के साथ बातें करके उसका मूड ही खराब हो गया था। लाइब्रेरी जाने का उत्साह ही नहीं रहा। सुमन सोचती रही थी कि ये अमीर अपने को क्या समझते हैं। अमन की बातों में कितना अभिमान था। क्या पैसा ही किसी इन्सान की पहचान होती है। अपनी इंजीनियरिंग की बात कितनी शान से बता रहा था। जरूर डोनेशन दे कर इसका एडमीशन किसी ऐसे वैसे कॉलेज में कराया गया होगा वरना वो अभिमानी आई.आई.टी. का नाम जरूर लेता। एक शेखर भैया हैं अपनी मेधा के बल पर देश के सबसे अच्छे कॉलेज से इंजीनियरिंग की पढ़ाई कर रहे हैं, पर कभी इस बात के लिए घमंड नहीं किया।

पिता की मृत्यु के बाद जब रिश्तेदारों ने किनारा कर लिया तब अपनी माँ के साथ दस वर्ष की सुमन इस मौहल्ले में आई थी। इस मोहल्ले में आए हुए सुमन को नौ वर्ष बीत चुके थे। पास पड़ोस के परिवारों से उसे और उसकी माँ को बहुत अपनापन मिला था। माँ ने एक स्कूल में नौकरी कर ली थी, पड़ोसियों की उन दोनों के प्रति बहुत सहानुभूति रहती। सच तो यह है, ये पड़ोसी उसके रिश्तेदारों से कहीं ज्यादा अपने सिद्ध हुए जो उनकी हर मुश्किल में साथ खड़े रहे। राखी के दिन उदास खड़ी सुमन पास के घरों में उत्साह से मनाते त्यौहार को देख रही थी तभी साथ वाले घर से शेखर ने उसे देखा था।

"सुमन, अपने भाई को राखी नहीं बाँधेगी? तुझसे राखी बंधवाने के लिए राखी भी साथ में लाया हूँ।" अपनी जेब से राखी निकाल, शेखर ने अपनी कलाई आगे कर दी थी।

"सच, क्या हम तुम्हारे राखी बाँध सकते हैं?" खुशी से सुमन का सुन्दर चेहरा और भी कमनीय हो उठा।

"अरे पगली, मेरी भी तो कोई बहिन नहीं है। तू मेरे राखी बाँध देगी तो हम दोनों भाई-बहिन बन जाएंगे, पर तुझे मिठाई खिलानी पड़ेगी।" हँसते हुए शेखर ने कहा।

"आज माँ ने हलवा बनाया है, चलो माँ के सामने राखी बाँधेंगे।"

उस दिन के बाद से शेखर ने सुमन को अपनी सगी बहिन जैसा ही स्नेह दिया था। शेखर के पिता एक ऑफिस में बड़े बाबू थे, पर बेटे के लिए

उन्होंने ऊँचे सपने देखे थे। मेधावी शेखर ने उनके सपनों को पंख लगा दिए। जब शेखर को कानपुर के आई.आई.टी. के इंजीनियरिंग कॉलेज में एडमीशन मिला, सुमन ने खुशी में सबको मिठाई खिलाई थी। दोनों परिवार भी अब बहुत निकट आ गए थे। बीए के एक्जाम में सुमन को सभी विषयों में डिस्टींक्शन मिला था, शेखर की खुशी का ठिकाना न था।

"आखिर सुमन किसकी बहिन है? सुम्मी तू भी इंजीनियरिंग करती तो दोनों भाई-बहिन एक ही कॉलेज में पढ़ते।" शेखर प्यार से सुमन को सुम्मी ही पुकारता था।

"नहीं भैया, हमें साहित्य में रुचि है। हम हिन्दी में पीएच-डी करेंगे।" सुमन ने अपना निर्णय सुना दिया।

"उसके लिए आज से ही खूब सारी हिन्दी की अच्छी-अच्छी किताबें पढ़ना जरूरी है। पास में लाइब्रेरी है वहां जाकर किताबें पढ़, छुट्टियों में घर पर बोर ही तो होती है। छुट्टियों में आए शेखर ने सलाह दी थी।"

"क्या हुआ, सुम्मी क्या लाइब्रेरी तक नहीं पहुँच सकी। रास्ता तो सीधा था'' घर वापिस आई सुमन से शेखर ने पूछा।

"नहीं भैया, सीधे रास्ते में कंटीले झाड़ मिल गए। जाने का मूड नहीं बना।"

"क्या, रास्ता तो बिलकुल साफ है, वहां झाड़ कैसे हो सकते हैं। तेरी बात समझ में नहीं आई।"

"पूरी बात फिर बताऊँगी, अभी धूप की वजह से सिर दुःख रहा है।" अमन के साथ हुई बात बताने के लिए उसे वक्त चाहिए था।

दूसरे दिन सुमन की पुरानी टीचर मीरा दीदी का फोन आया था। अनाथ बच्चों और असहाय स्त्रियों की सहायता के लिए गांधी पार्क में एक मेले का आयोजन किया जा रहा था। सुमन ऐसे कामों में सबसे आगे रहती थी इसीलिए उसकी टीचर चाहती थीं कि सुमन भी मेले में एक स्टॉल लगा कर मदद करे। सुमन सोच में पड़ गई, मेले में खाने और मनोरंजन के तो बहुत से स्टॉल होंगे, क्यों न वह हिन्दी के महान लेखकों की पुस्तकें और पत्रिकाओं का स्टॉल लगाए।

दूर से आ रहे अमन और उसके साथी समीर की नजर सुमन के स्टॉल पर खड़ी लड़कियों पर पड़ी। अमन ने हलके से सीटी बजा कर कहा।

"अरे ये तो उस दिन वाली लड़की सुमन है। साथ में कोई दूसरी लड़की भी है।"

"देख अमन, सुमन के साथ दूसरी लड़की मेरी कजिन नीरा है। उनके साथ कोई शैतानी नहीं चलेगी वरना घर में शिकायत हो जाएगी।" समीर ने चेतावनी दी।

"तू उस लड़की सुमन को जानता है?" अमन विस्मित था।

"उसे सिर्फ मैं ही नहीं, बहुत लोग जानते हैं। ब्यूटी और ब्रेन दोनों का संगम है। पूरी यूनिवर्सिटी में सेकण्ड पोजीशन पाई थी। शहर की डिबेट में सबकी बोलती बंद कर डाली थी।" समीर ने तारीफ की।

"शायद इसी घमंड में मुझे पूरा लेक्चर दे डाला था। चल देखें क्या नायाब चीजें बेच रही हैं।"

दो लड़कियां हिन्दी की पत्रिकाएं देख रही थीं। नीरा उन्हें मैगजीन दिखा रही थी तभी अमन और समीर भी आ पहुंचे।

"हैलो, सुमन, मुझे पहचानती तो जरूर होगी।" पूरे यकीन के साथ अमन ने कहा।

"किसी अजनबी को याद रख पाना संभव नहीं होता। कहिए, आपको कैसी किताबों में इंटरेस्ट है?" गंभीरता से सुमन ने कहा।

"इंगलिश की क्लासिक स्टोरीज़ मिलेंगी? सॉरी, भूल गया, तुम तो हिन्दी पढ़ने वाली हो, तुम्हें अंग्रेजी बुक्स के बारे में क्या पता होगा?" व्यंग्य से अमन ने कहा।

"फॉर योर इन्फारमेशन बी.ए. में मेरा एक विषय इंगलिश लिटरेचर रहा है और मुझे इंगलिश में डिस्टींक्शन मार्क्स मिले हैं। अगर आप नहीं जानते तो बता सकती हूँ, शहर में इंगलिश क्लासिक्स कहाँ मिलती हैं।" सुमन के चेहरे पर हलकी मुस्कान थी।

"अरे समीर भैया, आप लोग हमारे स्टॉल पर आए हैं, अब तो आप दोनों को किताबें खरीदनी ही होंगी।" समीर को देख नीरा ने खुशी से कहा।

"मेरे घर में इन किताबों के लिए जगह नहीं है, वैसे आप दोनों ने इतनी मेहनत की है, शायद लोगों से मांग कर किताबें सजाई हैं, इसलिए अगर डोनेशन चाहिए तो दे सकते हैं। कहिए कितने का चेक दे दूं।" सुमन को तिरछी नजर से देखते अमन ने पूछा।

"ओह, थैंक्स। हमें आपकी दया नहीं चाहिए। अगर डोनेशन देना ही है तो शुरू में ही डोनेशन बॉक्स रक्खा गया है वहां अपने डैड के कमाए पैसे डाल दीजिए। वैसे भी आपको तो बड़ी-बड़ी बिल्डिंग्स बनानी हैं, उस वक्त आपके पैसे काम आएंगे।" उत्तेजना से सुमन का चेहरा लाल हो आया था।

"शांत हो जा सुमन, ये तो हमारी मदद करना चाह रहे हैं।" नीरा ने बात सम्हालनी चाही।

"मदद नहीं, हमारी इन्सल्ट कर रहे हैं, सुना नहीं हमने मांग-मांग कर किताबें सजाई हैं। वैसे भी हमारे जैसे मिडिल क्लास वालों के बारे में ये बड़े ऊंचे विचार रखते हैं।" सुमन को अमन की बातें याद थीं।

"सॉरी सुमन, अमन तो मज़ाक कर रहा था, वैसे मुझे कुछ अच्छी किताबें और पत्रिकाएं चाहिए। घर में बहिनें और भाभी ऐसी किताबों को बड़े शौक से पढ़ती हैं। तुम अपनी पसंद की सात-आठ किताबें दे दो।"

"ज़रूर समीर भैया, अभी चुन कर देती हूँ।" सुमन ने जल्दी ही सात किताबें चुन लीं।

"अमन यार, अब तू पेमेंट कर दे। डोनेशन देने वाला था। अब पैसे निकाल।" समीर ने मज़ाक किया।

"नो प्रॉब्लम, कितने का चेक काटना है। अगर कहें तो असल दाम से कुछ ज्यादा का चेक दे सकता हूँ।"

"थैंक्स, अपने पैसे खर्च करने के लिए आपके पास बहुत साधन हैं, हमें बस दो हज़ार का चेक चाहिए।"

"ऐज यू विश, वैसे अगर फायदा नहीं उठाना था तो ये दुकान लगाने की क्यों सोची?"

"ये बात तुम नहीं समझोगे, अमन।" शान्ति से सुमन ने कहा।

"नीरा और सुमन तुम दोनों सवेरे से बिज़ी हो, जाओ अमन के साथ जा कर कुछ खा-पी लो। कुछ देर के लिए यहाँ मैं सम्हाल लूंगा। अमन होप यू डोंट माइंड।" समीर ने प्यार से कहा।

"नहीं, हमें नहीं जाना है, नीरा तू चली जा।" सुमन ने साफ मना कर दिया।

"अगर तू नहीं चलेगी तो हमें भी नहीं जाना है।" नीरा से साफ इनकार कर दिया।

विवश सुमन को भी अमन का साथ झेलना पड़ा। तीनों चाट के स्टॉल पर पहुंचे। वहां काफी भीड़ थी, पर अमन पर निगाह पड़ते ही एक लड़की ने चहक कर कहा—

"अरे अमन जी, आप, कहिए क्या लेंगे?" लड़की के चहेरे पर खुशी की चमक थी।

"मुझे बस एक कोल्ड ड्रिंक दे दो, इन दोनों को जो चाहिए दे दो। हाँ पेमेंट मैं करूंगा।"

"शुक्रिया, अमन हमें तुम्हारी दरियादिली जी ज़रूरत नहीं है, हम अपना पेमेंट खुद कर सकते हैं।"

"एक पुरुष के साथ आई लड़कियां अपना बिल खुद चुकाएं, क्या यही भारतीय संस्कृति है, सुमन?"

"याद नहीं..., पहले दिन ही तुमने कहा था मिडिल क्लास वाले मौके का फायदा उठाना नहीं जानते, बस वही समझ लो। हम तुम्हारे साथ आए हैं, उसके लिए धन्यवाद, इससे ज्यादा और फायदा नहीं उठाना है'' बात खत्म करती सुमन ने पैसे काउंटर पर खड़ी लड़की को दे दिए।

अमन का चेहरा आक्रोश से लाल हो उठा। बिना बात किए वे लौट आए। उन्हें देख समीर ने पूछा—

"कहो मेरे दोस्त की कितनी जेब खाली कर डाली?" चेहरे पर हँसी थी।

"चल समीर, आई एम फेड-अप। ये अपने को न जाने क्या समझती है, मूड ही खराब कर दिया। चल क्लब चलते हैं, मूड ठीक करना है।" कड़ी नजर सुमन पर डाल अमन चुप हो गया।

"किसकी बात कर रहा है, किसने मूड खराब कर दिया?" समीर विस्मित था।

"कुछ नहीं, अब यहाँ रुकना बेकार है।" अमन के साथ जाने को समीर विवश था।

"तू बेकार में ही अमन से उलझ पड़ी। उसने कुछ गलत तो नहीं कहा था।" नीरा ने कहा।

"तू उस घमंडी को नहीं जानती। अमीर बाप का बेटा है, दूसरों पर अपनी अमीरी का रोब झाड़ता है। उसकी बात छोड़, हमें तो यही खुशी है, हमने काफी पैसे जुटा लिए हैं।"

"हाँ मीरा दीदी तो हमारे काम से खुश हो जाएंगी।" नीरा ने सहमति जताई।

दो दिनों बाद नीरा सुमन के पास आई। उसके चेहरे पर खुशी साफ झलक रही थी।

"सुम्मी, चल आज हम क्रिकेट मैच देखने चलेंगे। समीर भैया ने पास दिए हैं।"

"तुझे कब से क्रिकेट देखने का शौक हो गया? हमें नहीं जाना है।"

"जानती है इस मैच में समीर भैया भी खेलेंगे। इतने महंगे टिकट हमें मुफ्त में मिले हैं। प्लीज़ मेरे लिए चली चल।" नीरा ने अनुरोध किया।

नीरा के साथ सुमन को मैच देखने के लिए जाना ही पड़ा। ग्राउंड में भारी भीड़ थी। नीरा के पास वीआईपी पास होने की वजह से अच्छी सीटें मिल गईं।

"इस मैच को अमन ने स्पौंसर किया है, इसीलिए हमें वीआईपी पास मिले हैं।" नीरा ने खुशी से बताया।

"अगर तूने पहले ही ये बात बता दी होती तो हम किसी हालत में मैच देखने नहीं आते। कभी उसने कबड्डी खेली है, नहीं ना? क्योंकि वहां तो उसका स्टेटस आड़े आ जाएगा।" स्वर में कड़वाहट स्पष्ट थी।

"तू बेकार ही अमन से चिढ़ती है, अच्छा-भला लड़का है। अमीर है इस बात को झुठलाया तो नहीं जा सकता। अब खेल शुरू हो रहा है, खेल का मज़ा ले।"

अमन की टीम विजयी रही। जीत का कप लेते अमन के साथियों ने उसे कंधे पर उठा लिया। अमन का चेहरा खुशी से खिला दिख रहा था। सुमन जल्दी वापिस लौटना चाहती थी, पर नीरा समीर को बधाई देना चाहती थी। थोड़ी देर बाद भीड़ छंटने पर समीर के साथ अमन भी बाहर आ रहा था। नीरा ने आगे बढ़कर उन्हें बधाई दी। थैंक्स देते अमन की निगाह नीरा के साथ खड़ी सुमन पर पड़ी थी।

"ये तो कमाल हो गया, यूनीवर्सिटी की ब्रिलिएंट स्टूडेन्ट सुमन भी हमारा मैच देखने आई थीं, अच्छा हुआ मैंने इन्हें नहीं देखा वरना दहशत के मारे ज़ीरो पर आउट हो जाता।" व्यंग्य से अमन ने कहा।

"अपनी जीत पर नाज़ करना बेकार है, अमन। स्पौंसरशिप के बदले जीत तो मिलनी ही थी'' सुमन ने साफ-साफ जीत का पूरा श्रेय अमन की स्पौंसरशिप को दे डाला।

"मान जा, अमन इनकी दुआओं ने ही हमें जिता दिया।" समीर ने परिहास किया।

"यार समीर, तू इन्हें नहीं जानता, डरता हूँ कहीं अपना लेक्चर शुरू ना कर दें, अपनी गार्डेन देखने के लिए वक्त नहीं है और खेल में टाइम वेस्ट कर रहे हो। खैर आज की जीत की खुशी में माफ करता हूँ।"

सुमन का गोरा चेहरा तमतमा आया। ये होता कौन है जो उसे माफ करे। घमंडी कहीं का। अच्छा होता वह नीरा की बात न मान कर यहाँ ना आती। तभी पाँच-सात लड़कियाँ अमन के ऑटोग्राफ लेने आ गईं। उनके चेहरों पर अमन के लिए प्रशंसा थी। उनके साथ नीरा ने भी ऑटोग्राफ लिया था। अमन ने सबको ऑटोग्राफ देकर सुमन से कहा—

"तुम मेरा ऑटोग्राफ नहीं लोगी, सुमन। एक मशहूर बिल्डर की तरह से जब अखबारों में मेरा नाम निकला करेगा तब तुम मेरे ऑटोग्राफ की इम्पौरटेन्स समझोगी।" शान से अमन ने कहा।

"अपने सपनों को सपने ही रहने दो, अमन। अमीरों से भारी रकम ले कर ऊंची-ऊंची इमारतें बनाने वाले हज़ारों बिल्डर्स होते हैं। काश कोई ग़रीबों के लिए घर बनवाता उसके लिए मेरे दिल में सच्ची इज़्ज़त होती, नीरा अभी मुझे घर जाना है, तू रुक सकती है।" अपनी बात कहती सुमन तेजी से चल दी। उसके पीछे नीरा भी थी।

"ये लड़की अपने को न जाने क्या समझती है, इसे क्या पता एक दिन अपनी बनाई ऊंची-ऊंची इमारतों के साथ मैं आकाश की ऊंचाइयां छू लूंगा।" अमन के चेहरे पर अभिमान था।

घर पहुंची सुमन का आक्रोश थम नहीं रहा था। माँ हमेशा कहती हैं घमंडी का सिर नीचा होता है। एक दिन इस अमन का भी अभिमान ज़रूर टूटेगा। सिर्फ पैसे से ही तो कोई इंसान बड़ा नहीं बन जाता। आज शेखर भैया होते तो उनसे बात कर के कुछ शान्ति मिलती, पर वह तो छुट्टियों में किसी कम्पनी में इंटर्नशिप करने के लिए बाहर गए हुए हैं। नीरा तो अमन को बस इतना ही जानती है कि वह उसके समीर भैया का अच्छा दोस्त है। पता नहीं अमन को सुमन से क्या दुश्मनी है, उसे हमेशा नीचा दिखाने की कोशिश करता है।

दो दिन बाद शाम को अपने लगाए फूलों के पौधों को पानी देती सुमन गुनगुना रही थी। गुलाब की टहनी पर मुस्कुराते सुर्ख लाल गुलाब को देख कर उसका अवसाद तिरोहित हो गया। तभी घबराई हुई नीरा आ पहुंची। उसके चेहरे पर किसी अनिष्ट की आशंका स्पष्ट थी।

"क्या हुआ, नीरा, तू अचानक यहाँ?" उसे देख सुमन विस्मित थी।

"एक बुरी खबर है, कल शाम अमन ने एक लड़की को कुछ गुंडों से बचाया था। अमन रोज सवेरे जॉगिंग के लिए जाता है। वे गुंडे अमन से बदला लेने की ताक में थे। अमन को अकेला पा कर उन गुंडों ने अमन को बुरी तरह से पीटा और उसे बेहोश छोड़ कर भाग गए। सवेरे जब लोगों ने देखा तो उसे हॉस्पिटल पहुंचाया गया। समीर भैया अमन के पास हैं। उसके मम्मी पापा तो लन्दन में हैं।"

"अगर अपनी गर्ल फ्रैंड को बचाने की वजह से उसे पिटना पड़ा तो उसके लिए तू क्यों हमदर्दी दिखा रही है? उस घमंडी को ऐसी ही सजा मिलनी चाहिए।" नीरा की खबर से अप्रभावित सुमन ने कहा।

"तू अमन के बारे में हमेशा उल्टा ही क्यों सोचती है, सुम्मी। उसकी कोई गर्ल फ्रैंड नहीं है, उसे तो लड़कियों से चिढ़ है। शायद इसीलिए तेरे साथ उसकी नहीं बनती।" नीरा नाराज थी।

"अच्छा अब बता तू हमसे क्या चाहती है, यहाँ दौड़ी-दौड़ी क्यों आई है?"

"तुझे मेरे साथ अमन को देखने हॉस्पिटल चलना होगा।"

"सारी, हम उसे देखने नहीं जा सकते।" सुमन ने साफ कह दिया।

"तेरे हर काम में हम तेरा साथ देते हैं, आज तुझे चलना ही होगा। मेले में किताबों के पैसे और क्रिकेट मैच के पास अमन ने ही दिए थे, हमें तो उसका अहसान मानना चाहिए। अगर आज तूने साथ नहीं दिया तो आगे से हमसे कोई उम्मीद मत रखना।" नीरा ने चेतावनी दे डाली। अन्ततः सुमन को नीरा के साथ जाना ही पड़ा। हॉस्पिटल की बेड पर पैरों और हाथों पर प्लास्टर के साथ लेटा अमन उदास नन्हे शिशु सा मासूम दिख रहा था। नीरा और सुमन को देख उसके चेहरे पर शायद विस्मय था। समीर उसके पास से उठ कर खड़ा हो गया।

"कैसे हो, अमन? बहुत दर्द हो रहा होगा।" नीरा ने सहानुभूति से पूछा।

"पैरों के मल्टिपल फ्रैक्चर उतनी तकलीफ नहीं दे रहे हैं, जितना अपनी आगे आने वाली ज़िंदगी के बारे में सोच कर तकलीफ हो रही है।" अमन के चेहरे पर दर्द था।

"ऐसा क्यों सोचते हो, तुम जल्दी ही ठीक हो जाओगे।" नीरा ने तसल्ली देनी चाही।

सुमन के उत्तर के पहले ही एक पुलिस इन्स्पेक्टर आ गया। अमन की बेड के पास आ कर कहा—

"हैलो अमन, अब कैसा फील कर रहे हो?"

"मेरी छोड़िए, क्या उन गुंडों का पता लगा?" अमन की आवाज में बेचैनी स्पष्ट थी।

"तलाश जारी है, अब आप पूरी घटना मुझे बताइए।"

"कितनी बार वही बात दोहरानी होगी? बताया तो था, मैं शाम को ईवनिंग-वाक के लिए निकला था, रास्ता सुनसान था, तभी एक लड़की भागती हुई आई और मदद के लिए चिल्लाई। उसके पीछे दो गुंडे थे। मैंने उन्हें रोकने की कोशिश की, पर उन्होंने मुझे छुरे से मारने की धमकी दी। लकीली मेरे पास मेरा रिवॉल्वर था, जैसे ही अपनी रिवॉल्वर पॉकेट से निकाली दोनों डर के भाग खड़े हुए।"

"बाई दि वे आपके पास रिवॉल्वर का लाइसेंस तो होगा, वैसे आप उसे ले कर क्यों घूमने निकले थे?"

"पुलिस को लाइसेंस दिखाया भी जा चुका है। आपसे बताया था कि रास्ता सुनसान रहता है। वहाँ कुछ वारदातें हो चुकी हैं। अपनी हिफाजत के लिए उसे साथ रखना अपराध तो नहीं है, इन्स्पेक्टर।"

"ठीक है, मैं समझता हूँ। आप उन गुंडों का कुछ हुलिया बता सकते हैं?"

"असल में शाम का अन्धेरा सा था, हाँ वे दोनों जींस और शर्ट पहने हुए थे। एक के चेहरे पर बाईं तरफ एक लंबा निशान था जैसे चाकू से कटा हो। सवेरे जब पीछे से हमला हुआ तो मुझे कुछ होश नहीं रहा।" बताते हुए अमन थक सा गया।

"थैंक्स, अमन। हम पूरी कोशिश करेंगे उन दोनों को जल्द ही पकड़ लिया जाए।" इन्स्पेक्टर चला गया।

"तुमने ठीक कहा था, सुमन। अपने सपनों को सपने ही रहने दो। अब इस ज़िंदगी में मेरे सपने कभी पूरे नहीं हो सकते। आकाश छूने की जिद थी अब तो जमीन पर भी सीधा खड़ा हो सकूंगा, इसमें भी शक है।" पास खड़ी सुमन से अमन ने मायूसी से कहा।

"हमें माफ करो, अमन। हमारा ये मतलब कभी नहीं था। जिस साहस से तुमने एक लड़की के सम्मान की रक्षा की है, अब उसी साहस के साथ अपनी दुर्बलता पर विजय पानी है। अपने शरीर की चोट को अपने दिमाग पर हावी मत होने दो। ऐसा क्यों सोचते हो कि तुम सीधे खड़े नहीं हो सकोगे?" सुमन अमन के साहस की बातें सुन कर अभिभूत थी।

"थैंक्स, सुमन। तुम्हारी बातों से मुझे हिम्मत मिली है। मैंने तुम्हें हमेशा नीचा दिखाने की कोशिश की, पर आज तुमने मेरे सोच की दिशा बदल दी है। तुम फिर आओगी ना?" आशा से अमन ने पूछा।

"जरूर आऊँगी, पर एक शर्त है, दूसरी बार तुम उदास नहीं मुस्कुराते हुए मिलोगे।"

"ऐसा ही होगा, सुमन। मेरे बारे में सुन कर मम्मी को हार्ट अटैक आ गया है। वह हॉस्पिटैलाइज़्ड हैं, डैडी भी उन्हें छोड़ कर नहीं आ सकते। रिश्तेदार तो मतलब साधते हैं। आकर मुझे देख कर अपना फ़र्ज़ निभा गए। डैडी की तरक्की से उन्हें जलन होती है। समीर का ही सहारा है।"

"अरे तुझे किसी के सहारे की क्या ज़रूरत है, जल्दी ही अपने पैरों पर खड़ा होगा।" समीर ने कहा।

"अपने को अकेला मत समझो, अमन। हम सब तुम्हारे साथ हैं।" नीरा ने भी स्नेह से कहा।

"शुक्रिया नीरा। तुम दोनों के आने से अच्छा लगा।" अमन की आवाज़ भीग सी गई।

घर वापिस पहुँची सुमन बहुत अपसेट थी, क्या सच हो सकता है कि उसकी बात की वजह से आज अमन इस हाल में है? उसने ही तो कहा था कि एक दिन अमन का अभिमान ज़रूर टूटेगा, घमंडी का सिर नीचा होता है। एक और बात भी तो कही थी, अमन के सपने-सपने ही रहेंगे। उसके सपने सच नहीं होंगे, अमन को उसकी वो बात याद भी है। आज

अमन के साहस की बातें सुन कर वह सोचने को विवश थी, जो इंसान एक अनजान लड़की की मदद के लिए अपनी जान पर खेल सकता है, वह क्या वही अमन है, जिससे वह चिढ़ती रही है। आज उसके सामने अमन का एक दूसरा ही रूप था। अपनी गलती का उसे प्रायश्चित करना ही होगा, पर कैसे? अपने को दोषी ठहराती सुमन देर तक जागती रही। सुबह तक सुमन निर्णय ले चुकी थी। अगर अमन को लगता है कि उसके कहने से ही अमन की ये हालत है तो सुमन को ही उसका भ्रम दूर करना होगा। वह पूरी तरह से निराश हो चुका है, सुमन उसमें आशा का संचार करेगी। उसकी निराशा को दूर करेगी। अभी उसके क्लासेस शुरू होने में देर है, इन दिनों वह अमन के पास हॉस्पिटल जा कर उसके साथ समय बिता कर उसे खुशी देने का प्रयास करेगी।

सवेरे माँ को सारी बात बता कर उसका मन हल्का हो गया। माँ ने भी कहा अगर संभव हो, वह नीरा के साथ ज़रूर जाए। अमन अभी अकेला है उनके जाने से उसे खुशी मिलेगी। माँ ने भी स्वयं कभी उसे देख आने की बात कह कर सुमन का भय दूर कर दिया। वह जानती थी माँ को उस पर कितना ज्यादा विश्वास है।

"सुप्रभात, अमन। अब कैसा महसूस कर रहे हो?" अपने सामने मुस्कुराती सुमन को देख अमन चौंक गया।

"सुमन, तुम यहाँ आकर क्या मुझ पर दया कर रही हो?"

"तुम क्या कभी दया के पात्र हो सकते हो, अमन? तुम्हारे जैसा साहसी विरला ही होगा।"

"मेरे पास आने से तुम्हारा टाइम तो वेस्ट होगा, सुमन।"

"यूनीवर्सिटी अभी बंद है, कोई दोस्त भी यहाँ नहीं है, सोचा तुम्हारे साथ ही बातें कर के समय बिता लूं। वैसे भी तुमने ही तो कहा था सुमन का अर्थ अच्छा मन होता है। शायद इसीलिए किसी को तकलीफ में नहीं देख सकती।" सुमन हँस रही थी।

"सचमुच तुम्हारा मन बहुत अच्छा है सुमन, वरना मेरी तकलीफ से तो तुम्हें कोई लेना-देना नहीं होता।"

"ये क्या कह रहे हो, अमन, तुम किसी से धोखा कैसे खा सकते हो?" सुमन विस्मित थी।

"लंबी कहानी है, सुमन। मेरे पैसों के लालच में वो लड़की मेरे साथ प्यार का नाटक खेलती रही। अपने अकेलेपन से ऊबा हुआ मैं उसके जाल में फँसता गया। एक दिन मुझसे ज्यादा अमीर लड़के के साथ कहीं चली गई। मुझे लड़की नाम से नफरत हो गई, शायद इसीलिए तुम्हारे साथ बहुत कटु था।"

"पुरानी दुखद बातें भुला देने में ही समझदारी है। मेरे ख्याल से इस वक्त तुम्हारे पास काफी फ्री टाइम है, तुम अपनी जिन बिल्डिंग्स को बनाने के सपने देख रहे थे उनके बारे में कुछ स्टडी क्यों नहीं कर लेते।" सुमन ने गंभीरता से कहा।

"सॉरी, सुमन। मेरी गलती माफ करो। तुम्हें कितना गलत समझा था। तुम्हारे अच्छे मन से माफी तो जरूर मिलेगी।" मुस्कुराते हुए अमन ने एक स्लिप पर संदेश लिख कर सुमन को दे दिया।

"बाबा रे, इतनी भारी किताबें तुम कैसे पढ़ पाते हो, अमन। हम तो इन्हें उठाने से ही थक गए।" दूसरे दिन अपने साथ लाई किताबें पास की मेज़ पर रखती सुमन बोली।

"थैंक्स, सुमन। तुमने मुझे नई शक्ति दी है।" अमन ने प्यार से कहा।

दूसरे दिन से सुमन भी अपने साथ कुछ किताबें ला कर पढ़ती रहती। बीच-बीच में दोनों बातें करते, पुराने मजेदार किस्से एक-दूसरे को सुना कर हँसते। सुमन अपने साथ जो खाने को लाती उसमें अमन का हिस्सा जरूर होता। अमन कहता सुमन की माँ के हाथ का बना खाना इतना टेस्टी क्यों होता है? इसमें माँ का प्यार जो है, सुमन कहती। सुमन की माँ भी आ कर उसे आशीर्वाद दे गई थीं, अब अमन अपने विश्वास को फिर जीने लगा था। सुमन जैसे अमन की जरूरत बन गई थी।

"एक बात सच-सच बताना, मेरे अभिमान की वजह से तुम मुझसे नफरत तो जरूर करती रही होगी।" एक दिन अचानक अमन सुमन से पूछ बैठा।

"सच कहूँ तो तुम पर बहुत गुस्सा आता था, ये लड़का अपने को क्या समझता है, पर अब सोचती हूँ तुम्हारे अभिमान के साथ मेरे स्वाभिमान और संस्कारों की टकराहट थी, दोनों के बीच तनाव था इसलिए हिसाब बराबर हो गया।" सुमन के हँसते सुन्दर चेहरे को अमन मुग्ध ताकता रह गया।

दूसरे दिन जल्दी आने को कह सुमन लौट गई थी।

"ऐ लड़की, रुक। तू सुमन है?" कड़ी आवाज में पूछे गए प्रश्न पर अमन के पास जा रही सुमन चौंक गई।

"जी ई—आप कौन हैं, हमें कैसे जानती हैं?" उस फैशनेबल स्त्री को विस्मय से देखती सुमन ने पूछा।

"मैं कौन हूँ, तो सुन और समझ ले, मैं अमन की मॉम हूँ। तेरे बारे में सब सुन चुकी हूँ। तुझ जैसी लड़कियों को अच्छी तरह से जानती हूँ। अमीर लड़कों को फँसा कर पैसे लूटना और फिर धोखा दे कर किसी और को शिकार बनाना। यही तेरी पहचान है। एक बार मेरा बेटा धोखा खा चुका

है, अब दूसरी बार उसे धोखा नहीं खाने दूंगी।" क्रोध से अमन की मॉम का चेहरा तमतमा रहा था।

"आप हमारा अपमान कर रही हैं। हम ऐसी लड़की नहीं हैं, ना ही हमारा ऐसा कोई इंटेंशन है... आप जैसे अमीरों से हम कहीं ज्यादा अमीर हैं, आपके पैसे आपको मुबारक उन्हें तो हम छूना भी पसंद नहीं करेंगे।" अपमान से सुमन का चेहरा लाल हो गया।

"बकवास बंद करो, बहुत हो गया। जिस लालच से तुमने मेरे बेटे की देखरेख की है, उसके लिए कितने पैसे चाहिए। अभी चेक लिख देती हूँ, इसके बाद इधर कभी मत झांकना।"

"हर बात पैसे से नहीं तौली जाती मैडम, पर ये बात आप कभी नहीं समझ सकेंगी, धन्यवाद।" बात समाप्त करती सुमन तेजी से मुड़ कर चल दी।

क्रोध और अपमान से सुमन का अंतर जल रहा था। गलती उसी की थी आखिर उसे क्या पड़ी थी जो अमन के पास जा कर अपना समय नष्ट किया। अमन भी तो उसी माँ का बेटा है जिस स्त्री ने उस पर कितने अपमानजनक लांछन लगाए। शायद आज की दुनिया में अच्छाई करना ही गलत है। बस बहुत हो गया सुमन, अब उस अमन से उसे कोई नाता नहीं रखना है। न जाने क्यों सुमन का मन खूब रोने का कर रहा था। माँ से ये बात बतानी ठीक नहीं है, वह दुखी हो जाएगी। शेखर भैया या नीरा के आने पर उनसे बात कर के शायद उसका दिल हल्का हो सकेगा। इतने अपमान के बावजूद भी वह अमन की चिंता से मुक्त नहीं हो पा रही थी। सुमन के साथ बातें करता अमन अपनी तकलीफ भूल जाता था। सुमन भी मजेदार किस्से सुना कर उसे अपने दर्द का एहसास नहीं होने देती थी। दोनों का साथ पूर्णता देता था। ना चाहते हुए भी सुमन की सोच का केंद्र-बिंदु अमन था। उसका अकेलापन उसे छू गया था।

हॉस्पिटल में अमन बेचैनी से सुमन का इंतजार कर रहा था। आज सुमन को मॉम से मिलाना है और आज ही वह लेट हो रही है। सुमन से मिल कर मॉम कितनी खुश होंगी। मॉम के न होने की सुमन ने कमी ही महसूस नहीं होने दी थी। बार-बार अपनी कलाई घड़ी देखते अमन से उसकी मॉम ने पूछा—

"किसका इंतजार कर रहा है, अमन। अब तो तेरी मॉम आ गई है।"

"मैंने सुमन के बारे में बताया था, पता नहीं आज अभी तक क्यों नहीं आई।"

"अरे वो लड़की आई थी, पर मैंने उसे उसकी औकात बता दी। ब्लैंक चेक दे रही थी, पर वो शायद उससे भी कहीं ज्यादा की उम्मीद लगाए हुए थी। वापिस चली गई।" रूखी आवाज में मॉम ने कहा।

"ओह नो, मॉम ये तुमने क्या किया? वह एक बहुत स्वाभिमानी लड़की है। आज उसकी वजह से ही मुझे जीने की हिम्मत मिली है। उसका अपमान कर के तुमने बहुत बड़ी गलती की है।" अमन व्याकुल हो उठा।

"एक लड़की से इतना बड़ा धोखा खा कर भी तुझे अकल नहीं आई? ऐसी लड़कियां अमीर लड़कों पर डोरे डाल कर धोखा देती हैं। इनकी मीठी-मीठी बातों के जाल में तू फंस कर धोखा खा चुका है।"

"बस, मॉम। अब सुमन के खिलाफ एक शब्द भी नहीं सह सकता। काश, तुम उसे पहचान सकतीं। अब तो उससे माफी माँगने का भी साहस नहीं रहा। ये तुमने क्या कर दिया, माँम।" अमन की आवाज भीग गई।

"तू बेकार परेशान हो रहा है। उसके घर का पता बता दे, एक-दो लाख का चेक मिलते ही तेरे पास थैंक्स देने भागी आएगी। पैसों में बड़ी ताकत होती है।" आवाज गर्वीली थी।

"एक दिन मुझे भी अपने पैसों पर अभिमान था, पर सुमन के साथ जाना, सच्ची खुशी पैसों से नहीं, निःस्वार्थ प्यार और मन की शान्ति से मिलती है। हमारे पास पैसों की कमी नहीं है, मॉम। पर मुझे तुमसे या डैडी से कभी प्यार नहीं मिल सका। तुम दोनों के होते हुए भी मैं कितना अकेला छूट गया, मॉम। अपने अकेलेपन को भुलाने के लिए अमीरी का खोखला चोगा पहिन अपने को धोखा देता रहा।"

"ये तू कैसी बहकी-बहकी बात कर रहा है, अमन? हमने तुझे क्या नहीं दिया?"

"प्यार नहीं दे सके मॉम। आज भी डैडी लन्दन में मुझसे ज्यादा अपने बिजनेस मे बिजी हैं। मेरे अकेले मन को सुमन ने अपने निश्छल प्यार से सराबोर किया है।" अमन की आवाज रुंध गई।

अमन के आँसू माँ को कब रोक सके। बाद में उसने अकेलेपन को अपनी नियति स्वीकार कर लिया था। अगर सुमन के साथ ने अमन के खाली मन को पूर्ण किया है तो वह सुमन से उसे अलग नहीं कर सकतीं। इतना तो समझ में आ ही गया है कि जिस लड़की ने अमन को इतना बदल दिया है वो साधारण लड़की नहीं है। उन्हें सुमन से माफी मांगनी ही होगी।

दरवाजे की दस्तक पर सुमन चौंक गई। माँ स्कूल जा चुकी थीं। दरवाजे पर अमन की माँ को देख सुमन विस्मित थी।

"आप यहाँ? शायद अपमान करना बाकी रह गया था।" तिक्त स्वर में सुमन ने कहा।

"घर के भीतर नहीं आने दोगी?" शांत स्वर में अमन की माँ ने कहा।

"हमारे इस छोटे से घर में आपके लायक फर्नीचर नहीं है। आपकी आदत मखमली सोफों पर बैठने की है।" अनायास ही सुमन के स्वर में व्यंग्य आ गया, अपना अपमान वह भूली नहीं थी।

"मुझे माफ नहीं करोगी बेटी? मानती हूँ तुम्हें समझने में गलती हो गई। उसके लिए बहुत शर्मिन्दा हूँ।"

"आप मुझसे बड़ी हैं, माफी मांग कर और अपमानित मत कीजिए। हम उस माँ की बेटी हैं जिसने अपना पति खोकर भी किसी के आगे हाथ नहीं फैलाया। मुश्किलों से डरे बिना, साहस के साथ स्वाभिमान का जीवन जिया और हमें भी यही सिखाया है, अन्याय के आगे कभी सर मत झुकाना। आपको अमन के साथ होना चाहिए।" दृढ़ आवाज में सुमन बोली।

"जानती हो सुमन आज अमन ने मेरी आँखें खोल दीं, मैं माँ का कर्तव्य नहीं निभा सकी। उसके मन का खाली कोना तुमने भरा है, अब उसे फिर अकेला मत होने दो, सुमन।" माँ का स्वर दयनीय हो आया।

"शायद अमन ने आपको यहाँ भेजा है। आप उसकी माँ हैं आपका प्यार उसे पूर्ण कर देगा।"

"नहीं अमन ये जानता भी नहीं कि मैं यहाँ आई हूँ। तुम नहीं जानतीं, अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए एक बार वह रीता नाम की एक धोखेबाज लड़की के जाल में फंस कर पूरी तरह से टूट चुका है, अब दोबारा फिर उसे उसी हाल में नहीं देख सकती। मेरी मदद करो, सुमन।"

"अमन एक समझदार लड़का है, वह अपनी कमजोरियों को जान गया है। उसे वक्त देना चाहिए। हमें पूरा विश्वास है वह ठीक रहेगा।" सुमन ने यकीन के साथ कहा।

"तुम्हारे यकीन पर विश्वास है, सुमन। पर अगर तुम उसके पास नही गईं तो वह मुझे कभी माफ नहीं करेगा। प्लीज़, सुमन मैं अपने बेटे को नहीं खो सकती। अब मैं जाग गई हूँ।" उनकी आँखों में आँसू थे।

"ठीक है, आपके लिए आज चल रहे हैं, पर आगे के लिए आपको ही राह ढूँढ़नी होगी।"

माँ के साथ सुमन को आया देख अमन का उदास चेहरा खिल उठा। डॉक्टर से बात करने के बहाने मॉम दोनों को अकेला छोड़ कर चली गई थीं।

"सुमन, प्लीज़ मॉम ने जो कुछ कहा, उसके लिए माफी मांगता हूँ। मुझसे नाराज़ मत होना, वरना मेरा जीना कठिन हो जाएगा।" अमन ने सच्चाई से कहा।

"अरे वाह, हम तो वीआईपी हो गए। अरे जनाब, इस धोखे में मत रहिएगा कि इस सुमन के पास इतना फालतू समय है कि आपकी नर्स बनी रहे। अब आपकी मॉम आ गई हैं, हमारी ड्यूटी खत्म।"

"अच्छा तो मैडम सुमन हमारी नर्स थीं। जो भी हो, इस नर्स ने इतनी अच्छी देखभाल की है कि उसे पूरी ज़िंदगी भर के लिए अप्वाइंट किया जाता है। बोलो मंजूर है, वैसे नो सुनने की तो मेरी आदत नहीं है।" अमन की मुग्ध दृष्टि ने सुमन को संकुचित कर दिया।

"कल क्या होगा कोई नहीं जानता और तुम पूरी ज़िंदगी की बात कर रहे हो।" अमन का परिहास में कहा गया संकेत समझ कर भी सुमन अनजान बन रही थी।

"मैं कल में नहीं आज में जीता हूँ सुमन, और जानता हूँ मेरा आज बहुत सुखद है।"

"कल और आज की क्या बातें हो रही हैं, मैं भी तो सुनूं।" अमन की माँ आ गई थीं।

"कुछ नहीं आंटी, अमन फिलौसफी झाड़ रहा है। वैसे आपको बताना था, कल हम माँ के साथ गया जा रहे हैं, पापा के लिए माँ हर साल पूजा करवाती हैं, एक वीक के बाद आएँगे।"

"ठीक है, बेटी। एक सप्ताह अमन और मैं तुम्हें मिस करें, पर तुम्हारा काम ज्यादा जरूरी है।"

"ओ.के., अमन लौट कर मिलेंगे।" प्यार भरी नजर अमन पर डाल, सुमन चल दी।

एक सप्ताह गया में बिता कर सुमन लौटी थी। इस दौरान भी वह अमन को कितना याद करती रही। अपने से डरती, कहीं उसे अमन से प्यार तो नहीं हो गया था वरना हर पल अमन को क्यों याद करती। पता नहीं अमन भी उसे इतना ही मिस कर रहा होगा। उसे अमन के पास जाने की उतावली थी।

"माँ, हम अमन को देखने जा रहे हैं।"

"ऐसी भी क्या उतावली है, इतना थक कर आई है, कल चली जाना।"

"माँ हम बिलकुल नहीं थके हैं, शायद अमन की माँ को हमारी जरूरत हो।"

सुमन को देखते ही अमन का चेहरा खिल गया... हाथ में पकड़ी कॉपी और पेन्सिल रख कर कहा—

"बहुत दिन लगा दिए, बहुत अकेला महसूस कर रहा था।"

"वाह सात दिन बहुत हो गए, अगर ऐसा हो कि फिर कभी ना आ सकूं तो क्या करोगे?"

"तब शायद जिंदा नहीं रह पाऊंगा। तुम्हारे साथ समय पंख लगा कर उड़ जाता है, पर तुम्हारे बिना एक-एक पल भारी लगता है, सुमन। तुम मेरी ज़िंदगी बन गई हो।" अमन गंभीर था।

"कोई किसी की ज़िंदगी नहीं बन सकता, अमन। इस सच्चाई को स्वीकार करने में ही भलाई है। हाँ, ये कागज़ पर क्या बना रहे थे?" अमन ने जो कागज़ रखे थे, उन पर आड़ी-तिरछी रेखाएँ खिंची थीं।

"झोपड़पट्टी मे रहने वालों के लिए सस्ते और आरामदायक घर बनाने के लिए डिजाइन बना रहा हूँ।"

"क्या... क्या कह रहे हो, अमन? तुम तो आकाश छूती बिल्डिंग्स बनाने का सपना देखते थे। उनकी जगह ये सस्ते घर, क्यों अमन?" सुमन विस्मित थी।

"अब वह अभिमानी अमन सच की दुनिया में जीता है। सच्चाई ये है कि अमीरों के लिए आकाश छूती बिल्डिंग्स बनाने वाले हज़ारों बिल्डर्स भारी रकम ले कर महल खड़े कर देंगे, पर इन ग़रीबों की सुध कौन लेगा? मॉम से बात कर ली है अपनी दौलत से इन ग़रीबों के लिए एक कॉलोनी बनाऊंगा। कॉलोनी का नाम भी तय कर लिया है।" अमन के चेहरे पर मुस्कान थीं।

"विश्वास नहीं होता, तुम में इतना बदलाव कैसे आ गया?" विस्मय सुमन के चेहरे पर स्पष्ट था।

"एक लड़की है, जिसने एक अभिमानी अमन को निराभिमानी बना दिया और असली खुशी का मतलब समझा दिया। अब सिर्फ मैं ही नहीं मॉम और डैड भी खुशी का सच्चा अर्थ समझ रहे हैं। तुम्हारी वजह से मुझे उनका प्यार मिल सका है, सुमन। अब तो समझ गईं वो लड़की कौन है। याद है, तुमने कहा था, ग़रीबों के लिए घर बनाने वाले को तुम इज़्ज़त दोगी, उसी प्यार के इंतजार में हूँ।" अमन के चेहरे पर शरारती मुस्कान थी।

"तुम बेकार में मुझे आकाश पर चढ़ा रहे हो, मुझमें ऐसा कुछ नहीं है। तुम हमेशा से अच्छे इंसान थे वरना एक अनजान लड़की के लिए अपनी जान खतरे में ना डालते...।"

"कुछ भी कहो, सुमन मेरे ऊपर झूठे अभिमान का जो रंग चढ़ा हुआ था, वो तुमने धो कर मुझे सच की राह दिखाई है। अब वादा करो, तुम मुझे छोड़ कर कभी नहीं जाओगी। मेरा अब जो सपना है उसे पूरा करने में हमेशा-हमेशा के लिए तुम मेरे साथ रहोगी।"

"अमन बेटे, अब सुमन हमेशा तुम्हारा साथ देगी, तुम्हारे हर काम में और तुम्हारे जीवन में यह तुम्हारी प्रेरणा और जीवनसंगिनी बनेगी। सुमन की माँ ने इस बात की स्वीकृति मुझे दे दी है। क्यों सुमन, तुम्हें तो कोई ऐतराज़ नहीं है ना?" अचानक अमन की मॉम ने मुस्कुराते हुए आ कर कहा।

"मुझे लगता है, अभी अमन को अपने पैरों पर खड़ा होना है, मुझे भी अपनी पढ़ाई पूरी करनी है। अगर तब तक अमन का मन नहीं बदला तो हम अपने जीवन का निर्णय ले सकेंगे।" गंभीरता से सुमन बोली।

"मुझे तुम्हारी ये शर्त मंजूर है, सुमन। अपने मन को जानता हूँ, ये अब कभी नहीं बदलेगा। इसे बस तुम्हारी हाँ की प्रतीक्षा रहेगी। तुम मेरा इंतज़ार करोगी ना सुमन?"

"तुमने ना कहने की गुंजाइश छोड़ी ही कहाँ है, अमन?" हलकी मुस्कान वाले सुमन के झुके मुख को अमन मुग्ध निहारता रह गया।

लघुकथा

पहचान का संकट

राकेश भ्रमर

एक दिन वह मेरे पास आया। उसके होंठों पर भेदभरी मुस्कान थी। उसने मुझसे कहा—"वह मेरे बारे में बहुत कुछ जानता है।"

मैंने पूछा—"कितना?"

आँखों को चमकाते हुए उसने कहा—"जितना आप स्वयं को नहीं जानते।"

"अच्छा!" मैंने भी आँखें फैलाकर कहा।

और वह मेरे बारे में बहुत कुछ बताता रहा। मैं चुपचाप सुनता रहा। उसकी बातें सुनकर मैं हैरान होता रहा। फिर वह चला गया। मैं बैठा सोचता रहा कि सचमुच मैं अपने बारे में कितना कम जानता था। उतना भी नहीं, जितना लोग मेरे बारे में जानते थे।

क्या यह हमारा दुर्भाग्य नहीं कि हम दूसरों के बारे में ज़्यादा जानते हैं और स्वयं के बारे में बहुत कम।

अगर हम स्वयं को पहचान जाएँ तो जीवन कितना सरल और सुखमय हो जाय।

सम्पर्क : 24, जगदीशपुरम, लखनऊ मार्ग, निकट त्रिपुला चौराहा,
रायबरेली-229001 मोबाइल: 9968020930
ई-मेल: rakeshbhramar@rediffmail.com

अपराध-बोध क्यों?

दीप्ति प्रकाश

"...उसे याद आ रहे थे अपने बचपन के दिन, जब उसकी माँ उसे क्रेच में छोड़ आया करती थी। क्यों भला! इसलिए कि दिनभर छोटा अकेला तो नहीं रह सकता न। क्रेच में सबके साथ रहेगा तो खुश भी रहेगा और वहाँ आया उसका ध्यान भी रखेगी। शुरू में वह रोया था, विरोध भी किया था उसने। कभी-कभी जिद में अड़ भी जाया करता था। उस दिन माँ को छुट्टी लेनी पड़ती थी, पर धीरे-धीरे उसे मज़ा आने लगा था।..."

सम्पर्क : कारसेल कोरोना 6, 5 बी, बाय्यादोलीद, 47005 स्पेन
दूरभाष: 0034 626 52 43 72
ई-मेल: deepti_cs@hotmail.com

खाना बना दिया है, आओ, खा लो—उसने पास जाकर मोहित के कंधे पर हाथ रखा और धीरे से कहा। मोहित ने भी उतने ही बुझे मन से कहा—मन नहीं है, तुम खा लो। उसने कुछ नहीं कहा, हल्के से उसके कंधे को दबाया और चली गई।

मन उसका भी उदास था। आखिर यह सब होना ही क्यों था, इस तरह। उसे याद आने लगीं, सारी बातें। जब वह ससुराल आई थी, काफी सहमी सी थी, न जाने कैसे लोग होंगे, मुझसे नहीं निभा तो—वगैरह, वगैरह। परंतु उसकी सारी आशंकाएँ निराधार निर्मूल सिद्ध हुई थीं। उसे बहुत प्यार से रखा था, मोहित के मम्मी-पापा ने। फिर तो वह भी खूब घुलमिल गई थी उनके साथ। हँसी-खेल, मज़ाक, गुस्सा, डॉट, सब कुछ चलता रहता था। पापा तो थे भी काफी विनोदी स्वभाव के।

सब कुछ ठीक चल रहा था कि एक दिन अचानक माँ चल बसीं। पापा को बड़ा झटका लगा। उनकी तो दुनिया ही उजड़ गई थी। बिल्कुल गंभीर हो गए थे वे, और अब तक वैसे ही हैं। ज्यादा बोलते नहीं हैं—अपनी पोती स्नेहा के साथ भी बहुत कम और जब से वह हॉस्टल चली गई है, तब से तो उनकी आवाज ही सुनाई नहीं पड़ती थी। या तो गुमसुम बैठे अखबार पढ़ते रहते या टी.वी. के सामने बैठे रहते, देखते थे या नहीं, पता नहीं। उधर मोहित के दिमाग में भी बहुत कुछ चल रहा था—क्या मेरा फैसला सही था? मैंने विचार तो बहुत किया था। बहुतों की राय भी ली थी। हालांकि ज्यादातर लोगों ने मना ही किया था, फिर भी मुझे यही ठीक लगा था।

माँ के जाने के बाद जब भी वह पापा को इस तरह चुपचाप बैठे देखता, तो उसका मन बड़ा कचोटता था। क्या करे वह, बहुत कोशिश की, उन्हें खुश रखने की, उनका मन बहलाने की, पर वे जो एक बार गुमसुम हुए, तो उससे बाहर कभी निकल ही न पाए। अपने सच्चे साथी के चले जाने का बहुत बड़ा झटका लगा था, उनको।

कोई भी कब तक छुट्टी ले पाता! सब रिश्तेदार चले गए। मुझे भी ऑफिस जाना था। सुहानी भी कब तक न जाती। आधे दिन स्नेहा घर पर होती थी, स्कूल से आने के बाद। पर उसे भी कहाँ फुर्सत थी। होमवर्क, पढ़ाई, ट्यूशन। ज्यादा समय वह भी नहीं बिता पाती थी दादाजी के साथ। जबसे उसका बी.टेक. में ऐडमीशन हुआ और वह वेल्लोर चली गई, तब से तो पापा और भी अकेले हो गए। मैं और सुहानी अपनी तरफ से उनका बहुत खयाल रखते। सारी सुविधाएँ देते, छोटी-छोटी जरूरतों पर ध्यान देते, पर उन्होंने तो कुछ भी कहना, कुछ भी माँगना छोड़ ही दिया था। अकेलापन बहुत सालता था उन्हें। उनका कोई भाई या बहन भी नहीं थी, जहाँ भेजा जा सके, थोड़े समय के लिए, मन बदले

उनका। एक बहन थी, पर वह भी अब इस दुनिया में नहीं है। मैं भी अकेला ही था। करूँ तो क्या करूँ, मेरी समझ में न कुछ आता था।

क्या मैं पापा को ओल्ड होम भेज दूं? शायद औरों के साथ उनका मन लग जाए, बात केवल मन लगने की नहीं, सुरक्षा की भी थी। आए दिन अखबारों में बुजुर्गों को मारकर घर लूटने की खबरें आती हैं, कुछ हो गया तो? माँ को तो पहले ही खो दिया है।

कुछ सूझ नहीं रहा था, क्या किया जाए। और एक दिन जब बहुत सोचने के बाद सुहानी के सामने मैंने वृद्धाश्रम भेजने की बात कही, तो वह लगभग चिल्लाने ही लगी थी—"ये क्या सोच रहे हो तुम! तुम्हें हो क्या गया है, उन्हें अपने से दूर करने की बात तुम सोच भी कैसे सकते हो? पापा क्या पराए हो गए तुम्हारे लिए? उनका ख्याल रखना इतना ही भारी पड़ता है तुम्हें, तो तुम कुछ मत करो, मैं हूँ न, कर लूँगी उनकी देखभाल।" और वह चुप हो गया था। पर उसे लगता रहा था कि शायद इससे अच्छा समाधान नहीं हो सकता। उसने अपने ऑफिस के दोस्त मिश्रा से इस बारे में बात की तो उसने भी वैसा ही कहा, जैसा सुहानी ने कहा था। वह फिर चुप हो गया था।

पर उसके मन में मंथन चलता रहा। क्या ये एक अच्छा समाधान नहीं होगा? इससे बेहतर हम और क्या दे सकते हैं उनको। ऑफिस तो जाना ही होगा, हम दोनों को। पापा दिनभर कितना अकेला महसूस करते हैं, अपने आपको। पड़ोस में भी ऐसा कोई नहीं, जिसके साथ जाकर वे बात कर सकें।

उसे याद आ रहे थे अपने बचपन के दिन, जब उसकी माँ उसे क्रेच में छोड़ आया करती थी। क्यों भला! इसलिए कि दिनभर छोटा अकेला तो नहीं रह सकता न। क्रेच में सबके साथ रहेगा तो खुश भी रहेगा और वहाँ आया उसका ध्यान भी रखेगी। शुरू में वह रोया था, विरोध भी किया था उसने। कभी-कभी जिद में अड़ भी जाया करता था। उस दिन माँ को छुट्टी लेनी पड़ती थी, पर धीरे-धीरे उसे मज़ा आने लगा था। वह जान गया था कि अगर मम्मी पापा को काम पर जाना है, तो उसे क्रेच में रहना ही पड़ेगा, तभी तो वे पैसे कमाकर लाएंगे। उसके लिए कपड़े और खिलौने खरीदेंगे। उसे अच्छे स्कूल में पढ़ाएंगे, लिखाएंगे और जब तक वह काफी बड़ा नहीं हो गया था, क्रेच में जाने का सिलसिला चलता रहा था। स्नेहा के लिए इतनी दिक्कत नहीं हुई थी, क्योंकि पहले तो आया के साथ वे उसे सुहानी की माँ के पास छोड़ते रहे थे, फिर रिटायर होने के बाद तो माँ और पापा घर पर ही होते थे। लोग बड़े होकर बच्चों जैसे नहीं हो जाते क्या! अब उसे भी पापा का ध्यान रखना था, उसी तरह जैसे उन्होंने रखा था उसका। उसने बहुत सोचा, पर ओल्ड होम से अच्छा उपाय उसे मिल ही नहीं रहा था लेकिन सुहानी को कैसे मनाए वह। वह मानेगी, तभी दोनों मिलकर पापा को समझा पाएँगे।

और समाज! लोग क्या कहेंगे। अब तक जितने लोगों से उसने बात की या करने की कोशिश की, सबका एक ही मतलब था-ओल्ड होम में छोड़ना ही यह दर्शाता है कि तुम्हारे मन में पापा के लिए प्यार अब बचा ही नहीं। तुम्हारे लिऐ वे अब बोझ बन गए हैं। बचपन से जिन्होंने तुम्हें पाल-पोस कर बड़ा किया, आज उनकी जिम्मेदारी उठाना तुम्हें भारी पड़ रहा है। इतने कृतघ्न कैसे हो सकते हो तुम...।

पर क्या उसे भी ऐसा ही लगता है-नहीं, नहीं, नहीं। ओल्ड होम भेजकर वह अपनी जिम्मेदारी से मुक्त नहीं होना चाहता। उसके अनुसार तो वह जिम्मेदारी निभाने का शायद सबसे अच्छा तरीका है। पापा घर से दूर हो जाएंगे, पर ऐसे घर का क्या फायदा, जहाँ दिन भर कोई भी उनके साथ नहीं रह पाता। वहाँ रहेंगे तो सबके साथ मन तो लगा रहेगा। और मैं कब कह रहा हूँ कि वहाँ भेजने के बाद हम उन्हें भूल जाएंगे। फोन पर रोज संपर्क करेंगे और छुट्टी वाले दिन घर भी ले आया करेंगे। हाँ, यह ठीक है कि कई लोग छुटकारा पाने के लिए ऐसा करते हैं, पर उसके साथ तो ऐसा नहीं है। वहाँ हम उम्र लोगों के साथ धीरे-धीरे उनका मन लग ही जाएगा। हाँ शायद यही सबसे अच्छा उपाय है।

उसने फिर हिम्मत की और सुहानी से बात की। पहले ही कह दिया था कि एक बार शांति से उसकी बात सुन ले। उसने समझाकर सुहानी से सारी बातें कहीं और आखिर वह भी सहमत हो गई। समझ गई थी कि लोग क्या कहेंगे, सोचकर घर में पापा को दुखी रहने से अच्छा होगा, ताने सहकर भी उन्हें ओल्ड होम में खुश रखना। पापा से कैसे कहें? वे क्या सोचेंगे? क्या मान जाएंगे? हमारे बारे में वैसा ही सोचेंगे क्या, जैसा और लोग सोचते हैं? नहीं, नहीं, पापा काफी समझदार हैं। हम मिलकर उन्हें अपने मन की बात बताएंगे—उनकी प्रतिक्रिया देखेंगे—फिर पक्का फैसला करेंगे। एक इतवार को हिम्मत करके सुहानी और मैंने मिलकर पापा के सामने अपनी बात रखी। वे चुपचाप सुनते रहे, बोले कुछ नहीं। उनकी चुप्पी को हमने हाँ माना और एक अच्छे ओल्ड होम में बात की।

.....

आज हम पापा को छोड़ आए हैं। पर मन बहुत भारी है। फिर वही सवाल—क्या हमारा फैसला सही था, क्या केवल यही हो सकता था, क्या कोई और उपाय नहीं था। पापा बहुत चुप थे, हमेशा से ज्यादा। उन्होंने इस बारे में कुछ नहीं कहा, कुछ भी नहीं। एक शब्द भी नहीं कहा, न ना, न हाँ। कुछ तो कहते, मना करते, मुझे डांटते, पर बोले, कुछ भी नहीं बोले। उनकी यह चुप्पी मुझसे सहन नहीं हो रही। शायद वक्त देना होगा उन्हें—सँभलने का, यह समझने का कि हमारा फैसला सही था। हमें भी समय लगेगा, उनके बिना रहने की आदत डालने में। स्नेहा को तो अभी बताया भी नहीं, पता नहीं वो क्या सोचेगी, क्या प्रतिक्रिया होगी उसकी, क्या सारी बात समझ पाएगी या यही सोचेगी कि हमने गलत किया?

छोड़ ही आए हैं आज उन्हें, पर अब भी सवाल वही कचोट रहा है—क्या हमने कुछ गलत किया?

डैफ्नी—आस्ट्रेलिया

कादम्बिनी मेहरा

"...हम सब जानते हैं कि हमारे पूर्वज हमें प्यार करते थे और उसी प्यार को सब धर्मों ने अमर बना लिया है। पूर्वजों की वंदना इस प्रकार उसी प्रेम की, शुभकामनाओं की कामना है। कदाचित तुम्हारे देवी देवता भी इसी उपक्रम की देन हैं। वह राम हों या कृष्ण, जीसस हों या मेरी या कहीं कोई और। तुमने उन्हें मूर्त रूप दिया..."

सम्पर्क : 35, द एवेन्यू, चीम, सरे,
एस एम 2 7 क्यू ए, यूके

मेलबोर्न में ग्रेट ओशन रोड का पूरे दिन का टूर था। वहीं से वह हमारी कोच में चढ़ी थी। उम्र से कुछ अधेड़, पर शरीर गठा हुआ। नाक नक्श मोटे मगर रंग गोरा, बाल भूरे, आँखें नीली। फिर भी जाने क्यों उसे अंग्रेज नस्ल का नहीं कहा जा सकता था। मार्च के महीने में मेलबोर्न बेहद गर्म था। सभी यात्रियों की तरह उसने भी हलके कपड़े पहन रखे थे। भारत की बनी मलमल की कुर्ती और दो घेरों वाली हल्की हरी स्कर्ट। गले में रंगीन पत्थरों की लम्बी सी माला, झुमके और हाथों में अलग-अलग नमूने की चाँदी की चूड़ियाँ। पांवों में अलबत्ता नाइके के ट्रेनर्स क्योंकि उसे पता था कि चलना बहुत पड़ेगा। हमारी सीट के सामने वाली एकलौती सीट पर उसने कब्जा कर लिया। शेष सभी यात्री जोड़े-जोड़े में थे। वह अकेली।

बस में भिन्न-भिन्न देशों से आये यात्रियों के लिए हेड फोन्स लगे थे ताकि वह अपनी ही भाषा में कमेंट्री सुन सकें। अंग्रेजी समझने वालों के लिए ड्राइवर स्वयं बोल रहा था। बस चलने से पहले कारवां के सभी सदस्यों ने एक दूसरे को हेलो हाय कहा। उसने एक बड़ी सी मुस्कान हमारी ओर फेंकी। उत्तर में मैंने सर हिला कर उसका स्वागत किया। ग्रेट ओशन रोड मेलबोर्न का पूरा इतिहास अपने में समेटे, सुमद्र के एकदम किनारे बनी हुई है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद फौजियों ने इसे बनाया था। उस काल के अनेक स्मृति चिह्न स्थापित हैं। सभी जगह हम रुकते, फोटोग्राफी करते। वह अपना डिजिटल कैमरा लेकर अकेली ही घूम आती। किसी से बातचीत करने का उसका कोई इरादा नहीं लगता था मगर मुझसे आँखें चार होते ही वह मुस्कुरा देती।

दोपहर को ड्राइवर ने हमें एक घाटी के पास उतार दिया। यहाँ पहाड़ की चोटियां पानी में डूबी हुई हैं। करीब साठ फुट नीचे समुद्र का किनारा था और चाँदी जैसी धवल रेत बिछी हुई थी। वह सबसे पहले बस से निकल गयी और आनन-फानन में गिलहरी की तरह संकरी ढलवां पगडण्डी पर उछलती हुई बीच तक दौड़ गयी। जिन्हें यह कवायद मंजूर नहीं थी वह हेलीकॉप्टर की टिकट खरीदकर क्यू में खड़े हो गए, जैसे हम।

आधा घंटा या चालीस मिनट के बाद बस पुनः चल पड़ी। वह अपनी सीट पर सबसे पहले वापिस आकर बैठ चुकी थी। बस वाला उससे पूछ रहा था कि वह किस शहर से आई है। उसने बताया एडिलेड से। मेलबर्न देखने की उसकी बहुत इच्छा थी क्योंकि किसी समय उसके दादा यहीं सोने की खान में काम करते थे।

हर पड़ाव पर अकेली सैर सपाटा करके सबसे पहले वापिस आ जाती थी। भारी शरीर होते हुए भी गजब की फुर्तीली थी। ड्राईवर को उसने बताया कि वह अपने परिवार का इतिहास खोजती है। उसके जैविक समूह के लोग उत्तर की ओर से लाये गये थे। वह लोग आस्ट्रेलिया के मध्य पठारी इलाकों में विचरण करते थे। जब एक जगह पानी चुक जाता तो वह दूसरा स्रोत ढूँढ़ लेते। मेलबर्न के बाद वह उसी पठार के दर्शन करने जायेगी जो उसके कबीले का तीर्थस्थल है सदियों से। इसे 'उलुरु' कहा जाता है। उसकी बात सुनकर मैंने हुमककर उसे बताया कि दो दिन बाद हम भी वहीं जाने वाले थे।

वह खुश हो गयी और अपना परिचय दिया। उसने बताया कि उसका आदिवासी नाम त्जुलपुंपा है मगर जब वह सरकारी आश्रय में गयी तो उसका नाम डैफ्नी रख दिया गया। बाद में उसके अंग्रेज पति ने उसे डैफ्नी बुलाना पसंद किया। त्जुलपुंपा का अर्थ भी फूल है।

दो दिन के बाद हम 'उलुरु' यानि आयर्स रॉक पहुँचे। बाहर का तापमान 30 डिग्री दिखा रहा था। होटल के रिसेप्शन पर भारतीय युवक मिले जो कई वर्षों से यहीं काम कर रहे थे। धन से खुश थे मगर मन पीछे भागता था। हमें देखकर बहुत खिल गए। हिंदी बोलने लगे।

शाम को आयर्स रॉक देखने जाना था। मेरी दृष्टि डैफ्नी को ढूँढ़ रही थी। जो कहीं नहीं दिखी।

करीब तीन बजे एक कोच हमें लेने आई उसमें पहले से कई लोग बैठे थे। हमारे रिसोर्ट से आठ दस चढ़े। अगले होटल से भी जमा करती कोच जगह-जगह रुक रही थी। तभी वह दीख पड़ी। मैंने लपक कर अपना बैग साथ वाली सीट पर रख दिया और जब वह चढ़ी तो उसे अपने पास बैठने का निमंत्रण दिया। मुझे पहचानकर वह बहुत खुश हुई।

रास्ते भर वह हमें 'उलुरु' के विषय में बताती रही। उसका अध्ययन असीम था। अंग्रेजों के आगमन से पूर्व ऑस्ट्रेलिया की जनजातियां अपने आदिम विश्वासों की पनाह में, प्रकृति के साथ तारतम्य जोड़कर जीवन निर्वाह करती थीं। आदिवासी इस संसार को पूर्वजों की आत्माओं द्वारा रचित मानते हैं। वह एक अलौकिक 'स्वप्नावस्था' के निर्धारित नियमों में आस्था रखते थे। जीवन व समाज को सही दिशा दिखाने का कार्य उनके पूर्वजों की आत्माएं करती हैं और उनको मानकर चलना प्रत्येक मानव का धर्म है। उनके उल्लंघन का दंड भी यही आत्माएं तय करती थीं। यह आत्माएं अजर-अमर हैं और प्रकृति में पशु, पंछी, शिलाएं नदियां या वृक्षों के रूप में विद्यमान हैं। प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग करने से आपत्तियां आती हैं। यह नियम सबके लिए समान हैं। अपने कठिन वातावरण को समझने का आधार यही, विश्वास, परिकल्पनाएं व धर्म था। इन्हें 'त्जुकुरपा' कहा जाता है। यह दैवी शक्ति के रूप में 'उलुरु' में आज भी निवास करती है।

मुझसे रहा नहीं गया। यह बेहद पढ़ी लिखी 21वीं शती की स्त्री कह रही थी। अतः मैंने पूछ ही तो लिया।

"डैफ्नी क्या तुम भी यह मानती हो कि धर्म व नियम पूर्वजों की आत्माएं बनाती हैं?"

वह उत्तर देने में जरा भी नहीं झिझकी। बोली, "हर धर्म में पूर्वजों का सम्मान होता है। सामान्यतः परिवार में हम अपने नाना-नानी या दादा-दादी को देख पाते हैं। उनका प्यार शुद्ध होता है। हम सब जानते हैं कि हमारे पूर्वज हमें प्यार करते थे और उसी प्यार को सब धर्मों ने अमर बना लिया है। पूर्वजों की वंदना इस प्रकार उसी प्रेम की, शुभकामनाओं की कामना है। कदाचित तुम्हारे देवी देवता भी इसी उपक्रम की देन हैं। वह राम हों या कृष्ण, जीसस हों या मेरी या कहीं कोई और। तुमने उन्हें मूर्त रूप दिया और उन्हीं से रक्षा की भीख मांगते हो। इसी तरह हम अपने पूर्वजों की आज्ञा मानकर अपने को सुरक्षित महसूस करते हैं। तुम्हारे यहाँ भाषा आदि बहुत समय पहले लेखन के रूप में विकसित हो गयी थी अतः धर्मग्रंथों का उदय हुआ। यहाँ यह नियम हर कबीले के अनुभवी लोग मौखिक रूप से अपने बच्चों को सिखाते रहे। वह उनकी जीवन शैली से अभिन्न नहीं थे अतः अंग्रेजों के आने तक उनकी निरंतरता बनी रही मगर 1788 के बाद सब तहस-नहस कर डाला लुटेरे यूरोपियन लोगों ने।"

"परन्तु यह स्वप्नावस्था?"

"तुमको आश्चर्य नहीं करना चाहिए। सब धर्म पारलौकिक शक्तियों में विश्वास करते हैं। मनुष्यों ने हज़ारों वर्षों से पराचेतना में भ्रमण किया है। समाधि क्या है? स्वप्न ही उस पराचेतन मस्तिष्क का साक्षात प्रमाण है। क्या वह तुमसे पूछकर आते हैं? क्या वह तुम्हारे चेतन जगत से तालमेल रखते हैं। कभी कभी अचानक सत्य भी हो जाते हैं। तो फिर कौन सी शक्ति उनकी रचना करती है और क्यों? मनुष्यों ने हमेशा अपनी समस्याओं के लिए अवचेतन मन को इस्तेमाल किया है। पराचेतना का शोध किया है। सबसे अधिक मानवीय परिकल्पना पूर्वजों का सत्कार करने में खर्ची गयी है। हर देश के कलात्मक नमूने, मंदिर गिरजे इसके साक्षी हैं। धर्म एक आंतरिक शक्ति है। एक ऊर्जा। हाँ यदि उसका दुरुपयोग समूह शक्ति को बढ़ाने के लिए किया जाए तो वह श्राप है।"

उसके तर्क अकाट्य थे। उसने मेरा धर्म और इतिहास पढ़ा था। मैं उसके सांस्कृतिक उत्तराधिकार से अनभिज्ञ थी। उसने बताया कि आदिवासी इस धरती के 'मालिक' नहीं थे अपितु यह धरती सबके लिए समान रूप से बनाई गयी थी। वह भोजन के लिए शिकार पर निर्भर थे परन्तु केवल उतने ही जानवर मारते थे जितने चाहिए होते थे। प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग वर्जित था।

मैंने बताया कि आदिवासियों को असभ्य जंगली आदि समझा जाता है। वह बोली कि "यह विशेषण आक्रामक अंग्रेजों की देन हैं। उन्होंने हमारे समूहों को दास बना डाला। हम धरती पर सबका अधिकार मानते थे। न कोई नायक था, न क्षेत्रीयता, न लालच। अंग्रेजों ने इसका फायदा उठाकर धरती का अधिकरण करना शुरू किया। जहां उपजाऊ जमीन थी वहां से हमें खदेड़ दिया और अपना कब्जा कर लिया। यही नहीं हमें ही दास बनाकर अपने लिए इस्तेमाल किया। पहले युग में स्त्रियां यूरोप से नहीं लाते थे। अपनी जरूरत के लिए हमारी औरतों को उठा लेते थे। उनसे जो बच्चे हुए उन्हें क्रिस्चियन धर्म सिखाने के लिए माओं से छीनकर सरकारी अनाथालयों में डाल देते थे। इसी तरह मुझे भी चर्च में रहना पड़ा। क्योंकि मेरी माँ एक अंग्रेज की नौकरानी थी।"

"क्या तुम उसी की बेटी हो?" मैंने पूछा। वह बोली कि "नहीं। उसका रंग उसके नाना का दिया हुआ है। उसके नाना ने दासों को पकड़ते समय एक युवा लड़की की जान बचाई थी। फिर उसे क्रिस्चियन धर्म में दीक्षित करके उससे विवाह कर लिया था। नाना बड़ा अफसर था। मेरी माँ के पैदा होने पर उसे अपने पास रखने की आज्ञा नहीं मिली सरकार से अतः मेरी माँ को नानी से अलग एक चर्च में भेज दिया गया। नानी के तीन बच्चे इसी तरह अलग कर दिए गए। उनके रिकार्ड्स भी मिटा डाले गए। नानी दुःख के कारण बीमार रहने लगी। तब मेरे नाना ने दया करके उसे मेरी माँ से मिलवा दिया और एक अलग झोंपड़ी जैसे घर में दूर भेज दिया। नानी ने मेरी माँ को आदिवासी विश्वासों की थाती सौंपी। नाना चाहते तो प्रेम भरी गृहस्थी जमा कर रहते मगर उस समय नस्लवाद का बोलबाला था। कदाचित उन्हें अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ जाता। उन्होंने फिर कभी शादी नहीं की। मेरी नानी के मरने के बाद तेरह वर्ष की मेरी माँ चर्च भेज दी गयी। वहाँ से किसी अंग्रेज ने उसे अपनी नौकरानी बना लिया और वह एडिलेड चली गयी।"

"तुम्हारी नानी के दो और बच्चे हुए थे?"

"हाँ वह सरकारी अनाथालय से पढ़ लिखकर इंग्लैंड भेज दिए गए। द्वितीय विश्व युद्ध के लिए आर्मी में दाखिल कर लिए गए। मालूम नहीं उनका क्या हुआ। नाना मरने से कुछ साल पहले आये थे मेरी माँ को यह बताने। माँ इसी को उनका अनिंद्य मानती है। मूरख है।

मेरे पिताजी की कहानी इससे भी भयानक है। 1872 ई. में अंग्रेज इस प्रान्त में आये थे जहां हम आज हैं। यहाँ जंगलों का सफाया किया गया। इसका कारण यह था कि यहाँ काँटेवाली झाड़ियाँ बहुत थीं जिनमें जंगली जानवर रहा करते थे। आदिवासियों को धीरे-धीरे भगाया या मार डाला गया। बीसवीं शताब्दी के शुरू में मेरे दादा का कबीला शिकार की खोज में उत्तर दिशा से आया था। उन्हें इस प्रान्त में अंग्रेजों के प्रकोप का पता नहीं था। तभी रात के समय बड़े ट्रक लेकर अंग्रेज उन काफिलों को ढूँढ़ते हुए आये। कबीले वाले छिपने-भागने लगे। मेरी दादी की सुरक्षा बहुत जरूरी थी वर्ना अंग्रेज उसके साथ क्या करते मालूम नहीं। दादा ने तीन जवान लड़कों को जंगलों में भगा दिया और इज़्ज़त बचाने के लिए दादी को वहीं रेत के ढूह में छुपा दिया। बाद में वे सब पकड़ लिए गए। दादी का क्या हुआ किसी ने नहीं देख पाया। वह दबी ही रह गयी। सबको पकड़कर अलग-अलग जगह भेज दिया गया। मेरे पिता एडिलेड में मजूरी पर लगा दिए गए। बहुत सालों के बाद उन्हें पता चला कि मेरे दादा को मेलबर्न भेजा गया था। वह उन्हें खोजने गए, पा भी लिया मगर दादा अपने आखिरी बिस्तर में मिले। कुछ दिन बाद चल बसे। मेरे पिता को एक अस्पताल में सफाई की पक्की नौकरी मिल गयी। वह अपने अंग्रेज अफसर के घर भी जाने लगे। वहीं मेरी माँ से उनकी भेंट हुई और उन दोनों ने शादी कर ली।

मेरी माँ ने जब मुझे जन्म दिया तब उसकी मालकिन मेरा गोरा रंग देखकर पसीज गयी और उसने मुझे अपने ही घर में रहने दिया। थोड़ा बड़ी होने पर मैं चर्च के सरकारी स्कूल में रहने लगी। वहाँ मुझे अंग्रेजी भाषा इतिहास भूगोल पढ़ाया जाता जिसे मैं समझ ही नहीं पाती थी। वह मेरा नहीं था। इसलिए मैंने विज्ञान और गणित लेकर आगे की पढ़ाई की, क्योंकि वह सबके लिए समान होता है। अब मैं मिडवाइफ हूँ, आज़ाद होने पर मैंने एक अलग घर लिया और अपने माँ-बाप को लेकर रहने लगी। मगर जब मेरी शादी हो गयी तब मेरी माँ ने दामाद के घर में रहना स्वीकार नहीं किया। हमारे में बुरा मानते हैं।

मुझे हँसी आ गयी। मैंने उसे बताया कि हिन्दुओं में भी माँ का बेटी के घर में रहना अशुभ माना जाता है। कहतें हैं सास की छाया पड़े तो दामाद की उम्र कम होती है।

'उलुरु' की शिला नज़र आने लगी थी। टूर का गाइड उसे अंग्रेजी नाम 'आयर्स रॉक' बुला रहा था। उसने बताया कि 1873 ई. में अंग्रेज टेलीग्राफ लाइन बिछाने के चक्कर में इस प्रान्त में आये और उन्होंने इस विचित्र शिला का दर्शन किया। उस समय दक्षिणी ऑस्ट्रेलिया के चीफ सेक्रेटरी सर हेनरी आयर्स थे अतः उन्होंने इसका नाम आयर्स रॉक रख दिया। वह 1140 फुट ऊँची है और इसकी परिधि करीब 6 मील है। इसमें कोई जोड़ नहीं है इसलिए यह संसार में सबसे बड़ी एकल शिला है। सूर्य के उठने-डूबने के साथ इसके रंग बदलते हैं।

वह बढ़ा-चढ़ा कर आधुनिक शासन की प्रशंसा कर रहा था। कैसे यहाँ के जंगलों का पुनरुत्थान किया जा रहा है। पहले, यानि अंग्रेजी के आने से पहले, यहाँ अनेक प्रकार के स्तनपायी जानवर निवास करते थे पर अब केवल बीस प्रकार के बचे हैं। इसी तरह चिड़ियाँ भी लुप्त हो गईं। अतः अब बाहर से हाथी, घोड़े, गधे, ऊँट आदि यहाँ बसाये जा रहे हैं।

डैफ्नी चुपचाप उसकी कमेंट्री दवा की गोली की तरह निगलती रही। अंत में उससे नहीं रहा गया। वह किंचित रोष से बोली कि "यूरोपियनों

के आगमन से हज़ारों वर्ष पहले से यह शिला यहीं खड़ी है। बल्कि उन लोगों ने इसका पर्यावरण नष्ट कर डाला।" ड्राइवर तनिक झेंप गया। उसने सीधे पूछा, "क्या तुम आदिवासी हो?" उत्तर उतना ही सीधा मिला।

"हां! और मैं अनंगु जाति की हूँ जो यहाँ के मालिक थे।"

ड्राईवर बोला, "सो तो मैं भी हूँ। इसीलिए यहीं आकर बस गया। पर टूरिस्टों को तथ्य तो बताने पड़ते हैं।"

"सबसे पहले यह बताओ कि इसका नाम उलुरु है और यह सात सौ करोड़ वर्षों से यहीं खड़ा हैं ऐसे ही।"

ड्राईवर ने घोषणा की, "मित्रों आज आप बेहद लकी हो कि इस प्रदेश की सगी बेटी आपके बीच बैठी है और अब मैं उससे निवेदन करूंगा कि वह आपको इसके विषय में बताये।" तालियों की आवाज के साथ सबने वेलकम कहा और डैफ्नी ने हुमक कर माइक पकड़ लिया।

"मैं एडिलेड के एक बड़े अस्पताल में मिडवाइफ हूँ और अपना इतिहास खोजने व अपने वंश के तीर्थस्थल के दर्शन करने यहाँ आई हूँ। जो कुछ जानती हूँ वह आपके साथ बांटने में मुझे गर्व होगा।" डैफ्नी धाराप्रवाह बोलने लगी।

"अनंगु जाति का विश्वास है कि कालचक्र की गणना से भी पहले जो मानव यहाँ विचरते थे वही उनके पूर्वज थे और उनकी आत्माएं धरती के गर्भ से निकल कर इस समस्त सृष्टि की रचना कर रही हैं। आदिकाल में ऐसी दस आत्माओं ने उलुरु शिला का निर्माण किया। इसके नीचे एक विशाल गह्वर है जिसमें उनका स्थायी निवास है परन्तु आज तक कोई उस तक नहीं पहुँच सका। एक दिव्य रोशनी कभी-कभी इसमें से प्रकट होती है जो 'त्जुकुरपा'—दैवी शक्ति, का प्रमाण है। इसकी गुफाओं पर उकेरी आकृतियाँ हजारों वर्ष पुरानी हैं और उनकी गाथा कहती हैं। इन्हें छूने से दोष लगता है। अभी भी अनंगु लोग यहाँ अपने अनुष्ठान करते हैं परन्तु केवल वह लोग ही पूर्वजों से संवाद के अधिकारी हैं। पृथ्वी की देन सब बाँट कर खाते थे। न मिल्कियत थी न जमाखोरी। सब इन पूर्वजों के रिश्ते से बंधे थे। सबके बच्चे सबकी जिम्मेदारी। किसी के मर जाने पर कबीले के बाकी लोग उसके परिवार की पालना करते थे। है क्या ऐसी भावना किसी अन्य धर्म में? जब अंग्रेजों ने हमारे बच्चे हमसे छीन कर सरकारी आश्रयों में भेज दिए तब उनसे उनका सांस्कृतिक उत्तराधिकार भी छिन गया। वह आदर्श भी छिन गए अतः आदिवासी समाज में लालच, चोरी व अपराध आ गए।"

ड्राईवर ने उसको टोकने की गरज से कहा, "क्या तुम इन सबको उलुरु की किंवदंतियाँ नहीं बताओगी? वह लोग जयादा पसंद करते हैं।"

डैफ्नी उसका इशारा समझ गयी। पर्यटकों का मनोरंजन अधिक जरूरी था। वह बोली कि आदिकाल में उलुरु पर निवास करने वाले एक परिवार ने अन्य कबीले से वैवाहिक सम्बन्ध बनाया। विवाह के भोजन के लिए बाराती सज धज कर अपने गांव से चले। ईर्ष्यावश, लीरु नामक जहरीली नागिन ने अपनी मित्र स्वनिल नयनो वाली गिरगिट को रूप सुंदरी का वेश बनाकर उन लोगों को मोहित करने के लिए भेजा। सुंदरी गिरगिट के रूपजाल में फँस कर वह भ्रमित हो गए और भोजन करने बहुत देर से पहुँचे। तब तक सारा भोजन गर्मी के कारण बर्बाद हो गया। क्रुद्ध घरातियों ने भी पलट वार किया। उन्होंने एक मिट्टी का पिंड बनाया और उसके कान में शैतानी मन्त्र फूँक दिया। मन्त्र शक्ति से वह एक लकड़बग्घा/डिंगो के रूप में बदल गया। इस डिंगो ने मेहमानों पर आक्रमण किया। कई दिनों तक दोनों पक्षों में युद्ध चला। समस्त दैवी व जादुई शक्तियों का प्रयोग किया गया। अन्य प्राणियों का रूप बदल कर कभी आकाश मार्ग से तो कभी जलमार्ग से तो कभी स्थल पर मारकाट होती रही जब तक सभी मर नहीं गए। इस अनहोनी आपत्ति और रक्तपात से दुखी होकर धरती माता उठ खड़ी हुई। इस प्रकार उन निर्दोष लोगों के रक्त से नहायी इस लाल शिला का उदय हुआ जिसे हम उलुरु के नाम से जानते हैं।

जहरीली नागिन लीरु के प्रभाव में आकर उस काल में उसके वंशज नागों ने बहुत उत्पात मचाया जिससे उलुरु के कलेवर में अनेक छेद व घाव हो गए और उसके नीचे निवास करने वाली आत्माओं की शांति भंग हुई। तब एक विशाल अजगर के रूप में सर्पों की माता 'कुनिया' अवतरित हुई और उसने सभी नागों को नष्ट कर डाला। वह अभी भी उलुरु में निवास करती है व इसकी रक्षिका देवी है। इसी प्रकार ऊपर से गिरने वाली धारा भी मातृ देवी है अतः पर्यटक जन इन्हें छू छू कर अपवित्र न करें।"

उलुरु पर हमारी कोच दोपहर के तीन बजे पहुंची। गर्मी अधिक थी अतः ड्राईवर ने सबको ठंडा दिया और स्वादिष्ट बिस्कुट दिए। डैफ्नी फिर से ओझल हो गयी। कार पार्क में मेला लगा था। इतने जनसमूह में अपने झुण्ड के साथ-साथ रहना मानसिक एकाग्रता का काम था। पठारी ढलानों पर ऊपर से उतरती हुई चाँदी के तार सी चमकती स्वचछ पानी की धाराएँ पहाड़ के तल में एक निर्मल झील की सृष्टि कर रही थीं। बार-बार हमारे निर्देशक पत्थरों या पानी आदि को छूने से मना कर रहे थे। अनंगु जाति का विश्वास था कि ऐसा करने से पूर्वजों की आत्माएं रुष्ट हो जाती हैं और दुर्भाग्य आता है। तरह-तरह के पशु पक्षी 'त्जुकुरपा' के वाहक हैं अतः यदि कोई दिख जाये तो आप बहुत भाग्यशाली हैं। झील के जल में अनेक तरह की मछलियाँ तो सबको दिख रही थीं अतः पर्यटक इस आदेश को अपनी सोच के मुताबिक झेल रहे थे। पर सम्मान दिखाने में कोई कम नहीं था। पर्वत के ऊपर चढ़ना सख्त मना है। फोटो खींचने के लिए अलग मंच बना है।

करीब एक घंटे के भ्रमण के बाद हम वहाँ का संग्रहालय देखने गए। आदिवासी जन-जीवन की झांकियाँ व इतिहास टेलीकास्ट किये जा रहे थे। उत्खनन में प्राप्त प्राचीन बर्तन गहने आदि देखे। यहीं पर जन सुविधाएं भी उपलब्ध थीं। डैफ्नी स्त्रियों के प्रसाधन कक्ष के लिए लगी लम्बी कतार में नजर आ गयी। उसने बताया कि 1993 ई. में जाकर कहीं अंग्रेजी सरकार ने उलुरु को उसकी मूल पहचान बख्शी। यह सब सुविधाएं उपलब्ध कराईं वर्ना तो लोग उलुरु के पास ही निवृत्त हो लेते थे, झूठे कॉफी कप्स आदि फेंक देते थे और ऊपर चढ़कर गोल्फ खेलते थे। कोई आदर का भाव नहीं दिखाता था।

कोच में वापिस बैठे तो उसने मुझे बताया कि वह उलुरु की परिक्रमा करके आई है जिसके लिए बाइसिकल का इंतजाम कोच में ही रहता है। परिक्रमा करना धार्मिक रस्म है। मुझसे नहीं रहा गया मैंने उसे गोवर्धन पर्वत की परिक्रमा के विषय में बताया। वैसे भी हमारे धर्म में परिक्रमा करना अनिवार्य है। रामायण और महाभारत में अनेक उदाहरण हैं आकाश मार्ग से युद्ध करने के और रूप बदल कर प्रहार करने के। उनकी कथाएँ भिन्न नहीं हैं। डैफ्नी मुस्कुराई और बोली कि सैकड़ों हजार वर्ष पहले मानव समूह अफ्रीका से निकल कर पूर्व दिशा की ओर फैले। अतः पहले भारत और फिर आस्ट्रेलिया। भाषाई और सांस्कृतिक साम्य के आधार पर मानव शास्त्री यह तय मानते हैं।

टूर का अगला चरण था सूर्यास्त के साथ उलुरु के बदलते रंग का अवलोकन। करीब पांच मील दूर एक पार्क बना दिया गया है जिसमें लकड़ी के पुल, पगडंडियाँ, मचान आदि बनाये गए हैं ताकि दर्शक अपने जूते रेत से बचाकर चल पाएं। सभी लोग कभी सामने उलुरु को ताकते तो कभी पीछे मुड़कर सूर्य की स्थिति को आंकते। गहराते अँधेरे के साथ साथ उलुरु का रंग भी बदलने लगा। अलौकिक अनुभव था। पर्वत पर एकटक दृष्टि गड़ाए, निरभ्र आकाश में तारों का उदय होना पता ही न चला। सहसा पूर्णमासी के चॉद पर नजर अटक गयी। एक ओर पश्चिम में लाल आकाश में डूबता सूरज का गोला दूसरी ओर थाली जैसा चॉद। बीच में गहरे कत्थई रंग का उलुरु पठार! सब चुप!! मंत्रमुग्ध!! केवल कैमरों की क्लिक क्लिक।

अगले दिन सुबह सुबह मुँह-अँधेरे ही निकलना था। इस बार सूर्योदय में इस विशाल पर्वत की छटा देखने के लिए। ड्राईवर ने वही कार्यक्रम दोहराया। सब होटलों का चक्कर लगाया। डैफ्नी हमें ढूँढ़ती हुई मेरे पास आ बैठी। प्रकृति शनैः शनैः जाग रही थी। सूर्योदय के प्रकाश में मंथर गति से रंग पकड़ती उलुरु शिला पुनः काली से गुलाबी/नारंगी हो उठी। अनेक पंछियों के कलरव से विभोर पर्यटक, सुबह की शीतल स्वच्छ वायु, केवल जंगल और झुण्ड के झुण्ड तोते जिनके रंग अनगिनत थे। मैं स्वर्ग की धरा पर केवल ईश्वर के बारे में सोच पा रही थी।

ग्यारह बजे, नाश्ते के बाद हमें पुनः इस प्रदेश का चक्कर लगाना था। साथ ही अपना सामान बाँध कर अलविदा भी करनी थी। कोच वाला वहीं से आगे हमें एयरपोर्ट पर छोड़ देगा। वहीं से सब अपने अपने गंतव्य को उड़ जायेंगे। मीलों तक फैले इस पठारी प्रदेश में उलुरु के जैसी अन्य चोटियाँ भी हैं। कभी यह सब जुड़ी हुई थीं मगर करोड़ों वर्षों में न जाने क्या-क्या हुआ धरती के साथ, अब वह कई खण्डों में बिखरे हुए हैं। उलुरु को उसे अन्य अंशों के बगैर देखना उसका अपमान करने जैसा ही था। क्योंकि धार्मिक किंवदंती के अनुसार उलुरु की रक्षिका अजगर 'कुनिया' का संगी अजगर 'काटा जुट्टा' नामक पर्वत पर रहता है। उसका नाम 'वानाम्बी' है। डैफ्नी हमें बताती है कि आदिकाल में यह स्थल पुरुष आत्माओं का मंत्रणा स्थल था। इसे 'पितान्त्जाजारा' कहा जाता है जिसका अर्थ है, 'बहुल सर वाला'। इसकी गाथाएं सुनना और सुनाना स्त्रियों के लिए वर्जित है। अगर स्त्रियां नियम तोड़ देती हैं तो कोई तकलीफ आ जाती है शारीरिक या मानसिक।

जब सब 'काटा जुट्टा' पार्क के अंदर चले गये वह गेट के बाहर एक बेंच पर बैठ गयी। मैंने पूछा, "चलोगी नहीं थकी हो क्या।" वह मुस्कुराई। "नहीं यह जगह स्त्रियों के लिए निषिद्ध है और मैं अपने धर्म का अनादर नहीं करती। यूरोपियन सरकार को हमारे विश्वासों से क्या लेना देना। यह तो कोरी कानूनी समानता की बात करते हैं। वास्तविक जीवन में यह किसी का आदर नहीं करते। न पुरुष स्त्रियों का, न स्त्रियां पुरुषों का। प्रेम का आधार होता है आपसी आदर भाव पर यूरोपियन बराबरी का मतलब होता है—तू मुझे नहीं तो मैं तुझे नहीं। यूं भी बहुत दुर्भाग्य झेल चुकी हूँ। और नहीं बुलाना चाहती।"

मेरे पैर में मोच आ गयी थी। अधिक चलने से टीस रही थी। गर्मी अलग जानलेवा। उसने कहा कि यह पर्वत केवल दूर से भी देख सकती हो क्योंकि यहाँ कोई गुफाएं आदि नहीं खोली गई हैं जनता के लिए। मैं भी बेंच पर बैठ गयी। आखिरी पड़ाव जानकर मैंने यादगार के लिए एक नन्हा सा गोल, चिकना गुलाबी रंग का पत्थर उठा लिया। वह बोली कि "यहाँ से पत्थर उठाना अशुभ होता है। कई पर्यटक आकर्षण को रोक नहीं पाते मगर जब उन पर कोई मुसीबत आ जाती है तो वापिस पोस्ट से भेजे देते हैं। रोज हमारे पोस्ट ऑफिस में ऐसे कंकड़ पार्सल से आते हैं।"

मैंने कहा कि "मैं तो तुम्हें यूरोपियन ही समझ रही थी मगर तुम्हारे अंदर तो कोई और ही अस्तित्व है।" वह बोली, "मैं कुल और जाति से अनंगु हूँ और रहूँगी। यह बड़े खेद की बात है कि अंग्रेजों ने महज़ दो सौ वर्षों में हमारे शारीरिक लक्षणों को मिटा डाला। यदि आज की तारीख में तुम खून और डीएनए की जांच करो तो पाओगी कि एक भी शुद्ध आदिवासी नहीं बचा है। अभी भी जो गोरे हैं रंग-ढंग से, उन्हीं की जीत है।"

"तुमने शादी की?"

"की थी मगर चली नहीं।"

"बच्चे?"

"दो बेटियाँ हैं, दो अलग-अलग पुरुषों से। तुम्हारे लिए यह विचित्र है न? भारतीय जो हो।"

"तुम्हें याद रखना चाहती हूँ इसलिए सब कुछ जान लेना चाहती हूँ तुम्हारे बारे में।"

"मेरा पहला पति रिचर्ड एक अनाथ बालक था। पचास के दशक में इंग्लैंड से अनेक छोटे-छोटे बच्चों को जहाज दिखाने के बहाने बहला कर ऑस्ट्रेलिया रवाना कर दिया गया। रास्ते भर वह रोते रहे। पर उनकी चीखें सुनने वाला कोई नहीं था। यहाँ लाकर उनके साथ अच्छा सलूक नहीं किया गया। बड़ी-बड़ी यातनाएं सहने के कारण अनेक तो जंगलों में भाग गए। कुछ खतरों से बच नहीं पाये, कुछ वापिस पकड़ कर दास बना लिए गए या जेल में सड़ने के लिए डाल दिए गए। कुछ जो बहुत अच्छी किस्मत वाले थे वह जैसे-तैसे बच गए। रिचर्ड भी भाग गया था। उसका मालिक उसको पेड़ से बाँधकर छोड़ देता था। जब काम पर से आता था तब मुक्त करता था। अनेक बार उसका शारीरिक शोषण भी किया उसने। एक बार रिचर्ड ने तरकीब से काम लिया। उसने बांधे की रस्सी पर मीठी लापसी लगा दी। और चुप-चाप पड़ा रहा। एक मोटा चूहा रोज़ वहाँ झूठन खाने आता था। वह लापसी के साथ-साथ रस्सी भी कुतर गया। रिचर्ड ने झटके मार-मार कर रस्सी तोड़ ही डाली और निकल भागा। बीसियों मील भाग कर जंगलों में छुप गया। वहीं किसी आदिवासी ने उस पर दया की और वह बच गया। जब अपनी देख-रेख करने योग्य हो गया तब उसने एडिलेड शहर में स्कूल में नाम लिखा लिया। गोरा था इसलिए नौकरी भी मिल गयी। वह वार्डबॉय लगा हुआ था जब मेरी उससे मुलाकात हुई। उसकी कहानी बहुत दर्द भरी थी। हमने शादी कर ली। तीन बरस बाद लिली का जन्म हुआ। मगर लिली का रंग मेरे जैसा गोरा नहीं था। वह मेरे पिता पर गई थी।"

ठंडी सांस लेकर डैफ्नी चुप हो गयी। कुछेक क्षण लगे उसे अपनी भावनाओं पर काबू पाने में।

"जाने कैसे रिचर्ड के प्यार में खिंचाव आने लगा। वह दूर आसमान में ताकता। इधर मेरे पिता अचानक पक्षाघात से चल बसे। मेरा समय लिली और माँ की देखभाल में अधिक खर्च होने लगा। रिचर्ड ने एक दिन कहा कि ऐलिस स्प्रिंग जाकर एयर एम्बुलेंस की शिक्षा लेना चाहता है। वह चाहता था कि मैं भी यही करूँ। मैं खुश तो हुई मगर उस समय माँ को छोड़कर जा नहीं सकती थी। लिली भी सात-आठ महीने की थी। कहाँ रहती। रिचर्ड चला गया। उसने धीरे-धीरे हमसे नाता तोड़ लिया। जो रिश्ता महज आपसी सहानुभूति और दया की नींव पर खड़ा था वह कमजोर साबित हुआ। लिली के लिए उसने कई बार पैसा भेजा मगर वह अपने को एक काली बच्ची का पिता न मान सका। अपनी महत्वाकांक्षा के आगे जो पुरुष खुदा की नेमतों को भुला दे वह सही नहीं हो सकता। उसे न मेरा प्रेम चाहिए था न बेटी की ममता। मैंने उसकी दया को अस्वीकार कर दिया। मैं खुद सक्षम थी, माँ जो थी। जब लिली दस वर्ष की थी मेरी मित्रता एक और व्यक्ति से हो गयी। ऑस्टेन न्यूजीलैंड की माओरी जाति के मूल का है। सोच लिया था कि मैं किसी और के जीवन में नहीं फसूंगी। मेरे चारों ओर खड़ी हरम की ऊँची ऊँची दीवारें ढह चुकी थीं। यूं बिन पुरुष के जो स्वतंत्रता मिली उससे मैं मुक्त रूप से सांस ले सकती थी। वह हवा पुरुषों की हवस की गंध से मुक्त व स्वच्छ थी। हमारी बेटी, मेरी दूसरी संतान डेज़ी अब बारह वर्ष की है। मेरी माँ उसकी देखभाल करती है। लिली चिकित्सक बनना चाहती है। मैं उनसे बेहद खुश हूँ। ऑस्टेन में मित्र भाव बहुत प्रबल है। कहता है कि मुझे देखते ही उसका तनाव और थकान उड़ जाती है। ऐसे भी मेरी माँ दामाद के संग रहेगी नहीं। तो दुबारा शादी करने का कोई उद्देश्य नहीं।"

डैफ्नी ने अपनी दोनों बेटियों की फोटो दिखाई। वह बेहद आकर्षक स्वस्थ युवतियाँ हैं। दो अलग मानव प्रजातियों के मिश्रण का अनोखा सौंदर्य समेटे, हँसती खेलती, प्रबुद्ध!

टूर के संगी 'काटा जुट्टा' देखकर वापिस आ रहे थे। हमें यहीं से अगली उड़ान के लिए एयरपोर्ट जाना था। डैफ्नी मुझे गले से लगाकर विदा कहने लगी। एक स्नेह सम्बन्ध का नाजुक अंकुर हमारे बीच उग आया था। मुझे पता है कि बिछुड़ना मुझे बहुत दिनों तक सालता रहेगा। परन्तु जीवन के उस नरम-गरम अनुभव को क्षण-क्षण आत्मसात करना ही वास्तविकता थी। क्या उसके बाद 'स्वप्नकाल' ही रह जाएगा हम दोनों के लिए? क्या यही है यादों में बसा वह शक्ति स्रोत, वह प्रेम, वह चिरस्थायी आशीर्वाद... 'त्जुकुरपा'?

डैफ्नी रिसोर्ट पर वापिस जाने वाली एक अन्य बस में चढ़ गयी। जाते जाते कहती गयी, "यहाँ से कोई पत्थर मत उठाना।"

मैंने हँसकर उसे बाई-बाई कहा। मेरी आँखें भरी थीं। छोटी-सी मुलाकात, जीवन भर की धरोहर!!

वही एक अन्त

बल्लभ डोभाल

आज वर्षों बाद इस सड़क पर आना-जाना हुआ है। यह अपनी जानी-पहचानी जगह है। सड़क के दोनों किनारों पर सावधान खड़े नए-पुराने पेड़... और आसमान को अपने में समेटने वाली उनकी बाँहें... जैसे लिपट गले मिलने को आज भी फैली हैं। पुरानी पहचान के लोग जब मिलते हैं तो उनसे लिपट जाने को जी चाहता है। लेकिन इन पेड़ों का कोई क्या करे। देखकर अपने मे रह जाने के सिवा चारा ही क्या है। तब यह जानने की इच्छा जरूर होती है कि ये बीस वर्ष इन पेड़ों के साथ कैसे गुजरे होंगे। कितने कट चुके होंगे और कितनों की काया-बर्फ-बरसात से नष्ट हुई होगी।

बीस वर्ष पुरानी बात है। आश्चर्य है कि इस सड़क पर कदम रखते ही बीस वर्ष पीछे लौट जाना पड़ा है। आप कहेंगे, यह कैसी भावुकता है। अतीत को यादों में बनाए रखने से क्या मिल जाता है। अतीत किसी को आगे नहीं बढ़ने देता। जीवन के प्रवाह में यह अवरोध ही खड़े करता है। लेकिन मन है कि अतीत से छूट नहीं पाता। यह अतीत से ही वर्तमान और भविष्य को देखता है। वर्तमान और भविष्य जब-जब अतीत बना, वह मुझे छूकर ही बना है। मैं जब चाहूँ, उसे सामने ला खड़ा कर सकता हूँ, उसे भोग सकता हूँ। भोग की इच्छा आदमी को हजार वर्ष पीछे ढकेल देती है। आज मैं बीस वर्ष पीछे की स्थिति में यथास्थित हूँ। इस जंगल की उम्र में भी उतनी ही कमी आ गई है। जंगल के बीच किसी प्रेमिका की तरह गुमसुम लेटी हुई सड़क... उस पर सुनसान तीखे मोड़, धूप-छांह और कहीं पुलियों के नीचे कम पानी के बहने का शब्द कितना अभिभूत किए दे रहा है। चाहता हूँ, आंखें बन्द कर इस पहचान को अपने में भरता चलूं। लेकिन बन्द होने की जगह आंखें तेजी से फैलती जा रही हैं और पुरानी पड़ गई यादों को नया रूप-रंग दे रही हैं।

सड़क पर काफी दूर निकल आया हूँ। सब तरफ वहीं नाजुक निस्तब्धता है। गर्मियों की इस भरी दोपहरी में ठंडी हवा का दौर शुरू हो चला है। अतीत खुलता जा रहा है, जैसे कि सब कुछ पहली बार हो रहा हो।

सीधी सपाट सड़क पर नजरें दूर तक जाती हैं। टहनियों-पत्तियों से आज भी आसमान ढका है। कभी इस जगह छोटे पंछियों की चुनचुनाहट पत्तों के बीच सुनी जाती थी। लेकिन आज वहां कोई पक्षी नजर नहीं आता। शायद इन बीस वर्षों में उन्हें सड़क का बोध हो गया है। इसलिए जंगल झाड़ियों के बीच दुबके रहना चाहता है। सड़क का बोध होना भी कितना आतंकित कर जाता है। इस बीच जहां सड़कें पहुंची हैं, वहीं आतंक पैदा हुआ है। यकायक कोई जंगली भौंरा अपनी गूंज से उस

"... अतीत को यादों में बनाए रखने से क्या मिल जाता है। अतीत किसी को आगे नहीं बढ़ने देता। जीवन के प्रवाह में यह अवरोध ही खड़े करता है। लेकिन मन है कि अतीत से छूट नहीं पाता। यह अतीत से ही वर्तमान और भविष्य को देखता है।..."

सम्पर्क : डब्ल्यू-46, सैक्टर-12, नौएडा-201301
मोबाइल: 08826908116

आतंक को समेटता हुआ दूर निकल जाता है। कानों में जैसे वन देवता का संगीत बज उठा हो।

कदम आगे बढ़ते ही चले जाते हैं। किनारे... किनारे...। जबकि यहाँ किनारे चलने का कोई तुक नहीं है। लेकिन सड़क का नियम किनारे चलना है, हटकर चलना है, बचकर निकलना है। सोचता हूँ, कहीं मैं इन सब से बचकर तो नहीं निकल रहा। ये पेड़-पौधे जैसे कि मेरे यहाँ आने का कारण जानना चाहते हैं। यदि सारा जंगल एक आवाज उठाकर पूछे कि मैं यहाँ किसलिए आया हूँ तो मेरे पास क्या उत्तर है। मन ही मन उत्तर ढूँढ़ने लगता हूँ...। कह सकता हूँ कि उस साथी को ढूँढ़ने आया हूँ जो इस जंगल में खो गया है। कदाचित मेरा यह उत्तर पेड़ों को सटीक न लगे। जंगल में साथी का क्या काम! साथी के लिए नगर-महानगर हैं, बस्तियाँ, मोहल्ले, गली-कूचे हैं। इन्हीं जगहों पर आदमी मिलेगा। भविष्य में यदि कभी आदमी की तलाश होगी तो इन्हीं जगहों को खंगाला जाएगा। अपनी जगह यह बात भी सही है कि जंगल में बेवजह कोई क्यों आने लगा है। अब तक कोई आदमी यहाँ दिखने में नहीं आया। तब भी यह सड़क सुनसान हुआ करती थी। अलबत्ता मिलिट्री पुलिस की जीप कभी चक्कर लगा लिया करती। सामने वाली पहाड़ी पर अंग्रेजों द्वारा बसाया कैन्टोन्मैंट साफ नजर आता है। छुट्टी या फुर्सत के मौके पर फौजी जवान कभी इधर घूमने आ जाते हैं और घास-लकड़ी के लिए आए महिला दल के साथ किसी को चुहल करते देख लिया जाता तो फौरन उसे उठाकर जीप में लाद ले जाते।...

कहतें हैं, गया वक्त फिर लौट कर नहीं आता। पर वक्त जो भी हो, उसने पूरा साथ दिया है। सड़क और जंगल के हर कोने से मन आज भी उसी तरह जुड़ा है। अब सामने वह टीला नजर आने लगा है। इस टीले से सूर्यास्त के कितने ही दृश्य मैंने देखे हैं। शाम को छुटपुट अंधेरे को रंगों में बदलते देखा है। अंधेरे का रंगों में बदलने का एक समय होता है। वह समय था जब अंधेरा कहीं था ही नहीं। रातें अंधेरी थी तो वे भी उजली-उजली नजर आती।... वे पुरानी यादें अब जोर से चटखने लगी हैं। आंखें टीले के चारों ओर कुछ खोजने लगी हैं। सोचता हूँ अब यहाँ कौन आता होगा। देखता हूँ तो यकायक कदम रुक जाते हैं। खुशी होती है कि आज भी वह टीला निर्जन नहीं है, उस पर कोई आ बैठा है। कभी इसी तरह... ऐसे ही सड़क की तरफ पीठ देकर हम यहाँ बैठा करते थे। देखता हूँ तो दिल की धड़कनें और बढ़ जाती हैं। कुछ कदम आगे चलकर लगा कि अकेला नहीं, कोई उसके साथ है। वे दोनों सटकर बैठे हैं, मिलकर एकाकार हो गए हैं। किन्हीं दो को एक करने में यह टीला कितना सहायक बनता है।

कभी यहाँ बैठकर एक नई दुनिया हमने भी रच डाली थी। एक-दूसरे से जुड़े रहने को हमारा यहाँ आना जरूरी था। आते ही लम्बी बातों का दौर शुरू हो जाता। जंगल के एकान्तिक खुशनुमा वातावरण को बखान करने में ही ज्यादा समय निकल जाता। मेरी भावुकता पर रोक लगाने के लिए वह फूल-पत्ते और रंग-खुशबुओं में मुझे उलझा कर रख देती। जानती थी कि एक-दूसरे में खो जाने के बाद कुछ शेष नहीं रह जाता। नीली साड़ी और ब्लाउज में कसी हुई वह... उसका हाथ अपने हाथ में लेकर शायद ऐसा ही कुछ समझा रही है। कोई आश्वासन देकर उस पर रोक लगाए हुए है। आश्वासन में बंधा आदमी कुछ ऐसा ही नजर आता है। घुटनों को बाहों में बांधकर बैठी औरत अच्छी लगती है। लेकिन अब उसने अपने दोनों पांव नीचे की ओर लटका दिए हैं और साड़ी से पैरों की उंगलियों तक ढक लिया है। इस तरह खुले में बैठने की अपेक्षा यदि वे थोड़ा नीचे की ओर सरक लें तो कोई उन्हें देख नहीं पाएगा। वहां एक सफेद शिला तो होगी। उस पर यदि बैठा जाए तो चेहरे आमने-सामने आ जाते हैं और बात करने मे भी मजा आता है।...

तभी यकायक ख्याल आता है कि मुझे इनसे क्या... बेकार इनके आनंद में शामिल हुआ जाता हूँ। सड़क पर अब टीले के पास होकर निकल रहा हूँ। उन्होंने मुझे देख लिया है। मैं नहीं चाहता कि मेरे कारण उनकी तन्मयता में खलल पैदा हो, लेकिन वह तो हो चुकी। वे सकते में आ गए हैं। उनके खिलते चेहरे मुरझाए फूल की तरह लगते हैं, देखकर मन में पश्चाताप होता है। मैंने उन्हें अपने यहाँ होने का एहसास कराया है, पीछे से लौट जाता तो!.... लौट सकता था, लेकिन उस अतीत के मोह ने लौटने न दिया। मन में आता है निःसंकोच उनके पास चला जाऊं और कहूँ कि ऐसी कोई बात नहीं, इस तरह जब कोई व्यवधान आ पड़े तो डरने-घबराने की कोई बात नहीं। ऐसे मौके पर कोई बहाना ढूँढ़ लेना चाहिए। जेब से रूमाल निकाल कर पसीना पोंछने का काम किया जा सकता है, अखबार या कोई पुस्तक पास हो तो उसके पन्ने उलटने का काम हो सकता है।... या फिर जंगल और पेड़-पौधों की बात करते रहो, तब तक, जब तक कि पास से गुजरने वाला दूर नहीं निकल जाता।

आँखों में वह दृश्य साकार हो आया है। जब हम यहाँ बैठकर दुनिया को भूल चुके थे। भूले न होते तो अपना पीछा करने वाले उस आदमी को सहज देख पाते। वह आदमी जाने कितनी देर से सड़क पर खड़ा हमारी बातें सुन रहा था। यकायक उसे पीछे खड़ा देख मन विचलित हो उठा। जैसे कोई रंगे हाथ पकड़ लिया जाता है। हमने तत्काल अपनी बातों का विषय बदल डाला। प्यार-मुहब्बत की तन्द्रा झटके से टूट गई। लेकिन प्रेम में डूबा मन यकायक दूसरे विषय पर कैसे टिक सकता है... उस दिन हम कहीं जम न सके। हमें अपने विषय से पलटते देख वह आदमी मुस्कुराने लगा। शायद यही सोचकर कि प्रेम-प्रसंग में डूबा आदमी यकायक देश की बात करे, विकास और प्रगति की बातें करने लगे तो उसे विडंबना ही कहा जायगा। यह तो सरासर अपराध है। समय और स्थितियों के विपरीत काम करना भी अपराध ही कहा जायगा।

उस दिन मैं कितना डर गया था। उस आदमी की अनुभवी आंखें लगातार मुझे देखे जा रही थी। मुझे लगा कि वह मिलिट्री पुलिस को कोई अफसर है। वह अपने जवानों को देखने इधर आया होगा। उसने हमारी बातें सुन ली हैं और समझ गया है कि मैं देश के विकास और तरक्की को अपनी वासना से जोड़ रहा हूँ। प्रेमिका से प्रेम का अर्थ वासना से इतर कुछ नहीं होता। अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए लोग अक्सर ऐसा कर जाते हैं। आदमी की महत्वाकांक्षाओं का शिकार अन्ततः देश को ही होना पड़ता है। इस बात को सभी जानते हैं कि चन्द लोगों की जो उन्नति होती है वह देश के दायरे में ही होती है। देश सबका है, इसलिए जो चीज सबकी है उस पर अपनी वासना को आसानी से लादा जा सकता है। ऐसे लोग ही उन्नति कर सकते हैं और इसी को विकास माना गया है।

तब यह मेरे सोचने का विषय था। सोच-सोच कर प्रेम का उन्माद उतरने लगा। मन में शंका बन आई, कहीं उसने इशारा कर दिया हो और पुलिस वाले हमें लाद कर ले जाएं। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। उसने उंगली के इशारे से मुझे अपने पास बुला लिया। मैं डरते-डरते उसके पास जा पहुंचा। जाते ही मेरे कन्धे पर हाथ रख बोला, "देखो, डरने घबराने की कोई बात नहीं, अब तुम यहाँ आए हो तो तुम्हारा यहाँ आना मुझे अच्छा लगा। यह जगह ही ऐसी है कि आदमी खिंचा चला आता है। कभी हम भी यहाँ आया करते थे। इसी टीले पर बैठ मौसम के कई रंग हमने भी देखे हैं। प्रकृति ने इस जंगल और पेड़-पौधों को जिस खूबी के साथ संवारा है, इन घाटियों के आंचल में जो धड़कनें पैदा की हैं, उसे आदमी कहां समझ पाया है। इन सूनी, एकान्त घाटियों को हर वक्त किसी की प्रतीक्षा रहती है।"...

मैं निस्तब्ध मन उसकी बातें सुनता रहा। अन्त में मेरे कन्धे से अपना हाथ उठाते वह बोला, "अब मेरी बात मानो तो इस टीले के साथ-साथ नीचे उतर जाओ। वहां किसी के होने का पता नहीं चलता। कोई भी मौसम हो, हर मौसम में वहां जंगली गुलाब महकते रहते हैं। अब तुम जा सकते हो।"

आज वह सभी कुछ आँखों में मूर्त हो आया है। उन बीते क्षणों को आत्मसात करता चला जा रहा हूँ। वह टीला अब पीछे छूट गया है। उस आदमी की सूरत आँखों के सामने है। वात्सल्य से पसीजा उसका चेहरा और वाणी में सुख की अनुभूतियों का छलकाव.....

आज उन दोनों को टीले पर छोड़ मैं भी चुपचाप निकल आया हूँ। सोचता हूँ, उनकी नजरों से दूर होकर मैंने उन पर कोई एहसान नहीं किया। एहसान तब होता जब मैं उन्हें बता देता कि यहाँ और भी बहुत कुछ है, ऐसी जगह भी है जहां हर मौसम में जंगली गुलाब महकते रहते हैं। लगता है वे पहली बार यहाँ आए हैं, उन्हें यह जानकारी देना जरूरी है। सोचकर उल्टे पांव वापस लौट चला हूँ। कुछ कदम चलने के बाद नजरें टीले तक पहुंचती हैं, लेकिन अब वहां कोई नजर नहीं आता। मेरे बताने के पहले ही वे कहीं पहुंच गए हैं। शायद उस अन्त को पा गए हैं, जिसके आगे कुछ नहीं, कुछ भी शेष नहीं रह जाता।

चित्रकार हूँ

कुसुम शर्मा

चित्रकार हूँ, चित्र बनाती
फिर चित्र मिट जाते
अन्धकार को लिए काले बादल
पल-पल घिर आते
जाने क्यूँ मिट जाती
एक विश्वास की रेखा
काले अंधकार को लिए
फिर से बादल आते
चिर-परिचित फिर
बूँदाबांदी कर जाते
सौंधी-सौंधी खुशबू माटी की
तन मन में बस जाती
चित्रकार हूँ फिर भी
उन्मुक्त आकाश पर
चित्र नहीं बना पाती।

इतना बड़ा आकाश
दिया तूने मुझको
रख ली हाथ में तूलिका
अपने उन दृश्यों को, उन भावों को
करूँ पूर्ण अब कैसे?

तू बैठा अदृश्य भाव से
देख रहा महिमा सारी
कैसी तेरी गरिमा न्यारी
चित्रकार हूँ फिर भी
चित्र नहीं बना पाती

सम्पर्क : 50, सनशाइन अपार्टमेंट्स, ए-3, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063

गुड़ की डली

इंदिरा दांगी

"...घर के तमाम काम उसके हाथों बिगड़ते हैं और वो अम्मा से कभी गाली, कभी मार खाती ही रहती है इन दिनों; लेकिन पढ़ाई में उसका ध्यान अटल है। उसके भीतरी अंधेरों में जैसे कोई ज्योति जगमगा रही है। अंधेरा ज्योति पर एकाग्र; ज्योति अंधेरे पर एकाग्र... पढ़ाई के लिए पायल; पायल के लिए पढ़ाई!..."

दस बरस की पायल सहेलियों के साथ रस्सी कूद रही है।

खपरैल गाँव में, तपते बुंदेलखंड की लाल माटी पर, लू धूल के नन्हे भँवर बना रही है जैसे छोटी लड़कियों को खेलता देख वो भी अपना खेल लिए आ खड़ी हुई है।

"सतानवे, अठानवे, निन्यानवे...."

रस्सी घुमाती दो लड़कियों के बीच पायल दोनों पंजों के बल जमीन पर आती है कि हवा में जाती है!

"पयलिया! नासपिटी! मुझे पता था तू यहीं मिलेगी।"

माँ रुक्मिणी ने जैसे ही उसकी चोटी को पकड़ा, उसकी सब सहेलियाँ भाग खड़ी हुईं—रूबी, साधना, आरती उन सबों को भी तो अपने घरों मे जाकर काम में लगना है, वर्ना गत उनकी भी यही होनी है।

पाँच करारे थप्पड़ जड़ चुकी रुक्मिणी का गुस्सा किसी तरह शांत नहीं होता—आखिर किस पर है ये गुस्सा??

आँगन के गोबर के ढेर के सामने लाकर धक्का दिया उसने लड़की को। पायल गोबर में मुँह के बल गिरते-गिरते किसी तरह बची।

"पूरा आँगन लीपे बिना खेलने जायेगी... घर से तो आज तू नहीं कि मैं नहीं!"

आँसू पोंछती, नुचे बालों पर हाथ फेरती पायल आँगन लीपने के लिए गोबर में भूसा सानने लगी। रुक्मिणी ने पलना में रो उठे, दस माह के लल्ला को उठाया और पुचकारते हुए आँचल तले ले लिया। सूखे स्तनों में लेकिन दूध कहाँ? लल्ला अपने नये दाँत गड़ा कर जैसे खून चूसता है; रुक्मिणी तड़पकर उसे खुद से अलग कर देती है।

"मेरे जीवन के धन! तुझे मैं क्या पिलाकर पालूँ?" वह बड़बड़ाई....

बेटे को लगातार रोता देख रुक्मिणी हड़बड़ा उठी। ऊपर आले में छुपा रखा बेला भर दूध उसने एहतियात से उतारा। कटोरी में छक दूध भरके, गुड़ घोलती वो बच्चे को चम्मच से पिलाने लगी। बच्चा पुच-पुच कर पीने लगा। निहाल माँ बलैया लेने लगी अपने गदबद बेटे की।

"अम्मा?"

सम्पर्क : खेड़ापति हनुमान मंदिर के पास, सूद पेट्रोल पंप के पीछे,
लाऊखेड़ी, एयरपोर्ट रोड, भोपाल-462030 (म.प्र.)
मोबाइल: 08109352499

कोठरी के किवाड़ से झाँककर साढ़े चार साल की दीपा सहमे स्वर में पुकारती है। अम्मा से एक तय दूरी से बात करती है वो। ये उसने पायल जीजी से सीखा है। जैसे ही अम्मा पीटने की मुद्रा में आयें, दौड़ लगाकर पहुँच से बाहर हुआ जा सके। अम्मा हाथ में आये को भले पीटपाट लें अपनी हड़ीली, पीली उंगलियों से लेकिन वे दस-बीस कदम भी दौड़ने में पिछड़कर हाँफने लग जाती हैं, सो वो जान गई है अपनी नन्हीं बुद्धि में.... जीवन का ज्ञान!

"क्या है?"

"अम्मा भूख लगी है।"

"अभी तो खाई थी रोटी घण्टा भर पहले!"

दीपा चुप है किसी गुनहगार की तरह; लेकिन उसकी रिरियाती दृष्टि में भूख साक्षात् है। रुक्मिणी सख्त चिढ़ती है इस नज़र से।

"मर! खा ले!"

दीपा दौड़कर चौके में आती है। बांस की डलिया में, धोती के टुकड़े से ढंकी रोटियों में से एक रोटी खींच लेती है। वहीं बैठकर खाने लगती है। मोटी रोटी को मुँह भरकर बड़े कौर में निगलती दीपा बीच-बीच में अम्मा के चेहरे को देखती जाती है। कहीं अम्मा पीटने न लगे! यहाँ से तो भाग भी नहीं सकती एकदम। पता नहीं निवाला अटका है कि माँ की शिकन भरी दृष्टि का असर है; रोटी खाती दीपा की आँखों में आँसू भर आये हैं। ...माँ के माथे पर शिकन-सी साढ़े चार साल की दीपा!

"जा, पानी पी आ और थाली में तरकारी लेकर रोटी खा।"

माँ ने कुछ नर्म लेकिन उसी स्थायी दूरी भरी आवाज में कहा। दीपा पानी पीने को जलघरा की ओर दौड़ गई। लटाये बालों, मैली फ्रॉक और धूल भरे हाथ-पैरों वाली दीपा जलघरा के मटके से पानी लेकर, ओक बनाकर पी रही है। पायल आँगन लीप रही है। रुक्मिणी दोनों बेटियों को देख एक गहरी सांस छोड़ती है। कम-से-कम बड़ी बेटी संध्या से तो निबटी वो; चार महीने पहले ही उसे ब्याह दिया है। साढ़े पन्द्रह साल की संध्या की उमर अठारह वर्ष लिखवाई सरकारी सम्मेलन वालों के काग़ज़ों में, तो सुभीते से बेटी के हाथ पीले हो भी गये। लल्ला के बापू का तो धेला खर्च नहीं हुआ पूरे ब्याह में, तब भी भले आदमी से ये भी न बना कि उसे एक नई धोती दिलवा दी होती बेटी के ब्याह पर; और उसके मतलबी मायकेवालों से भी इतना न बना कि इस मौके पर तो कन्यादान लेने वाले जोड़े के लिए कपड़े भेजने की रस्म निभा देते। मारे ग्लानि के वो कुछ न बोली। कभी फेरीवाले से, छिपाये पैसों की खरीदी डेढ़ सौ की साड़ी पहनकर ही वो कन्यादान में बैठी जबकि लल्ला के बापू कोरे कुर्ता-पायजामा पहने थे! वो याद करती है, कित्ती सारी चीजें मिली थीं संध्या को सरकार और सेठों की तरफ से दान-धर्म में! सिलाई मशीन, पलंग, अलमारी, प्रेस, साड़ी, चाँदी की पायल, कुकर, रसोई के बर्तन और वो गैस चूल्हा! —गैस चूल्हे की याद आते ही रुक्मिणी का दिल कड़वाहट से भर उठा। विदाई बेला में उसने गैस चूल्हा उठाकर अपने गाँव जाने वाले ट्रैक्टर की ट्राली में रखा ही था कि दुल्हन बनी साढ़े पन्द्रह साल की संध्या ने घूँघट उठाकर भरी सभा में उसे टोक दिया था, "ऐ अम्मा! हमारा गैस चूल्हा वापिस करो।"

ससुराल पक्ष के बूढ़े गद्‌गद् हो उठे; दुल्हन ससुराल में वफ़ादार रहेगी!

रुक्मिणी पर घड़ों पानी पड़ गया था। इस नासपिटी को अपनी ग़रीबन माँ पर इतनी भी दया न आई कि मुफ्त में मिला गैस चूल्हा उसकी तरफ छोड़ दे! पाल-पोस कर इसी दिन के लिए बड़ा किया था बेटी को?? अब कभी न बुलायेगी अपनी देहरी पर! मौरछठ, गौना, पच—कभी एक धेला, एक लत्ता न भेजूँगी किसी मौके-त्यौहार पर तब पता चलेगी मायकेवालों की कीमत! बनी रहे ससुराल की देहरी की पालतू...!

...यों इस घर में ऐसा कुछ कीमती है भी नहीं बेटी की ससुराल भेजने को!

गृहस्थी का पूरा कामकाज सम्हालती रही बड़ी बेटी की याद थकी रुक्मिणी को रह-रहकर आती है। याद आती है तो क्रोध भी आता है। सामने ये जो दो लड़कियाँ हैं, इन्हें देख-देख क्रोध भीतर सदा सुलगा-सा रहता है। बेटियों से नज़र हटाकर वो लल्ला को निहारने लगती है जो इतना दूध पी चुका है कि अब उगल रहा है। दीपा के पैदा होने के बाद, उसने तीन बार, गहने बेचकर पेट की आई बेटियाँ गिरवायीं तब कुलदीपक की सूरत देखने को मिली है। बकती हैं गाँववालियाँ, बका करें कि इस देहरी पर कुल पाँच अजन्मी कन्याओं के वध हुए हैं; इस घर का पानी भी पीना पाप है।

"अम्मा?"

अब किवाड़ की ओट से पायल झाँक रही है, उसी स्थायी दूरी के साथ, दौड़कर भाग सकने लायक।

"आँगन लिप गया?"

"स्कूल का टाइम हो गया है। लौटकर लीप दूँगी।"

"तब नहीं हुआ था स्कूल का टैम जब खेल रही थी हुरदंगिया! मत जा आज स्कूल। पहले पूरा आँगन लीप फिर पानी भरने जा।"

"जाने दो मौड़ी को स्कूल।" घास का गट्ठा आँगन में पटक कर, बूढ़ी गाय को छप्पर तले बांधा; और चबूतरे पर बैठकर सुस्ताने लगा गृहस्वामी।

धनी लौट आये हैं; प्रफुल्लित मन से रुक्मिणी लल्ला को गोद में लिए कोठरी की देहरी पे आ बैठती है। आज तो यह बड़े सबेरे ही गाय लेकर निकल गये थे। गाय चर भी आई है और इतनी घास भी ये ले आये हैं कि आज के दोनों वक्त की सानी बच गई। रुक्मिणी निहाल है। बेटा पैदा करने की अपनी काबलियत पर उसे गर्व महसूस हुआ। लल्ला का मुँह जिस दिन से देखा है, नशे में बुथीं धनी की आँखें खुल गई हैं वर्ना तो पिछले दस सालों से नशा-पत्ती-जुये का वो जीवन जिया कि बीस बीघा जमीन बिक-बिककर अब सात बीघा भर बची है।

"पानी भरने तुम काये नहीं जाओगी आज? मेंहदी रची है पैरों में?"

बीड़ी सुलगाते हुए रामप्रकाश ने कहा। रुक्मिणी ने चुप रहना ठीक समझा। क्या पता मुँह से कोई तेज बात निकल गई तो दो-चार थप्पड़ तो यों ही पड़ जाने हैं।

"इस बीड़ी में साली कुछ मज़ा नहीं। जा, चिलम भरके ला।"

रुक्मिणी झटपट चिलम भरकर देती है।

"मुझे खेत जाना है फिर लल्ला को कौन देखेगा?"

"डाल जाओ अपने सपूत को यहीं चबूतरा पे। पहले पानी भर लाओ फिर खेत चली जाना। मौड़ा की फिकर न करना।"

"आप नाहक परेशान होओगे। और फिर इस मौड़ी को रोज ही स्कूल जाने का क्या चस्का है? घर के चार कामों से जी चुराकर वहाँ लड़कों संग हुड़दंग मचाने के सिवा करती क्या होगी बदमाशिन?"

"वहाँ करती क्या होगी?? कुपढ़! तू क्या जाने कि स्कूल तो रोज ही जाना पड़ता है। मास्टरजी हाजिरी लगाते हैं नहीं तो मार पड़ती है। जा, तू पानी भरके ला! "

स्कूल का मुंह रामप्रकाश ने कभी नही देखा था, लेकिन वह स्कूल जाने के फायदे जानता है—स्कूल में खाना मिलता है। साल में एक जोड़ी यूनीफार्म मिलती है। किताबें मिलती हैं... सालाना वजीफा भी मिलता है। इस साल वजीफे के रुपयों से रामप्रकाश ने अपने लिए कपड़े खरीदे थे।

गगरे लेकर पानी भरने जाती रुक्मिणी को पति ने कहा, "अगली साल मौड़ी का वजीफा मिले तो तुम अपने लिए धोतियों का जोड़ा ले लेना।"

"हओ! खूब पहन लिया वजीफे से धोतियों का जोड़ा! कछू सुख आपकी बड़ी मौड़ी दे गई; ये तो और, ...।"

वो कुड़बुड़ाती चली गई, अपनी पंजर काया से दो बड़े गगरे सम्हाले जिन्हें अभी भरकर लाना है कई-कई बार।

"दीपा, जा भईया को घुमा ला।"

रामप्रकाश ने अपनी उखड़ती साँसों में चिलम का सुट्टा खींचा और चौपाल की तरफ चल निकल गया।

इस पूरे माहौल के बीच पायल ने फटाफट नहाकर यूनीफार्म पहन लीं, दो चोटियाँ बना लीं और किताबों का झोला उठाकर बाहर निकल आई। कच्ची सड़क पर, झोला उठाये वो ऐसे दौड़ती चली जा रही है जैसे परिन्दे उड़ान भरते हैं आसमान में पहुँचने के लिए। स्कूल उसे बहुत अच्छा लगता है। इतना अच्छा कि जब वो स्कूल में नहीं होती, तब भी स्कूल के बारे में ही सोचती रहती है। हर दिन जब भी स्कूल खुलता है, पायल स्कूल जरूर-जरूर आती है; चाहे घर पर मार ही क्यों न खा ले इसके लिए।

—नाखून काटने चाहिए। ...उसके झोले में, पन्नी में लिपटी ब्लैड की आधी पत्ती हमेशा होती है। अपने भी नाखून काटती है और दीपा के भी।

—दाँत सुबह और रात को माँजने चाहिए। ...दो समय दातुन करना उसके लिए खाना खाने जितना ही जरूरी काम है अब।

—रोज नहाना चाहिए। ...पायल अब साल के तीन सौ पैंसठ दिन नहाती है, चाहे ओले ही क्यों न बरस रहे हों आसमान से।

—साफ कपड़े पहनना चाहिये। ...अपने कपड़े धोने के लिए पायल हिंगोठे बीन लाती है पास के जंगल से।

स्कूल में सुनी-सीखी हर बात जैसे उसकी अपनी आत्मा का आदेश होती है उसके लिए।

पेड़ के नीचे कक्षायें लग चुकी हैं। गाँव की प्राथमिक शाला के कुल जमा तीन कमरों में से दो पर सरपंच का कब्जा है। एक में भूसा भरा रहता है, दूसरे का, आगे का दरवाजा चिनाव के एक दरवाजा पीछे बनवा लिया है अपनी बखरी के ऐन सामने। उसमें उनके मवेशी बँधते हैं। स्कूल के अख़्तियार में सिर्फ़ एक कमरा है जिसे हेडमास्टर का ऑफिस, स्कूल की स्टेशनरी रखने का स्टोर, मध्याह्न भोजन का सामान रखने की रसोई और पन्द्रह अगस्त, छब्बीस जनवरी पर फहराने वाला झंडा रखने की जगह—हर संभव तरह से उपयोग किया जाता है। कक्षायें पेड़ के नीचे लगती हैं जहाँ कुत्ते और आवारा मवेशी भी फिरते रहते हैं। कक्षा के समय के अलावा छात्र-छात्रायें इस मैदान से गोबर इकट्ठा करते देखे जा सकते हैं जिसके लिए अलग से पन्नियाँ वे अपने बस्तों के साथ लाते हैं।

पेड़ के नीचे कक्षा लगी है। पायल चुपके से आकर टाटपट्टी के अंतिम सिरे पर बैठ गई है। ब्लैक बोर्ड पर सवाल लिखते शिक्षक ने उसे देख लिया; पर बुलाकर सज़ा नहीं दी है। शिक्षक एक निराश शिक्षाकर्मी है

जो शहर से, बस पकड़ कर, साइकिल चलाकर हर दिन गाँव आता है स्कूल में पढ़ाने। उच्च शिक्षित होने के बाद भी उसे यही नौकरी मिल सकी है जो न स्थायी है न वेतन पर्याप्त है। ...पर इस नौकरी के भी उम्मीदवार हज़ारों थे। यहाँ तो सरकारी चपरासी की नौकरी के लिए भी पीएचडी होल्डर से लेकर एमबीए तक मिल जाते हैं। शिक्षक बिला नागा पढ़ाने आता है।

ब्लैक बोर्ड पर सवाल लिखा जा चुका है। बच्चे अपनी कॉपियों पर सवाल हल कर उठे हैं। वो वहाँ, सबसे पीछे क्या कर रही है? शिक्षक को अब अपनी इस छात्रा पर गुस्सा आया। एक तो देर से आई है फिर धूल में खेल रही है! पूरी कक्षा सवाल हल करने में व्यस्त है। सर हरी संटी हाथ में लिए चुपचाप टहलते हुए पीछे तक आये हैं।

—ये क्या??

सवाल का रफ़ कार्य पायल एक सींक से धूल पर लिखकर कर रही है। काग़ज़ और पेन-पेंसिल उसके लिए कितने दुर्लभ हैं, सर जानते हैं। उन्होंने अक्सर ही उसे रेस्ट टाइम में स्कूल परिसर में काग़ज़ के गिरे टुकड़े बीनते देखा है। दूसरे बच्चों की फेंकी या गिरी स्लेट, पेंसिल के बारीक टुकड़े भी वो बीन लेती है। स्लेट पर ही वो हमेशा रफ़ कार्य करती है कक्षा में। आज शायद वो भी नहीं है इसके पास।

सर को संटी लिए सामने घूरते देख पायल चुपचाप खड़ी हो गई। पूरी कक्षा उसकी ओर देखने लगी है। अपनी ग़रीबी का उसे बखूबी एहसास है। उसका सिर झुक गया है।

"हूँ। जवाब तो एकदम सही है।"

सर ने हरी संटी से धूल पर हल सवाल के नीचे राइट का निशान बना दिया।

"शाबास! ये लो तुम्हारा इनाम!"

ज़ेब के दोनों पेन निकाल कर सर ने उसकी ओर बढ़ा दिये।

मुख्य परीक्षायें सिर पर हैं। पायल जब देखो तब पढ़ती ही रहती है। पढ़ती नहीं जब, तब भी मन ही मन पढ़ती रहती है। घर के तमाम काम उसके हाथों बिगड़ते हैं और वो अम्मा से कभी गाली, कभी मार खाती ही रहती है इन दिनों; लेकिन पढ़ाई में उसका ध्यान अटल है। उसके भीतरी अंधेरों में जैसे कोई ज्योति जगमगा रही है। अंधेरा ज्योति पर एकाग्र; ज्योति अंधेरे पर एकाग्र... पढ़ाई के लिए पायल; पायल के लिए पढ़ाई!

आँगन में लालटेन जल रही है। झटपट खाना खाकर पायल फिर लालटेन के पास आ बैठी है और किताब-कापियाँ खोल लीं। सब काम निबटाकर, सीढ़ियाँ चढ़कर छत पर बने कच्चे कोठे में सोने जाने से पहले अम्मा ने रुककर उससे पूछा,

"बर्तन माँजकर रख दिये पायल?"

"कल परीक्षा है।" किताब से बिना सिर उठाये उसने जवाब दिया।

लड़की की मुँहजोरी रुक्मिणी को असहनीय है; पर समय को देख, वो खून का घूँट पीकर रह गई। कोटे में जाते वो अभी हाल ही तो कहकर गये हैं कि जल्दी आना। लल्ला को भी उन्होंने सुला दिया होगा। अब अगर ऐसे समय में इसे पीटेगी तो इस कलमुंही की चीख-पुकार से कहीं वे नाराज़ न हो जायें! पड़ोसी सुनेंगे तो फिर बुराईयाँ होंगी उसकी कल कुएँ पर।

दाँत मिसमिसाती रुक्मिणी हाथ में रस्सी का माँजन लिए राख से बर्तन घिसने बैठ गई।

"पढ़के बन जा तू कलेक्टरनी!"

"देखना अम्मा, कलेक्टरनी ही बनूँगी।"

"मुँह की बात छीनती है छिनाल! लड़की जात को ऐसी मुँहजोरी शोभा नहीं देती। लिख ले आज, मेरी बात अगर झूठी पड़ जाये तो! तेरा धनी जूते मारेगा तुझे जूते!"

"अम्मा, तुम पति को धनी क्यों कहती हो? धनी तो जानवर के मालिक को कहते हैं ना?"

बेटी के सवाल पर अवाक् रह गई रुक्मिणी। सूझा ही नहीं, क्या जवाब दे। वो जल्दी-जल्दी बर्तन धोकर ऊपर कोठे में जाना चाहती है। कहीं वे सो न जाये।

"अम्मा?" अक्सर की तरह आज भी सीढ़ियाँ चढ़ती माँ की धोती की कोर पकड़ ली नन्हीं दीपा ने।

"अम्माँ, मैं तुम्हारे पास सोऊँगी। बस आज अम्मा!"

माँ ने देखी, उसके स्वर की ही नहीं, आँखों की भी कातर याचना। ऊपर से पति के खांसने का स्वर सुनाई दे रहा है। ये अंतिम संकेत है। रुक्मिणी ने नहीं मुट्ठी की पकड़ से अपनी धोती का किनारा झटक लिया; और किसी पुर्जे की तरह सीढ़ियाँ चढ़ती चली गई।

"जीजी, कोठरी में चलो। अकेले डर लगता है।"

"तू यहीं ले आ अपनी कथरी। यहीं सो जा।" किताब से नज़र नहीं हटी उसकी।

दीपा अपनी कथरी और तकिया घसीटती ले आई आँगन में।

"जीजी!"

"अब क्या है?"

"नींद नहीं आती!"

"तो पढ़ ले।"

स्लेट पर वर्णमाला लिखने को दे दी दस साल की गुरू बहन ने, साढ़े चार साल की शिष्या बहन को। कुछ देर लिखती, कुछ देर चित्र बनाती दीपा जीजी की गोद में सिर रखकर सो गई। पायल अपनी पढ़ाई करती, उसे थपकी देती जाती है। ...बहन नही, आधी माँ है वो उसकी!

रात शायद आधी पार हो ढल रही है। आसमान का अनंत अंधकार देख रहा है, एक गाँव के, एक आँगन में रोशनी है। दीपशिखा-सी झिलमिल एक लड़की पढ़ रही है... पढ़ रही है...

रुक्मिणी लल्ला की मालिश कर उठी है अब उसके लिए दूध बनाना है। स्कूल से लौटी पायल को आँगन में पैर रखते देख ही उसने कोठरी से चिल्लाकर कहा,

"जा, गाय को चरा ला। और हैंडपंप से पानी पिलाती ले जाना याद से।"

"अम्मा!"

पायल ने आज आँगन में ही खड़े होकर, कोठरी के किवाड़ से झाँक कर बात नहीं की है। डर की स्थायी दूरी को तय करती वो, भीतर आकर खड़ी हो गई है अम्मा के ठीक सामने।

"क्या है?"

'ट्यूशन पढ़ाने का काम मिल गया वहीं तुरंत! स्कूल के बाद, पीछे सरपंच जी के घर एक घंटा ट्यूशन पढ़ाना है उनके नाती को!"

'हैं?? तुझे कैसे...??"

"मेरा पाँचवीं का रिजल्ट खुल गया है—पूरे स्कूल में प्रथम आई हूँ।"

रुक्मिणी की हथेली पर गुड़ की डली है; और वो सोच रही है—क्यों न इसे बेटी को दे दूँ.....

मैं बच्चा बन जाता हूँ...

गिरीश पंकज

जब-जब माँ मुस्काती है तो
मैं बच्चा बन जाता हूँ।
माँ की ममता मिल जाती है,
मैं अच्छा बन जाता हूँ॥

मुझे नहीं कुछ और चाहिए,
मुझको माँ का प्यार मिले,
इसी बहाने मुझको अपना
इक पावन संसार मिले...
माँ का हाथ रहे सिर पर तो,
वीर शिवा बन जाता हूँ॥

माँ बिन लोग अभागे रहते,
उसका दूध न पी पाते।
गौ माँ तब आती है सम्मुख,
जैसे तैसे जी जाते।
माँ का हो आशीष तो,
वीरो-सा बंदा बन जाता हूँ॥

माँ की गाली मत देना तुम
ये उसका अपमान है
फिर भी जो देता है गाली
मनुज नहीं शैतान है।
माँ का हो अपमान तो
सीधा हूँ, टेढ़ा बन जाता हूँ॥

पूत कपूत भले बन जाये
माता तो बस माता है
एक पुत्र ही नहीं समूचे
घर की भाग्य विधाता है॥

माँ की सेवा करके मैं तो
भक्त बड़ा बन जाता हूँ॥

आओ मिल कर हम सब
अपनी माता का सम्मान करें
धरती, गैया, गंगा भी हैं
इन पर हम अभिमान करें।
इन से जुड़ कर पुत्र देश का,
मैं सच्चा बन जाता हूँ॥
जब-जब माँ मुस्काती है
तो मैं बच्चा बन जाता हूँ॥

सम्पर्क: जी-31, न्यूज पंचशील नगर,
रायपुर-6 (छत्तीसगढ़)

हाड़ मांस की गुड़िया और पुरुष

स्वदेश भारती

"...पीटर जैसे मर्दों को समाज ही पैदा करता है। जिस दिन से मारिया ने इस शादी को स्वीकार किया है कोई ऐसा दिन नहीं गया जिस दिन कोई अशान्ति न हुई हो। पीटर की औरतजात के बारे में सोच बहुत ही छोटी किस्म की रही जिनके बीच मारिया रोज तिलमिला कर रह जाती।..."

सम्पर्क : उत्तरायण, 331, पशुपति भट्टाचार्य रोड, कोलकाता-700 041
फोन: 033-2405 7127 मोबाइल: 9903635210
ईमेल: editor@rashtrabha.com
ब्लाग: bswadesh.blogspot.com

मारिया तेरिवूकोवा गोवा के बम्बोलिन एअरपोर्ट पर रात 3 बजे उतरते ही चिन्ता में पड़ गई—अब वह कहाँ जाएगी? मास्को से मुंबई फिर एअर इंडिया की फ्लाइट से गोवा पहुँचकर उसे एक ओर जहां प्रसन्नता हुई, वहीं इसी उधेड़बुन से अनिश्चय का भाव उसके भीतर अंकुरित होने लगा कि वह गोवा में कहां रहेगी? किस प्रकार अपने जीवन को नए सिरे से जिएगी। गैरी निकोलस से छुटकारा तो मिल गया। यही सबसे बड़ा परिवर्तन जीवन में मनोवांछित सुख और शान्ति की कामना को पूरा करेगा। अब मैं बिलकुल स्वतंत्र हूँ। एक स्वाधीन और स्वच्छन्द जीवन का प्रारम्भ होगा। किन्तु गोवा में वह कहां जाएगी, किस तरह अपना जीवनयापन करेगी। एक विदेशी लड़की दूसरे देश में कैसे अपने को स्थापित कर सकेगी। उसके भीतर एक जोश तो है ही। तीन-तीन शादियां टूटने के बाद भी प्रेम-पिपासा गई नहीं। सैंतीस वर्षीय मारिया तेरिवूकोवा लम्बी छरहरी, गोरी चिट्टी तेज पाँवों से चलने वाली सुन्दर स्मार्ट लड़की है। बड़ी बड़ी कजरारी आंखें, जिनसे कितने मर्दों को उसने बेहोश किया है, घायल किया है। मारिया लेनिनग्राड में एक फैशन की दुकान में मॉडल का काम करती थी। लड़कियों के नए-नए कपड़े डिजाइन करती और लेनिनग्राड तथा लेनिनग्राड के बाहर के शहरों में आयोजित फैशन-शो में भाग लेती थी। जब मारिया बीस साल की थी और मास्को विश्वविद्यालय से अपनी बीए (समाजशास्त्र) की डिग्री लेकर निकली थी, कौन जानता था कि मारिया एक दिन फैशन की दुनिया में राज करेगी और फ्रांस, इटली, बेलजियम, फ्रैंकफर्ट, लंडन, न्यूयार्क, बीजिंग, टोकियो, मुंबई आदि बड़े शहरों के पांच सितारा होटलों में आयोजित फैशन परेडों में वह पहले नम्बर पर आएगी। उसे पाने के लिए फैशन-परेडों में भाग लेने वाले लड़कों में होड़ लगी थी। आखिरकार दमित्री तुर्गनेव नाम के लड़के ने बाजी मार ली और मारिया की पहली शादी उससे मास्को के पांच सितारा होटल 'हेवन क्लार्क' में बड़े ठाठबाट से हुई जिसमें रूस की नामी हस्तियां, कलाकार, राजनीतिज्ञ वर-वधू को आशीर्वाद देने के लिए काकटेल डिनर पार्टी में उपस्थित थे। सब कुछ ठीक ठाक चल रहा था परन्तु अचानक एक रात्र दमित्री अपने दोस्तों के साथ खूब शराब पीकर रात के 3 बजे घर लौटा था। मारिया रात भर उसकी प्रतीक्षा में डिनर टेबिल पर बैठी रही। कई बार रोई भी थी। दमित्री को बार-बार फोन करती रही परन्तु दमित्री की नशे में बहकी-बहकी आवाजें सुनकर गुस्से से कुढ़ती रही। आह, कैसा पति मिला है। मारिया ने कई बार जेसस से प्रार्थना भी की थी। रोते-रोते उसकी आंखें लाल हो गई थीं। उसने मन में निश्चय कर लिया कि इस तरह एक नशाखोर पति के साथ जीवन नहीं चल सकता जो उसके पैसे को जादूगर की तरह हजम करता जा रहा है। उसकी दोस्त मरीना रतिनोवा ने कई

बार उसे आगाह भी किया कि दमित्री की हरकतें ठीक करे। वह रात रात भर जुए और दारू में पैसा गंवा रहा है। उसे नाइट क्लब की कई लड़कियों के साथ कई जगहों पर देखा गया है। वह मारिया से पैसों को लेकर झगड़ा करता, मारपीट करता। मारिया ने पहली शादी के बन्धन स्वयं ही तोड़ दिए। मास्को से अपने घर लेनिनग्राद चली आई। मां-बाप को गुजरे सात वर्ष हो चुके थे। तीन कमरे वाले विला में उसकी विधवा बुआ अन्ना अकेली ही रहती थी। वह घर लौटकर अन्ना के सीने में चिपक कर सुबुक-सुबुक कर अपनी आपबीती सुना कर बहुत देर तक रोती रही। बुआ की आंखें भी नम हो गई थी। अन्ना धीरज बंधाते हुए उसे ज़िन्दगी के आगे का सफर शान से जीने का हौसला दे रही थी। लगभग चार महीने बाद मारिया ने शादी टूटने के आघात से अपने को मुक्त कर नई हवा में सांस लिया था कि अब वह नए सिरे से माडलिंग करेगी। वह पहले वाली फैशन की दुकान पर लगभग 2 साल बाद गई तो देखा कि वहां इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का शोरूम लगा है। "आह! क्या से क्या हो जाता है।" मारिया के मुंह से निकला था। सामने एक फैशनेबुल हसीना को देखकर पावेल मिस्त्री दुकान का मालिक हैरानी से झुककर अदब से बोला था—"हां मेम साहब, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ।" "जी, यहाँ पहले 'फैशन अगस्ता' का शोरूम हुआ करता था?" "अब नहीं है।" "क्या बता सकते हैं कि यहाँ से किस जगह चला गया?"

पावेल ने बताया—"फैशन अगस्ता के मालिक का हठात दिल के दौरे से निधन हो गया। उसकी कोई संतान नहीं थी। कुँवारा ही बेचारा ईश्वर को प्यारा हो गया। दुकान के कर्मचारियों ने उसका क्रिया कर्म किया और दुकान 15 हजार रूबल्स में मैंने खरीद ली। अब जैसा आप देख रही हैं, मैम!"

"जी हां, वह तो है। मुझे अफसोस है कि एक अच्छे आदमी की मृत्यु हो गई है।"

मारिया तेज कदमों में शोरूम से निकल कर लेनिनग्राद की सड़कों पर घूमती रही और दोपहर बाद घर लौटी तो देखा बुआ चिन्ताग्रस्त पोर्टिको में खड़ी उसी की प्रतीक्षा कर रही है—"मारिया, बेटा तुम कहां घूम रही हो। मुझे बताया नहीं कि कब लौटोगी। लंच का समय भी निकल गया। मैं तुम्हारी राह देख रही हूँ। चलो भीतर चलो। मैं खाना गर्म करती हूँ।"

मारिया दुखी रहने लगी। फैशन की दुनिया से विरक्ति का भाव मन में भर गया। परन्तु दूसरा कोई काम भी तो नहीं कर सकती। देर सबेरे विस्तर से उठना, मुंह हाथ धोकर नाश्ता बनाना, बुआ के साथ नाश्ता करना, लेनिनग्राद पुस्तकालय जाना, वहां नए फैशन और समाजवाद की पुस्तकें, पत्रिकाएं पढ़ना, दोपहर तक वापस घर लौटना, लंच की तैयारी करना, बुआ के साथ लंच लेना, शाम तक सोना, 7 बजे शाम उठकर समोवार से कॉफी बनाकर, नमकीन के साथ पीना, टीवी पर कोई फिल्म देखना और साढ़े आठ बजे सूप, अंडे की जर्दी, चावल, मटन शोरबा के साथ डिनर करना। कभी-कभी शैम्पन या वोदका के एक दो पेग ले लेना। रात में टीवी पर हल्का, मनोरंजक नाटक देखना या जार म्यूजिक सुनना अथवा पुस्तकालय से लाई गई पुस्तक पढ़ना और रात 12 बजे तक सो जाना। इस दिनचर्चा से मारिया को कोफ्त होती। अन्ना सलाह देती—"बेटी, काम में मन लगाओ।"

अन्ना बुआ सत्तर साल की हो गई थीं। उनसे घर का काम होता नहीं। एक तरह से अब मारिया उनकी संरक्षिता थी। चौका बर्तन, किचेन और घर की सफाई, बुआ का, अपना कपड़ा धोकर सुखाना, बाजार से खाने-पीने की चीजें लाना, नाश्ता, लंच, डिनर का इंतजाम करना, काफी बनाना, बुआ तो सबेरे से शाम तक कई बार काली काफी पीती थी। सबेरे जागते ही ग्रीन टी चाहिए। मारिया अब पूरी तरह बुआ के जीवन के साथ घुल मिल गई थी। बीच-बीच में बुआ का चालीस साल का विधुर भाई पीटर, बुआ को देखने, हालचाल पूछने के लिए आता था। लेकिन जब से मारिया आई है, उसका आना कुछ अधिक हो गया। पहले चाय, काफी तक ही सीमित था, अब तो लंच या डिनर के समय वह उपस्थित हो जाता। बुआ के लिए फल, केले, अनानास, सेब और मिठाइयां, चाकलेट लाता। बुआ तो एक बहाना था वास्तव में वह मारिया के लिए ही ये सारी चीजें लाता था।

मारिया इस बात को समझ गई थी। जैसा कि उसका पहला पति अक्सर कहा करता—"औरत को नए नए उपहारों, आभूषणों, कपड़ों से बड़ी आसानी के साथ ठगा जा सकता है।" पीटर भी उसी लाइन पर था। एक दिन पीटर डिनर के समय पिजा, फल, बहुत तरह के मेवे और गहरे भूरे रंग की जरसी, तथा नीले रंग का फर लगा गाउन लेकर आया। जरसी मारिया के लिए तथा गाउन बुआ के लिए था। आते ही दोनों को उपहार थमा दिया और डाइनिंग टेबुल पर बैठ गया। फिर उसने मारिया से पूछा—"मैम, कुछ ड्रिंक करेंगी?" मारिया समझ गई पीटर की नीयत क्या है? उसने ना में सिर हिला दिया। "कोई बात नहीं मैम थोड़ी से शेम्पन, बस, साथ देने के लिए और बुआ जी थोड़ी सी आप भी ले लें। आप लोगों के लिए पिजा 'प्रोटिरिया रेस्ट्रां' से बनवाकर लाया हूँ। आज मेरा जन्म दिन है। मैंने सोचा तुम्हारे और बुआ के साथ 40वां जन्म दिन मनाऊंगा।" मारिया पीटर के अनुरोध को टाल नहीं सकी। बुआ बिस्तर से उठकर डाइनिंग टेबुल पर आ गई और नए गाउन को खोलकर देखने लगीं फिर बोली—"बहुत सुन्दर है पीटर, इतना कीमती उपहार लाने की क्या जरूरत थी।" मारिया की मोतियों लगी जरसी को खोलकर देखते ही खुशी से उछल पड़ी थी—"आह बहुत सुन्दर, यह मारिया पर खूब खिलेगा। मारिया जरा देखो, पीटर का उपहार।" बुआ की बातों से पीटर को बड़ा अच्छा लगा लेकिन मारिया अपनी जगह पर बैठी रही। बैठे-बैठे ही जरसी को बुआ के हाथों से लेकर देखा और एक तरफ रख दिया। अब तक तीन गिलासों में शैम्पेन बोतल से उंडेल कर पीटर ने टेबल पर गिलास बुआजी और मारिया के सामने रख दिए।

फिर स्वयं ही बोल उठा—"हैपी बर्थ डे, चियर्स टु माई सेल्फ एण्ड एवरी बाडी हेयर।" बुआ और मारिया ने कोरस गाया—"हैपी बर्थडे टू यू। तुम जियो हजारों साल, साल के दिन हों कई हजार"। उस रात पीटर वोदका तथा शैम्पेन की सारी दारु पी गया। खाया बहुत ही कम और खाता भी कैसे। वह नशे मे धुत था। टीवी पर जार्जियन संगीत स्वर चल रहा था। एक गाने की ध्वनि पर खूब नाचा। मारिया को भी शैम्पेन कुछ अधिक चढ़ गई थी। उसने चार पेग पी ली थी। बुआ तो दो पेग में ही सोने लगी थी। बस जरा सा पिजा खाया था। मारिया भूखी थी। उसने जरूरत से ज्यादा खा लिया। वह उठकर पीटर के साथ नाचने लगी। पीटर होश में नहीं था, कई बार मारिया को बाहों में लेकर करीब सटाना चाहा मगर मारिया ने बचने में होशियारी दिखाई। किन्तु नारी पुरुष के जहर से बच नहीं पाती।

बुआ ने एक दिन मारिया का अच्छा मूड भांपते हुए कह ही दिया—"बिटिया ज़िन्दग़ी में एक अकेली जवान औरत का समाज की ज़हरीली नजरों से बचना मुश्किल का काम होता है। हजार निगाहें। तरह-तरह के कामना-तीर छोड़ती रहती हैं। ऐसे में औरत कितने दिनों तक भला बच पाएगी। मैंने सत्तर वर्षों के जीवन में बहुत कुछ देखा और फिर नारी की पीड़ा बड़ी तीखी होती है। वह अन्तराल को छलनी कर देती है, जो उसकी सहायता के लिए आता है उसमें भी सहायता करने वाले का कोई न कोई स्वार्थ छिपा होता है। देखो बिटिया पीटर नेक लड़का है तुम चाहो तो शादी कर लो। मैं चाहूँगी कि तुम्हारी जिन्दगी हंसी खुशी बीते। अन्ततः पीटर की लगातार कोशिशों ने गुल खिला ही दिया। दोनों एक दिन पीटर के पैतृक गांव गोसवर्ग, पीटर्सवर्ग की सम्भ्रान्त चर्च में दूल्हा-दुल्हन के भेष में माता मरियम के सामने लगभग सौ सम्मानित व्यक्तियों की तालियों की गड़गड़ाहट के बीच दाम्पत्य जीवन को स्वीकार कर रहे थे। उस रात पवित्र चर्च की लान में एक भव्य समारोह का आयोजन हुआ। पूरे लेनिनग्राड में मीडिया ने इस शादी की भरपूर कवरेज की।

मारिया के प्रशंसकों ने भी एक बड़ा सा भव्य समारोह रखा था। उस समारोह की अध्यक्षता लेनिनग्राड की मेयर मैडम नवरतिलोवा ने की थी। शादी से पीटर बहुत खुश था। महीने भर तक छोटे समारोह होते रहे। बस दिन भर सोना, मारिया को प्रेम करने के लिए तंग करना और रात भर शराब पीकर बहकना, नाइट क्लबों के चक्कर लगाना पीटर की आदत बन गई। आखिरकार मारिया पीटर की आदतों से तंग आ गई। बुआ ने पीटर को बहुत समझाया। "बेटा मारिया जैसी शोहरतमंद लड़की से शादी करके तुम भाग्यशाली हो गए हो। अपनी आदतों को सुधारो। तुम्हारे कारण मारिया दुखी रहने लगी है।" परन्तु पीटर की आदतों में कमी नहीं आई। एक दिन मारिया ने कह ही दिया—"पीटर आखिर तुम क्या चाहते हो। मुझे या अपनी गन्दी आदतें।" पहले पीटर चुप रहा फिर जोरों से चीख उठा—"तुम्हारे कारण मैं बरबाद हो गया। नौकरी से हटा दिया गया। अब जहां भी नई नौकरी के लिए जाता हूँ, लोग हंसते हैं—फब्तियां कसते हैं—इतनी बड़ी स्टार माडल का पति नौकरी मांगने आया है। मैं तुम्हारे पैसे पर कितने दिन जिऊंगा।"

मारिया चीखते हुए बोली थी—"तो मैं क्या करूं। तुम्हारे पास ढंग की कोई पढ़ाई-लिखाई या तकनीकी शिक्षा की डिग्री नहीं है। मांस-पेशियां दिखाने से कोई नौकरी नहीं मिलती फिर आजकल रूस सामाजिक परिवर्तन से गुजर रहा है। राजनैतिक और आर्थिक स्थितियां बदल गई हैं। बदल क्या गई हैं, बदतर हो गई हैं। सामाजिक राजनैतिक परिवर्तन के समय इतिहास करवटें लेता है। किसी भी समाजवाद का आधार उसका आर्थिक ढांचा होता है। पैसा है तो सब कुछ है, पैसा नहीं है तो कुछ भी नहीं है। पैसे से कुछ भी खरीदा जा सकता है। जर, जोरू, जमीन, व्यवसाय, बड़े-बड़े औद्योगिक संस्थान, बड़े बड़े अरबों, खरबों रुपयों के व्यवसाय। सत्ता में हिस्सेदारी या यों कहें कि सत्ता का मूल आधार पैसा है। फिर नारी की क्या हिम्मत, क्या कदर, क्या इज्जत। वह तो मर्दों की वासना की गुड़िया मात्र होती है। दिखावा है। औरत की आजादी, स्वच्छन्दता, आत्मसम्मान।"

पीटर जैसे मर्दों को समाज ही पैदा करता है। जिस दिन से मारिया ने इस शादी को स्वीकार किया है कोई ऐसा दिन नहीं गया जिस दिन कोई अशान्ति न हुई हो। पीटर की औरतजात के बारे में सोच बहुत ही छोटी किस्म की रही जिसके बीच मारिया रोज तिलमिला कर रह जाती।

वह मारिया की शादी की पहली वार्षिकी थी। एक दिन पहले पीटर ने ही प्रस्ताव दिया था कि पहली वार्षिकी धूमधाम से मनाई जाएगी। इसके लिए उसने शानदार होटल न्यू प्लाजा में पार्टी रखी थी। गणमान्य मेहमानों का मस्ती भरा खाना, पीना, नृत्य रात भर चलता रहा। उस रात पीटर ने अपने दोस्तों के साथ काफी शराब पी ली थी और अपने आपे में नहीं था। वह झूम-झूमकर दूसरों को वोदका बांट रहा था। "पियो मेरे दोस्तों, अजीज़ो पियो और आनन्द से जिओ।" इस हरकत में उसने बहुत सारे प्याले, बोतलें तोड़ दिए थे। मारिया कुछ देर तक यह तमाशा देखती रही, सहन करती रही फिर पांव पटकती हुई बुआ को लेकर पार्टी से चली गई थी। होटल की कार ने उन दोनों को घर छोड़ा था। मारिया बेहद दुखी थी और ईश्वर को कोस रही थी। "हे ईश्वर ऐसे दिन क्यों दिखा रहा है। आखिर मेरा क्या कसूर है, क्या पाप है कि जिन्दगी बदतर हो गई है। आह। हे भगवान, जेसस दयालु, हे माता मरियम तुम मेरा इस नर्क से उद्धार करो।" रोते-रोते पीटर की प्रतीक्षा करते वह पोर्टिको की बेंत की कुर्सी पर सो गई थी। पीटर शराब के नशे में धुत लड़खड़ाता हुआ किसी तरह टैक्सी से नीचे उतर नहीं पा रहा था। ड्राइवर ने उतारा था। उसने जेब से पांच रुबल का नोट निकाल कर ड्राइवर की ओर बढ़ा दिया। नोट ड्राइवर हाथ में थामता उससे पहले नीचे गिर गया। पीटर के मुंह से बुदबुदाते हुए यह शब्द निकला—बे... श... ऊ... र। ड्राइवर ने पीटर को सड़क के किनारे रखे कांटेदार लोहे के तारों के ऊपर

लड़खड़ाकर गिरने से बचा लिया। "सावधानी से घर जाओ। हां सीधे घर का गेट है। सर, अपने को सम्भालो।" ड्राइवर कुछ ज्यादा जोरों से चिल्लाया था। शायद सोचा हो कि पोर्टिकों में चेअर पर लुढ़की औरत उसकी आवाज सुनकर आए और नशे में मदहोश आदमी को सहारा देकर घर के भीतर ले जाए। ड्राइवर का अन्दाजा ठीक निकला। मारिया ने अचकचा कर आंखें खोली। देखा पीटर एक एक पांव नाप जोखकर रखता, संभलता, लड़खड़ाता घर की ओर धीरे-धीरे बढ़ रहा है। वह कुर्सी से उठी और जाकर पीटर को थाम लिया। पीटर ने एक भद्दी सी गाली दी। "हट जा। भाग। मुझे हाथ मत लगा। तुम्हारे कारण ही मैं आज ऐसा हूँ। यू विच। मुझे मत पकड़।" मारिया बोलती रही—"पीटर होश में आओ" परन्तु पीटर बड़बड़ाता जा रहा था। मारिया बड़ी संजीदगी से दरवाजे के भीतर लाकर दीवान पर बैठाने की कोशिश करती, इसके पहले ही पीटर अंकड़ू-बंकड़ू पसर गया। मारिया ने जूते निकाले जो कीचड़ से सने हुए थे और बदबू दे रहे थे। मारिया ने निर्णय लिया कि इस तरह की गलीज जिन्दगी से छुटकारा पाना ही श्रेयस्कर है। वह काफी देर तक बैठी सोचती रही। अब कैसे क्या करे। डिनर टेबुल सजी पड़ी थी। मारिया पीटर के लिए इन्तजार कर रही थी। अब तो रात के तीन बजे हैं। उसने ममतापूर्वक डिनर टेबुल पर करीने से सजी प्लेटों, छुरी कांटों की ओर देखा और जाकर बिस्तर पर मुंह के बल लेट गई। मुंह से निकला—"आह जेसस मुझ पर कृपा करें।" सर्दी बढ़ गई थी। बाहर बर्फ पड़ रही थी। वह उठी और आलमारी से मोटा ऊनी कम्बल निकाल कर पीटर को ओढ़ा दिया। कमरे की मद्धिम रोशनी में पीटर दीवान पर पड़ा खर्राटे ले रहा था। मारिया को उस पर दया आ गई। कुछ सेकन्ड तक खड़ी उसे निहारती रही फिर आकर बिस्तर पर लेट गई।

"एयर इंडिया की फ्लाइट एआई 364 फ्रैन्कफर्ट, लंदन जाने के लिए तैयार है यात्रीगण कृपया ध्यान दें। गेट नं. 21 से प्लेन में बैठने की कृपा करें।" मारिया चौंक गई थी। उसने घड़ी देखी—ओह माई गाड सबेरे के साढ़े चार बज रहे थे यानी पूरे एक घंटा 20 मिनट से वह अपने अतीत को कुरेदती बैठी रही है। इस बीच दो बार एअरपोर्ट का सुरक्षाकर्मी उससे पूछ चुका था "मैम, मैं आपकी कोई मदद कर सकता हूँ क्या?" "जी, धन्यवाद" कहकर वह बैठी रही क्योंकि प्लेन से उतरने के बाद चेकिंग काउन्टर पर उससे कह दिया गया था फारेन माइग्रेशन काउन्टर पर चेकिंग करा लो परन्तु उस समय काउन्टर बन्द था। वह कुछ देर तक काउन्टर पर प्रतीक्षा करती रही फिर जाकर सोफे पर बैठ गई। साढ़े चार बजे काउन्टर खुला। एक गोआनी लड़की जमुआई लेती काउन्टर पर खड़ी थी। मारिया उठ कर काउन्टर तक गई। "हेलो मैडम, मैं मास्को की फ्लाइट एआई 203 से आई हूँ। यह रहा मेरा पासपोर्ट तथा टेबुल पेपर्स।" काउन्टर आफिसर के हाथों सौंप कर वह खड़ी रही।

आफिसर ने मारिया के पेपर्स देखने के बाद रजिस्टर में खानापूर्ति की और पेपर और पासपोर्ट पर रबड़ स्टैम्प लगा कर हस्ताक्षर किया और मारिया को वापसी देती हुई बोली—"मैडम आप कृपया थोड़ी देर प्रतीक्षा करें। फोरन टूरिस्ट बस साढ़े 5 बजे आएगी। उससे आप गोवा में कहीं भी जा सकती हैं।" "जी धन्यवाद।" मारिया ने कहा और जाकर उसी सोफे पर बैठ गई। बैग खोला। साबुन और तौलिया निकाला। माइग्रेशन आफिसर के पास गई—"मैडम मेरा सामान देखने की कृपा करें मैं बाथरूम जाना चाहती हूँ।" "ठीक है मैम—इधर रख दीजिए। जी हां, वहीं पर।" सामान रखकर मारिया बाथरूम की तरफ बढ़ गई।

एक जोरों की आवाज हुई थी, सर्जी बरान्निकोव बाथरूम में चीख-चीखकर गालियां दे रहा था। रात देर से नाइट क्लब से नशे में धुत्त लौटा था। उसके दोस्तों ने नए साल की सन्ध्या पर पार्टी रखी थी। मारिया भी पार्टी में आमंत्रित थी परन्तु उसके दिमाग में कई दिनों से उधेड़बुन चल रही थी। तीसरी शादी भी टूटने के कगार पर थी। वह बेहद दुखी और चिन्तित थी। बुआ को गुजरे माह भर हुआ था। सर्जी बरान्निकोव सेना का मेजर और लेनिन गार्ड डिफेन्स कमीशन का हेड था। उसकी भेंट मारिया से एक फैशन परेड के समय हुई। बस एक मुलाकात में सर्जी अपना दिल मारिया के सामने फेंक चुका था। उसके पद और सम्मान का ध्यान रखते हुए मारिया ने शादी के लिए हां कर लिया परन्तु मात्र 2 महीने में ही मारिया समझ गई कि सर्जी पति-पत्नी के रिश्ते को जीना नहीं चाहता। उसकी इच्छाओं की इज्जत नहीं करता। बात-बात में नोंक-झोंक, तीखी बातें, गालियां। एक बार तो मेजर ने गुस्से से उबलते हुए सेना के हन्टर से मारिया को पीट भी दिया था। मारिया रात भर रोती रही, करवटें बदलती रही। क्या तकदीर पाई है मारिया। सोचा था तीसरी शादी सुखमय बीतेगी परन्तु उसका सारा सपना टूट गया। रात भर वह कई बार निर्णय लेती रही—अब बहुत हो चुका है। मैं इस तरह अपमानित जीवन जीना नहीं चाहती। आखिरकार उसने दूसरे दिन मेजर से कह दिया—अब हमें एक-दूसरे से अलग हो जाना चाहिए। मेजर को बहुत बड़ा आघात लगा। उसने मारिया को समझाया कि सेना में और लेनिनगार्ड के संभ्रान्त लोगों के बीच उसकी खिल्ली उड़ेगी। मारिया ने कहा—सेना और लेनिनगार्ड के संभ्रान्त लोगों ने तुम्हें भद्दी गालियां देने और मारने-पीटने के लिए नहीं कहा! सर्जी अब तुम अपना रास्ता लो। मैं स्वतंत्र रूप से जीना चाहती हूँ। मैं एक सम्भ्रान्त स्टार हूँ, रूस के भीतर और बाहर मेरा नाम है। मेरी चर्चा होती है और तुम सेना के एक सिपाही मात्र हो। तुम्हें स्थानीय लोगों में ही सम्मान प्राप्त है। और कौन जानता है मेजर सर्जी वरान्निकोव को। कृपया मेरे जीवन से हट जाओ। मैं हाडमांस की गुड़िया नहीं हूँ कि तुम अपनी वासना तृप्त करो और मनमाने ढंग से पेश आओ। मैं आज ही चर्च जाकर फादर जेवियर के सामने तलाक की अर्जी दे दूंगी।

उस दिन सेबेरे के सात बजे थे। मेजर गुस्से से उबल रहा था और उसी मूड में बाथरूम जाकर भद्दी गालियां बकने लगा। बोला, "अपने को ग्लैमर की दुनिया की हीरोइन समझती है। एक तुच्छ मॉडल की क्या हिम्मत कि सेना के मेजर से बदतमीजी कर सके। अपने रूप पर बड़ा घमण्ड है। गेट आउट।" वह बाथरूम की चीजें फेंकने लगा था। मारिया को लगा जैसे उसके पांव के नीचे से जमीन खिसक रही है। उसने निर्णय लिया कि यह देश छोड़कर वह कहीं और चली जाएगी। उसकी नजर में भारत ही ठीक लगा। वह बहुत दिनों से चाहती थी कि अध्यात्म, योग और ध्यान जैसे विषय पर कुछ काम करे। उसने गोवा को उचित स्थान ठहराया और भारत आ पहुंची।

एअरपोर्ट का बाथरूम खाली था। बेसिन में हाथ धोते समय अपना चेहरा आइने मे देखा। इधर दो वर्षों से वह कितना बदल गई है। आंखों के नीचे काली लकीर पड़ गई है। चेहरे पर मायूसी छाई है। ओह गाड, क्या हो रहा है, मेरी जिन्दगी में। मैं क्या थी, क्या हो गई। क्या जीवन में प्रेम का यही अन्त होता है। क्यों मर्द इतना छोटा और घटिया बन जाता है। क्या नारी की यही विडम्बना है। प्रेम का नाटक बहुत देख लिया, अब मुझे नए सिरे से जिन्दगी बितानी होगी।

काउंटर आफिसर ने मारिया से कहा—"मैडम बस बाहर खड़ी है।" गोवा बीच की सुन्दरता को देखकर मारिया बेहद खुश हुई। लम्बा चौड़ा बीच, नीला लहराता हुआ समुद्र, तीन ओर बाग, नारियल के पेड़, कैंडीटफ, गेंदा, गुलाब की क्यारियों में महकते हुए रंगबिरंगे फूल। मारिया ने निर्णय लिया कि वह इसी बीच होटल में ठहरेगी। अपना सामान लेकर जर्मन सैलानियों के साथ बस से उतर पड़ी और होटल के स्वागत कक्ष में जाकर चेक इन करा लिया। मुद्रा-परिवर्तन काउन्टर पर भारतीय मुद्रा में परिवर्तित कराया और होटल के बेल ब्वाय के साथ अपने कमरे में चली गई लेकिन तुरन्त गाउन, तौलिया लेकर किनारे बीच पर निकल गई। कपड़े बीच पर रख दिये और दौड़ती हुई सागर की बांहों में जा घुसी। बहुत देर तक वह जलक्रीड़ा करती रही। कई जर्मन तथा अमरीकन जोड़े भी समुद्र की लहरों से खेल रहे थे। विदेशी छोटे बच्चे किनारे घुटने भर पानी में लहरों से अठखेलियां कर रहे थे। कुछ भारतीय जोड़े अपने बच्चों के साथ डरते, गिरते पड़ते लहरों का मजा ले रहे थे। विदेशी सैलानी रंग-विरंगे छातों के नीचे सोए हुए थे। कुछ ड्रिंक्स ले रहे थे। चिलम लेने वालों की संख्या कम नहीं थी। मारिया समुद्र के बाहर निकल कर तौलिया से शरीर पोंछ रही थी तभी एक घुंघराले बालों वाला, गोरा चिट्टा भारतीय युवक धड़ल्ले से रूसी भाषा में मारिया से नमस्कार किया और हाल चाल पूछा। "हैलो मैडम आप रूस से आई हैं न'' मारिया बोली, "जी हां, आप रूसी अच्छा बोल लेते हैं।"

"जी मैडम मैंने मास्को विश्वविद्यालय से एम.बी.ए. किया है। तीन साल वहां रहा। मेरा नाम राजीव मेहरोत्रा है। मैडम आप किस शहर से हैं।"

"लेनिनग्राड।"

"मैडम यदि आप अन्यथा न लें तो आप मारिया तेरिश्कोवा, सुप्रसिद्ध मॉडल और बैले डान्सर हैं?"

"जी शायद"—कहकर मारिया हंस पड़ी। सफेद कॉटन का गाउन जिसके बोर्डर लाल सुनहरे थे लपेट लिया। उसके सुंदर दांत-लाल होठों के बीच चमक उठे। कहा—"माफ कीजिएगा अभी मुझे बाथ लेना है। आप इसी होटल में ठहरे हैं।" "जी हां, हम फिर मिलेंगे" उसने कहा—जिनावदानिया, यानी फिर मिलेंगे। मारिया तेज कदमों से होटल में दूसरे तल पर अपने कमरे 211 में चली गई। नहा धोकर लाल पैंट और हल्के पीले रंग की जरसी पहन कर कमरे से बाहर निकल कर वैंक्वेट हाल की तरफ बढ़ गई। होटल के वैंक्वट हाल में काफी भीड़ थी। शाकाहारी और सामिष वेज/नान वेज व्यंजन अलग-अलग स्थानों पर करीने के साथ सजाए गए थे। व्यंजनों के पीछे खानसामे भव्य पोशाक में सजे खड़े थे। मारिया ने शाकाहारी लाइन में खड़ी होकर वेजिटेबुल सूप ली और फिर मक्खनी दाल, नाद, आलूदम, पनीर-मटर टमाटर की सब्जी, कश्मीरी पुलाव, गाजर का हलुका प्लेट में लेकर एक कोने खाली सीट पर जाकर बैठ गई। उसने देखा राजीव मेहरोत्रा उसे ही खोजता हुआ वैंक्वेट हाल में चक्कर लगा रहा है। आखिर उसने मारिया को पहचान ही लिया। तीर की तरह तेजी से उसकी टेबुल तक आकर बोला—"हलो मैडम, मैं आपको ही देख रहा था। आप शाकाहारी व्यंजन चख रही हैं।"

"हां मैंने निर्णय लिया है कि अब भारतीय शाकाहारी भोजन ही लूंगी। योगाभ्यास के दौरान पता चला है कि शाकाहारी होना जरूरी है।"

"जी मैडम, यह तो अच्छी बात है।"

मिठाइयां चखते हुए बोली—"अच्छा स्वाद है परन्तु चीनी ज्यादा है।"

राजीव मेहरोत्रा ने पूछा—"मैडम कितने दिन आप गोवा में रहेंगी।"

"पता नहीं। मैं भारत में घूमना चाहती हूँ। दिल्ली, शिमला, नैनीताल, श्रीनगर, पुरी, गुवाहाटी, दार्जिलिंग, कोलकाता मेरी 'टूर लिस्ट' में है। साथ ही कुछ 'फैशन शो' में भाग लेना चाहती हूँ। आप क्या करते हैं?" मारिया ने राजीव मेहरोत्रा से पूछ लिया।

"जी मैडम, वैसे तो मैं कई व्यापारिक संस्थानों से जुड़ा हूँ लेकिन कला को जीवन का ध्येय बना लिया है। मैं पेन्टर और वायलिन वादक हूँ। मैडम गोवा में 25 सितम्बर को गोवा-सांस्कृतिक उत्सव हो रहा है। उसमें नृत्य, संगीत, फैशन परेड, कुछ फिल्मों के प्रदर्शन, चित्र-प्रदर्शनी आदि आयोजित है। मुझे आमंत्रित किया गया है। चित्र प्रदर्शनी में मेरी पांच पेन्टिंगें चुनी गई हैं। वैसे यदि आप अपना नृत्य पेश करना चाहें या फैशन परेड की मुख्य तारिका के रूप में प्रस्तुति देना चाहें तो मैं उत्सव

के आयोजकों से बात करूं। आपके लिए यह अच्छा अवसर होगा।" मारिया ने कहा—"आप बात करें लेकिन मेरा पारिश्रमिक दे सकेंगे क्या?"

"जी मैडम, मैं सभी विषयों पर बात करूंगा। मैं सोचता हूँ आप अपना नृत्य प्रस्तुत करें और फैशन शो में मॉडल के बतौर मुख्य भूमिका निभाएं। इसके पहले मैं चाहूंगा कि आप मीडिया के सामने आएं। एक छोटी-सी प्रेस कान्फ्रेंस यहाँ होटल में आयोजित करने की इजाजत दें। लेकिन इसके पहले मैं उत्सव कमेटी वालों से आपके लिए विशेष आमंत्रण की बात पक्की कर लेना चाहता हूँ।"

"ओह धन्यवाद। लेकिन मिस्टर राजीव मेहरोत्रा क्या मैंने ठीक आपका नाम लिया। आप जो भी कार्यक्रम रखना चाहते हैं। रख लें। कल शाम तक बता दें।"

"जी, जी बिल्कुल ठीक। मैं दिल से चाहता हूँ कि आप गोवा ही नहीं, सारे देश और विदेश में प्रसिद्धि के शिखर तक पहुँचें।"

मारिया ने 'धन्यवाद' कहा और उठकर चलने लगी। राजीव मेहरोत्रा से हाथ मिलाया और तेज कदमों से अपने कमरे में चली गई। कमरे में पहुंचकर उसने अपना पर्स सहेजा। गिना। अभी तक तीन हजार चार सौ रुबल बचे थे। लेकिन यह राशि पांच सितारा होटल में सप्ताह भर भी नहीं चलेगी। उसने गोवा की सीन सीनरी से सजा कलेन्डर देखा। आज 19 सितम्बर है। 25 से सांस्कृतिक महोत्सव में मैं यदि गई और नृत्य प्रस्तुत किया और फैशन शो में भाग लिया तो दस हजार रूबल पारिश्रमिक का प्रस्ताव रखूंगी। इतने पैसे में मैं लगभग बीस दिनों तक होटल का किराया दे सकूंगी।... उसी शाम राजीव मेहरोत्रा का होटल के रिसेप्शन से फोन आया।

"हेलो मैडम, मैं रवि बोल रहा हूँ। क्या अभी मिल सकता हूँ।"

मारिया ने उत्तर दिया "आप होटल के लान में कृपया प्रतीक्षा करें। मैं आ रही हूँ।"

मारिया ने हल्के लाल रंग का गाउननुमा कोट पहना और स्लीपर डालकर नीचे उतर कर लान में चली गई। चलते हुए सोच रही थी कि आखिर राजीव मेहरोत्रा मेरे ऊपर क्यों इतना मेहरबान है? अब तक मारिया समझ नहीं सकी। मारिया को देखते ही राजीव ने उठकर नमस्ते करते हुए हाथ मिलाया फिर कुर्सी पर बैठते हुए बोला—"मैडम, मैं आपको 'डिस्टर्ब' तो नहीं कर रहा हूँ।"

"नहीं, नहीं मिस्टर राजीव मेहरोत्रा बल्कि मैं सोचती हूँ, आप मेरे ऊपर क्यों इतने मेहरबान हैं?"

"जी मैडम, पहली नजर में ही आप मुझे अच्छी लगने लगीं। आप 'सेलिब्रिटी', सुप्रसिद्ध नृत्यांगना और मॉडल हैं। मैं आपकी इज्जत करता हूँ और एक चित्रकार के नाते आपकी प्रशंसा करता हूँ। आपसे मिलते ही एक अनुभूति हुई कि आपके साथ कुछ काम किया जा सकता है। बस यही कारण आकर्षण बन गया। मैडम, मैंने गोवा सांस्कृतिक महोत्सव के महासचिव श्री राजेश कुलकर्णी से बात की है। उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई कि आप जैसी नृत्यांगना सुप्रसिद्ध मॉडल ने महोत्सव में भाग लेना स्वीकार किया है। वे आपको एक लाख दस हजार रुपये पारिश्रमिक के बतौर देंगे।"

मारिया बोली—"जी धन्यवाद। मुझे खुशी है कि महोत्सव में भाग लेने का सुअवसर मिला। मिस्टर राजीव मैं आपके प्रति आभारी हूँ।"

"जी मैडम, कल शाम 4 बजे होटल में ही मीडिया को बुलाया है। उसमें टी.वी., प्रेस, इलेक्ट्रानिक मीडिया के सारे चैनल आपके साक्षात्कार का कवरेज करेंगे। आप एक छोटा-सा वक्तव्य देंगी। उनके प्रश्नों के उत्तर देंगी। कार्यक्रम आधे घंटे का है। और हाँ, यह रहा महोत्सव का आमंत्रण-पत्र और तीन दिनों का कार्यक्रम तथा कांट्रैक्ट। आप कृपया कांट्रैक्ट पर हस्ताक्षर कर दें।"

दूसरे दिन गोवा के अखबारों में मारिया के प्रेस कान्फ्रेंस का समाचार मुख्य पृष्ठ पर छपा था तथा टीवी मीडिया चैनलों ने आधे घंटे का प्रेस कवरेज दिखाया था। मारिया का नाम सारे गोवा में छा गया। सबेरे-सबेरे होटल के महाप्रबंधक डैनियल डिसूजा सभी अखबार लेकर मारिया से स्वयं मिले और उसकी प्रशंसा की। मेहरोत्रा ने फोन पर मारिया को बधाई दी। "मारिया", "मारिया", "मारिया"—होटल में मारिया की चर्चा होने लगी। मारिया अपने कमरे के बरामदे से विशाल नीले समुद्र को देखती खड़ी रही। उसने मेहरोत्रा के बारे में सोचा आखिर यह आदमी मुझे इतना क्यों चाहने लगा। आज तक तो मर्दों ने मेरी जवानी को बरबाद किया। तीनों शादियों में बेहद दुख उठाना पड़ा। परन्तु एक अजाने, अपरिचित आदमी ने मुझे शोहरत नवाजा और निःस्वार्थ मेरे लिए काम किया। मारिया के दिल में राजीव मेहरोत्रा के प्रति प्रेम के साथ आदर भाव ऐसा संचार हुआ कि उसने दिए गए नम्बर पर फोन कर उसको दोबारा धन्यवाद दिया।

गोवा सांस्कृतिक महोत्सव के उद्घाटन के अवसर पर मारिया ने अपना नृत्य अत्यन्त कुशलता से प्रस्तुत किया जो बार-बार समवेत तालियों की गड़गड़ाहट के साथ प्रशंसनीय हुआ। उसके साथ गोवा के कलाकारों ने गोवा की संस्कृति के संबंधित नृत्य प्रस्तुत किए। समारोह का उद्घाटन गोवा के मुख्यमंत्री ने किया। दूसरे दिन फैशन परेड था जिसमें मारिया की मुख्य भूमिका थी। इस कार्यक्रम की खूब प्रशंसा और चर्चा हुई। मारिया ने मंच से नीचे उतर कर सर्वप्रथम राजीव को धन्यवाद दिया।

राजीव ने उसका हाथ चूमा और प्यार जताते हुए घुटनों के बल बैठकर अभिवादन किया।

इतने बड़े महोत्सव में तालियों की गड़गड़ाहट और प्रशंसा से मारिया गदगद थी। उसने राजीव को गले लगा लिया। लोगों ने खड़े होकर पुनः तालियों के साथ मारिया-मारिया के नारों के साथ अपनी प्रशंसा व्यक्त की। राजीव के साथ होटल लौटकर मारिया ने उसका हाथ पकड़ कर आलिंगन में कस लिया—"राजीव, आप आश्चर्यजनक व्यक्ति हैं। मैं आपसे प्यार करती हूँ। शायद मेरे जीवन में आपके कारण नई रोशनी आ जाए।" वह भावावेश में रो पड़ी। राजीव ने ही उसे कई चुटकुले कहकर उसे हंसाने का काम किया। दोनों ने रात का डिनर एक साथ लिया और मारिया राजीव से काफी देर तक बातें करती रही।

दूसरे दिन 27 सितम्बर को सबेरे से मारिया के प्रशंसकों के फोन का तांता बँध गया। सभी अखबारों में समारोह का समाचार मुखपृष्ठ पर छपा था। बीच में मारिया का नृत्य करते हुए सुन्दर चित्र तथा उसके नृत्य की प्रशंसा छपी थी।

सबेरे उठते ही मारिया ने सोचा कि आज वह देर तक समुद्र में स्नान करेगी। हल्का नाश्ता कर वह बीच पर चली गई। बिकनी पहने लहरों से अठखेलियां कर रही थी। जलक्रीड़ा करते हुए वह नाच रही थी। हठात् उसे राजीव मेहरोत्रा का ध्यान आया। उसके हृदय में हलचल सी हुई, उसे लगा कि शायद राजीव ही वह पुरुष है जो उसे सच्चा प्यार दे सकता है, सम्मान कर सकता है; उसने मन ही मन कुछ तय किया। अभी तक तो उसके रूप और धन के लोभ में ही उसके जीवन में तीन पुरुष आये थे, उसे लगा यह चौथा पुरुष राजीव मेहरोत्रा उसका जीवन साथी होने के सर्वथा योग्य है। अपने कमरे में आकर मारिया ने स्नान किया, तैयार हुई और राजीव से फोन पर समय लिया....

...भावना से उत्तेजित मारिया राजीव के कमरे में उसके साथ कल के समारोह के चित्र देखने लगी जो राजीव ने अपने मोबाईल पर लिए थे... वह सोचने लगी कि कैसे बात शुरू करे तभी राजीव ने पूछ लिया, "मैडम आप सिंगल हैं या?" मारिया आश्वस्त हुई, उसके मन में प्रकाश का झरना फूट पड़ा। उत्तर न देकर उसने राजीव से वही सवाल किया, "तुम सिंगल या...?" राजीव मुस्कराया, बोला, "मैडम पिछले चार साल से जिससे अफेयर है, उससे ही शादी करूंगा, सिंगल होते हुए भी सिंगल नहीं हूँ..." कहकर वह ठहाका लगाने लगा। मारिया के भीतर कुछ टूटा पर साथ ही कुछ जुड़ा कि उसने एक उत्तम पुरुष को देख लिया, सभी एक से नहीं होते। राजीव सच्चरित्र है, जिम्मेदार है.... ऐसा ही होना चाहिए...

राजीव ने पूछा, "आपने मैडम जवाब नहीं दिया—सिंगल या डबल?" अपने नेत्रों की कोरों में आ बसे जल को समेटते हुए, स्वर को दृढ़ बनाते हुए, मुस्कान लाने का प्रयास करते मारिया के होठों से निकला, "कमाल है मेहरोत्रा, मैं भी आपकी तरह ही सिंगल होते हुए भी सिंगल नहीं हूँ..."

■■■

मैं टूटना नहीं चाहती

बिमला रावर

मैं ज़िंदग़ी को ढूँढती हूँ अँधेरे में
मैं खुद को खोजती हूँ, अपने में
खुद में खुद को ढूँढ़ने का यह सिलसिला
कब तक चलेगा
मेरा चूर-चूर हुआ मन
कब तक किरचों को
जोड़ने लगेगा
ज़िंदग़ी की सच्चाइयाँ
कैसे परख पाऊँगी
रिश्तों की गहराइयाँ

कैसे निभा पाऊँगी
आस्था का विश्वास
कहीं खो न जाये
इच्छाशक्ति की दृढ़ता
कहीं सो न जाये
मैं ज़िंदग़ी में
रंग तलाश रही हूँ
मैं सोई आत्मा के लिए
उमंग तलाश रही हूँ
मैं टूटना नहीं चाहती

मैं ज़िंदगी से रूठना नहीं चाहती
एक लम्बा मार्ग तय किया है
मेरी आशाओं ने पनपने में
मैं ज़िंदग़ी को ढूँढ़ती हूँ सपने में
मैं खुद को ढूँढ़ती हूँ अपने में

सम्पर्क : बी-45, न्यूज कृष्णा पार्क, धौली प्याऊ,
नई दिल्ली-110018
फोन: 25532121

गोमती

अखिलेश कुमार

रेल की पटरियों के बीच वह गिट्टी हटा रही थी कि राजधानी एक्सप्रेस ने जोर से सीटी दी। वह हड़बड़ाकर बगल वाली पटरी पर गिर गई। गोमती ने उसे संभाल लिया। कई बार गोमती मां को ऐसी हड़बड़ी में संभालती रहती है। मां के साथ काम करते वक्त वह बहुत सचेत रहती है, लेकिन उसकी मां चमेली काम में इतना तल्लीन हो जाती है कि रेल की सीटी भी कभी-कभी वह सुनने में चूक जाती है। आज भी यही हुआ था। थोड़ी सी चूक से जीवन लीला कैसे खत्म हो जाती है, चमेली ने कई बार बहुत नजदीक से देखा है।

दिनभर काम करते-करते कमर टूट जाती है, लेकिन ठेकेदार का मुंह तब भी चांद की तरह टेढ़ा का टेढ़ा ही रहता है। ठेकेदार को बस अपने काम से मतलब है। दिनभर वह मजदूरों को जानवरों की तरह लगाए रखता है लेकिन दिहाड़ी देने में हीलाहवाली करने की उसकी आदत पुरानी है। कभी-कभी तो बहाने पर बहाने करके एक-एक महीने तक दिहाड़ी नहीं देता। उसे पता है, ये मजदूर तभी तक उसके कब्जे में हैं, जब तक, उनका बकाया उसके पास है। आठ घंटे का नियम भी उसे बेकार लगता है। मजदूरों के आने का समय तो उसकी घड़ी बताती है लेकिन जाने का समय, सूरज के डूबने से तय करता है। जाड़े में तो गनीमत गर्मी के दिनों में तो वह बारह घंटे के पहले छोड़ता ही नहीं, यदि चले गए तो गैरहाजिर। इस बात को लेकर गोमती से उसकी कई बार कहा-सुनी भी हो चुकी है।

मौजीलाल को एक हफ्ते से जोरों का बुखार है। दिन किसी तरह करवट बदलते हुए तो बीत जाता है लेकिन रात बिताना मुश्किल होता है। दुख के दिन दो-चार हों तो किसी तरह कट भी जाएं, लेकिन यदि सारी जिंदगी दुख के नाम हो जाए तो काटना कितना दुरूह होता है, भुक्तभोगी ही जान सकता है। मौजीलाल अपने पिता के वक्त से ही दुख में पला-बढ़ा है। शादी होने के बाद भी मुसीबत पर मुसीबत आती रही। पत्नी चमेली, कामकाजी मिली वरना गृहस्थी कैसे चलती, उसे भी नहीं पता।

आज महीने का अंतिम दिन है। चमेली और गोमती के कई बार कहने पर भी ठेकेदार महीने भर की दिहाड़ी देने में बहाने पर बहाना बनाता रहा। अंत में थक हारकर दोनों ने अपनी खोली की ओर रुख किया। चमेली को पता नहीं, आज उसका दिल क्यों धड़क रहा है। उसे किसी अनहोनी का एहसास हो रहा है। सोचने लगी, कहीं गोमती के बापू को कुछ हो तो नहीं गया! बुखार इतना तो नहीं बढ़ गया कि अचेत हो गए हों। पता नहीं, दाल-भात खाए होंगे कि नहीं। लेकिन डॉक्टर ने तो भात खाने से मना किया था। फिर दाल पीकर रह गए होंगे। बच्चे भी तो हैं।

"...गरीबी इंसान को समझौते पर समझौता करने के लिए मजबूर करती है। आम आदमी करे भी तो क्या। लेकिन, जिसे अपनी शक्ति और योग्यता पर भरोसा है, वह दरिद्रता में भी धैर्य नहीं खोता, वह अपनी शक्ति और योग्यता पर भरोसा करते हुए अपने उद्देश्य को पाने के लिए अपनी पूरी शक्ति लगा देता है। सत्साहसी और आलसी व्यक्तियों में यही अतंर होता है।..."

सम्पर्क : आदर्श इलेक्ट्रानिक्स, बैंक ऑफ बड़ौदा के बगल में,
फूलपुर मेन रोड, फूलपुर, इलाहाबाद-212402 (उ.प्र.)
मोबाइल: 94500045739

दो लोगों का खाना चार लोग मिलकर खाए होंगे। अरे हां, पानी भी तो नहीं था। पानी की कितनी किल्लत है। जैसा मध्यप्रदेश वैसी दिल्ली। पता नहीं कितने विचार आए और गए।

गरीबी इंसान को समझौते पर समझौता करने के लिए मजबूर करती है। आम आदमी करे भी तो क्या। लेकिन, जिसे अपनी शक्ति और योग्यता पर भरोसा है, वह दरिद्रता में भी धैर्य नहीं खोता, अपनी शक्ति और योग्यता पर भरोसा करते हुए अपने उद्देश्य को पाने के लिए वह अपनी पूरी शक्ति लगा देता है। सत्साहसी और आलसी व्यक्तियों में यही अतंर होता है। मौजीलाल को अपनी शक्ति पर भरोसा तो था लेकिन उसे योग्यता पर कोई भरोसा नहीं। उसे इतना पता है कि बिना अच्छी पढ़ाई के 'अच्छे दिन' नहीं आते। भाग्य तभी साथ देता है, जब उसे संकल्प और शक्ति के मजबूत ईंटों से निर्मित किया जाए। एक हफ्ते से करवट बदलते हुए मौजीलाल बार-बार अपने पढ़े-लिखे न होने के कारण स्वयं को कोसता रहता है। अतीत को कोसने और भविष्य की चिंता में डूबे हुए व्यक्ति का वर्तमान से भी भरोसा धीरे-धीरे उठ जाता है।

कुछ दूर ही दोनों गई होंगी कि ठेकेदार ने गोमती को आवाज दिया। "ओ गोमती... गोमती... जल्दी सुन।" पांच सौ की नोट लहराते हुए ठेकेदार बोला।

गोमती ने मुड़कर देखा, ठेकेदार खींसें निपोरते हुए हाथ हिला रहा था। पहले तो गोमती ने हंसी-मजाक समझकर टाल दिया, लेकिन ठेकेदार ने तेज आवाज में बार-बार दिहाड़ी देने की बात दुहराई तो गोमती को लौटना ही पड़ा।

मां को रुकने के लिए कहकर गोमती ठेकेदार के पास आ पहुंची।

"हां ठेकेदार बोलो, का कहत हव आपन।" गोमती बोली।

ठेकेदार उसकी बांह पकड़ सिर पर हाथ फेरते हुए बोला—"अरे मेरी गोमती! तुम मेरे रहते कैसे छूछे हाथ जा सकती हो। ये लो पांच सौ रुपइया, दिहाड़ी बाद में देहूँ।" ठेकेदार की आवाज में फुसफुसाहट का भाव साफ सुनाई दे रहा था।

"ई पांच सौ रुपइया का बात का?" गोमती गुस्से में बोली।

"बस, अइसन मन भवा, सोचा तुम्हारे पास पैसे की तंगी है। कुछ फूल-फल लेकर खा लेना। शरीर बनी रहेगी तो...?"

गोमती, भले ही प्राइमरी तक पढ़ी है लेकिन वह शोहदों की बत्तमीजी को बखूबी समझती है। उसने बात को घुमाते हुए कहा—

"नहीं ठेकेदार, हमका हराम का पैसा नांही चाहिये। हमका आपन मेहनत का पैसा चाहीये।" गोमती की आवाज में तल्खी थी।

..... आपस की बात है।" ठेकेदार गोमती की कमर में अंगुलियां डाल गुदगुदाते हुए बोला।

ऐसी हरकत की गोमती को कल्पना भी नहीं थी। उसने पांच सौ रुपये का नोट फेंका और अपनी मां की ओर दौड़ पड़ी।

"का कहत रहव ठेकेदार?"

"बस अइसन। बे बात का बात। ओहे इतना पता नाहीं कि गोमती पढ़ी-लिखी भल नाहीं, लेकिन इतना तो समझु सकत हव कि....।" बात को दबाते हुए गोमती बोली।

"का कछु गलत बोला का?"

"ओहे का इतना हिम्मत, नाहीं अम्मा। पागल मनई का बस पगलई न सूझे तव ज्ञानु सूझे?" गोमती आगा-पीछा सोचकर बोली।

कुछ बात तो जरूर होगी, नहीं तो गोमती इस तरह न कहती। लेकिन वह सच-सच बात भी तो नहीं कह रही है। इन ठेकेदारों को का। ये तो आवारा ऐसे जानवर हैं जो किसी को भी देख लार टपकाते फिरते हैं। चमेली के मन में अनेक प्रश्न घुमड़ने लगे थे।

चमेली के बच्चों ने मां को देखा तो दौड़ पड़े। जैसे किसी परदेशी को देखकर बच्चे दौड़ पड़ते हैं। चमेली ने सबसे पहले मौजीलाल का हालचाल पूछा, फिर दूसरी बातों के बारे में। अब वह एक पल भी मौजीलाल से दूर नहीं रहना चाहती थी। देखा मौजीलाल बेसुध खटिया पर पड़ा है। दो पिल्ले लार टपकाते हुए खटिया के नीचे हांफ रहे हैं।

"कछु दाल वाल पियेब रहेव गोमती के बापू?" चमेली ने करुणा भरी आवाज में पूछा।

"हां, बचा-खुचा पी लीयेन रहेन।" मौजीलाल ने धीरे से कहा।

चमेली ने इधर-उधर निगाह दौड़ाई। कहीं उसे पानी मिल जाए और गला तर कर ले। दिनभर में दो-चार बार ही पानी पी पाती है। ठेकेदार के काम का इतना दबाव की वजह से पानी पीने की भी छुट्टी नहीं मिलती। भूख भी तो लगी है। इस सुनसान में सब्जी, दूध भी मुअस्सर नहीं होता। दाल का भाव तो आसमान छू रहा है। ऐसे में रेल के गंदे पाइप वाले पानी का ही एकमात्र सहारा रहता है। अरे, केवल पानी पीकर कहीं जिंदगी चलती है। वह भी दिन भर पसीना पीसने वाले काम में।

अरे हां, दो टमाटर दसना के नीचे पड़े हुए थे। ढूँढ़ने से दो-चार प्याज भी मिल गए। पांच लोगों में दो टमाटर और दो-चार प्याज से न तो सब्जी बन सकती है और न तो चटनी ही, जिससे पेट भरा जा सके। एक किलो आटा रखा हुआ था। और अदहन जैसा गगरी में पड़ा पानी। इसके अलावा कुछ नहीं। गोमती दौड़कर बगल वाले बैजू काका के यहाँ

से आग ले आई और दो टमाटर भी साथ में। जल्दी-जल्दी प्याज और टमाटर काटकर डेकची में रख दिया। चमेली नहाने चली गई।

अभी सब्जी पकाना शुरू ही हुई थी कि अचानक अपने बापू की कराह सुनकर गोमती दौड़ पड़ी। बिना बताए मौजीलाल शौच को चला गया था। कहीं नजदीक बैठने की जगह न मिली तो दूर रेल लाईन पकड़कर जाना पड़ा। शौच से लौटते हुए कुत्तों के झुंड ने उसे घेर लिया। स्वयं को बचाने के लिए पटरियों पर पड़ी गिट्टी उठाकर कुत्तों पर मारा। इससे कुत्ते और खूंखार हो गए।

गोमती ने बापू को कुत्तों से घिरा देख उसने उन्हें बचाने के लिए गिट्टियां उठाकर मारा लेकिन कुत्ते हटने के बजाय और भी खूंखार होते जा रहे थे।

मौजीलाल के जगह से जगह-जगह खून टपक रहा था। चमेली देखकर घबरा गई।

जब तक चमेली कुछ सोचती गोमती दौड़कर एक पुराने गट्ठर से एक नया कपड़ा निकाल कर ले आई।

"ई नवका फटन ले आऊँ?"

"नवका फटन ऐसन में बांधा जाइत है। नहीं तो गड़बड़ होइ सकत है मावा?" मोमती ने समझाते हुए चमेली से कहा।

प्याज आनन-फानन में पीसा और उस कपड़े की मदद से बहते घाव पर बांध दिया। रातभर मां-बेटी मौजीलाल की बिगड़ती हालत देखती रहीं। सुबह होने में एक-एक पल भारी पड़ रहा था। मौजीलाल की हालत दिनोंदिन बिगड़ती जा रही थी।

दुख की इंतजार की घड़ियां पहाड़ बन जाती हैं। अब सुबह तो तब सुबह हो। कब सुबह होगी, इसी में दोनों का धैर्य भी जवाब दे रहा था। सुबह तो हुई। सुबह होने से दुख तो कम नहीं हो जाता लेकिन दुख को कम करने के लिए आसरा जरूर ढूँढ़ने में मदद मिल जाती है। गोमती ने मां को बुलाया और बगल वाले बैजू काका को साथ ले दो किलोमीटर दूर अस्पताल पहुंची।

जिस तरह अनजाना रास्ता कभी लक्ष्य तक नहीं पहुंचता उसी तरह मन में उठने वाले नकारात्मक सवाल भी किसी सवाल को हल नहीं कर सकते। मौजीलाल के परिवार के साथ कुछ ऐसा ही था। गांव के दबंगों के जिस अत्याचार और शोषण से बचने के लिए वह दिल्ली आया था, मन में सुखी होने का स्वप्न पाले, उस स्वप्न में पंख कभी नहीं लगे। लगते भी कैसे। जब स्वप्न केवल स्वप्न बनकर रह जाता है तो उसमें पंख नहीं जमते। कहीं सूखे अनाज में अंकुरण आता है। घुन जरूर लग जाता है और अनाज अपना अस्तित्व खत्म कर देता है।

गांव से शहर में रोजगार मिलने की आशा लिए हजारों मजदूर, किसान, शहरों की तरफ रुख करते हैं, लेकिन शहरों में उन्हें जिन त्रासदियों और परेशानियों का सामना करना पड़ता है उससे उनकी आशा कुछ ही दिनों में छूमंतर हो जाती है। मौजीलाल के बुखार का यही कारण था। सोचते-सोचते वह कुछ ही महीने में बूढ़ा हो गया था। जो भी रोजगार दिलाने वाला मिला, सभी ने उसे धोखा ही दिया था। आज फांका मारने की हालत में उसे अपने ऊपर से रहा सहा विश्वास भी उठ गया था कि उसमें अभी कुछ करने की शक्ति भी है।

उसने अनेक दिहाड़ी मजदूरों को शोषण और जुल्म के कारण जवानी में ही बूढ़े होते और फिर घुट-घुटकर मरते देखा था। आज सारे दृश्य उसके सामने नाच रहे थे। कहीं उसका भी जाने का नम्बर तो नहीं। भगवान को यही मंजूर है तो वह कर भी क्या सकता है। उसके पिता रामबरन भी तो उसी तरह जवानी में बूढ़े हो असमय में उसका साथ छोड़ गए थे। उसे महज तेरह साल में अपने कंधों को गृहस्थी संभालने के लिए लगाना पड़ा था। दो-चार तक की पढ़ाई ही कर पाया था कि उसकी कच्ची उम्र में शादी कर दी गई, जब उसे शादी बारे में कुछ पता ही नहीं था।

गोमती उसकी पहली संतान है। देखने में सुंदर और बात करने में चतुर। वह अच्छा-बुरा सब कुछ जानती है। पर शहर की जिंदगी के बारे में उसे क्या पता। गांव की भाषा-बोली में पढ़ी-लिखी चहकती एक बाला के मन में कैसे-कैसे स्वप्न पलते हैं कुछ ऐसे ही स्वप्न उसके मन में पल रहे थे कि उसे मजदूरी करने के लिए विवश होना पड़ा।

संकल्प कमजोर, अपनी शक्ति पर अविश्वास और अयोग्य मानने की प्रवृत्ति इंसान को कितना असहाय और असहज बना देती है, यह मौजीलाल के जीवन को देखकर समझा जा सकता था। शोषण और जुल्म करने वाले हिंसक भेड़ियों के लिए सबसे अच्छा अवसर होता है। ठेकेदार को यह पता हो गया था कि मौजीलाल जिस हालत में है, वह किसी भी स्तर पर नीचे गिर कर समझौता कर सकता है। गोमती के प्रति उसकी ललचाई नजर अब अधिक हिंसक होती जा रही थी। वह उसे अपनी हवस का शिकार बनाने के लिए घायल सर्प की तरह छटपटा रहा था।

गोमती के लिए यह उसके चरित्र और साहस की सबसे कड़ी परीक्षा की घड़ी है। उसमें कुछ ऐसे सद्गुण थे जिससे वह चरित्र की रक्षा कर सकती है। उसमें धैर्य रखने और दृढ़ता से अपने कार्य करने की क्षमता है।

मौजीलाल को अस्पताल पहुंचाना जरूरी था। चमेली ने बगल वाले बैजू काका को बुलाया, गोमती को साथ लिया, बच्चों को टेंट में रहने की हिदायत दे, वह दो किलोमीटर स्थित सरकारी अस्पताल पहुंच गई।

"डाक्टर साहेब, इनका कुकुर काट लिहिन रहा।" चमेली भावुक होकर डॉक्टर से बोली।

"क्या कहा, समझ में नहीं आया।" डॉक्टर ने डांटते हुए पूछा।

तब तक गोमती बोल उठी—"कुत्ते ने काट खाया। इनकी हालत बहुत खराब है। एक हफ्ते से बुखार भी हो रहा है।"

"रात में ही क्यों नहीं आ गई?" गुस्से में डॉक्टर ने पूछा।

"साहेब, आने का कोई साधन नहीं था।"

"क्या करते हो तुम लोग?"

"मजदूरी साहेब।"

"कहां?"

"रेलवे में दिहाड़ी मजदूर हैं साहेब।"

"समझ गया।" डॉक्टर ने सिर हिलाया, मौजीलाल का हाथ पकड़ा। नाड़ी बहुत धीरे-धीरे चल रही थी। शरीर ठंडा होता जा रहा था।

"इसकी हालत तो नाजुक है। पहले क्यों नहीं लाई?"

"साहेब, दवाई के पैसे नहीं थे। प्राइवेट में तो बहुत खर्चा लगता है। इसलिए वहां नाही जा सकी।"

"जल्दी जाओ, इसकी पर्ची बना लाओ। उधर एमेरजेंसी वार्ड है। लेकिन हां, पहले इसे कुत्ते काटने वाली सुई लगेगी।" डॉक्टर ऊपरी दया भाव दिखाते हुए बोला।

समय से कोई भी कार्य न होने पर उसका महत्व जैसे खत्म हो जाता है कुछ इसी तरह उपचार साथ जरूरी है।

आखिर मजदूरों का भी कोई जीवन होता है? उनकी अहमियत यदि होती तो हर साल लाखों मजदूर असमय में बिना उचित उपचार के क्यों जान गँवाते। सब सरकार के माथे पर ठीकरा फोड़ते हैं, लेकिन यह समाज भी तो ऐसे-ऐसे गाढ़े वक्त में मदद करने में हिचकिचाता है।

दवाई का पैसा भी नहीं था। टैक्सी-टेम्पो के किराए के लिए भी नहीं। ऐसे में आस-पास के प्राइवेट अस्पतालों में दवाई के लिए जाना संभव नहीं था।

बैजू काका को साथ ले गोमती मौजीलाल को भर्ती कराने की पर्ची बनवा लाई। जबरदस्त भीड़ देख चमेली का सिर चकरा गया। उसे समझ में नहीं आ रहा था, कैसे आनन-फानन में अपने पति को इस विपत्ति से बचाए। लेकिन गोमती अब भी धैर्य के साथ पिता के इलाज के लिए जद्दोजहद में लगी हुई है।

मौजीलाल को सरकारी सर्वोदय अस्पताल में भर्ती करा दिया गया। चमेली, गोमती और बैजू काका के लिए मौजीलाल को बचाने का सबसे बड़ा सहारा अपने परमेसर से अब है। डॉक्टर बाबू, कोई भगवान थोड़े हैं। वह तो बता दिए हैं, आने में बहुत देर कर दिया। फिर भी अपनी पूरी ताकत लगाएँगे ही। गोमती ने अपनी समझ को तरासा।

एमरजेंसी वार्ड पूछने के दौरान सेना के जवान ने गोमती की मदद की। गोमती की आंखों में उसके प्रति कृतज्ञता के आंसू ढरक आए थे।

"काहे रोइ रहेव हो बिटिया।" परमेसर चहिहीं तउ तोहार बापू ठीक होइ जईहीं। चमेली भाऊक होते हुए गोमती को दिलासा दिलाने लगी।

"कछु नाहीं अम्मा। रोवत नहीं अव। वोह वरदी वाले भाई ने हमारी जो मदद की उसे सोचकर आंखन में आंसू ढरक आएं, बस।"

..... कुछ घंटों में मौजीलाल की हालत में सुधार होना शुरू हो गया था, लेकिन पौष्टिक आहार न मिल पाने के कारण वह कमजोरी से उठ नहीं पा रहा था। पति की हालत में सुधार आता देख चमेली फिर काम पर जाने लगी। बैजू के भरोसे दोनों बच्चों को छोड़कर आना एक-दो दिन के लिए तो ठीक था लेकिन लम्बे समय तक नहीं छोड़ा जा सकता था।

अस्पताल में मौजीलाल की चिकित्सा के दौरान जिस सेना के जवान ने गोमती की हरसंभव मदद की थी, वह आगे भी मदद का भरोसा दिला दो दिन बाद ही चला गया था। अपरिचित और अनजान व्यक्ति की मदद करना आज के जमाने में दैवयोग ही कहिए। वह एक हफ्ते बाद फिर आया और जो मदद बन सकती थी किया। गोमती और उस नौजवान जिसका नाम देवयोगी था का एक अनजाना रिश्ता भाई-बहन का बन गया।

व्यक्ति अपने चरित्र से ही पहचाना जाता है। चरित्र ऐसी अनमोल पूँजी है जो कठिन से कठिन दौर में व्यक्ति को आत्मशक्ति से लबालब रखती है। देवयोगी में आत्मशक्ति का भंडार था। चरित्र का एकदम पक्का। वह सच कहने में डरता नही था और झूठे लोगों को बख्शता नहीं था। गोमती को एक ऐसा धर्मभाई मिल गया था जिस पर वह विश्वास कर सकती थी।

दो दिनों तक काम पर आया न देखकर ठेकेदार गोमती के बारे में पूछताछ करने लगा। चमेली से वह सब कुछ जान लेना चाहता था। लेकिन चमेली थी, उसके किसी भी प्रश्न का ठीक जवाब देने से बचती थी। मर्द की आंखों और हावभाव से महिलाएं उसकी मंशा भांप लिया करती हैं। चमेली भले ही अनपढ़ थी, लेकिन गंवार नहीं थी। वह ठेकेदार की मंशा अच्छी तरह से समझती थी।

ठेकेदार ने दूसरे मजदूरों से गोमती के ठिकाने का पता लगा लिया। वह उस अवसर की तलाश करने लगा, जब गोमती को लालच की हड्डी फेंककर उसे फंसाया जा सके और अपनी वासना शांत कर सके।

चमेली ने ठेकेदार को मौजीलाल के कुत्ता काटने की बात तो बताई लेकिन वह किस अस्पताल में है उसने नहीं बताया। ठेकेदार को जब मौजीलाल को सर्वोदय अस्पताल में भर्ती होने का पता चला, वह मौजीलाल की मदद के बहाने गोमती से मिलने का अवसर तलाशने लगा। दो दिन तक तो वह गोमती से मिल नहीं सका। लेकिन एक दिन वह सुबह ही अस्पताल पहुंच गया।

"अरे गोमती! तुम सब कितने दिन से ईहां आय रहो बताया तक नहीं?" ठेकेदार ऊपरी सहानुभूति जताते हुए बोला।

"क्या बताती ठेकेदार भाई, जब तुम दिहाड़ी देने में इतनी आनाकानी करते हो, तो मदद करोगे, भला कैसे जानती।"

"अरे, मदद... मदद... मदद। हम हर वक्त मदद देने को तैयार हैं, लेकिन तुम सब मदद लेने को जाने तो।" ठेकेदार खींस निपोरते हुए बोला।

गोमती ने ठेकेदार के इस दो अर्थ वाले प्रश्न का जवाब देना ठीक नहीं समझा। वह कमरे से बाहर चली गई।

ठेकेदार भी कमरे से निकल कर बाहर गोमती को ढूँढ़ने लगा। उसके लिए यह सबसे बढ़िया अवसर था। गोमती को लालच दे अपना शिकार बनाने का। लेकिन गोमती उससे अब बात भी करना नहीं चाहती थी।

चमेली ने जब सुना कि ठेकेदार अस्पताल भी गया था और गोमती से बात बेबात की बात बतियाने के लिए परेशान था, तब से चमेली गोमती को लेकर और भी सतर्क हो गई थी।

एक महीने के इलाज के बाद मौजीलाल की तबियत ठीक हो गई। उसे अस्पताल से छुट्टी मिल गई। वह जल्द से जल्द अपने परिवार के साथ रहना चाहता था लेकिन डॉक्टर की हिदायत का पालन करना भी जरूरी था। परिवार से एकांत में रहने का। मौजीलाल को छूत की बीमारी होने का डर था।

रक्षाबंधन का दिन था। चमेली सुबह ही नहा धोकर तैयार हो गई थी। उसका यहाँ कोई अपना सगा भाई तो नहीं था, लेकिन गांव के एक मुंहबोले भाई को ही कई सालों से राखी बांधते आ रही है। आज भी उसी भाई का उसे इंतजार है। इसी बहाने उसे भाई का प्यार मिल जाता है और भाई को बहन का आशीर्वाद। मानवीय रिश्तों की गहराई की समझ उन्हें होती है जो उस रिश्ते की पवित्रता को बखूबी समझते हैं। देवयोगी ने गोमती को बहन बनाकर उसकी गहराई को समझा था।

सुबह के ग्यारह बजे होंगे कि पता लगाते-लगाते देवयोगी गोमती के खोली तक आ पहुंचा। गोमती खाना बना रही थी। उसने देवयोगी को अचानक आया देख, उसे अपनी आंखों पर विश्वास ही नहीं हुआ। उसने देवयोगी का सच्चे हृदय से स्वागत किया और अपने छोटे भाइयों से परिचय कराया।

गोमती ने देवयोगी के स्वागत में गगरी का पानी और गांव का गुड़ लाकर रख दिया और गुड़ खाकर पानी पीने के लिए कहा।

"पानी के साथ ई गुड़ किस लिए?" देवयोगी ने पूछा।

"हमारे ओर खाली पानी केहू का नाहीं दिया जाता। खाली पानी देना बड़ा बुरा माना जाता है।" गोमती ने अपनी संस्कृति से देवयोगी को परिचय दिया।

"हां, बहुत अच्छा लगा। गुड़ बहुत स्वादिष्ट है।"

"तुम्हारा नाम भूल गया बहन!"

"भइया, मेरा नाम गोमती है।"

"अब लाओ राखी बांधो।" देवयोगी ने हाथ बढ़ाते हुए कहा।

"क्यों नहीं भइया। आज रक्षाबंधन का दिन हव। छोटे भाइन का रक्षा बंधन बांध चुकी हव। अब बड़े भाई का बाध देत हई।" गोमती ने सहजता से अपनी बोली में देवयोगी के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त किया।

..... देवयोगी समयाभाव का बहाना बनाकर जाने के लिए कहता रहा लेकिन जब मां बेटी और मौजीलाल रोकने की हठ करने लगे, तो वह रुक गया।

गोमती ने बैजू काका के यहाँ से सब्जी का इंतजाम कर लिया था। बाजार से मिठाई चमेली ले आई थी। भोजन करने के बाद गोमती ने देवयोगी को खाने को दिये।

"इसकी क्या जरूरत थी बहन। गुड़ में जो मजा है वह मिठाई में कहां है। बाजार की बनी चीज से अच्छा घर का बना गुड़ होता है। देवयोगी ने मिठाई के दो टुकड़े लिए और सकुचाते हुए मुंह में डाल लिया। कहीं गोमती, उसकी मां और मौजीलाल को यह न लगे कि उसका गोमती से रिश्ता कोई दिखावा का है। वह तो सच्चे मायने में गोमती को अपनी धर्म-बहन समझता है।

देवयोगी जैसे ही चलने को हुआ चमेली का मुंहबोला भाई सामने दिखाई पड़ा। चमेली ने अपने मुंहबोले भाई से देवयोगी का परिचय कराया और यह बताया कि किस तरह उसकी मुसीबत में उसकी बिना स्वार्थ के मदद की थी, और गोमती को अपना बहन बनाया। आज उसकी तरह ही भाई के रूप में रक्षाबंधन बंधाने आया है।

चमेली के परिवार के बारे में सही जानकारी होते ही देवयोगी कहीं खो गया। किस तरह मजदूरों का जीवन होता है। आदमी परिस्थितियों के आगे किस तरह पीछे हाथ बांधकर खड़े होने के लिए मजबूर होता है। पढ़े-लिखे न होने के कारण शोषण-जुल्म का शिकार ऐसे न जाने कितने लोग होंगे? ऐसे न जाने कितने विचार उसके अंदर डूबते-उतराते रहे।

तभी गोमती ने टोका। भइया, अच्छा नहीं लग रहा है क्या बहन के यहाँ आकर?"

"नहीं गोमती बहन, अच्छा लग रहा है। सोच रहा हूँ...?"

"क्या सोच रहे हो भइया?"

"यही कि गरीब परिवारों के लिए आज के जमाने में कितनी समस्याएं होती हैं, जीवन बसर करने में।"

अभी दोनों बातें कर ही रहे थे कि सामने से ठेकेदार आता दिखाई दिया। देवयोगी को जैसे ही गोमती से बात करते देखा, वह जलभुन गया। यह कौन हो सकता है कहीं गोमती का संबंध...?

खोली में घुसने के पहले ठेकेदार ने मौजीलाल को पुकारा। मौजीलाल कुछ बोल पाता उसके पहले ही चमेली बोल पड़ी...

"हां ठेकेदार आज रक्षाबंधन का दिन हिया कहां चल दिएउ रहेव?"

"बस अइसे आंटी, आजु छुट्टी रहन ना सोचा मौजीलाल को देख आऊँ। वइसे तो छुट्टी-उट्टी मिलेत नाहीं।" ठेकेदार की आवाज में फितरत झलक रही थी।

"अच्छा ई बताउ ठेकेदार एक महीना होइ गयेन तुम्हार हीला-हवाली। का हम सबु माटी खाय के जियेब?"

"नहिं... जल्दी देह देब तुम सबन का दिहाड़ी परेशान मत होउ।" ठेकेदार बात को संभालते हुए बोला।

"ई के हेन?" देवयोगी की ओर अंगुली से इशारा करते हुए ठेकेदार ने पूछा।

किसी ने कोई जवाब नहीं दिया। तब तक देवयोगी स्वयं बोल पड़ा।

"क्या मेरा गांव जानना चाहते हो या...।"

"हां बस आप को नया आदमी जानके सोचा कि...।"

"मेरा नाम देवयोगी है। मैं राजस्थान का रहने वाला हूँ। और कुछ?"

"इधर कैसे आना हुआ?"

"बस, रक्षाबंधन का दिन था, इसलिए बहन के यहाँ चला आया।"

"हूँ समझ गया।"

कहीं दाल में कुछ काला तो नहीं। आखिर इतना हट्टा-कट्टा जवान का इन मजदूरों के यहाँ इसका क्या काम हो सकता है। जो खाय बिना मर रहा हो, उसके यहाँ तो...।" ठेकेदार के मन में गोमती को लेकर अनेक तरह के गंदे विचार डूबने-उतराने लगे थे।

थोड़ी देर ठेकेदार चुपचाप इधर-उधर देखता रहा। चमेली से गोमती के बारे में पूछना चाहा लेकिन कुछ सोचकर रुक जाता। दूषित विचार और दुर्वृत्तियों से भरे लोगों में साहस की हमेशा कमी होती है। ठेकेदार जिस मंशा से आया था, देवयोगी को देखकर उसके ऊपर वज्रपात जैसा हुआ। वह अंदर से कमजोर होता जा रहा था।

गोमती इस दौरान दूसरी खोली में चली गई थी। ठेकेदार से दूर रहना ही उसके परिवार के हित में था।

"हूँ आंटी, गोमती नाहीं देखत बाटे। कहीं दूर ऊ चली गई का?"

ठेकेदार के सवाल का न तो चमेली ने कोई जवाब दिया और न तो मौजीलाल ने ही।

"आपने मेरा परिचय तो पूछ लिया लेकिन अपना परिचय तो नहीं दिया।" देवयोगी ने मुस्कुराते हुए कहा।

"मेरा नाम विश्वास मिश्रा है। रेलवे में ठेकेदारी करता हूँ। यहाँ से दस किलोमीटर दूर उधर फरीदाबाद की तरफ रहता हूँ।"

"इतनी दूर आज रक्षाबंधन के दिन इधर कैसे आना हुआ?"

"खाली बैठा था सोचा चलूं घूम आऊं। ये लोग मेरे यहाँ दिहाड़ी मजदूरी करते हैं। पुरानी जान पहचान है।" ठेकेदार की बातों में खिसियाहट साफ सुनाई पड़ रही थी।

देवयोगी और विश्वास मिश्रा अभी बातें कर ही रहे थे कि चमेली दौड़ती हुई मौजीलाल के पास पहुंची। मौजीलाल उल्टियां करने लगा था। जी घबरा रहा था। वह चमेली से हाथ जोड़ता तो कभी देवयोगी से। अब म....ऽ...ऽ नाहीं बचूँगा... नहीं... जिव ओइड़ारे बा... लागत ..... पिता है। जिसके प्रति उसका पुत्र जैसा लगाव कुछ ही दिन में हो गया था।

विश्वास मिश्रा ने भी मौजीलाल को संभालने में हाथ लगा दिया। लेकिन उसका मन तो गोमती से बतियाने में लगा हुआ था। देवयोगी और चमेली मौजीलाल को लेकर अस्पताल की ओर भागे। इधर विश्वास गोमती को ढूँढ़ने लगा था।

कुछ ही देर में गोमती जब अपनी खोली में लौटी तो उसे यह सुनकर बहुत दुख हुआ कि उसके बाप की हालात बहुत खराब हो गई है जिसे लेकर मां और देवयोगी अस्पताल गए हैं।

ठेकेदार विश्वास मिश्रा खोली में चारपाई पर बैठा गोमती के भाइयों से इधर-उधर की बातों में लगा रहा। वह देवयोगी के बारे में सब कुछ जान लेना चाहता था। लेकिन बच्चों ने जब कुछ भी नहीं बताया तो वह उदास मन से चारपाई पर लेट गया।

गोमती दोनों भाइयों को लेकर अस्पताल जाना चाहती है, लेकिन उसे अभी यह पता नहीं कि उसके बापू को कहां ले जाया गया है। उसने बगल वाले बैजू काका से पूछा तो पता चला उसी अस्पताल में ले गए हैं जहां कुत्ता काटने पर ले जाया गया था। उसने भाइयों को साथ लिया और अस्पताल की ओर चल पड़ी।

"अरे गोमती, इतनी परेशान क्यों है? मैं हूँ न मेरे पास मोटर साइकिल है। चलो मेरे साथ बहुत जल्दी पहुंच जाएंगे।"

"नहीं ठेकेदार भइया। मैं चली जाऊंगी। तुम जाओ अपने घर। देवयोगी भाई हैं न। अब कोई चिंता करने की क्या पड़ी है।"

ठेकेदार ने जैसे ही देवयोगी की मदद के बारे में सुना वह तुरंत गुस्सा हो गया। उसने गोमती से व्यंग्यात्मक लहजे में कहा—

"गोमती तुम हमपे विश्वास नहीं करती। अरे दो दिन से उस फौजी से मुलाकात क्या हो गई उसे अपना दिल ही दे बैठी।"

"ठेकेदार, तुमका इतनऊ पता नाहीं कि फौजी हमारा भाई है। तुम भले ही कुछ सोचते हो लेकिन हम सब का रिश्ता भाई-बहन का ही है। तुम अपने बारे में सोचो... हम अपना सोच लेंगे।"

गोमती दोनों भाइयों को ले अस्पताल चली गई। ठेकेदार मिश्रा कुछ देर इधर-उधर सोचता रहा फिर बाइक उठायी अस्पताल की ओर चल दिया। गोमती उसका शिकार है। वह अपने शिकार को किसी हालत में नहीं छोड़ सकता। उसकी मंशा में पल रहा, दुर्विचार लगातार बढ़ता ही जा रहा था।

काम का अंधा व्यक्ति कितना नीचे गिर सकता है उसकी कोई सीमा नहीं हो सकती। कामांध को अच्छा-बुरा भी दिखाई नहीं देता है। वह खून के रिश्तों को भी कलंकित करने में संकोच नहीं करता। अच्छा यह हो कि काम को जागने ही न दिया जाए।

ठेकेदार सालों से ऐसी ही न जाने कितनी गोमतियों को अपनी हवस का शिकार बनाता आ रहा था। उसे बस इतना ही पता है कि मजदूरों की लड़कियों को केवल पैसा और अच्छे कपड़े पहनने की लालच से उनके साथ कैसा भी बर्ताव किया जा सकता है। गरीब की जोरू गांव भर की भौजाई, की कहावत से वह अनगिनत बार रूबरू हो चुका है।

गोमती अभी अस्पताल पहुंची नहीं होगी कि ठेकेदार बाइक लेकर अस्पताल पहुंच गया। आकस्मिक चिकित्सा कक्ष में पहुंचा और मौजीलाल के बारे में पता लगाने लगा। चमेली को गोमती कमरे के दरवाजे पर ही मिल गई। चमेली गोमती को देखकर रोने लगी। गोमती ने मां को ढाँढस बँधाया और छोटे भाइयों को बापू के साथ रहने के लिए कहकर देवयोगी से बातें करने लगी। ठेकेदार अंदर ही अंदर सुलगने लगा। वह देवयोगी की तरफ अंगुलियों का इशारा करते हुए बोला—

"फौजी भाई! आप नाहक में क्यों परेशान हो रहे हैं। मैं हूँ न, जो भी मदद होगी करूंगा। यह तो अपने गैंग का मामला है।"

"ठेकेदार जी! मैं परेशान नहीं हूँ। मेरा यह परिवार है। परिवार की मदद करना कोई परेशानी की बात कैसे हो सकती है। आप अपने घर जाइए। मैं अपने कर्तव्य के बारे में जानता हूँ।"

"फौजी भाई! आप का रिश्ता कुछ महीने का है मेरा तो सालों से है। जब भी कोई समस्या आती है, मैं ही इनकी मदद करता हूँ। हमारा काम ही है, अपने गैंग की मदद करना।"

अभी फौजी अपनी बड़ाई में लगा ही था कि गोमती बोल उठी, "ठेकेदार भाई, आप कितना मदद करते हैं और कैसे करते हैं, इसे न बताइए तभी अच्छा है। तुम ठहरे पैसे वाले और हम लोग हैं दिहाड़ी मजदूर। आज तक जरूरत पड़ने पर कभी एक पैसे की मदद तो की नहीं, यहाँ अपनी शेखी बघार रहे हो।"

गोमती की स्पष्टवादिता ने ठेकेदार के दिल में आग लगा दिया। वह गोमती की ओर इशारा करते हुए बोला, "गोमती, तू ज्यादा मत बोला कर। अपनी औकात तू जानत है। काम न देई तो खाय बिना मर जाओ, चली हो बड़ी-बड़ी बातें करने।"

गोमती ने कहा, "ठेकेदार भाई। ई समय, फालतू का बहस का नहीं है। बापू की हालत खराब है। तुम ईहा क्यों आय गयो हमन का सब मालूम है।"

देवयोगी ने ठेकेदार की ओर मुखातिब होते हुए कहा, "ठेकेदार भाई! गोमती बहन को जो मदद होगी हम करेंगे। यहाँ बहस करने से कोई काम नहीं हल होगा।"

ठेकेदार को गुस्सा आ गया। उसने देवयोगी को वहां से तुरंत चले जाने को कहा। देवयोगी ने ठेकेदार को फिर वहां से जाने को कहा। तब तक चमेली आ गई। उसने ठेकेदार से कहा, "ठेकेदार! तुम्हारे बाल-बच्चे तुम्हारा इंतजार कर रहे होंगे। कोई चिंता करने की बात नहीं है।"

लेकिन ठेकेदार तो जैसे आज कुछ तय करके आया हो। गोमती से दूर रहना उसे बर्दाश्त नहीं। उसकी जगह पर कोई और गोमती से हंसी-मजाक करे, वह तो एकदम बर्दाश्त के बाहर।

.....मिश्रा की हालत कुछ ऐसी ही हो गई थी। चमेली के कई बार कहने पर भी जब ठेकेदार मिश्रा ने उसकी बात नहीं मानी तो गोमती ने एक बार फिर अस्पताल से जाने के लिए कहा।

"गोमती, मैं तुम्हारे बापू की मदद करने आया हूँ। मेरी बात सुनो, फिर जैसा कहोगी वैसा करूंगा।"

"क्या बात करना है ठेकेदार भाई। जो कहना है यहीं कहो। ऐसी कौन सी बात है जो ईहाँ कहने में दिक्कत है?"

"गोमती, कभी-कभी छोटी बातें भी सब के सामने नहीं कहते बनती। एक मिनट सुनो..., मुझे भी टाइम नहीं है।

गोमती ठेकेदार के कहने पर उसकी बात सुनने के लिए गलियारे में चली गई। पीछे-पीछे चमेली भी हो ली।

गोमती को गलियारे के एक खंभे की आड़ में ले जाकर ठेकेदार ने दवा के लिए पैसे उसके हाथ में रखना चाहा। गोमती ने उसे धन्यवाद करते हुए लौटा दिया। अब ठेकेदार के मन में कामवासना की तरंगें बहुत तीक्ष्ण हो चुकी थीं। वह गोमती के गदराए शरीर को छूना चाहता था, जल्द ही उसने वैसा ही किया। गोमती चिल्लाई। चमेली भी आ गई। देवयोगी भी आ गया। लेकिन गोमती ने किसी से कुछ नहीं कहा। वह वहां से चुपचाप चली आई।

ठेकेदार घायल सर्प की तरह फुफकारने लगा था। तब तक गोमती संभल चुकी थी। वह सर्प के दांत हमेशा के लिए तोड़ देना चाहती थी जो पता नहीं कब और किस गोमती के कोमल और विवश देह में चुभ जाएं। उसने अस्पताल में रखी कैंची को उठाया और ठेकेदार के पेट में घोंप दिया।

ठेकेदार छटपटाता हुआ घायल सर्प की तरह जमीन पर लोटने लगा। पुलिस आ चुकी थी। देवयोगी तो साथ था ही। गोमती ने अपना करतूत सच-सच बयां कर दिया। मौजीलाल ने जब यह घटना सुनी तो उसके होश उड़ गए। अब उसके परिवार को कौन इस नये संकट से उबारेगा। वह चेतनाशून्य होने लगा...।

...उधर डॉक्टर मौजीलाल को बचाने की जगह ठेकेदार को बचाने की फिराक में लग गए थे।

■■■

लघुकथा

सोना

राकेश भ्रमर

चन्द्रपाल दिल्ली में ऑटोरिक्शा चलाता था। एक बार किसी अज्ञात महिला का पर्स उसके ऑटो में छूट गया। देखा तो उसमें ढेर सारी ज्यूलरी और रुपये थे। पहले सोचा, पुलिस थाने में जमा करवा दे। फिर उसने सोचा कि पुलिस भी कहाँ उस महिला को ढूँढ़ेगी, स्वयं इस माल को हड़प कर जायेगी।

कुछ सोचकर उसने पर्स को चुपचाप लाकर घर में पत्नी को दे दिया। पत्नी बहुत खुश हुई।

परंतु रात भर उन दोनों को नींद नहीं आई, पुलिस और चोरों के भय से उनकी आँखों की नींद भाग गई थी। चन्द्रपाल को डर लग रहा था कि उस महिला ने थाने में रिपोर्ट लिखवा दी होगी और पुलिस उसे ढूँढ़ती हुई किसी भी पल उसके घर पर आ धमकेगी। उसकी पत्नी को यह भय सता रहा था कि कहीं घर में चोर ना घुस आएँ और सारे गहने और रुपये लूट ले जाएँ।

सुबह दोनों आश्चर्य में एक-दूसरे का मुँह देख रहे थे, जैसे वह दोनों पूछ रहे थे, अब क्या करें? चन्द्रपाल ने कहा, "इन सोने के गहनों ने पहली रात ही मेरी नींद उड़ा दी, आगे न जाने क्या होगा?"

"हाँ मेरी भी यही हालत है। सोना हमें सोने नहीं देगा। आप तो इसे थाने में जमा करवा दो, हम गरीब हैं तो क्या हुआ? चैन की नींद तो सोते हैं।" उसकी पत्नी ने कहा। चन्द्रपाल ने सहमति में सिर हिलाया।

थाने में उस अज्ञात महिला का पर्स जमा करवा कर चन्द्रपाल को जो सुकून मिला, वह आजीवन उसे भुला नहीं सकेगा।

सोना सचमुच अमीर और गरीब दोनों को ही सोने नहीं देता।

सम्पर्क : 24, जगदीशपुरम, लखनऊ मार्ग, निकट त्रिपुला चौराहा,
रायबरेली-229001
मो.: 9968020930 ई-मेल: rakeshbhramar@rediffmail.com

पिचकारी

अर्पण कुमार

"...भीतर की यह चिंगारी तब और भभक पड़ती जब सुबह-शाम कॉलोनी में सैर करते हुए सरोज उससे टकरा जाती। जैसे कुछ हुआ ही न हो, वह आदतन उसे देखकर मुस्कुराती। वसुंधरा अपना सिर पीट लेती... हाय राम यह कैसी औरत है! सारी लोक-लाज गंगा में डुबा आई है।..."

होली से दो दिन पहले राहुल की मम्मी वसुंधरा ने अपने कंजूस पति रामाधर त्यागी से लड़-झगड़कर किसी तरह एक बड़ी और सुंदर पिचकारी अपने बेटे को दिलाई। राहुल बड़ा खुश था। उसके पैर मानों धरती पर नहीं पड़ रहे थे। आव देखा न ताव, वह तुरंत घर से बाहर निकल गया और पूरी सोसायटी में इधर-उधर घूम-घूमकर अपनी पिचकारी सभी को दिखलाने लगा। सोसायटी के एक दूसरे बच्चे गौरव ने उससे पिचकारी देखने को माँगी। वह पिचकारी उसे अच्छी लगी या खराब, यह तो उसका मन ही जाने। मगर प्रकटतः उसने राहुल का दिल तोड़ते और उसे जमीन पर लाते हुए कहा, "अरे राहुल... तेरे पापा ने तुम्हें ठग दिया है। तुम्हें लोकल पिचकारी दिला दी है।"

आजकल बच्चे खेल-कूद, पढ़ाई-लिखाई से अधिक ब्रांड और विज्ञापन की बात करने लग गए हैं। किसी सामान की उपयोगिता और खूबसूरती से पहले वे उसका 'प्राइस टैग' देखने लगे हैं। राहुल के स्वाभिमान को गौरव की इस बात से काफी ठेस पहुँची। दोनों में कुछ कहासुनी हुई। कहासुनी कब धक्कामुक्की में बदल गई, यह पता ही नहीं चला। देखते ही देखते गौरव ने राहुल से हठात पिचकारी छीनकर गुस्से में उसे दूर फेंक दिया।

पार्क के फेंसिंग लोहे की जालियों से की गई थी। उनसे लगे मेंहदी के पौधे थे। लोहे की जालियों से भिड़कर पिचकारी की हैंडल एक जगह से मुड़ गई। राहुल रुआँसा हो आया। पिचकारी निकालते वक्त मेंहदी की झाड़ियों से उसके हाथ छिल गए। पिचकारी भी उनसे ऐसी उलझी कि नन्हें हाथों को उसे निकालने में काफी मेहनत करनी पड़ी। जब पिचकारी को उसने वापस अपने हाथ में लिया, पिचकारी के मुड़े हुए हैंडल को देखकर उसका मन निराश हो गया। ऊँचे गगन में अठखेलियाँ करती पतंग की किसी ने मानों डोर काट दी हो और वह नीचे की ओर हवा में इधर-उधर भटकती हुई गिरती चली जा रही हो। राहुल के उत्साह रूपी गुब्बारे में किसी ने सुई चुभो दी थी। उसका गला रुँध गया और रोते-सिसकते वह अपने घर की ओर भागा।

टूटी हुई पिचकारी देखकर राहुल की मम्मी का गुस्सा सातवें आसमान पर पहुँच गया। उसने अपने बेटे को नीचे गौरव को बुला लाने को भेजा। मगर वह तो पहले ही रफूचक्कर हो गया था। निराश राहुल वापस अपना मुँह लटकाए घर लौट आया।

.....

सम्पर्क : बी-1/6, एसबीबीजे अधिकारी आवास,
ज्योति नगर, जयपुर-302305 (राजस्थान)
मोबाइलः 09413396755
ईमेल: arpankumarr@gmail.com

अब जो करना था, वसुंधरा को करना था। उसे याद आया... किस तरह गौरव की मम्मी सरोज तनेजा ने अपने बेटे गौरव को उसके पास बॉल के पैसे के लिए भेजा था। और गौरव भी उस दिन उससे किस तरह बातें कर रहा था... "आँटी, देखो ना! राहुल ने मेरा बॉल खो दिया।"

"कैसे", वसुंधरा ने तुनककर पूछा।

गौरव पर मानों उसके तुनकने का कोई प्रभाव ही न पड़ा हो। बोला, "हम सभी क्रिकेट खेल रहे थे। राहुल ने काफी जोर से बैटिंग की। और बॉल अपने कैंपस से बाहर बगल वाली कॉलोनी में चला गया।"

"तो जाकर पता करवा लेते", वसुंधरा कहाँ हार मानने वाली थी।

"हम लोग गए थे आँटी। अव्वल तो उनके गार्ड ने हमें अंदर जाने ही नहीं दिया। फिर काफी हिल-हुज्जत के बाद अकेले मुझे अंदर भेजने को तैयार हुआ। बॉल कूड़े के ढेर में गिरी थी। जितना हो सकता था, मैंने उस ढेर में देखा। बॉल मुझे नहीं मिली। हो सकता है, बॉल के गिरने के बाद कुछ लोगों ने उस पर अनजाने में कूड़ा फेंक दिया हो। मैं निराश लौटकर आ गया।"

"आंटी, मेरा बॉल नया था। मुझे उसके पैसे चाहिए।"

"ऐं, यह क्या बात हुई! खेल-खेल में किसी से बॉल गुम होगा तो क्या तुम उससे पैसे माँगते रहोगे? कभी तुम्हारा बॉल राहुल से गुम होगा तो कभी राहुल का बॉल तुमसे। यह तो चलता ही रहता है बेटा।" वसुंधरा किसी तरह गौरव को समझाने का प्रयास कर रही थी। मगर गौरव था कि टस से मस नहीं हो रहा था। वह अपनी ढीठ और भूरी आँखों से बस वसुंधरा को देखता चला जा रहा था।

"बेटे... तुम्हारी मम्मी क्या कहेंगी! उन्हें यह जानकर कितना बुरा लगेगा कि उनका बेटा इस तरह बॉल के गुम हो जाने का पैसा मुझसे माँग रहा था।"

तभी 'बी' ब्लॉक में रहने वाली मनजीत चोपड़ा का बेटा राघव बोल पड़ा, "अरे आँटी... इसकी मम्मी ने ही इसे यहाँ भेजा है।"

यह एक चौंकाने वाली खबर थी। वसुंधरा के पैरों के नीचे से मानो ज़मीन हट गई। वह किसी गर्त में गिरती जा रही थी। यह हमारी सीधी-सादी और समृद्ध परंपरा के बरक्स जाने कैसे घोर आत्मकेंद्रण का वक्त आ गया है! क्या गांवों और कस्बों के लोग शहरीकरण की चकाचौंध में शहर आकर हमसे यही सब सीखेंगे! क्या हम अपने पीछे अपने बच्चों को यही सब सिखाकर छोड़ जाएंगे! उस पल वसुंधरा के मन में जाने कैसे-कैसे सवाल उभरते चले गए और उनमें से किसी का जवाब उसके पास न था।

वह तेजी से अंदर गई और गौरव द्वारा बताए गए बीस रुपए लाकर उसकी हथेली पर रख दिया। वह गौरव की माँ सरोज के बारे में सोचती रही। सरोज के सुंदर सलोने चेहरे के पीछे उसका यह एक नया चेहरा था, जो वसुंधरा के लिए चौंकाने वाला था।

.....

वसुंधरा मन ही मन अपना गुस्सा पीकर रह गई। वह जिस सोसायटी में रह रही थी, उसके ठीक बगल में जनता कॉलोनी थी। दोनों की दीवार एक ही थी। जब भी वह सुबह-सुबह राहुल को स्कूल छोड़ने अपनी सोसायटी के गेट पर जाती, ठीक उनसे लगी जनता कॉलोनी के कूड़े की असहनीय गंध उसके नासिका-पुटों तक आती। बच्चे बेचारे सुबह-सुबह तैयार होकर अनमने भाव से अपने स्कूल यूनीफॉर्म को अपने शरीर पर लटकाए इधर-उधर मंडरा रहे होते। हाफ पैंट पहने बच्चों के पैरों पर तो कभी उनके मुँह पर मक्खियाँ उस तरफ से आकर भिनभिनाने लगतीं। मुँह पर की मक्खियों को तो वे हटा लेते, मगर इसमें भी कुछ वक्त लग जाता। नहाए-धुलाए बच्चे के चेहरे पर यूँ मक्खियों का बैठना वसुंधरा को गँवारा नहीं होता।

एक बार वह अपने बेटे को हल्की चपत लगाती हुई बोली, "अरे राहुल, तुमसे क्या मक्खी भी नहीं हटायी जाती"।

राहुल हँसता हुआ चुप रह गया।

"ऐसे हँस क्या रहे हो, कुछ बोलते क्यों नहीं?" वसुंधरा झल्ला पड़ी।

"क्या करूँ मम्मी, एक हटाता हूँ तो दूसरी आ जाती है", राहुल ने मंद-मंद हँसते हुए जवाब दिया।

वसुंधरा को अपने बेटे का इस तरह बाल कृष्ण की तरह हँसना बड़ा प्रीतिकर लगा। वह अंदर ही अंदर हुलसकर रह गई। वह अपनी खुशियों को खुद के सामने भी प्रकट नहीं करना चाहती थी। उसे डर था कि कहीं खुद की ही नजर उसे न लग जाए। उसे जनता कॉलोनी वालों पर बड़ा गुस्सा आया। क्या ऐसे ही रहा जाता है? एक तो कूड़ा-घर हमारी ओर लगते कोने में बनवा दिया और दूसरे उसे कई कई दिनों तक उठवाते भी नहीं। यह कोई बात हुई भला! पड़ोसी पर तो खैर अपना वश नहीं है, मगर क्या पड़ोसी को ऐसा होना चाहिए? उन्हें क्या खुद नहीं दिखता कि बास मारती गंदगी की इस ढेर से कितनी मक्खियाँ और कितने मच्छर पैदा हो रहे हैं! जो मक्खी-मच्छर इधर आ रहे हैं, वे उनकी तरफ तो भी यत्र-तत्र जा ही रहे होंगे।

इतने में स्कूल बस आ गई और वसुंधरा के देखते-देखते राहुल स्कूल बस में बैठ गया। कल शाम की बॉल वाली घटना की उधेड़बुन में खोई वसुंधरा आज अपने इकलौते बच्चे को ठीक से बस में बैठा नहीं सकी।

जाते समय वह राहुल के 'बाय' का मुस्कुराकर जवाब भी नहीं दे पाई। उसके अंदर कल का बॉल वाला प्रसंग अभी भी कहीं हलचल मचाए हुए था।

भीतर की यह चिंगारी तब और भभक पड़ती जब सुबह-शाम कॉलोनी में सैर करते हुए सरोज उससे टकरा जाती। जैसे कुछ हुआ ही न हो, वह आदतन उसे देखकर मुस्कुराती। वसुंधरा अपना सिर पीट लेती... हाय राम यह कैसी औरत है! सारी लोक-लाज गंगा में डुबा आई है।

.....

वसुंधरा पुनः वर्तमान में आ गई। उसे लगा कि यही समय है जब सरोज जैसी स्त्रियों को आइना दिखलाया जा सकता है। उन्हें यह अहसास कराया जाना जरूरी है कि बच्चों के खेल मे यूं बड़ों को शामिल करना कितना गलत होता है! किसी सामान के गुम होने या किसी बच्चे द्वारा उसे तोड़ देने पर उसका हर्जाना कसूरवार बच्चे के माता-पिता से वसूलना कितना अपमानजनक होता है!

वसुंधरा ने राहुल से कहा, "राहुल, राघव को लेकर गौरव की मम्मी के पास जाओ।"

राहुल कुछ समझ न पाया हो जैसे, वह अपनी माँ की ओर टुकर-टुकर देखने लगा। वसुंधरा के होंठ स्वयं काँप रहे थे, मगर खुद को संयत करती हुई उसने आगे कहना जारी रखा, "हाँ, तुम उनसे जाकर कहो कि मेरी नई पिचकारी गौरव ने तोड़ दी है। मुझे आप ऐसी ही नई पिचकारी दिलवाओ।"

राहुल जाने लगा तो वसुंधरा ने उसे एक बार फिर टोका और टूटी हुई पिचकारी उसे देते हुए कहा, "अरे बेटे, अपनी यह पिचकारी उन्हें ही पकड़ा देना।" कुछ संकोच से और चेहरे पर कुछ अप्रत्याशित भावों के साथ राहुल ने अपनी माँ से वह पिचकारी ले ली।

.....

ठीक होली से एक दिन पहले होलिका-दहन के दिन राहुल के हाथों में एक नई पिचकारी थी। मगर यह पिचकारी रामाधर त्यागी ने नहीं खरीदी थी। यह राहुल को गौरव की मम्मी सरोज ने दिलाई थी।

.....

बच्चों को क्या है, अपना सामान मिलने पर वे सब कुछ भुलाकर अपने खेल मे लग जाते हैं। फिर कौन दोस्त और कौन दुश्मन, सबके साथ मिलवत उछलकूद में लग जाते हैं। उनके लिए कोई दोस्त या कोई दुश्मन किसी बड़े की तरह थोड़े ही न स्थायी होता है! होली के दिन सुबह से लेकर शाम तक सभी बच्चों ने खूब हुड़दंग की। बीच-बीच में दही-बड़े और बैंगन के पकौड़े के लिए राहुल कई बच्चों सहित दो-तीन बार घर आया। वसुंधरा ने देखा, उन बच्चों में गौरव भी था। उसने प्यार से उसके मोटे-मोटे गाल सहलाए और उसे एक दही-बड़ा और एक बैंगन का पकौड़ा बाकी बच्चों की तुलना में अधिक दिया। कुछ स्त्रियाँ बाहर होली खेलने के लिए वसुंधरा को बुलाने आई थीं, मगर सिर-दर्द का बहाना करके वह घर में ही पड़ी रह गई। होली के दिन दोनों मियाँ बीवी जितनी धमाचौकड़ी आपस में किया करते थे, उतनी इस बार नहीं की। वसुंधरा इस पूरे प्रकरण में मन ही मन कहीं उलझी हुई थी।

.....

देर शाम वसुंधरा के घर की कॉल-बेल बजी। उसने अनमने भाव से दरवाजा खोला। उसकी आँखों को सहसा विश्वास नहीं हुआ। अपने चेहरे पर मुस्कान और हथेली में पीले रंग की सुगंधित अबीर लिए सरोज खड़ी थी। कुछ सेकंडों की झिझक के बाद दोनों ने एक-दूसरे के गालों पर अबीर लगाया। बैठकखाने में सोफे पर बैठी हँसती हुई दोनों औरतें दुनिया-जहान की बातें कर रही थीं। वसुंधरा को लगा कि संवाद में कितनी ताकत है। दोनों महिलाओं ने जान-बूझकर किसी अप्रिय प्रसंग को नहीं छेड़ा। तभी अंदर के कमरे से राहुल निकल कर आया। वह अपनी माँ पर रंग फेंकने आ रहा था मगर बैठकखाने में सरोज आंटी को बैठा देख उलटे पाँव वह कमरे की ओर लौटने लगा। चीते की फुर्ती से सरोज उठी। राहुल को गोद में लिया, उसे प्यार किया। और फिर यह क्या... राहुल के हाथ से पिचकारी लेकर देखते ही देखते वसुंधरा का सफेद सूट गुलाबी रंग से रंग दिया। वसुंधरा भी पीछे रहने वाली कहाँ थी! उसने उस पिचकारी का बाकी रंग सरोज की गर्दन और पीठ पर उंडेल डाला।

शाम की यह होली दोनों के लिए सारे मैल को धोने वाली थी। बाहर रात का अँधेरा गहरा रहा था मगर दोनों के मन-आँगन के भीतर फाल्गुन के नए गुलाबी रंग पसर चुके थे।

बेमिसाल

नीता दानी

कैसे लिखना शुरू करूँ उस घटना को, कुछ सोच नहीं पा रही, कहानी तो शुरू से अन्त तक लिखी जाती है, पर जीवन की घटनाओं का, भावनाओं-संवेदनाओं का, किसी बिन्दु विशेष से सूत्रपात नहीं होता। यह विचित्र अहसास वाली घटना मेरे मस्तिष्क में सजग है—ज्यौं की त्यौं अंकित कर देती है।

सुबह के समय टैरस पर अखबार गिरने की आवाज और देवधर का दौड़ कर टैरेस पर पहुँच कर जोर से पुकारना—अखबार वाले... बात सुनो—जरा ऊपर आओ... किन्तु अपनी सुबह की व्यस्त नौकरी को अंजाम देता अखबार बाँटने वाला हॉकर तो न मुड़कर देखता, न पुकार सुनता और तुरंत ही साइकिल दौड़ाता फुर्र से हवा हो जाता।

देवधर हैरान-परेशान गुस्से से कसमसाते रह जाते... पत्नी शोभा ट्रे में चाय के कप और प्लेट में मैरी के बिस्कुट लिए उन्हें सहज होने की कोशिश करती। किन्तु देवधर हैरान थे आज पूरे छह माह होने को आए हैं अखबार वाला नियमित रूप से अखबार फेंक जाता है किन्तु महीना खत्म होने पर न तो बिल देता है न ही अपने पैसे लेकर जाता है। शुरू में उन्होंने सोचा था चलो शायद दो माह के एक साथ ले लेगा किन्तु दो माह बीतने के साथ ही न तो वो पैसे लेने आया—न ही उनके बुलाने पर ही वह आया। लेकिन अपनी ड्यूटी वह पूरी ईमानदारी से करता रहा। तीसरे माह उन्होंने अपने दो-एक पड़ोसियों से भी कहा कि जब उनसे पैसे लेने आएगा तो वह या तो देवधर को बुला लें, नहीं तो अखबार वाले को ही उनके घर अवश्य भेज दें। तीसरा महीना बीत गया था वे टैरेस पर खड़े उसकी प्रतीक्षा में बाट जोह रहे थे साइकिल पर सवार वह आया, ऊपर देखा अखबार फेंका और तुरंत रवाना हो गया।

देवधर पुकारते ही रह गए...

कुछ दिन बीतने पर देवधर बाजार से कुछ सामान लेकर घर आ रहे थे रास्ते में उन्हें अखबार बेचने वाला वह अपना हॉकर दिखा। उन्होंने तुरन्त लपक कर उसे हाथों से थाम लिया था। वो पल भर को चौंका—जय श्री राम साहब। उसने विनम्रता से कहा। चेहरे पर, आँखों में झलक रही अनुराग, संतोष की दिव्य रहस्यमयी घटा पलभर को उस युवा के चेहरे के विचित्र नूर को निहारते रह गए थे देवधर। संत सरीखी मुस्कान देख देवधर बाबू के शरीर के तार-तार झनझना उठे।

"जय श्रीराम बेटा... तुम्हारा अभिवादन का तरीका देख मन प्रसन्न हुआ नहीं तो आजकल तो हाय-हैलो, गुड मॉर्निंग ही चलता है।" "कैसे हैं आप जनाब", उसका सवाल सुनकर देवधर बाबू वर्तमान मे लौटे, चेहरा

"...अपनी दिनचर्या की समस्त क्रियाओं को ईश्वर से जोड़ रखा है अतः प्रत्येक क्रिया भक्तिमय प्रतीत होती है। प्रभु का स्मरण करते-करते प्रत्येक कार्य करता हूँ। हर परिस्थिति, लाभ-हानि को ईश्वर की अनुपम भेंट मान स्वीकार करता हूँ इससे मन में रंच मात्र भी तनाव और क्लेश नहीं रहता। हर प्राणी शरीर निर्वाह की व्यर्थ चिन्ता में लगा रहता है। शरीर की मूलभूत आवश्यकताएँ तो स्वतः प्रारब्ध से पूरी हो जाती हैं।..."

सम्पर्क : 8-ए, बैंक कॉलोनी, बाग फरज़ाना,
टीन के गिरते के पास, आगरा (उत्तर प्रदेश)
मोबाइल: 0562-2523353, 09412895464,
ईमेल: nitasp59@yahoo.com

अचानक तन गया, सख्त लहजे में बोले, "अरे यार आज तीन माह से ऊपर हो गए तुम अखबार के पैसे नहीं लेने आते... बिल है अगर तुम्हारे पास तो ठीक है नहीं तो वैसे ही पैसे ले लो पूरे तीन महीने लगातार अखबार आया है... ये लो पैसे..." देवधर ने पैंट की जेब से पर्स निकाला पैसे देने के लिए।

एकाएक, मोहन, यही नाम तो था उसका, उसने देवधर के हाथ वहीं थाम लिए, "अंकल जी मैं घर आकर स्वयं पैसे ले जाऊँगा। अभी तो बिल नहीं है मेरे पास... न ही मैं कहीं भागा जा रहा हूँ न ही आप कहीं जा रहे हैं।" "लेकिन बेटा हिसाब तो बराबर चलना चाहिए। तीन महीने के पैसे फटाफट रख लो मेरे सिर से भी बोझ उतरेगा।" "अंकल जी अभी मुझे बिल्कुल फुर्सत नहीं है मैं रुक नहीं सकता", और मोहन ये गया वो गया, देवधर की आँखों से ओझल होता मोहन भीड़ में गुम हो गया था।

घर आकर शोभा को उन्होंने सारी बातें बताईं। चौथा महीना बीत गया लेकिन मोहन ने पैसे नहीं लिए अब तो देवधर फ्लैट के नीचे खड़े होने लगे, शोभा ऊपर टैरेस पर खड़ी होती, दोनों प्रतीक्षा करते लेकिन जब वे दोनों थक कर भीतर चले जाते तभी आवाज होती और अखबार टैरेस पर पड़ा होता। देवधर दौड़कर टैरेस पर पहुँच डाँट लगाते "कल से हमारे घर अखबार डालने की कोई जरूरत नहीं है.... पहले हमसे पूर्व के हिसाब के पैसे लो फिर डालना अखबार" लेकिन मोहन पर तो कोई असर ही नहीं होता। अखबार डालने, देवधर के पुकारने का क्रम चलता रहा।

देवधर ने लोगों से मोहन के घर का पता मालूम किया और एक दिन को उसके घर पहुँच गए। सांझ ढल रही थी। मोहन घर पर नहीं था। देवधर उससे बात कर उसी के हाथ में पैसा देना चाहते थे। घर में केवल उसकी माँ थी जिसको आँखों से कम दिखाई देता था। चलने-फिरने में भी शायद दिक्कत थी, देवधर घर के लिए कुछ फल वगैरह लेकर जा रहे थे, उनके मन में विचार आया और उन्होंने वो फल मोहन की माँ को ही दे दिए, वह ना-नुकुर करती रहीं लेकिन देवधर के बार-बार आग्रह करने पर संकोच के साथ 'सेव' स्वीकार कर लिए थे। बाहर कुछ आवाज हुई, शायद मोहन आ गया था, घर पहुँच कर मोहन ने ज्यों ही अपनी साइकिल एक ओर लगाई, बाहर स्कूटर खड़ा देख खिड़की से झाँका देवधर तिरछे होकर बैठे थे। घर में बैठे देवधर को देख मोहन सकपका गया था।

देवधर बाहर आए किन्तु वहाँ कोई नहीं था। मोहन की साइकिल देख आश्वस्त हुए लेकिन मोहन से मुलाकात इंतजार करते वक्त बीत रहा था। "बहन जी, यह पैसे रखिए... यह मोहन के ही हैं मेरा नाम बता देना उसे कह देना कि मैं अखबार के पैसे दे गया हूँ।" "नहीं-नहीं, भाईसाहब, यह तो आप बेटे को ही देना मैं उसको कल आपके घर भेज दूंगी... उसे पैसे लेने हैं तो उसे ही चिन्ता होगी वह स्वयं ही दौड़ा आएगा...। उसकी माँ के इंकार करने पर देवधर घर लौट आए।

छह माह बीते चुके थे लेकिन चाहकर भी देवधर मोहन के पैसे न दे पाए। अब वे हैरान परेशान थे कि आखिर मोहन उनसे पैसे क्यों नहीं ले रहा। सुबह-सवेरे दो-चार बार ऐसा दृश्य भी घटित हुआ कि देवधर मोहन के पीछे दौड़ रहे हैं और मोहन साइकिल की रफ्तार बढ़ा उनसे पीछा छुड़ा रहा हो। देवधर का परिवार हैरान था। कई लोगों से देवधर ने पूछताछ की कि कहीं अन्यत्र तो ऐसा ही करता है कि पैसा नहीं लेता। और फिर जीविका की खातिर ही तो वह अखबार बेचने का कार्य करता था और इसी का प्रतिफल पाने की उसमें दिलचस्पी न देखकर देवधर हैरान थे।

किन्तु वह दिन फिर नहीं आया। उसके व्यवहार से देवधर को झल्लाहट होने लगी थी। लगभग आठ-नौ माह हो गए थे। समय सरकता गया, दिन महीनों में बदले। एक रोज देवधर के एक पारिवारिक मित्र और दूर के रिश्तेदार जो काफी पैसे वाले और प्रतिष्ठित हस्ती थी, उन्होंने अपने बड़े से बंगलेनुमा आवास पर भागवत कथा का आयोजन कर रखा। कथा का रसास्वादन करने देवधर पत्नी सहित पहुँच गए थे।

घर के बाहर बड़ा पंडाल सजा था। देवी-देवताओं की भव्य मूर्तियों, तस्वीरों के मध्य कथावाचक के बैठने की व्यवस्था थी। कथावाचक के अगल-बगल अन्य पांडित्य प्रेमी और शिष्य बैठे थे। भीड़ के मध्य देवधर की दृष्टि अचानक मोहन पर पड़ गई, "हाँ मोहन ही है।" वह स्वयं से बुदबुदाए—आज अवश्य ही वो हिसाब बराबर कर लेंगे।

युवा मोहन के चेहरे, उसके उठने-बैठने में सहज, निश्छल और एक चुम्बकीय आकर्षण था। पति-पत्नी ने पूर्ण मनोयोग श्रद्धाभाव से कथा का आनन्द लिया। कथा की समाप्ति पर प्रसाद तथा भोजन की व्यवस्था थी। मोहन ने भोजन परोसने का सम्पूर्ण कार्यभार संभाल लिया था। भागता-दौड़ता वह प्रत्येक अतिथि के स्वागत-सत्कार में लगा था। भोजन के पश्चात गुरुजनों के हाथ-पाँव धुलवाए, चरण स्पर्श कर आशीर्वाद लिया और जूठे बर्तनों की साफ-सफाई कर उन्हें उनके उचित स्थान पर रखा, पूरे पंडाल की साफ-सफाई और सुरुचिपूर्ण व्यवस्था कर वह स्वयं के लिए थाली मे खाना परोसने ही लगा था कि कुछ अतिथियों का वहाँ आगमन हुआ, मोहन ने लपक कर उनका चरण-स्पर्श तथा अभिनन्दन किया साधु-सन्तों को उचित आसन दिए।

"महाराज भोजन-प्रसाद ग्रहण कीजिए मैं अभी व्यवस्था करता हूँ..."

"... नहीं, नहीं भोजन की हमें कोई जल्दी नहीं है। मार्ग में हमने जलपान ग्रहण कर लिया था... प्रसाद भोजन हम अवश्य लेंगे... कथा तो हम सुन नहीं पाए... भागवत कथा से तो हम सभी परिचित हैं। हम तो वत्स आपसे कुछ सुनना चाहते हैं—आपसे चर्चा करना चाहते हैं आपकी

दिनचर्या कैसी चल रही है।" देवधर आश्चर्य से अतिथियों तथा मोहन के मध्य का संवाद सुन रहे थे। मोहन के मुखमण्डल पर आए संकोची, लजीले भाव थे—"भला मैं आप सब विद्वानों के मध्य कुछ कहने-बोलने का साहस कैसे कर सकता हूँ आप तो ज्ञानी-ध्यानी और मेरे गुरुजन हैं।"

अतिथियों के पुनः आग्रह पर मोहन ने आँख मूँदकर प्रभु का ध्यान कर नमस्कार किया "ऊँ नमो भगवते वासुदेवाय।" वासुदेव सर्वम का अनुभव करना ही सर्वत्र का आनन्द ही आनन्द का सूचक है। "आदरणीय गुरुजनों! मैं तो एक तुच्छ सा बालक हूँ, ज्ञान-धर्म कुछ नहीं जानता। सुबह उठकर रात्रि में बिस्तर पर जाने तक मात्र जीविकोपार्जन में ही लगा रहता हूँ। छात्र हूँ, अध्ययन भी करता हूँ, ईश्वर के प्रति अनन्य प्रेम और अगाध श्रद्धा भक्ति होने से सत्संग और भगवत कथा के आयोजनों में साधु संतों का दर्शन कर उनका आशीर्वाद ग्रहण कर अपना जीवन सार्थक बनाने का प्रयास करता हूँ। साधु-सन्तों की सत्संगति, ईश्वर का भजन-कीर्तन—इतना बड़ा खजाना मुफ्त में ही पा जाता हूँ। प्रभु को हर क्षण धन्यवाद देता हूँ प्रत्येक स्थन, काल, प्रहर, प्रत्येक मनुष्य में वासुदेव कृष्ण को ही देखता हूँ।

अपनी दिनचर्या की समस्त क्रियाओं को ईश्वर से जोड़ रखा है अतः प्रत्येक क्रिया भक्तिमय प्रतीत होती है। प्रभु का स्मरण करते-करते प्रत्येक कार्य करता हूँ। हर परिस्थिति, लाभ-हानि को ईश्वर की अनुपम भेंट मान स्वीकार करता हूँ इससे मन में रंच मात्र भी तनाव और क्लेश नहीं रहता। हर प्राणी शरीर निर्वाह की व्यर्थ चिन्ता में लगा रहता है। शरीर की मूलभूत आवश्यकताएँ तो स्वतः प्रारब्ध से पूरी हो जाती हैं। पदार्थों को पाने के लिए मानव परिश्रम करे, परन्तु चिन्ता न करे। अकर्मण्य न बने। मनुष्य शरीर तो मिला ही है स्वयं का उद्धार करने हेतु सर्व कल्याण करने हेतु, स्वयं पर जीत पाना और मन को वश में रखना सबसे बड़ी जीत है..."

देवधर निर्निमेष नेत्रों से कुछ दूर खड़े मोहन को देख सुन रहे थे। मोहन की संत सरीखी वाणी हैरत में डाल रही थी। मोहन का स्वर उनके कानों में पड़ रहा था—"दूसरों के कल्याण के लिए मानव हित के लिए मनुष्य को परम सात्विक बनना चाहिए। निष्काम भाव से परोपकार करना, परस्पर एक-दूसरे का हित सोचना। तन-मन-धन से दूसरों की भलाई करने के लिए तत्पर रहना यही परम भक्ति है, ऐसा करने पर सभी कार्य साधन के रूप में परिणत हो जाते हैं। वर्तमान में मनुष्य भाँति-भाँति की लुभावनी प्रवृत्तियों में फँस स्वयं को गिरा रहा है। इतिहास में एक भी उदाहरण ऐसा नहीं मिलता जहाँ परदोष दर्शन, घृणा, द्वेष तथा प्रतिशोध द्वारा सत्कार्य की सिद्धि हुई है। सत्-प्रयत्न कभी व्यर्थ नहीं जाते। मुझे मेरी माँ ने बचपन से ही यही शिक्षा दी है। प्रभु ने मुझे बलिष्ठ शरीर और मन में संकल्प शक्ति दी है, यह शरीर ही सेवा का माध्यम है। दैनिक व्यवहार को विशुद्ध बनाना ही सच्ची भक्ति है। अपने संपर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति में ईश्वर देखना, शुद्ध व्यवहार करना ही सच्ची पूजा है..."

मोहन के शांत सौम्य चेहरे और सात्विक आचार-विचारों को देख-सुन कर देवधर चकित थे। उनके अन्तःस्थल में बरबस ही एक हूक सी उठी। जगत को संस्कारी बनाने वाली स्मरणीय पुरुषों में कोई भी धनी नहीं था। ईसा-मसीह एक अत्यंत निर्धन यहूदी थे। बुद्ध राजपाट छोड़कर एक भिक्षुक बने, मुहम्मद साहब उपवास करने वाले एक फकीर थे।

कुछ क्षण वाणी को विराम दे मोहन पुनः बोला, "आज मैं एक ऐसे सज्जन के विषय में बता रहा हूँ, जिनके द्वारा किया गया, मानव हित का कृत्य मुझे प्रेरणा देता है। आज के दौर में प्रशंसा रूपी झंकार सुनने के लिए लोग लालायित रहते हैं, वहीं यह श्रीमान चुपचाप कार्य करते हैं। साधारण आय पाने वाले हैं और अपने पूरे परिवार का पालन-पोषण करते हैं। इस इंसान के घर मैं अखबार डालता हूँ।" देवधर के कान खड़े हो गए थे "मैंने उन्हें पिछले एक डेढ़ वर्ष से एक भिक्षुक पर दया, कृपा बरसाते स्वयं अपनी आँखों से देखा है, नित्य प्रातः अपनी साइकिल पर सवार होकर मैं गली-मुहल्लों, दुकानों और अन्य स्थानों पर अखबार बेचता हूँ। वो सज्जन नित्यप्रति एक भिखारी को नाश्ता करवाते हैं—भिक्षुक जहाँ प्रतिदिन डेरा डालता है उसी के कुछ दूरी पर एक हलवाई की दुकान है उस दुकान से उसको नित्य नाश्ता मिलता है, पीने के लिए चाय-दूध जैसा भिखारी का जी चाहे मिलता है। खर्च उन सज्जन का होता है, उसके स्वास्थ्य का ख्याल रखते हैं। बीमार पड़ने पर उसे स्कूटर के पीछे बिठाकर डॉक्टर के पास भी ले जाते हैं। रात्रि में उसके सोने का इंतजाम भी उन्होंने रैन बसेरे में करवा रखा है। मौसम के अनुरूप वस्त्रों को मुहैया करवाने की व्यवस्था करते हैं। अभी कुछ दिन पहले ही उन्होंने उसे एक छाता भी लाकर दिया है। वह भिखारी भी अपने उस दानी मालिक पर श्रद्धा रखता है। आज की भागदौड़ भरी जिन्दगी में जहाँ लोग भौतिक सुख-सुविधा पाने की होड़ में लगे हैं—उनका यह कार्य क्या किसी पूजा-आराधना से कम है? ऐसे सज्जन का हृदय विशाल और दया से भरपूर होगा।"

देवधर चकित थे, जिस कार्य को वे बेहद चुपचाप करते थे, अपनी पत्नी से भी कभी इसके विषय मे जिक्र नहीं किया था और वे स्वयं भी तो अपनी कितनी छोटी-मोटी जरूरी-गैरजरूरी आवश्यकताओं को नजरअंदाज कर अपनी ख्वाहिशों को भविष्य के लिए टाल कर, उस बेसहारा गरीब की मदद कर दिया करते थे। उनके द्वारा की गई हल्की फुल्की छोटी सी मदद के प्रयास को मोहन ने इतना महिमा-मंडित कर बखान किया। देवधर की आँखें भर आई थीं। मोहन के समीप पहुँच देवधर ने उसे गले से लगा लिया—उनके काँपते अधरों और भर्राये कंठ से बस इतना ही निकल पाया, "बेटा तुमने तो मेरा दिल ही जीत लिया... तुम बेमिसाल हो..."

धीमे से मोहन के मुख से निकला "नहीं सर आप बेमिसाल हैं..."

अंधा भिखारी

यंतुदेव बुधु

बूढ़ा-अंधा भिखारी शहर की एक पतली गली में एक दुकान की दीवाल के सहारे जमीन पर सारा दिन बैठा रहा। बूढ़ा बेचारा फटा-पुराना चादर ओढ़े इसी आस में था कि आज भी अच्छी कमाई हो जाए। कड़ाके की सरदी पड़ रही थी। शाम हो चुकी थी। जगह सुनसान सी हो गई।

भिखारी के सामने एक पुरानी कटोरी पड़ी थी जिसमें कुछ सिक्के थे। किसी के आने की आहट सुनते ही भिखारी बोलने लगता—कुछ तो दे दो बाबा को, भगवान तेरा भला करे। सारा दिन वह रटता रहता था।

एक शराबी उसी रास्ते से गुज़र रहा था। आहट सुनते ही भिखारी बोलने लगता—कुछ तो दे दो बाबा को, भगवान तेरा भला करे। शराबी झूमता हुआ भिखारी के सामने रुका और एकटक उसे देखता रहा। उसे पता चल गया कि भिखारी अंधा है। उसने सोचा कि पैसे डालने के बजाय अगर मैं कटोरी से कुछ सिक्के निकाल लूँ तो अंधे को पता नहीं चलेगा। यह सोचते हुए वह कटोरी की ओर झुका। कटोरी हिली और सिक्कों के बजने की आवाज़ आई। भिखारी ने सोचा कि किसी ने कटोरी में सिक्का डाला होगा। भिखारी बोल उठा—भगवान तेरा भला करे। तभी ज़ोरों की हवा का एक झोंका आया और भिखारी के शरीर की चादर हवा के झोंके के साथ उड़ गई।

यह दृश्य देखकर शराबी का नशा झटके में उतर गया। वह थर-थर काँपने लगा। उसका हृदय चूर-चूर हो गया। ऐसा लगा कि उसके पैरों तले से ज़मीन खिसक गई। वह नि:शब्द रह गया।

ऐसा लगा कि शराबी का कलेजा फट गया। बात यह थी कि भिखारी अंधे होने के साथ-साथ दोनों पैरों से अपाहिज भी था।

■■■

"...शराबी झूमता हुआ भिखारी के सामने रुका और एकटक उसे देखता रहा। उसे पता चल गया कि भिखारी अंधा है। उसने सोचा कि पैसे डालने के बजाय अगर मैं कटोरी से कुछ सिक्के निकाल लूँ तो अंधे को पता नहीं चलेगा। यह सोचते हुए वह कटोरी की ओर झुका। कटोरी हिली और सिक्कों के बजने की आवाज़ आई।..."

सम्पर्क : मोर्सल्माँ सें तान्द्रे, मॉरीशस
दूरभाष: 230 217692
मोबाइल: 230 57649397

जसविंदर शर्मा की दो लघु कथाएँ

बोहेमियन

सगाई के बाद एक आधुनिक विचारों वाले नौजवान ने अपनी मंगेतर से कहा, "डार्लिंग, शादी के बाद हमारे बीच कोई गलतफहमी न पैदा हो, मैं तुम्हें अपने भूतकाल के दौरान अन्य लड़कियों के साथ रहे मेरे रोमांस व अफेयर्स के बारे में सब-कुछ साफ-साफ बता देना चाहता हूँ। उम्मीद है कि तुम मेरी बातों का बुरा नहीं मानोगी।"

मंगेतर ने हैरानी के मारे कहा, "ठीक है डियर, सबका एक पॉस्ट होता है मगर तुम कुछ भूल गए क्या? अभी पिछले महीने मद्रास कैफे में विशेष तौर पर तुमने अपनी बीती जिन्दगी के बारे में मुझे विस्तार से बताया था और मैं सबकुछ भूल गई हूँ। अब छोड़ो, उन बातों को बार-बार क्या दोहराना।"

लड़का आत्मविश्वास से बोला, "हाँ, बताया था मेरी रानी, मगर वे सब पिछले महीने की बातें थीं। अब इस महीने में मेरे साथ क्या-क्या हुआ, यह सब तुम्हें बताना भी तो मेरा फर्ज है।"

■■■

तारीफ

वह सारे शहर में बुरी तरह बदनाम था, इसीलिए सब उसे जानते थे। एक दिन वह मर गया। उसे दफनाने की रस्म अदा करने के इन्तजाम किए गए। शहर के चर्च का पादरी कहीं बाहर गया हुआ था। पड़ोसी कस्बे के पादरी से काम चलाना पड़ा। उस नए पादरी को मरने वाले इस बदनाम आदमी के बारे में कुछ भी पता नहीं था। न ही उसने पूछा और न किसी ने बताने की जरूरत समझी। मरने के बाद तो आदमी के अच्छे गुणों की ही चर्चा करते हैं।

सुपुर्दे-खाक की रस्म के दौरान मौके की नजाकत कहिए कि भावनाओं की रौ में बह कर वह नया पादरी मृत व्यक्ति के अद्वितीय गुणों की प्रशंसा करने लगा कि मरने वाला एक अच्छा कर्मचारी, एक बेहतरीन पड़ोसी, एक कर्मठ पिता, एक जिम्मेवार पति और न जाने क्या-क्या है। मृत की विधवा ने पास खड़े अपने आठ वर्षीय बेटे के कान में कहा, "लगता है हम गलत मातमपुर्सी में आ गए हैं, जा कर पता करो कि फादर जिस आदमी की इतनी 'तारीफ' कर रहा है वह कौन है?"

■■■

सम्पर्क : 205, जी एच-3, न्यू कैपिटल सोसायटी, सेक्टर-24,
पंचकूला-134116 (हरियाणा)
फोन: 0978724 30707
ईमेल: jasvin.sham.7@gmail.com

शोभा रस्तोगी की दो लघुकथाएँ

आई लव यू दिल्ली

वह पूरे दिन की धींगा-मुस्ती से बेजार हो उठा। शैक्षिक प्रमाणपत्रों को प्रतिदिन निहारता गोया अलादीन का चिराग रगड़ रहा हो, किन्तु जिन्न प्रकट न होता। कभी इस दफ्तर कभी उस। रेडियो, दूरदर्शन, सम्पादकीय कार्यालय, स्कूल कॉलेज के बोर्ड, कोचिंग सेंटर के विज्ञापन पढ़ते देखते आँखों ने सपनों की रील हजम कर ली थी। भूख वहीं खड़ी फुंकार रही थी। दो एक होम ट्यूशन और छह घंटे की नाइट ड्यूटी। प्राइवेट ऑफिस में निर्वाह करना एक सामाजिक अपराध था। करने पड़ते हैं ऐसे खूनी कत्ल।

गाँव से आए बाबूजी के पत्र में बिगड़ी फसल का जिक्र था। माँ को गठिया हुआ है। बहन की जवानी फिसलने को है। दिल्ली छोड़ने की कशमश गहराती है। गाँव की खेती सम्हालूँ? क्या पापा पढ़ के इतना? गहने गिरवी रखे। यही करना था तो ऐसे ही कर लेता। अब तो चिड़िया... फुर्र।

लस्त पस्त त्रस्त बिस्तर पर पड़ते ही पत्नी का सुनामी प्रश्न—"मिली कोई ढंग की नौकरी?"

"ढंग की का क्या मलतब है? देख तो रहा हूँ।" धकियाता है सुनामी को।

"चलो! गाँव चलते हैं।" पत्नी राह सुझाती है।

कब से यही विचार उसे मथे जा रहा था। पत्नी के उघाड़ते ही छोड़ दिया उसे।

"नहीं जाएँगे छोड़ दिल्ली। कोशिश की है। देखत बा का होत है।"

हर रोज की तरह दिल्ली की जमीन लपेट सो जाता है वह, अगले दिन से लड़ने के लिए।

■■■

सम्पर्क : RZD, 208B, डी.डी.ए. पार्क रोड, राजनगर पार्ट-2,
पालम कॉलोनी, नई दिल्ली-110077
मोबाइल: 9650267277
ईमेलः shobharastogishobha@gmail.com

पापा की बेटी

"आ मेरी सोन चिरैया! पापा के कंधे पे बैठ। मैं घोड़ा बनूँ तू मेरी सवारी।" नाना प्रकार से पापा अपनी बिटिया को खेल खिलाते, रिझाते। बेटी हँस-हँस के दोहरी हुई जाती।

समय के अन्तराल से यही बिटिया डॉक्टर बनी। विवाह बेला ने दस्तक दी।

"पापा! मेरी शादी के बाद आप अकेले हो जाओगे।"

"बेटी तो पराई ही होती है।"

"बेटे से अधिक लाड़ प्यार दिया मुझे। आपको छोड़कर नहीं जाऊँगी।"

'ऐसा न कह। कँवारी रहेगी?"

"किसी अनाथ पर सुशिक्षित, नौकरीपेशा से करना चाहोगे मेरा विवाह?"

"तुझे पसंद है तो...।"

"ठीक है। हम दोनों आपके साथ रहेंगे।"

"तू मेरी बेटी नहीं बेटा है।"

"बेटी को बेटी कहकर सम्मान दो न पापा। आपको बेटे की कमी खलती है?"

"न... न... बेटी। बेटी होना तो गौरव की बात है।"

"आप जैसे पापा की तो और भी..." हँसते हुए पापा की गलबहियाँ डाल दीं बेटी ने।

■■■

वापसी

अलका धनपत

हर रोज झगड़े बढ़ते ही जा रहे हैं। ये बहुत अच्छे थे, पर पता नहीं क्यों रोज किसी न किसी बात पर हम एक दूसरे पर क्रोध करते रहे। उधर मैं गर्भवती हो गई। छठा महीना चल रहा था। मेरी सास और देवर इतने अच्छे थे कि वे हमारी किसी भी बात में आना ही नहीं चाहते थे। मेरी सास अभी स्वस्थ थीं, वे प्रातः उठकर सब काम कर देती थीं। कभी-कभी तो रात के लिए भी भोजन बना देती थीं। मुझे लगता था कि मैं इस घर में अनावश्यक सी थी। पति का घर, मैं घर पर रहूँ या न रहूँ मजे से चल रहा था। मेरी कहाँ आवश्यकता है मैं ढूँढ़ती ही रह गई। इस तनाव की स्थिति में मैंने एक प्यारी सी बच्ची को जन्म तो दिया लेकिन वह मेरे साथ दस दिन से अधिक न रह सकी। अपनी प्यारी सी, फूल सी बच्ची को देखकर मैं कितना रोई थी। बस इस गहरे दुःख में मैंने तलाक के काग़ज़ों पर हस्ताक्षर किया और उनको भिजवा दिए। बेटी दोनों को जोड़ने का तार बनती पर वह तार तो टूट चुका था। सो दोनों ओर से आपसी सहमति के कारण तलाक भी जल्दी ही मिल गया।

मेरे पिता गाँव के कार्यों में बढ़-चढ़कर भाग लेते थे। पहले लोगों ने समझा कि मैं बच्ची के खोने के दुःख के कारण यहाँ आई हूँ। पर अब...। अब बातें बढ़ने लगीं। सभी पूछते बेटी कब ससुराल जाएगी? क्या बताती कि मैं उस घर में अपनी पहचान तलाशती रही पर कोई कोना मेरा अपना न बन सका। उस घर के किसी भी कार्य पर मेरी कार्य-कुशलता की छाप नहीं थी।

कभी कुछ करने का अवसर ही नहीं मिला और अपनी नौकरी की व्यस्तताओं के कारण मैं भी कुछ न कर पाई। हाँ आठ-दस बार बाहर जाकर खाना जरूर खाया था। मेरी सास पाक-कला में निपुण थी। वह बाहर के खाने से ज्यादा स्वादिष्ट खाना बनाती थी इसीलिए पति को बाहर के भोजनों में कुछ खास स्वाद भी नहीं आता था। अब समझ आता था कि दिल का रिश्ता मुँह के स्वाद से जुड़ता है। वह माँ के हाथ के बनाए खाने की प्रशंसा के पुल बाँध देता था। मैं यह सब सह नहीं पा रही थी। हार गई मैं सास की कार्य कुशलता के आगे। मैंने बिल्कुल सहयोग देना छोड़ दिया। सास मनाती रही, पति-पत्नी का अहम् ऐसा टकराया कि कोई रास्ता ही न निकला और अंततः मैं सब बंधन तोड़कर मायके ही चली गई।

सम्पर्क : वरिष्ठ प्राध्यापिका, हिंदी विभाग,
महात्मा गाँधी संस्थान, मोका, मॉरीशस
मोबाइल: 230-54900554

बस! सुबह निकलना, शाम तक काम, तब घर वापिस। टी.वी. देखना, माँ के साथ थोड़ा हाथ बँटाना और सोना। अब सामाजिक उत्सवों में जाना भी अच्छा नहीं लगता था। एक नीरस दिनचर्या दो वर्ष तक चलती रही। तलाक के बावजूद भी मेरे पति ने मुझे 'अनफ्रेंड' नहीं किया था। फेसबुक पर उसके मित्रों ने, परिवार के अनेक सदस्यों ने भी 'कॉमेंट्स' किए थे पर उसने कभी मेरी निंदा में एक भी शब्द नहीं लिखा था। आज भी उसके 'प्रोफाइल पिक्चर' में मैं उसके साथ हूँ।

मेरी माँ कई बार मनमुटाव का कारण पूछती पर मैं सही कारण न बता पाई। क्या बताती मैं! मैं स्वयं ही बड़ी कठिनाई से कारण ढूँढ़ पाई। एक दिन एक मेल देखा तो श्रीमान का था। इनबॉक्स में था, "मैं तुम्हें आज भी प्यार करता हूँ।" मैं पढ़कर सोचती ही रह गई। तलाक के दो वर्ष हो चुके थे। इसका मतलब उसने अभी तक दूसरी लड़की नहीं ढूँढ़ी है। उसके दिल के कोने में मैं अभी भी हूँ। इधर मैं भी तो कितनी अकेली तथा निरुद्देश्य सी हो गई हूँ। लगता है केवल अपने लिए जी रही हूँ। इस वाक्य को जाने क्यों मैं 'डीलीट' नहीं कर पाई।

इस मेल को दस दिन बीत गए। मैंने अपनी दोस्त से बात की। उसने कहा, "अपने मन के कोने में झाँक कर देखो, क्या तुम उसे भुला पाई हो? यदि नहीं तो जो प्यार तुम्हें फिर से पुकार रहा है उसे स्वीकार करने में हिचकिचाओ मत।"

घर पहुँच कर नहा-धोकर मैंने मेल खोला। "मैं तुम्हें आज भी प्यार करता हूँ।" जब फिर से पढ़ा तो आँखें भर आयीं। मैंने मैसेज सेंट किया—मैं भी! प्लीज़, मैं तुम्हारी माँ का आदर करती हूँ पर मैं अपना घर, अपना कोना अलग चाहती हूँ। मैं अपने अस्तित्व की, अपनी पहचान की खुशबू के साथ जीना चाहती हूँ।"

कुछ दिन तक कोई जवाब नहीं आया। एक महीने के बाद उसने लिखा, "चलो फिर से विवाह करें। मैंने एक किराए का घर देख लिया है।"

और... आज हमारा पुनर्विवाह हो रहा है। केवल परिवार के सदस्य हैं। एक यज्ञ हुआ है। पंडित जी विवाह संस्कार समझा रहे हैं। मैंने जीवन में अपने सगे-संबंधियों के कितने वैवाहिक यज्ञों में प्रवचन सुने हैं पर सुने कम केवल उत्सव का आनंद लिया है। यहाँ तक कि मैं अपने विवाह के यज्ञ के महत्व को भी नहीं समझ पाई थी। पर आज पंडित जी की बात समझ पा रही हूँ। पंडित जी अंत में कह रहे हैं कि बढ़ते तलाकों की सभ्यता में यह एक उदाहरण है। यदि हमारी युवा पीढ़ी अपने भीतर झाँके तो शायद समाधान मिल जाएगा। अहंकार तथा अधीरता के कारण ही घर टूट रहे हैं। पर मेरा घर आज जुड़ रहा है। पति के मुख की मधुर मुस्कान मेरे हृदय को उल्लसित कर रही थी। मेरा घर, बसने जा रहा था। सबसे मिले, आशीर्वाद के फूल हम दोनों पर झर रहे हैं।

वैदन बोश ब्रिज

सुशीला उमराव अंग्रु

खड़ा है ऐसा स्थिर होके
जैसे हट्टा-कट्टा नौजवान
अपने आप सोचता वह
मैं हूँ एक शाप
या हूँ मैं एक वरदान?

पहले लोग जब करते थे इंतजार
तो कहते थे बातें चार
और करते थे लोग आपस में प्यार।

भैया-भाभी नाना-नानी
बोलते थे राम-राम।
चाचा-चाची दादा-दादी
हँसकर करते थे सलाम।

सुनाते थे आप्रवासियों की बातें
और कितने मुश्किल से गुजारते माई बाबा अपनी रातें।

अब होते हैं न प्रवासियों और
माई-बाबा के जिक्र
सबको होती है बस यातायात की फिक्र।

नहीं, नहीं, मैं शाप नहीं हूँ
मैं हूँ एक वरदान।
रोज मुझ पर हैं चलती हजारों सवारियाँ
लेकर खान और पान।
भागती रहती हैं दिन और रात गाड़ियाँ
लेकर कितने सामान
मैंने तो हजारों लोगों का रहना
कर दिया आसान।
हाँ, मैं तो हूँ एक वरदान।
हाँ, मैं तो हूँ एक वरदान।

■■■

सम्पर्क : हिंदी अध्यापिका, सूरीनाम
दूरभाष: 5978644535

सुरेन्द्र भूटानी की दो कविताएँ

बदला हुआ वक्त

कौन आज सलीब ले कर चले
राहें तो जानवरों से भर गईं हैं
सवाल पूछना वाजिब न रहा
आ सकोगे हमसफ़र बनने को!

मंज़िल का सुराग़ क्या होता है
यहाँ सभी कुछ तो खो गया है
किन क़दरों की दुहाई दोगे अब
ज़मीर भी आजकल सो गया है

वक़्त नाशनास होता जाता है
आदमी तो पहले से बिछुड़ा है
तुम किसकी तलाश में जाओगे
हर कोई गुमशुदा का इश्तिहार है

दहशत के साथ वहशी साये हैं
इस माहौल में हम भी आये हैं
तुम क्या अपना बन सकते हो?
इस खालीपन को भर सकते हो?

अब कौन सा मुखौटा लगाओगे
हर मुखौटा तो तर्क हो चुका है
किस बांकपन की बात करते हो
किस दरपन की बात करते हो

ये बदला हुआ वक़्त है आखिर
इस खेल में हर कोई है शातिर

■■■

सम्पर्क : प्रोफेसर, पोलिश अकादमी ऑफ साइंसेस,
वॉरसॉ (पोलैंड)

आत्म-विरोध

ये सारा ब्रह्माण्ड मेरा है
आकाश से उतर कर
इस महाद्वीप पर आया हूँ
महाद्वीप की विभक्ति हुई
तो इस देश का बलिहारी बना
भूमिपुत्र हो कर
इस प्रान्त से आ जुड़ा
और चलता हुआ, कहलाया
इस नगर का एक सभ्य नागरिक
ताकि रह सकूँ किसी गली के
नुक्कड़ वाले मकान में

परिवार आ जुड़ा
तो सिमट कर बैठ गया एक कमरे में
मेरी विशालता कहाँ से कहाँ आ गई!
किन्तु खोजी मन कहीं और भटक गया

एकांत मन
अचानक हाथ में माचिस लिए
किसी सिगरेट को ढूँढ़ता है
और सहसा विचार उपजता है
सिगरेट जलाने से पहले
इस माचिस की तीली के साथ
ये सारा घर भी जलाया जा सकता है
और मेरा ब्रह्माण्ड भी तो अपने आप जल सकता है

किन्तु मैं राख हो कर फिर कहाँ जाऊँगा
तालाब, नदी या अथाह समुद्र
इस नीले आकाश के नीचे
सब हाथ बाँधे
एक परिक्रमा कर रहे हैं
मुझे पाने की, या मुझ में समाने की
मैं दुविधा में मग्न
मेरी धरती, मेरा गगन
क्या निर्णय दूँ
या
क्या लूँ!

■■■

रेखा मैत्र की तीन कविताएँ

आधी प्याली चाय

आज अनायास ही तुम्हारे साथ / चाय पीने का ख़याल
जिद्दी बच्चे-सा आकर / खड़ा हो गया मेरे पास।

कैसे-कैसे समझाया इसे / मिन्नतें भी कीं इसकी
बहलाया-फुसलाया भी / पर ये अड़ियल टट्टू-सा
हिला नहीं, डटा ही रहा।

फिर मैंने चाय बनाई / आधी प्याली ख़ुद पी
बाकी उसे पिला दी।

स्वरूप सत्य का...

ना तोड़ो-मरोड़ो इसे दोस्तो!
खुशबू से महकता फूल है ये!
गर तुमने मरोड़ा इसे भूल से
तो सारी पंखुड़ियाँ ही झर जाएँगी
और खुशबू भी इसकी बिखर जाएगी
इसका सादा-सा रूप बिगड़ जाएगा
बस एक ठूंठ-सा रह जाएगा
फिर चुभेगा तुम्हें चेतना की परत में!

पंछियों के झुंड

बहुत सारे दिन भी
पंछियों के झुंड की भाँति
एक साथ उड़ जाते हैं
और.... पीछे छोड़ जाते हैं
गूंज अपने स्पंदन की
और...
कुछ टूटे हुए पंख भी...।

■■■

सम्पर्क : E-mail: rekha.maitra@gmail.com
18943 VICKIE AVENUE Apt # 62
CERRITOS, CA 90703 U.S.A.

इक विस्मय की डोर

समीर हसन मूसा

जीवन ये विचित्र रणभूमि
पर मैं नहीं कोई रणछोर।
है जहाँ चूके महानायक
वहाँ जीतेगा मुझसा कोई और॥

जीते युद्ध को फिर लड़ते हैं
सब मोह-माया में हैं विभोर।
मैं मन के पथ पर लड़ता हूँ
जब तक होती नहीं भोर॥

चुपचाप खड़ा होता भी यदि मैं
मेरे सन्नाटे में है बड़ा शोर
पर्याप्त हूँ मैं इक क्रांति के लिए
है मेरी सोच में इतनी जोर॥

युद्ध नीतियाँ, सत्य-असत्य
सब बस संकल्प हैं घनघोर।
नवलक्ष्य मेरा है चंद्रमा
मेरा साहस एक चकोर॥

नियति के रणतंत्र में हैं
चक्रव्यूह चारों ही ओर।
सृष्टि के गुप्त युद्ध में
मैं हूँ इक विजय की डोर॥

जीवन ये विचित्र रणभूमि
पर मैं नहीं कोई रणछोर।
हैं जहाँ चूके महानायक
वहाँ जीतेगा मुझसा कोई और॥

■■■

E-mail : sameermoosa007@gmail.com

कबूतर और मैं: दो दृश्य

प्रताप सहगल

इस शीर्षक से यशस्वी कवि प्रताप सहगल ने 13 कविताएँ लिखी हैं जो एक कथाक्रम का निर्माण करती हैं, इनमें की पहली दो कविताएँ 'गगनांचल' के लिए विशेष रूप से प्राप्त —संपादक

(एक)

मेरे घर के आँगन में
एक कबूतर आ कर
मेरे पास बैठ गया
पास, बिल्कुल पास
मैंने उसे बाजरा खिलाना चाहा
वह फुर्र से उड़ गया
फिर कोई और कबूतर आ कर बैठा
उससे मैंने संवाद करना चाहा
वह भी फुर्र से उड़ गया
इस तरह से जो भी कबूतर मेरे पास आता
वह मुझे हरकत में आते देखते ही फुर्र हो जाता
यह मेरे लिए एक परेशानकुन बात थी
प्यार तो बाँधता है / प्यार तो जोड़ता है
फिर हर कबूतर / मेरे पास आते-आते
फुर्र क्यों हो जाता है

■■■

(दो)

तभी मुझे बचपन में सुनी
एक बहेलिये और बहुत सारे
कबूतरों की कहानी याद आई
आदमी कब बहेलिया हो जाए
कबूतर को क्या पता / शायद हर कबूतर ने
उस बहेलिये की कहानी सुन ली है
पीढ़ी-दर-पीढ़ी / जिसने दाना डाल कर
और कबूतर को कबूतर होने से भी
महरूम कर दिया था
तभी से शायद / कबूतर ने आदमी पर
विश्वास करना छोड़ दिया है।

■■■

सम्पर्क : एफ-101, राजौरी गार्डन, नई दिल्ली-110027
दूरभाष : 9810638563

ज़िन्दग़ी

निर्मला सिंह

रेशम के थान सी फिसलती
खुलती रही ज़िन्दग़ी,

नदी तट के रेत सी कट-कट कर बहती रही ज़िन्दग़ी?

ऊंचे मंदिर की सीढ़ियों सी
उम्र की सीढ़ियाँ,

कभी रुक कर कभी थक कर—

और कभी दौड़ कर
चढ़ती रही ज़िन्दग़ी,

रेशम के थान सी...

जादुई चक्रवात से जीवन के भंवर

ज्वार और भाटों सी कभी ऊपर,
कभी नीचे,

कभी जमीन तो कभी आसमान
छूती रही ज़िन्दग़ी!
रेशम के थान सी....

रँगों और रिश्तों के मोहबँध
हर रिश्ते के अलग-अलग रंग!!
हर रिश्ता—
पत्ते की नोंक पर
ओस की बूँद सा सहेजती,

भावों की पाजेब छनकाती
हर रँग को जलतरंग सा बजाती
बजती रही ज़िन्दग़ी,
रेशम के थान सी...

नयनों की कोरों से कुछ समय बहा—
कुछ हम बहके,
इससे पहले कोई तोड़े
खुद ही झुककर राह बनाई,
सब कुछ सहके,
उन राहों की रस्सी पर
नटनी सी चलकर
अगली पिछली पीढ़ी में
संतुलन बनाती रही ज़िन्दग़ी!!!
रेशम के थान सी...

हम ही चलते रहते हैं—
चलती नहीं हैं राहें,
बोझ उठा सकती हैं देखो—
अब भी ये दुर्बल बाहें,
अब तो हम हैं बरगद से...
बूढ़े नहीं सिर्फ बड़े हैं,
अपनी जड़ों से जुड़े पुख्ता खड़े हैं!
हमने युग को करवट लेते देखा है—
और टकराकर युग की करवट से—
मणि-काँचन योग सी
निखरती रही ज़िन्दग़ी!!!
रेशम की थान सी...

अपलक देखे चाँद सितारे,
पूजे मन्नत के सब द्वारे,
इर्द-गिर्द बसा लिया अपना संसार
शाखों पर बस गये हैं पंछियों के गाँव
छाँव देख थमते हैं अनगिनत पाँव,
सहारे को कितनी ही बाहें फैला—
अपना दायरा बढ़ाती रही ज़िन्दग़ी,
रेशम के थान सी....

■■■

सम्पर्क : क्यू-414, सैक्टर-21, नौएडा-201301 (उ.प्र.)
ईमेलः nirmala1809@yahoo.in

मुक्त दोहे धूप के

प्रो. प्रेमचंद सोनवाने

खाली गागर ले खड़ी, नई नवेली नार।
पानी को ढूँढ़े कहाँ, सूखी नदिया धार॥

नव तपा घायल करें, तन-मन को दे पीर।
त्राहि त्राहि पक्षी करें, जल बिन लोग अधीर॥

सूर्य तपन के कारणे, घायल हुई बहार।
बाहर जाकर क्या करें, सूने खेत-शिवार॥

खेतों में भी काम है, बहे पसीना धार।
गोरी झुलसी खेत में, पिया लगे आधार॥

आग लगा सूरज खड़ा, सबको ही झुलसाय।
चलो नीम की छाँव में, पल भर को सुस्ताय॥

पानी की किल्लत बढ़ी, झगड़े दिन औ' रात।
करते प्यासे लोग भी, मार पीट की बात॥

नहरों में पानी नहीं, फसल सूखती जाय।
अकाल का वक्त है, कृषक कहाँ पर जाय॥

पगडंडी जलती हुई, चलते जलते पाँव।
लम्बा रस्ता काटना, दूर लगे अब गाँव॥

धूप चटखती द्वार पर, जलते शहरी-गाँव।
पशु-पक्षी व्याकुल फिरें, मिले न कोई छाँव॥

गौरया प्यासी दिखे, कौआ कर्कश राग।
कोयल सहमी कूकती, चहुँ दिशी सुलगी आग॥

कूलर पंखा घर नहीं, कैसे काटें रात।
दिन सुस्ताने बीतते, ना आपस में बात॥

ताल तलैया सूखते, ना पानी का नाम।
जल बिन आप बताइये, कैसे होंगे काम॥

■■■

सम्पर्क : डॉ. मोहन के दवाखाने के पास, गुरु नानक वार्ड,
गणेश नगर, गोंदिया-441601 (महाराष्ट्र)

गरीब की उम्मीद

राजेंद्र निशेश

पत्थरों से खेलती है, गुनगुनाती है
हर नदी अपनी मंजिल खुद बनाती है।

प्रेम का उत्सव मनाना सब नहीं जानते
रिश्तों की भीनी चादर भीग जाती है।

ग़म में कुछ कठोर आँखें रो नहीं पाती
खुशी में कभी पलकें आँसू बहाती हैं।

घर में हो नन्ही बिटिया, घर महकता है
कभी रूठती, कभी वह चहचहाती है।

पहाड़ों पर बर्फ ने बसेरा बना लिया
गुनगुनी-सी धूप कहीं उतर आती है।

आशान्वित नन्हा पौधा लहलहायेगा
ग़रीब की उम्मीद कभी रंग लाती है।

खिड़की में उदास चेहरा खिलखिला उठा
बचपन की भूली कथा हवा सुनाती है।

■■■

सम्पर्क : 2698, सैक्टर 40-सी, चण्डीगढ़-160036

वेद मित्र शुक्ल की दो ग़ज़लें

(एक)

क़ब्रों में धूल ओढ़ के लो दुनिया के सिकन्दर सोये हैं,
है क्या बिसात तेरी-मेरी, किस दुनिया में हम खोये हैं?

वारिस हैं आदम के हम तो जीना औ मरना पड़ता है,
आते हैं तब भी रोते हैं औ जाते हुए भी रोये हैं।

है बात पुरानी ओ यारो! करनी का फल मिलता ही है,
खायेंगे आम कहाँ से हम जब पेड़ बबूल के बोये हैं।

चमकते आज हैं तारे, कल क्या होगा इनका क्या जाने?
कहती हैं लकीरें हाथों की जो बस वैसा ही होये हैं।

कुछ भी तो हाथ न आयेगा, रीते कर सबको जाना है,
फिर क्यों सारी दुनिया का बोझा इन कंधों पे ढोये हैं?

(दो)

वंशी की मधुर फूँक क्यों मरी-मरी लगे?
ये ज़िन्दगी भी देखिये डरी-डरी लगे।

बेकार है छिप-छिप के तो रोने की कोशिशें,
हर आँख आँसुओं से जो भरी-भरी लगे।

है राज कर रहा वही, हर ओर ही, लेकिन,
हर सांस मौत को तो खरी मसखरी लगे।

सोया हुआ था आपने हमको जगा दिया,
जी आपकी हर बात अब खरी-खरी लगे।

जाना है जबसे ज़िन्दगी का आखिरी पड़ाव,
तब से हमारी देह काल-कोठरी लगे।

■■■

सम्पर्क : अंग्रेजी विभाग, राजधानी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,
नई दिल्ली-110015
मोबाइल: 09599798727 ईमेलः vedamitra.s@gmail.com

विराट के मुक्तक

चन्द्रसेन विराट

यों भी खुद को परख रहे हैं हम, आँसू खारे ही चख रहे हैं हम
इन ठहाकों से ढांप कर उनको, दुख को धोखे में रख रहे हैं हम

कैसी तारों की बेल छायी है, साथ बिजली के फूल लायी है
आज रावण पे राम ने, तम पर, फिर उजाले ने जीत पायी है

दीप वालो, प्रकाश फैलाओ, एक दीपक उठाके ले जाओ
क्यों पड़ोसी मुँडेर हो सूनी, एक दीपक वहाँ भी रख आओ

सब ही संयोग से शासित रहते, सब कभी नभ से विलोपित रहते
तो कभी साथ में नक्षत्र कई, एक ही वक्त प्रकाशित रहते

कल्पना है यथार्थ हो जाये, मेरी निजता परार्थ हो जाये
एक मुक्तक भी लोक स्वीकारे, काव्य मेरा कृतार्थ हो जाये

वे सभी से नहीं हरस जाते, गात सबका नही परस जाते
छोड़ देते हैं क्षेत्र प्यासे भी, मेघ सब पर नहीं बरस जाते

शायरी कर मगर सलीक़े से, तू बरत यह हुनर सलीक़े से
उसकी खातिर बहुत जरूरी है, जी सलीक़े से, मर सलीक़े से

प्राप्त कौशल किया है तब पाया, मन को विह्वल किया है तब पाया
हर कला में शिखर किसी ने भी, खुद को पागल किया है तब पाया

राज दिल के नहीं टटोले वह, जो सचाई है वह न खोले वह
आइना तो न झूठ बोलेगा, चाहते हम कि झूठ बोले वह

हो रही है वो हताशा, जाये, मुझमें प्रतिभा को तलाशा जाये
अब भी अनगढ़ हूँ बहुत मैं, शिल्पी! मुझको कुछ और तराशा जाये।

■■■

121, बैकुंठधाम कॉलोनी, आनन्द बाजार के पीछे, इन्दौर-452018 (म.प्र.)
मोबाइल: 09329895540

कितनी देर

जगदीश पंकज

कितनी देर सहारा देंगी
आभासी आधारशिलाएँ
हमने रिश्तों के खम्भों को
बड़े जतन से खड़ा कर दिया
प्यासे होठों पर अमृत सा
कोई एक विचार धर दिया
घर की ढहती दीवारों में
कितनी मिट्टी कहाँ मिलाएँ
अपने ही कल्पित चिंतन से
हमने जो अनुपात बनाये
सदा ध्वस्त हो गए समर में
जब भी औरों से टकराये
गाते रहे गगन की केवल
बंशी में कोमल गाथाएँ
अपना, अपने लिए विवेचन
कितना सच्चा, कितना सक्षम
आत्म-मुग्ध मादकता पाकर
पीठ ठोकते रहते हरदम
आओ धरती से ही जुड़कर
दुखते घावों की सहलाएँ

■■■

सम्पर्क : सोमसदन, 5/41, सेक्टर-2, राजेन्द्र नगर, साहिबाबाद,
गाजियाबाद-201005 (उ.प्र.)
मोबाइल: 08860446774 ईमेल: jpjend@yahoo.co.in

ग़ज़ल

चाँद शेरी

कहीं आकाश पर बादल नहीं था
घटा की आँख में काजल नहीं था

ये ज़हरीले शजर नफ़रत की बेलें
यहाँ पहले तो ये जंगल नहीं था

नज़र कोसों से आता था हमें जो
वो अब उस गाँव में पीपल नहीं था

फटे अख़बार पर सोए हुओं को
ख़याले बिस्तरे मख़मल नहीं था

थी सन्दल सी बज़ाहिर उसकी सूरत
मगर सीरत का वो सन्दल नहीं था

अभी था हौसला उसका सलामत
परिन्दा इस क़दर घायल नहीं था

भिगोया उसको 'शेरी' आँसुओं ने
वो भीगा दूध से आँचल नहीं था

■■■

सम्पर्क : के-30, आई.पी.आई.ए. रोड नं.-1, कोटा-5 (राजस्थान)
मोबाइल: 09829098530, 09461188530
ईमेल: chand.sheri@gmail.com

हर्षवर्धन आर्य की दो कविताएँ

अजन्मी कली ने... यही तो कहा था

माँ भी होती है बेटी!!!
किसी माँ की / जब भूल जाती है औरत
इतनी सी बात / तब बन जाती है निरी पत्थर...
और इस कलयुग में तो यह भी संभव नहीं
कि, / कोई राम / पत्थर से टकरा कर पाँव
लौटा दे अहल्या / फिर से।
अजन्मी कली ने... यही तो कहा था

लिबास

पूछता हूँ माँ से
माँ...?
जब मैं पहली बार / आया था तेरी गोद में
तब कौन सा लिबास था / मेरे तन पर
तेरे आँचल के सिवा,
...पर, अब जो दिया है लिबास
ज़माने ने मुझे / बुने हैं उसमें रिश्ते
स्वार्थ की सुई और / घृणा तथा प्यार के धागों से,
जो उलझ गए हैं इस तरह / कि ढूँढ़ता हूँ एक सिरा
तो उलझ जाता हूँ स्वयं / काश! माँ... ओढ़ कर मैं
फिर तेरा आँचल, बना लूँ लिबास
और लौट जाऊँ बचपन में /
जो है धर्म, अर्थ, काम
के बन्धनों से परे /
खुशी और आनंद
प्रतिपल छलकता है जहाँ!

■■■

सम्पर्क : 'आर्य स्वर्ण दीर्घा', 2797, ओंकार नगर, त्रिनगर, दिल्ली-110035
दूरभाष : 9968421236
E-mail : aryaharshvardhan2@gmail.com

बादलों से

डॉ. मधुर नज्मी

ऐ बादलो! बुझाओ न चेहरे किसान के
मुरझा रहे हैं खेत में अब फूल धान के

मैं देखता हूँ जल्वे सुख़न की उड़ान के
होते हैं जब भी शे'र ग़ज़ल में ज़बान के

किसने कहा कि हम नहीं दोनों जहान के
हम कुछ जमीन के हैं तो कुछ आसमान के

ख़ुशियों-भरे सफ़र को ग़रीबी ने डस लिया
सपने सिमट के रह गये ऊँची उड़ान के

मुमकिन अगर हो छोड़ सियासत कभी ये देख
पैकर में कितने घाव हैं हिन्दोस्तान के

मैं चाहता हूँ प्यार की ऐसी हवा चले
दिल के चमन में फूल खिलें इत्मीनान के

शामिल तो मेरे क़त्ल में थे अजनबी मगर
साज़िश में थे ज़रूर मेरे खानदान के

सैलाब के सितम को 'मधुर' उनसे पूछिये
जो दर्द झेलते हैं नदी की कटान के

■■■

सम्पर्क : महानिदेशक, 'काव्यमुखी साहित्य अकादमी',
गोहना मुहम्मदाबाद, जिला-मऊ-276403 (उत्तर प्रदेश)
मोबाइल: 9369973494

अदब के घरौंदे

अनिरुद्ध सिन्हा

जब बगावत की हद से गुज़र जाएँगे
हम हवाओं के पर भी कतर जाएँगे

ऐ वतन तेरे पहलू से जाएँ कहाँ
तेरा दामन जो छूटा तो मर जाएँगे

शब्द की मुट्ठियों में सियासत न कर
ये अदब के घरौंदे बिखर जाएँगे

ये जो आए हैं दामन पसारे हुए
क्या पता कब कहाँ किधर जाएँगे

रात से कोई कह दे हदों में रहे
क्या उजाले अँधेरों से डर जाएँगे

■■■

सम्पर्क : गुलज़ार पोखर, मुंगेर-811201 (बिहार)
मोबाइल: 09430450098
ईमेल : anirudhsinhamunger@gmail.com

नभ को ढोए हैं

रामबहादुर चौधरी चंदन

सूखी है सब धरती अपनी
हम तो रोये हैं
बीज मगर अक्षर के अपने
अन्दर बोये हैं।
पोर-पोर हो रहा पसीना
नस-नस उबल रही,
गर्म हवाएँ लील रही हैं
जीवनदायी नमीं।
उम्मीदों की प्यास बुझाने
नभ को ढोये हैं...

स्नेह-सलिल बिन मूर्छित सी है
सूखी पड़ी नदी,
सात समंदर सिर पर ला दे
फिरती नई सदी
अन्यायी के आगे जब रोये
दीदा खोये हैं....

मुरझाये हैं फूल चमन के
कलियाँ सिसक रहीं
मन को जो महकाती थीं वो
खुशबू कहाँ गई?
सपने से संवेदन को हम
रोज भिगोये हैं....

■■■

सम्पर्क : फुलकिया, बरियादपुर, मुंगेर-811211 (बिहार)
मोबाइल: 9204636510

कैसा जश्न

राजेन्द्र तिवारी

क्या बदला है जिसका जश्न मनाया जाये।
कब तक तारीख़ों से दिल बहलाया जाये।

दुनिया तो मुट्ठी में कर ली चलिए अब,
दिल से दिल, हाथों से हाथ मिलाया जाये।

बंजर में... खुश्बू की कलमें रोपी जायें,
सहरा में अहसास का फूल खिलाया जाये

कम खाकर, गम खाकर खुश रह सकते हैं,
धोखा कोई खाना है, क्यों खाया जाये।

आदत है... पीछे-पीछे चल देती है,
भेड़ों को... चाहे जितना समझाया जाये।

■■■

सम्पर्क : 'तपोवन', 38-बी, गोविन्द नगर, कानपुर (उ.प्र.)
मोबाइल: 9369810411
ईमेलः rajendratiwari121@gmail.com

ग़ज़ल

विज्ञान व्रत

वो हमसे अनजान रहे,
जिनकी हम पहचान रहे

वो मेरा अरमान रहे,
मेरी ये पहचान रहे

दोनों की पहचान रहे,
ऐसा कुछ दरम्यान रहे

दुनिया तब तक दाना थी,
जब तक हम नादान रहे

दोनों चुप थे यानी वो,
दोनों एक ज़ुबान रहे

■■■

सम्पर्क : एन-138, सैक्टर-25, नौएडा-201301 (भारत)
मोबाइल: 09810224571
ईमेल: vigyanvrat@gmail.com

कुत्ता पालन एक, लाभ अनेक

प्रेम जनमेजय

"...कुत्ता स्टॉप नहीं हो रहा था और उनको इधर-उधर भटका रहा था। पैंसठ बरस के राधेलाल का हाँफ-हाँफ कर बुरा हाल हो गया था। माथे पर आया पसीना किसी अनचाहे मेहमान-सा टपकने लगा था। मुझसे उनका भटकाव देखा नहीं जा रहा था। मैंने टॉमी को रोकने की कोशिश करने के इरादे से कहा—"टॉमी रुक, एंड डू ठीक से बिहेब।"..."

सम्पर्क : 73, साक्षर अपार्टमेंट्स, ए-3, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063
दूरभाष - 9811154440
E-mail: premjanmejai@gmail.com

जैसे किसी सेल में एक के अनेक लाभ मिलते हैं, वैसे ही लाभ हमारे राधेलाल जी कुत्ता पाल कमा रहे हैं। इस लाभ के साथ एक दिन वे सुबह-सुबह मिल गए। सुबह-सुबह स्वास्थ्य लाभ के लिए सभी को घूमने का शौक होता है। किसी के लिए घूमना विवशता होती है, किसी के लिए आवश्यकता और किसी के लिए शौक। कोई स्वयं घूमता है और किसी को स्वास्थ्य लाभ उसका कुत्ता करवाता है। आप तो जानते ही हैं कि कुत्ता कितना स्वामीभक्त होता है। उसे सुबह जंगल नहीं जाना होता है अपितु रात की पार्टी से अलसाए स्वामी को बिस्तर छुड़वाना होता है या फिर खा-पीकर मुटिया चुकी मालकिन की कैलोरी जलानी होती है।

उस सुबह देखा तो सामने से राधेलाल जी एक कुत्ते की जंजीर थामे, कुत्ते के कारण कभी दक्षिण और कभी वाम की ओर खिंचते, चले आ रहे हैं। समझ नहीं आ रहा था कि वे कुत्ते को घुमा रहे हैं या कुत्ता उन्हें घुमा रहा है। ये दृश्य लगभग वैसा ही था जैसा द्रौपदी के चीरहरण के समय मैथिलीशरण गुप्त ने चित्रित किया है—

"नारी बीच सारी है कि सारी बीच नारी है
सारी ही की नारी है या नारी ही की सारी है"

भ्रम का जो संबंध द्रौपदी और साड़ी का था वही राधेलाल और उनके कुत्ते का था। राधेलाल क्या, इस कुत्ता-घुमावन प्रक्रिया में सुबह-सुबह सभी के साथ लगभग ऐसे ही दृश्य पाए जाते हैं। जैसे आपको पता नहीं चलता कि देश को नेता खींच रहे हैं या फिर देश नेताओं को खींच रहा है।

कुत्ता उनको खींचते हुए बायीं ओर जाता तो राधेलाल जी कहते—स्टॉप टॉमी, स्टॉप। कुत्ता स्टॉप होने के स्थान पर उन्हें दक्षिण की ओर ले जाता तो राधेलाल फिर कहते—स्टॉप टॉमी, स्टॉप।

कुत्ता स्टॉप नहीं हो रहा था और उनको इधर-उधर भटका रहा था। पैंसठ बरस के राधेलाल का हाँफ-हाँफ कर बुरा हाल हो गया था। माथे पर आया पसीना किसी अनचाहे मेहमान-सा टपकने लगा था। मुझसे उनका भटकाव देखा नहीं जा रहा था। मैंने टॉमी को रोकने की कोशिश करने के इरादे से कहा—"टॉमी रुक, एंड डू ठीक से बिहेब।"

आप चमत्कार देखें टॉमी वहीं रुक गया और दुम हिलाने लगा।

राधेलाल ने पहले कुत्ते की ओर फिर मेरी ओर आश्चर्य से देखकर कहा—"ये क्या कुत्ता मेरा और बात इसने आपकी मानी? ये कैसा चमत्कार?"

"ये मेरा चमत्कार नहीं है राधेलाल जी, ये हिंगलिश का चमत्कार है। ये नयी मॉडर्न नस्ल का हिंदुस्तानी कुत्ता है, ये हिंगलिश ही समझता है।"

"तभी मैं कहूँ कि ये मेरी बात कम और कॉलेज जाने वाले लड़के-लड़कियों की बात अधिक समझता है। ये उनकी गोद में ऐसे प्रसन्न रहता है जैसे विदेशी निवेशक की गोद में शेयर बाजार रहता है।"

"जरूर इसका प्रशिक्षक नहीं, कोई ट्रेनर होगा, कौन है इसका ट्रेनर?"

"एक बड़ा-सा खूबसूरत दिखने वाला पब्लिक स्कूलीय नौजवान।"

"राधेलाल जी आप तो इसे अपनी उम्र के किसी प्रशिक्षक से प्रशिक्षण दिलवाते तो अच्छा होता। पर राधेलाल जी यह बताइए, आपको तो कुत्तों से खासी नफरत थी, जितनी नफरत किसी भ्रष्टाचारी को बिना रिश्वत के काम करने में होती है। फिर बगल में ये कुत्ता कैसा?"

राधेलाल ने कुत्ते को पास ही बिजली के खंभे से बांध और एक लंबी सांस लेकर बोले, "नफरत तो मुझे अब भी उतनी ही है, पर आप तो जानते ही हैं कि अनेक काम मजबूरी में करने पड़ते हैं, वो कहते हैं न कि मजबूरी का नाम कुछ और। मेरी मजबूरी का नाम मेरी पत्नी यानि तुम्हारी भाभी है।"

"भाभी जी को इस उम्र में ये क्या शौक चर्राया, ये शौक तो अक्सर घर में बच्चों को चर्राता है और उस शौक की हर समस्या का ध्यान माँ-बाप को रखना पड़ता है।"

"प्रेम भाई, उसको भी शौक नहीं चर्राया है पर मामला उम्र और बच्चों से जुड़ा है।"

"मतलब?"

"मतलब ये कि, प्रेम भाई आप जानों अपने दोनों बच्चे अमेरिका में हैं और उनका मन अपने देश में नहीं लगता और हमारा मन अमेरिका में नहीं लगता है। घर में हम दोनों अकेले हैं। तुम्हारी भाभी हैल्थ इज वेल्थ की मालकिन हैं और इस कारण थुलथुल हैं। शरीर का हर जोड़ दुखता है। अब तो घर में चलने-फिरने तक में उसे दिक्कत होती है। अब तुम जानो कि मुझे अपने काम से घर से बाहर जाना होता है, वो अकेली भी हो जाती हैं। उसकी सहायता के लिए हमने ये प्रशिक्षित कुत्ता ले लिया है। बहुत बढ़िया कुत्ता है। एक इशारा भर कर दो फट दौड़कर काम कर देता है। गले में लिखकर डाल दो तो दूध, फल-सब्जी सब कुछ ले आता है। घर की रखवाली अलग से करता है। अपनी हरकतों से मनोरंजन करता है।"

"इसके लिए तो आप घर में कोई गरीब नौकर रख सकते थे, उसको रोजी-रोटी मिल जाती, खाना-पीना मिल जाता, एक आदमी का भला हो जाता।"

"पर हमारा भला नहीं होता, प्रेम भाई! आप तो जानते ही हो, रोज अखबारों में किस्से भी पढ़ते होंगे, आजकल ये नौकर लोग बड़े-बूढ़ों को मारकर सब लूट ले जाते हैं। आदमी का कहीं विश्वास रह गया है? आदमी को सोने-चांदी, रुपए-पैसे का लालच होता है, कुत्तों को नहीं होता।" इसके बाद कुछ उदासी स्वर के साथ बोले—"प्रेम भाई, आपके बच्चे आपके कहे को मना कर सकते हैं, आपकी इच्छा को दुत्कार सकते हैं, पर ये कुत्ता कभी ऐसा नहीं करेगा और जब तक जिंदा है आपको छोड़कर भी कहीं नहीं जाएगा। कोई इसे कितनी भी दूर ले जाए, छोड़कर आए, लौटकर आपके घर वापस आ जाएगा। ये बुढ़ापे में तो क्या किसी भी उम्र में आपका साथ नहीं छोड़ता है।"

उनके पास सुबह-सुबह शायद रुमाल नहीं था इसलिए उन्होंने आंख में आई आंसू की बूंद को अंगुली में ही समेट लिया।

मामला दुखदायी होता देख मैंने उसे खूबसूरत मोड़ देते हुए प्रश्न किया—"राधेलाल जी, ये नर है या मादा?"

"कुत्ता है, क्यों?"

"इससे तो आप संकट में फंस सकते हैं।"

"संकट में! इसमें संकट क्या है?"

"भाभी जी के लिए तो आपको मादा ही पालनी चाहिए थी। कल कुत्ता-समुदाय में भी नारी-विमर्श की बहस चल गई तो आपके खिलाफ आंदोलन हो जाएगा।" राधेलाल ने खंभे पर चेन से बंधे कुत्ते को खोला और मुस्कराते हुए बोले—"मुझे संकट कैसा, मैं कोई आपकी तरह साहित्यकार हूँ?"

सत्यसेल्स और सेल्ससत्य की कहानी

आलोक पुराणिक

"...हे मूरख! बेच, सिर्फ बेच। ऐसे भी बेच, वैसे भी बेच, कैसे भी बेच। ईमान, सत्य की बातें तक करना ठीक है, जब इनकी कीमत ठीक मिलती है। बेटा आजकल सत्य-ईमान की बड़ी-बड़ी बातें करने वाले लोग भी मौका-मुकाम देखकर अपने चेलों को कैसेट, चूरन-चटनी, शैंपू, दवाईयां बेच रहे हैं। बंदा मोक्ष पाने के लिए आता है, और कैसेट और हर्बल शैंपू लेकर वापस जाता है। इसलिए बेच, कस्टमर की चिंता मत कर।..."

सम्पर्क : एफ-1, प्लॉट नं. बी-39, डी.ए.वी. स्कूल के सामने, रामप्रस्थ कालोनी, गाज़ियाबाद (उ.प्र.)
दूरभाष : 9810018799

स्मार्ट डिपार्टमेंटल स्टोर में दो सेल्समैन काम किया करते थे। एक का नाम था सत्यसेल्स और दूसरे का नाम था सेल्ससत्य। सत्यसेल्स नामक सेल्समैन का मानना था कि सेल्स का आधार सत्य होना चाहिए और कस्टमर से हमेशा सत्य ही बोलना चाहिए। उसका मानना था कि सत्य के आधार पर की गयी सेल से कस्टमर परमानेंट बनते हैं इसलिए हमेशा कस्टमर के हितों की ही सर्वोपरि माना जाना चाहिए। वह हमेशा कहा करता था कि सत्य ही सेल्स का आधार है।

पेपर सोप से वीसीडी प्लेयर

एक बार दो कस्टमर स्मार्ट स्टोर में आये।

एक सत्यसेल्स के काउंटर पर गया और उसने पेपर सोप मांगा, सत्यसेल्स ने पेपर सोप दे दिया और वह कस्टमर वापस चला गया।

दूसरा कस्टमर सेल्ससत्य के काउंटर पर गया और उसने पेपर सोप मांगा। सेल्ससत्य ने कहा, "हैलो, आप कैसे हैं। ओह पेपर सोप चाहिए, लगता है कि आप कहीं यात्रा पर जा रहे हैं?"

कस्टमर ने कहा, "मैं नहीं मैं नहीं, मेरी बीवी मुंबई जा रही है मायके गरमी की छुट्टियों में।"

सेल्ससत्य बोला, "ओह, फिर तो आपको अकेला रहना पड़ेगा। एक महीने का टाइम कैसे काटेंगे। इधर टीवी चैनलों के प्रोग्राम तो बहुत बेकार के आते हैं। आप कहें, तो एक आप्शन बताऊँ।"

कस्टमर बोला, "क्या?"

सेल्ससत्य बोला, "देखिये स्मार्ट कंपनी ने नया वीसीडी प्लेयर लांच किया है, इसे ले लीजिए। इसके साथ आपको बीस सीडी मुफ्त में दी जायेंगी। आपका टाइम आराम से कट जायेगा।"

कस्टमर बोला, "पर मैं तो इसके लिए पैसे नहीं लाया।"

सेल्ससत्य ने कहा, "कोई बात नहीं। यहाँ पर 'फांसू बैंक' का बंदा बैठा है, यह अभी आपको लोन दे देगा, बाकी की फार्मेलिटी ये आपके घर में जाकर करवा लेगा। डांट वरी।" सो साहब जो कस्टमर सिर्फ पेपर सोप खरीदने निकला था, वह एक वीसीडी प्लेयर और बीस सीडी लेकर निकला।

उधर 'फांसू बैंक' के सेल्समैन ने भी करीब पांच सौ रुपये का कमीशन सेल्ससत्य को दिया।

स्मार्ट स्टोर का मालिक इस पूरे कारनामे को देख रहा था, वह सेल्ससत्य के पास आकर बोला, "ग्रेट ऐसा सेल्समैन नहीं देखा जो पेपर सोप खरीदने वाले को वीसीडी प्लेयर भी चेप दे।"

इस पर सत्यसेल्स ने कहा, "वैसे यह तो अनुचित है। हमें कस्टमर को वही माल बेचना चाहिए, जो उसे चाहिए होता है, इस तरह से लोन दिलवाकर माल बेचना तो ठीक नहीं है।"

ऐसा सुनकर स्मार्ट स्टोर के मालिक ने सत्यसेल्स को डांटा, "अरे तू मेरा इंप्लाई है या उस कस्टमर का इंप्लाई। जा फूट, मैंने तुझे नौकरी से निकाल दिया और सेल्ससत्य का प्रमोशन करके मैं इसे चीफ सेल्समैन बनाता हूँ।"

शाम को रोते हुए सत्यसेल्स से चीफ सेल्स आफीसर सेल्ससत्य बोला—

"हे मूरख! बेच, सिर्फ बेच। ऐसे भी बेच, वैसे भी बेच, कैसे भी बेच। ईमान, सत्य की बातें तक करना ठीक है, जब इनकी कीमत ठीक मिलती है। बेटा आजकल सत्य-ईमान की बड़ी-बड़ी बातें करने वाले लोग भी मौका-मुकाम देखकर अपने चेलों को कैसेट, चूरन-चटनी, शैंपू, दवाईयां बेच रहे हैं। बंदा मोक्ष पाने के लिए आता है, और कैसेट और हर्बल शैंपू लेकर वापस जाता है। इसलिए बेच, कस्टमर की चिंता मत कर।"

सत्यसेल्स उसके वचन सुनकर बोला, "अगली नौकरी में मैं तेरे ही वचनों का पालन करूँगा।"

एक रुपये का मोबाइल, सौ रुपये की मोटरसाइकिल

सत्यसेल्स को नौकरी से निकाले जाने के बाद, उसके बेटे-फेयरप्राइज को कृपा-अनुकंपा के आधार पर नौकरी दी गयी।

पर फेयरप्राइज भी बाप की तरह से सच बोलने के दुर्गुणों से पीड़ित था।

एक बार दो कस्टमर स्टोर में घुसे। एक कस्टमर फेयरप्राइज की तरफ जाकर बोला—

"उस वाले मोबाइल की क्या कीमत है?"

"दस हजार रुपये, टैक्स अलग"—फेयरप्राइज ने बताया।

"उस वाली मोटरसाइकिल की क्या कीमत है?" कस्टमर ने पूछा।

"पचपन हजार टैक्स एक्स्ट्रा"—फेयरप्राइज ने बताया। फेयरप्राइज का कस्टमर वापस भाग गया।

दूसरा कस्टमर सेल्ससत्य के पास गया।

उसे मोबाइल की कीमत बतायी गयी एक रुपया और मोटरसाइकिल की कीमत बतायी गयी सौ रुपये। कस्टमर ने रुचि दिखायी। जब वह सहमत सा हुआ तो, सेल्ससत्य ने कहा "पैसे की चिंता बिलकुल मत कीजिये, हम लोन दिलवा देंगे।" कस्टमर ने कहा—"ओ.के.।"

कस्टमर ने लोन के पेपर पर मज़े-मज़े में बिना देखे साइन कर दिये, यह सोचकर कि एक रुपया का और सौ रुपये का लोन तो चाहे जब चुका दूंगा। पर जब उसे फांसू बैंक के सेल्समैन ने बताया—"जी आपकी महीने की किश्त चार हजार रुपये बनी है, जो आपको पच्चीस महीने तक देनी होगी। आप सारे दस्तावेजों पर साइन कर चुके हैं। इसमें यह शर्त आपने मंजूर की है कि अगर आप लोन लेने से इनकार करते हैं, तो भी आपको एक लाख रुपये प्रोसेसिंग फीस और डिफाल्ट चार्ज के बतौर हमें देने होंगे।"

कस्टमर फंस चुका था, वो बोला—"पर आपने तो बताया था कि एक रुपये का मोबाइल और दस रुपये की मोटरसाइकिल।"

सेल्ससत्य इस पर बोला—"महाराज मोबाइल की कीमत तो एक ही रुपया है पर 9999 रुपये उसकी एक्सेसरीज के हैं, हम मोबाइल की डोर को छोड़कर हर आइटम को एक्सेसरीज मानते हैं। पहले आपको सिर्फ डोरी के पैसे बताये गये थे। ऐसी ही मोटरसाइकिल तो सिर्फ दस रुपये की है, पर बाकी की रकम हम आफ्टर सेल्स सर्विस के लिए लेते हैं।"

एक लाख रुपये डिफाल्ट फीस चुकाने के बजाय कस्टमर ने बेहतर समझा कि एक रुपये का मोबाइल और दस रुपये की मोटरसाइकिल ले ली जाये।

यह पूरा कांड देखकर फेयरप्राइज समझ गया और सेल्ससत्य से बोला—सर अब से मैं भी कार सौ रुपये की बेचा करूँगा।

इन कहानियों से हमें निम्न शिक्षाएँ मिलती हैं—

1. बेचो, बेचो। हर सेल्समैन को तमाम गुरुओं को फालो करना चाहिए, जो हर तरह का आइटम बेचने पर उतारू हैं जिनके पास बंदे मोक्ष लेने आते हैं और हर्बल शैंपू लेकर लौटते हैं।

2. समझदार सेल्समैन हेलीकाप्टर भी सौ रुपये में बेच सकता है।

खगेन्द्र ठाकुर कृत
'पं. लक्ष्मीनारायण मिश्र: व्यक्तित्व एवं कृतित्व'

डॉ. हरिणय हमिकर

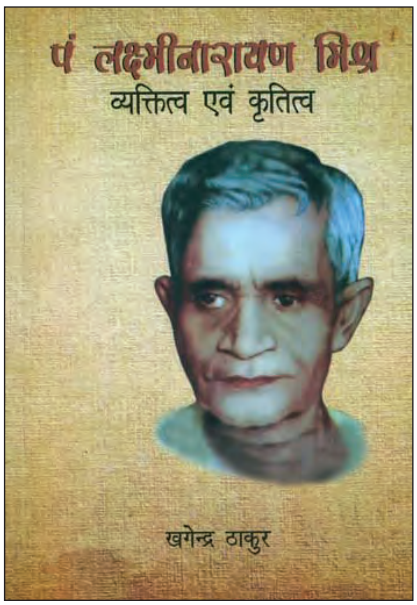

पुस्तक:
पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र:
व्यक्तित्व एवं कृतित्व

लेखक:
खगेन्द्र ठाकुर

प्रकाशक:
प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

कुल पृष्ठ: 143

मूल्य: 135 रुपये

लक्ष्मीनारायण मिश्र एक नाटककार के तौर पर ऐतिहासिक और कलात्मकता की दृष्टि से अनन्य हैं। प्रस्तुत पुस्तक 'पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र: व्यक्तित्व एवं कृतित्व' में इस रचनात्मक सत्य को व्यवहारिक रूप से दिखाने की कोशिश की गई है।

डॉ. खगेन्द्र ठाकुर ने पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र के व्यक्तित्व और कृतित्व पर उल्लेखनीय समीक्षा की है। पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र को आधुनिक हिन्दी नाटकों का जनक माना जाता है। उनके समय में ऐतिहासिक और काव्यात्मक नाटकों का प्रचलन था। ऐसे में मिश्र जी ने सामाजिक समस्याओं पर नाटक लिखे। मिश्रजी श्रेष्ठ कवि और स्वतंत्रता सेनानी भी थे। शिल्प की दृष्टि से उनके नाटकों का विशेष महत्व है। उन्होंने हिन्दी नाटक को नवीन शिल्प और नई विधा दी, जो कि भारतीय रंगमंच के लिए सर्वथा उपयुक्त है।

पुस्तक में पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र के जीवन और व्यक्तित्व से जुड़े कई अनोखे प्रसंग भी हैं, जो इससे पहले पढ़ने-सुनने को नहीं मिले। पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र जी स्वतंत्रता-संग्राम में जेल तो गए, लेकिन उसके लिए पेंशन लेने से इनकार कर दिया। इस तरह के अस्वीकार का साहस माखनलाल चतुर्वेदी में भी मिलता था, जब उन्होंने राष्ट्रपति द्वारा राज्य सभा सदस्य मनोनीत किए जाने से इनकार कर दिया था। देश की सेवा के लिए बदले में क्या लेना? इन दोनों महान लेखकों ने समाज के सामने एक अनोखा उदाहरण पेश किया।

मिश्र जी का स्वार्थहीन व्यक्तित्व उदात्त था, और व्यापक भी। इसी संबंध मे मिश्र जी का ही एक कथन ध्यान देने योग्य है। हमारा देश 15 अगस्त 1947 को आजाद हो गया। उसी दिन प्रकाशित 'भारतीय' नाम की पत्रिका के संपादकीय अग्रलेख में उन्होंने लिखा—"हमारा देशी रूप, गुण, स्वभाव, हमे अभी मिलेगा भी अथवा युगों के लिए विदेशी शासकों के चरण चिह्नों पर ही चलते

सम्पर्क : आर.जेड. 31, ब्लॉक एक्स, न्यू रौशनपुरा, पपरावट रोड,
रिलायंस फ्रेस की गली, नजफगढ़, दिल्ली-110043
मोबाइल: 9716668206

रहेंगे। साहित्य, कला, राजनीति या जीवन के सभी विभागों में हम अपने पूर्वजों की संतान बन कर रहेंगे अथवा अब नए सिरे से अपने विदेशी शासकों को अपना अभिभावक बनाएंगे?..."

"...हमारा साहित्य, हमारी धरती, हमारी आकृति, हमारी अपनी जातीय धारणा, मान्यता और परंपरा-पद्धति पर ही बन सकेगी। अपनी आकृति के साथ हमें सहकार बनाना है, तभी हमारी सृष्टि भी स्वाभाविक और सत्य हो सकेगी।" इस उद्धरण में एक साथ ढेर सारी बातें कही गई हैं, उन पर ध्यान देना आवश्यक है। आजादी के सत्तर साल बाद भी अपनी जातीय धारणाओं और मान्यताओं से हमारे साहित्य का संबंध आंशिक रूप से ही जुड़ पाया है।

पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र की चेतना वैयक्तिक नहीं थी, बल्कि सार्वभौमिक थी। शायद यही कारण रहा कि वैचारिक रूप से वैज्ञानिक दृष्टि के समाजवादी नहीं होते हुए भी समानता के पक्षधर और विषमता के विरोधी थे, इसलिए वे कहते हैं—समाजवादी विचारधारा, जिसमें व्यक्ति की निरंकुशता नहीं, विचार-अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, पूंजी-प्रधान पद्धति नहीं, धन की उपयोगिता, सामाजिक होनी चाहिए।

पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र हिन्दी साहित्य के इतिहास में समस्यामूलक नाटककार के रूप में प्रतिष्ठित हैं। प्रस्तुत पुस्तक में खगेन्द्र ठाकुर ने उनकी काव्य सर्जना की सार्थक आलोचना प्रस्तुत की है। उनकी दो काव्य-कृतियाँ हैं—'अंतर्जगत' और 'कालजयी'। पहली काव्य कृति 'अंतर्जगत' काव्य और रूमानी भाव-धारा की अभिव्यक्ति है। यह काव्य कृति छायावाद-युगीन है, जिसमें युगानुरूप कवि के मनोवेग व्यक्त हुए हैं। दूसरी कृति 'कालजयी' महाभारत कथा के मशहूर चरित्र कर्ण की कथा से संबंधित है। खगेंद्र ठाकुर के अनुसार 'कालजयी' नए ढंग की काव्यकृति है, इसमें हमें लगभग वही रचनावधि मिलती है, जो निराला की महाकाव्यात्मक कृति 'राम की शक्ति पूजा' में है। 'कालजयी' युग का प्रतिनिधित्व करती है। खगेंद्र ठाकुर ने पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र की दोनों काव्य कृतियों की विवेचना में क्रमशः हजारी प्रसाद द्विवेदी, श्री नारायण चतुर्वेदी, रामधारी सिंह 'दिनकर', पं. जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' के उद्धरणों को प्रसंगानुकूल उद्धृत किया है।

पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र समस्यामूलक नाटककार के रूप मे प्रसिद्ध और मान्य हैं। उन्होंने अपने नाटकों के माध्यम से 19वीं सदी में भारतीय समाज में विकसित भ्रष्ट वर्ग की समस्याओं को देश के सामने रखा। उन्होंने आधुनिक साहित्य में साम्राज्यवाद के विरुद्ध समाज के यथार्थ का चित्रण किया है। अंग्रेजी नाटक में जो काम जार्ज बर्नाड शॉ और इब्सन ने किया, हिन्दी नाटक में वही पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र ने किया। नाटककार के रूप में पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र यथार्थ के द्वंद्व और उसकी गतिशीलता पर सजग और जीवंत नजर रखते थे।

इसी के साथ-साथ पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र ने आधा दर्जन पौराणिक नाटक और लगभग इतनी ही संख्या में ऐतिहासिक नाटक लिखा। खगेंद्र ठाकुर ने पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र के नाटककार रूप को युगीन संदर्भों पर रखकर नाटकों की जानदार समीक्षा प्रस्तुत की है, जो साहित्यिक रूप से एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। लेखक ने पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र के एकांकी नाटकों को भी सिलसिलेवार ढंग से प्रस्तुत कर उसकी समीक्षा प्रस्तुत की है।

पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र मुख्यतः वैचारिकी लेखन करते रहे। वह अपने नाटकों-एकांकियों में भी विचारक के रूप में सामने आए। सार्थक नाटककार साहित्य के बारे में सोचने के साथ ही समाज के बारे में भी सोचता है। पंडित लक्ष्मीनाायण मिश्र में सामाजिक सरोकार-जनित वैचारिक दृष्टि थी। प्रस्तुत पुस्तक उनके जन्म से लेकर मृत्यु (दिसंबर 1903 से अगस्त 1987 ई.) तक 84 वर्षों के जीवन के महत्त्वपूर्ण साहित्यिक और सामाजिक पड़ावों को रंजित करती है। खगेंद्र ठाकुर ने उनकी वैचारिकी, साहित्यिक चिंतन को भी सहज रूप में उद्घाटित किया है।

समीक्षाकार ने पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र के व्यक्तित्व और कृतित्व का न केवल विवेचन किया है, बल्कि मिश्र जी के भारतीय संस्कृति, सभ्यता और परंपरा को वैज्ञानिक दृष्टि से उद्घाटित भी किया है। एक सजग और सार्थक नाटककार ने उम्र भर अपनी बात दृढ़ता से प्रस्तुत की। मिश्र जी के विचारों में भारतीय पृष्ठभूमि, भारतीय समाज का युगीन यथार्थ, संस्कृति की परंपरा और भारत की स्वतंत्रता, प्रगति एवं जनतंत्र की रक्षा की चेतना दृढ़ता से मिलती है। लेखक खगेन्द्र ठाकुर ने प्रस्तुत पुस्तक में मिश्र जी के संपूर्ण जीवन और कृतित्व का संपूर्ण मूल्यांकन साहित्यिक विवेक से प्रस्तुत किया है। इसी वजह से पुस्तक सहज होते हुए भी मिश्र की वैचारिकी और साहित्य चिंतन को प्रमुखता से उद्घाटित करती है। यह पुस्तक न केवल साहित्य और नाट्य-प्रेमियों को भी प्रोत्साहित करती है, बल्कि साहित्य की सामाजिक जिम्मेदारी को भी समझाती है।

डॉ. ओमप्रकाश 'प्रकाश' कृत
आधुनिक हिन्दी साहित्य: आलोचना प्रसंग

डॉ. हरिसिंह पाल

पुस्तक:
आधुनिक हिन्दी साहित्य:
आलोचना प्रसंग

लेखक:
डॉ. ओमप्रकाश शर्मा 'प्रकाश'

प्रकाशक:
पांडुलिपि प्रकाशन,
ईस्ट आजाद नगर,
दिल्ली-110051

पृष्ठ: 112

मूल्य: 295 रुपये

वर्ष: 2016

प्रत्येक वस्तु के परखने और उसके गुण-दोष निर्धारित करने की प्रवृत्ति प्रत्येक व्यक्ति में स्वाभाविक रूप से पाई जाती है। आलोचना या समालोचना विभिन्न रूपों की विशिष्ट व्याख्या कर उसके सत्यस्वरूप की व्याख्या करती है जिसका जीवंत प्रमाण इस पुस्तक में है।

इस आलोच्य कृति में कुल 13 वैविध्यपूर्ण आलोचना लेख हैं, कुछ कृतिपरक हैं और कुछ साहित्येतिहासपरक और कुछ भाषापरक भी। कृतिपरक श्रेणी के दो लेख हैं—जैनेन्द्र कृत—'त्याग पत्र' और सद्य प्रकाशित डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी कृत—'व्योमकेश दरवेश'। साहित्येतिहास के अन्तर्गत 'हिंदी गद्य का इतिहास: पुनर्लेखन की आवश्यकता' और 'खड़ी बोली का उद्भव और विकास: दिल्ली का योगदान' शीर्षक से दो लेख हैं। इसी प्रकार समीक्षा के अन्तर्गत डॉ. सुंदरलाल कथूरिया की काव्य कृति 'ईश्वर तो 'कण-कण बसे' और डॉ. चन्द्रशेखरन नायर की 'बहुचर्चित' कहानी संग्रह की नीरक्षीर विवेकी समालोचना की गई है। साहित्यकार केन्द्रित समालोचना के अंतर्गत नाटककार मोहन राकेश और उपन्यासकार जैनेन्द्र के कृतित्व पर प्रकाश डाला गया है। दो लेख अनुवाद पर भी केन्द्रित हैं—'हिंदी अनुवाद की समस्याएं' और 'साहित्यिक अनुवाद की रचना प्रक्रिया'। भाषापरक श्रेणी के भी दो लेख हैं—'पूर्वोत्तर की भाषाएं और बोलियां तथा नागरी लिपि' और 'देवनागरी और गुरूमुखी लिपियाँ सहोदरा हैं'। एक अन्य लेख हिंदी की प्रसिद्ध विद्या 'संस्मरण विधा: अवधारणा का प्रश्न' को व्याख्यायित करता है।

इस पुस्तक के लेखक ने आधुनिक हिंदी साहित्य के विविध पक्षों का विश्लेषण व विवेचन पूरी गंभीरता के साथ प्रस्तुत किया है। साथ ही खरी-खरी कहने में भी लेखक ने कोई कोताही नहीं की है। उदाहरणार्थ जैनेन्द्र के उपन्यास 'त्याग पत्र' पर यह कथन—जैनेन्द्र अपने दर्शन के प्रतिपादन के लिए कला की हत्या तक कर देते हैं। इतना ही नहीं वे उस दर्शन को भी उलझा देते हैं। अतः पाठक किसी भी ठोस निष्कर्ष पर पहुंचने में असमर्थ रहता है। जिस दर्शन का उन्होंने प्रतिपादन किया है, वह अव्यवहार्य है।" (पृष्ठ 19) वहीं जब जैनेन्द्र के उपन्यासों के शिल्प की बात आती है तो लेखक ने उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा भी की है—"जैनेन्द्र के उपन्यासों का शिल्प अनूठा है और

सम्पर्क : 684, इंद्रा पार्क, नई दिल्ली-110045
मोबाइल: 9810981398

बेजोड़ है। उसके अनुकरण का साक्ष्य दुर्लभ होगा।" (पृष्ठ 97) साथ ही लेखक ने अपने मौलिक उद्भावनाओं से भी पाठकों को अवगत कराने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। 'पूर्वोत्तर की भाषाएँ और बोलियाँ तथा नागरी लिपि'' लेख में आपने देवनागरी लिपि की हिमायत करते हुए उसके व्यवहारिक पक्ष को पूरी दृढ़ता से रखा है। "जहाँ प्रादेशिक भाषाओं की लिपि, उन्हीं भाषाओं और प्रदेशों तक सीमित होकर रह जाती है, वहाँ देवनागरी उनके भाषा-साहित्य को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय वृत्त में प्रवेश करा सकते हैं। नागरी लिपि अपनाने से उनकी संस्कृति अधिक व्यापक और समन्वयकारी रूप से ग्रहण कर सकेगी।" (पृष्ठ 88)

इसी प्रकार डॉ. प्रकाश ने 'हिंदी अनुवाद की समस्याएं' लेख में अनुवाद कार्य की महत्ता पर बल देते हुए लिखा है—"अनुवाद का कार्य सेतु का है जो भाषाओं, साहित्य और संस्कृतियों को जोड़ता है। साहित्य में विशेष रूप से अनुवाद पुनर्सृजन है। लेखन के स्तर पर अनुवाद की और लेखक के स्तर पर अनुवादक को रचनाकार की मान्यता मिलनी चाहिए। अनुवादक साहित्य-यात्रा का सजग, किंतु मूक साधक है। साहित्य जगत में अनुवाद और अनुवादक प्रथम पंक्ति में बैठने के अधिकारी हैं।" (पृष्ठ 51) लेखक ने इन लेखों के लिए गहन अध्ययन और अनुशीलन किया है तभी पूरे तथ्यों के साथ अपनी बात को पूरी प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत कर पाए हैं।

डॉ. प्रकाश ने अपने सभी लेखों में यह विशेष ध्यान रखा है कि रचना की न्यूनताएं भी पाठक के समक्ष आ सकें। उदाहरणार्थ "नाटककार मोहन राकेश: शिल्प दृष्टि और नाट्य शिल्प'' में थियेटर' का मुहावरा, नाटकीय शब्द का सर्जनात्मक प्रयोग और उसका आधार, दिक् और काल: रंगोप्रयोग, प्रकाश-योजना, शब्दकार-परिचालक अभिनेता—त्रयी, यंत्र बनाम मानव, रचना-तंत्र की कसावट, वस्तु शिल्प, चरित्र सृष्टि जैसे शीर्षकों के विषय को व्याख्यायित किया है। 'कमजोर बिन्दु' शीर्षकों से मोहन राकेश की शिल्प-दृष्टि के कुछ कमजोर बिन्दुओं की ओर भी बेबाकी से ध्यान आकृष्ट किया है। साथ ही 'कुछ अपवादों के बावजूद राकेश का शिल्प-धरातल बहुत ऊँचा है। उनके प्रयोग-धर्मी शिल्प ने नाटक को नित्य नया स्वरूप दिया है।" (पृष्ठ 63) कहकर अपना समन्वयकारी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है।

"साहित्यिक अनुवाद की रचना प्रक्रिया'' लेख में लेखक ने साहित्यिक अनुवादकों के समक्ष आने वाली चुनौतियों को भी रेखांकित किया है, जिससे अनुवादक सजग हो सके। 'मूल पाठ से तादात्म्य करना अथवा मूल लेखक की मानसिकता से जुड़ना अनिवार्य है। अनुवाद में परिवेश का अंतरण भी होता है। यूरोपीय साहित्य में यदि हरकुलिस, वीनस, वाटरलू जैसे प्रयोग हैं तो इनके स्थापनापन्न भारतीय परम्परा से ही ढूँढ़ने पड़ेंगे। हिंदी से अंग्रेजी में उल्था करने वाले सिंदूर, शंख, श्राद्ध, हवन जैसे प्रयोगों के संदर्भ और व्याख्याएँ समझनी पड़ेंगी, नहीं तो अर्थ का अनर्थ हो जाएगा।"

लेखक की 'नीरक्षीर विवेकी' दृष्टि इस कृति के लगभग सभी आलोच्य लेखों में स्पष्टतया देखी जा सकती है। 'व्योमकेश दरवेश: नई चाल की रचना' लेख में जहाँ लेखक ने यह लिखा है—"व्योमकेश दरवेश' एक अनूठी रचना है। जिसकी शैली में एक निजता है। हिंदी की श्रेष्ठ जीवनियों से त्रिपाठी जी की कृति टक्कर लेने की सामर्थ्य रखती है। यदि वह उनसे इक्कीस नहीं तो उन्नीस भी नहीं।" (पृष्ठ 104) वहीं दूसरी ओर इन्होंने उसकी न्यूनताओं को भी नहीं बख्शा है। लेखक के शब्दों में—"जीवनी का रूप सुसंहित होना लाजमी है। यदि थोड़ा संयम बरता होता और कृति में काट-छांट की जाती तो इसका रूप और आकार चुस्त-दुरुस्त और सुघड़ हो सकता था।" (पृष्ठ 112)

यह कृति आधुनिक हिन्दी साहित्य के आलोचना प्रसंगों की पूरी तरह जॉच-पड़ताल करने में सफल है। हिंदी साहित्य के विद्यार्थियों और शोधार्थियों के लिए यह कृति समान रूप से उपयोगी है। पाठकों को आधुनिक हिंदी साहित्य के विविध पक्षों की जानकारी और तत्संबंधी संदर्भ इस कृति के माध्यम से सहज ही उपलब्ध हो सकते हैं। उसे हिंदी की प्रमुख कृतियों, रचनाकारों, काव्य रूप की संकल्पना और स्वरूप, साहित्य-इतिहास, अनुवाद और देवनागरी लिपि के क्षेत्रों की खोज-पड़ताल की एक कृति ही में सामग्री मिल जाती है। यह समावेशी रूप अन्यत्र कम ही देखने को मिलता है। एकाध प्रूफ की अशुद्धियों और व्याकरणीय त्रुटियों को नजरअंदाज कर दिया जाए, यह कृति अपने आप में इस विषय की सम्पूर्ण कृति है। इस कृति के प्रकाशन के लिए प्रकाशक भी बधाई का पात्र है। आशा है इस कृति का हिंदी आलोचना जगत में भरपूर स्वागत किया जाएगा।

सिद्धेश्वर कृत 'भीतर का सच'

अशोक मनोरम

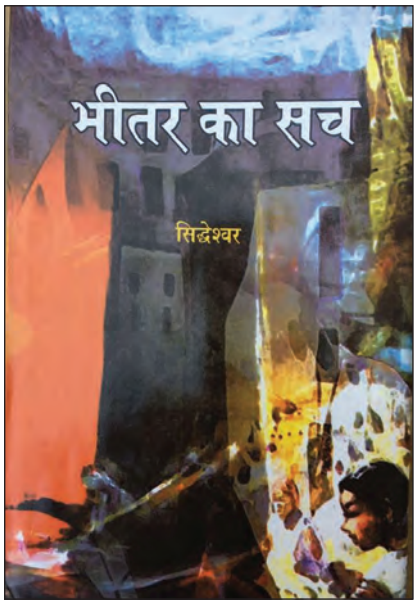

पुस्तक:
भीतर का सच (लघुकथा संग्रह)

लेखक:
सिद्धेश्वर

प्रकाशक:
शब्द प्रकाशन,
ए-25, प्रथम मंजिल, गणेश नगर,
पाण्डव नगर कंम्पलेक्स,
नई दिल्ली-110092

मूल्य: 250 रुपये

लघुकथा एक ऐसी विधा है, जो सागर में गागर भरने की कहावतों को चरितार्थ करता है। सिद्धेश्वर की इस लघुकथा संग्रह में कई शेड्स की कथाएं हैं। कहीं समाज में व्याप्त घूसखोरी दिखती है,तो कहीं महंगाई की लाचारी झलकती है। लेखक की लेखनी में यह साफ दिखता है कि सामाजिक मान्यताओं को आत्मसात करते हुए भी मध्यमवर्गीय लोग कैसे अपनी शराफत को गुदड़ी में छुपाकर रखना जानते हैं। विधाएं तय करती हैं कि लेखक कितना प्रतिभाशाली है। शिल्प बताता है कि लेखनी की धार कैसी है? लेखन के प्रति समर्पण तय करता है कि लेखक की प्रतिभा कितनी दूर तक आवाज पहुंचाती है। लोग अक्सर कहते हैं कि लेखक के अंदर की प्रतिभा झांक रही है, पर कोई यह नहीं कहता कि लेखन से जुड़ा रचनाकार जब रचना कर्म से जी-जान से जुड़ता है, उसके अंदर की प्रतिभा यह नहीं देखती कि लेखन समय भी मांगता है और उसके बदले तत्काल में कोई पारितोषिक नहीं पाता। जब लेखक परेशान हो जाता है, तब अंदर की चेतना जो लिखवाती है, वह कालजयी बना देती है, कृति को और लेखक को भी। भाई सिद्धेश्वर भी एक ऐसे ही रचनाकार हैं, जिन्होंने सेहत की परवाह किए बगैर अपनी लेखनी को उत्तरोत्तर ऊंचाई देने में न दिन देखा, न रात!

लघुकथा सिद्धेश्वर की प्रिय विधा ही है। ये लघुकथा को लिखते नहीं, संजोते हैं। 'भीतर का सच' लघुकथा संग्रह इनकी साहित्य सृजन की चौथी कृति है। यों तो लघुकथा लेखक की छवि अन्य विधाओं के साथ जुड़े रहने के बाद भी अपनी पहचान को बरकरार रखती है। लोग तो यहाँ तक कहते हैं कि कहानी, कविता, लेख, बाल कहानी, डायरी के साथ-साथ लघुकथा को भी लेखक ने धारण किया है। सिद्धेश्वर जितने बड़े लेखक हैं, उससे ज्यादा रेखाचित्र के सिद्धहस्त कलाकार भी हैं।

कलाकार की कलाकारी से जहां रेखाएं बोलती हैं, वहीं लघुकथाएं कभी हंसती हैं, कभी-कभी रोती भी तो हैं और कभी चीख-चीख कर लेखक को पहचान देती नजर आती हैं। लघुकथा विधा में अब

सम्पर्क : आर.जेड. 31, ब्लॉक एक्स, न्यू रौशनपुरा, पपरावट रोड,
रिलांयस फ्रेस की गली, नजफगढ़, दिल्ली-110043
मोबाइल: 8826967432

सिद्धेश्वर हस्ताक्षर नही रहा, वरन एक ऐसा वृक्ष बन गया है जो कितने कला आयामों को समेटे हुए लघुकथा की पहचान है।

प्रस्तुत पुस्तक 'भीतर का सच' वास्तव में एक ऐसी रचना-कुंज हैं, जहां, वाक्य-विन्यास की ऊंचाई है, और चिंतन की गहराई भी। रेखा-चित्र की बारीकी है, तो डायरी की संपन्न विरासत भी झांकती है। कविता की पकड़ के मामले में तो लेखक जन्मजात प्रतिभा से ओत-प्रोत रहा है। बाल लेखन लेखक की ऐसी विशेषता है, जिससे आदमी मात्र लेखक नहीं रह जाता, पूरी तरह संस्था हो जाता है। सिद्धेश्वर ने सब कुछ लिखा है, पर हल्का नहीं लिखा। कहीं कुछ हल्की लगी, तो उसके साथ रेखाचित्र की मौलिक विशेषता से लवरेज रचनाएं अपने आप सराही जानें लगी और विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छपते-छपते पाठकों के प्रोत्साहन ने लेखक को सब विधाओं का लाड़ला बना दिया। 'भीतर का सच' पुस्तक की पाण्डुलिपि को बिहार सरकार ने, पाण्डुलिपि प्रकाशन अनुदान के लिए चयनित कर लेखक को उत्साहित किया और सहयोग दिया।

■■■

कुछ पुराने पेड़ हों शायद अभी उस गाँव में

राकेश खंडेलवाल

हो गया जब एक दिन सहसा मेरा यह मन अकेला
कोई बीता पल लगा देने मुझे उस पर हेला
दूर छूटे चिह्न पग के फूल बन खिलने लगे वो
सो गये थे वर्ष बीते एक पल को फिर जगे वो

मन हुआ आतुर बुलाऊँ पास मैं फिर वो दुपहरी
जो कटी मन्दिर उगे कुछ पीपलों की छाँव में
आ चुका है वक्त चाहे दूर फिर भी आस बोले
कुछ पुराने पेड़ हों शायद अभी उस गाँव में

वह जहाँ कंचे ढुलक हँसते गली के मोड़ पर थे
वह जहाँ पतंगें थीं हवा में होड़ करके
गिल्लियाँ उछला करीं हर दिन जहाँ पर साँझ ढलते
और उजड़े मन्दिरों में भी जहाँ थे दीप जलते

वह जहाँ मुंडेर पर उगती रही थी पंचमी आ
पाहुने बन कर उतरते पंछियों की काँव में
चाहता मन तप करे फिर सिन्धु की गहराइयों को
कुछ पुराने पेड़ हों शायद अभी उस गाँव में

पेड़ थे जिनके तले चौपाल लग जाती निरन्तर
और फिर दरवेश के किस्से निखरते थे सँवर कर
चंग पर आल्हा बजाता एक रसिया मग्न हो कर
दूसरा था सुर मिलाता राग में आवाज़ दे कर

और ये पगडंडियाँ कच्ची जिन्हें पग चूमते थे
दौड़ते नजरें बचाकर हार पी कर गाँव में
शेष है संभावना कुछ तो रहा हो बिना बदले
कुछ पुराने पेड़ हों शायद अभी उस गाँव में

वृक्ष जिनकी छाँह थी ममता भरे आँचल सरीखी
वृक्ष जिनके बाजुओं से बचपनों ने बात सीखी
कि वे बदले वक्त की परछाईं से बदले नहीं थे
और जिनको कर रखें सीमित, कहीं गमले नहीं थे

वे कि उनकी थपकियाँ उमड़ी हुई हर पीर हरतीं
ज़िंदगी सान्निध्य में जिनके सदा ही थी सँवरती
है समाहित गंध जिनकी धड़कनों, हर साँस में
हाँ पुराने पेड़ शाश्वत ही रहेंगे गाँव में
वे पुराने पेड़ हर युग में रहेंगे गाँव में

सम्पर्क : 14205, पंच स्ट्रीट, सिल्वर स्प्रिंग, मैरीलैंड (अमेरिका)

मीना अरोड़ा कृत
"एक ऐसी भी निर्भया"

प्रदीप कुमार

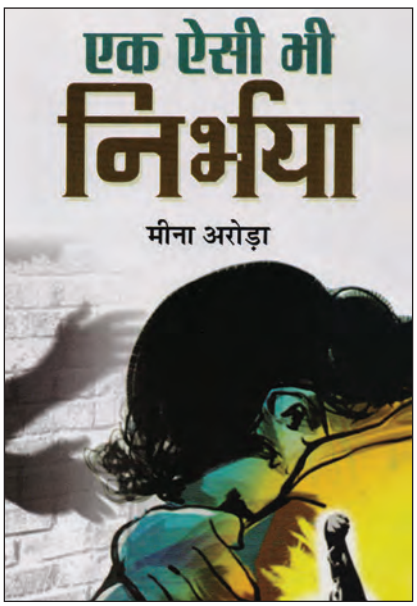

पुस्तक:
एक ऐसी भी निर्भया (उपन्यास)

लेखिका:
मीना अरोड़ा

प्रकाशक:
विद्या विकास एकेडमी,
3637, नेताजी सुभाष मार्ग,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002

पृष्ठ: 152

मूल्य: 250 रुपये

मीना अरोड़ा कृत उपन्यास 'एक ऐसी भी निर्भया' बहुत रोचक तथा मार्मिक कृति है। यह उपन्यास पाठक को कचोटता और झिंझोड़ता है। यह सोचने के लिए विवश भी करता है कि क्यों आज भी स्त्री इतनी अधिक पीड़ा और अत्याचार झेलती है? उपन्यास इतना रोचक है कि पाठक एक बार में इसे पूरा पढ़ना चाहता है। अगर किन्हीं कारणों से अधूरा छोड़ना पड़े, यकीनन उसका मन इसी उपन्यास मे उलझा रहेगा।

देवकीनंदन खत्री के उपन्यासों जैसी यह जिज्ञासा मीना अरोड़ा की खूबी ही कही जाएगी। उपन्यास को पढ़ना उन अंधी एवं पीड़ादायक गलियों से गुजरने जैसा है जहां हमें यही अफसोस होता है कि अगर नारी को यही पीड़ा भोगनी है तब धरती पर इन्सानियत कहां है? और हम यहाँ क्या कर रहे हैं?

ऐसा नहीं कि यह उपन्यास महज स्त्री पर अत्याचार की ही वेदना है।

इसके कथानक में दुर्बल, कामी तथा अहेरी पुरुषों की निम्न स्तरीय मानसिकता को उजागर किया गया है।

इसमें कदम दर कदम इंसानियत को तार-तार करते हैवान हैं और इंसानियत को देवत्व प्रदान करने वाले पात्र भी हैं। घोर निराशा है तो आस की किरण भी है भले ही वह कुछ कम हो। उपन्यास की प्रमुख खूबी यही है कि आप रोते रहेंगे मगर इसे पूरा पढ़कर ही दम लेंगे। उपन्यास का कथानक देश की राजधानी दिल्ली में 16 दिसंबर 2012 की सामूहिक बलात्कार और वीभत्सता की घटना की शिकार निर्भया से संबंधित न होकर भी संबंधित-सा लगता है।

दिल्ली की उस लड़की को पूरा देश निर्भया के नाम से जानता है। सामूहिक बलात्कार और वीभत्स हत्या की शिकार ज्योति को ही देश ने निर्भया नाम दिया। यह प्रकरण टीवी और अखबारों की

सम्पर्क : बी 5/60, फर्स्ट फ्लोर, अनुपम एन्क्लेव फेज़-1,
ईगुनु रोड, नई दिल्ली-110030 फोन : 8281362177

सुर्खियां बना और दिल्ली में ही क्या देशभर में जबरदस्त विरोध का कारण भी बना। जनता के दबाव में दोषियों को सजा भी सुनाई गयी लेकिन आज भी अदालती कमजोरियों का फायदा उठाकर वे जिंदा हैं। ऐसे में उपन्यास में दोषियों को सजा देने का तरीका पाठक को अखरता नहीं।

लेकिन 'एक ऐसी भी निर्भया' की कहानी दिल्ली की उस घटना से पहले की है। लेखिका ने इस बात का दावा किया है कि उपन्यास की कथा पूरी तरह से काल्पनिक नहीं है। पाठक भी सहज ही अनुमान लगा सकता है कि यह किसी निर्भया की सच्ची पीड़ा है जो उसने भोगी है और लेखिका ने उसे अपने शब्दों में ढाल दिया। ऐसा महसूस होता है लेखिका को उस लड़की की पीड़ा ने बहुत व्यथित किया और उस व्यथा ने उपन्यास का रूप ले लिया।

यह स्त्री संघर्ष की कहानी है। इसमें एक परी सी सुंदर लड़की रजनी है जो उपन्यास की नायिका है। रजनी की खूबसूरती गरीबी में भी हैवानों की नजर से छुप नहीं पाती। यही गरीबी उसके लिए अभिशाप बन जाती है। उसका शराबी और निकम्मा पिता ही अपनी बेटी को बेच देता है ताकि हर महीने घर का खर्च चल सके और शराब की लत भी पूरी हो सके।

खलनायक प्रकाश नपुंसक है। उसे नपुंसक किसने और क्यों बनाया और किस तरह से बनाया गया इस प्रक्रिया को बखूबी दर्शाया गया है। उपन्यास में रिश्तों की मर्यादा का खंडन होना तथा एक स्त्री का दूसरी स्त्री की पीड़ा को समझते हुए न्याय करना, प्रभावित करता है। नये तरह का दंड जो लेखिका ने अपनी कल्पनाशक्ति से ईजाद किया है सचमुच सराहनीय है। अगर हर बलात्कारी को इस तरह का दंड भोगना पड़े, शायद बलात्कार जैसी घटनाएँ पनपने से पहले अपराधी के दिमाग के अन्दर दम तोड़ दें।

दरिंदों की दरिंदगी का शिकार बनी नन्हीं मासूम बच्ची लगभग काल के मुख में पहुंच जाती है।

उसका मृत्यु के मुख से लौटकर आना और फिर तरह-तरह के लोगों से स्नेह पाकर अपने परिवार में लौटना और अंत में वहीं उसी प्रकाश के पास पहुंच जाना।

लेखिका ने लड़की की पीड़ा और अन्य पात्रों की मानसिक स्थिति का विश्लेषण बखूबी किया है।

सीधी-सादी भाषा में लेखिका ने रजनी की पीड़ा को आम बोलचाल के शब्दों में ही प्रस्तुत किया है। इससे उपन्यास प्राणवान बन पड़ा है। यही बात इसे हर दर्जे की रवानगी देती है। प्रकाश के बेटे मृदुल का रजनी के भविष्य को लेकर उठाया गया कदम सराहना के योग्य है। यह सुखांत पाठक के बोझिल मन को सुकून देता है।

विद्या विकास एकेडमी, दरियागंज नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ यह उपन्यास एक बेहतरीन और सफल रूप से पाठकों के मस्तिष्क में अमिट छाप छोड़ने में सक्षम होगा।

■■■

जैसा मैंने चाहा था

घनश्याम गुप्ता

जैसा मैंने चाहा था, वैसा तो कुछ हुआ नहीं
पाहुन द्वारे आये थे, आँगन लेकिन छुआ नहीं

जी लाख बरस / पी जीवन रस

तुझको वह तन्वी कर डाले पीतल से सोना चरम-परम
अंतर दग्ध निरंतर है, पर होंठों पर बहुआ नहीं

गोरी की लट / गंगा का तट

घूँघट के पट अब खोल रे—गाता केवट
तूने तो लगन लगाई थी, क्या वह तेरे पिया नहीं

बस एक पहल / तुझ सी कोमल

जैसे पुरवैया के झोंके छूकर आये खिलते सेमल
या एक गीत गाना चाहा था, जीवन भर मरसिया नहीं

नि:स्सीम पवन / गतिशील पवन

तपती धरती की प्यास बुझाने, लो बरसा-बरसा सावन
बन मुक्त विहग उड़ना चाहा था, पिंजरे का-सा हुआ नहीं

जैसा मैंने चाहा था, वैसा तो कुछ हुआ नहीं
पाहुन द्वारे आये थे, आँगन लेकिन छुआ नहीं।

सम्पर्क : 866, Morefield Road,
Philadelphia, Penninselvenia, USA.

राष्ट्रीय एकात्मकता एवं भारतीय संस्कृति संदर्भित राष्ट्रीय संगोष्ठी

नरेन्द्र कुमार भारती

'राष्ट्रीय एकात्मकता एवं भारतीय संस्कृति' शीर्षक से तीन दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी (15 जून-17 जून) इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र एवं शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास के संयुक्त तत्वावधान मे सफलतापूर्वक संपन्न हुई।

संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र में बीज वक्तव्य के रूप में इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केंद्र के सदस्य-सचिव डॉ. सच्चिदानंद जोशी जी ने कहा, "राष्ट्रीय एकात्मता से पहले हमें राष्ट्रीयता को समझना होगा।" उद्घाटन सत्र के मुख्य अतिथि के रूप में भारत सरकार के संस्कृति मंत्री डॉ. महेश शर्मा उपस्थित रहे। उन्होंने कहा कि "आज के समय को देखते हुए पेड़ों और जानवरों की नस्ल को सुधारने की तरह मनुष्यता की नस्ल को भी सुधारने की जरूरत है। जब तक मनुष्य का संस्कार नहीं होगा मनुष्यता परिष्कृत नहीं होगी तब तक हम राष्ट्रीयता के साथ उसे जोड़कर नहीं देख सकते।" इसके साथ ही डॉ. महेश शर्मा ने भारत सरकार की महत्त्वपूर्ण योजनाओं का उल्लेख किया। विशिष्ट अतिथि के रूप में इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केंद्र के अध्यक्ष श्री राम बहादुर राय ने भी अपना वक्तव्य रखा। उन्होंने कहा "संगोष्ठी में पक्ष और प्रतिपक्ष दोनों पर विचार होना चाहिए। जब हम राष्ट्र के विमर्श पर बात कर रहे हों और वहाँ विपक्ष अनुपस्थित हो तो लोकतंत्र ही कटघरे में खड़ा हो जाता है। हमने अपने स्तर पर बहुत कोशिश की है कि राष्ट्र के विमर्श को एकांगी न होने दें और

भविष्य की योजनाओं में भी हम इसका ख्याल रखेंगे।" उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास के सचिव श्री अतुल कोठारी ने की, उन्होंने बताया कि "राष्ट्र और संस्कृति के विषय में हमें सिद्धांत से व्यवहार की ओर लौटने की जरूरत है। हम राष्ट्र के नाम पर लाख बहस कर लें लेकिन जब तक हम व्यवहारिक जीवन में राष्ट्र के विमर्श को नहीं उतारेंगे तब तक राष्ट्र की अवधारणा अधूरी है।"

प्रथम दिवस में विशेष व्याख्यान: 'राष्ट्र की अवधारणा' पर देश के जाने माने शिक्षाविद प्रो. कपिल कपूर ने बीज वक्तव्य दिया। उन्होंने अपने बृहद वक्तव्य में बताया कि हिंदुत्व की अवधारणा को काट करके हम राष्ट्र की अवधारणा को नहीं जान सकते, भारतीय बुद्धिजीवी पश्चिम के विचारों के प्रति ज्यादा आकर्षित होते हैं, लेकिन अपनी जड़ों की ओर नहीं देखते हैं अपने देश की ओर नहीं देखते हैं। उन्होंने एक बेहद चर्चित उदाहरण दिया कि भारतीय बुद्धिजीवी गार्लिक चिकेन की तरह हैं जो वेस्टर्न डाइट पर जिन्दा हैं।

संगोष्ठी का दूसरा दिन बेहद गम्भीर रहा। राष्ट्र के विमर्श की अवधारणाओं पर इस दिन महत्त्वपूर्ण चर्चा हुई। दूसरे दिन का पहला सत्र 'भारतीय कला एवं राष्ट्रीयता' था। इस सत्र में तीन विशेषज्ञों ने अपने व्याख्यान दिए जिनमें सबसे पहले श्री भारतेन्दु मिश्र ने बताया कि "भारतीयता अर्द्धनारीश्वर की जो परिकल्पना भारत में है ये दुनिया के किसी भी देश में नहीं है जहाँ स्त्री और पुरुष दोनों मिलकर कला को पूर्णता प्रदान करते हैं। हमारी कलाएं वास्तव में राष्ट्रीय पहचान की पक्षधर हैं। राष्ट्रीयता से हटा करके हम भारतीय कला को पूर्णता में नहीं समझ सकते।" नीरा मिश्रा ने कहा कि "जीवन में कला को जोड़ करके जीवन को निखारा जा सकता है, राष्ट्रीयता ब्रिटिश राज के कारण नहीं बनी बल्कि हमारी राष्ट्रीयता हजारों वर्ष पुरानी है। सदियों से राष्ट्रीयता की अवधारणा चलती आ रही है।" श्रीमती मालिनी अवस्थी ने कहा "हमारी कला का अभीष्ट लोकमंगल है। मॉरीशस, फिजी और सूरीनाम देशों में आज भी लोग रामचरित मानस और हनुमान चालीसा का पाठ करते हैं इसलिए राष्ट्रीयता भूगोल की सीमा से परे है, हमारी लोककला भी सिखाती है कि दूसरों का आंकलन करके अपना मंगल नहीं होना चाहिए।"

दूसरे दिन के दूसरे सत्र 'भूमण्डलीकरण एवं राष्ट्रीयता' विषय पर केंद्रित रहा जिसमें डॉ. भगवती प्रकाश शर्मा, प्रो. वी.के. मल्होत्रा, श्री के. बद्रीनाथ और श्री स्वप्न दास गुप्ता ने अपना व्याख्यान दिया। डॉ. भगवती प्रकाश शर्मा ने कहा "आज हमारे सामने दो तरह के राष्ट्रीयवाद उभरकर आये हैं एक तकनीकी और दूसरा आर्थिक राष्ट्रीयवाद। अगर भारत को विकसित देशों की श्रेणी में आना है तो उसे इन दोनों ही क्षेत्रों में राष्ट्रवाद को लाने की आवश्यकता है।" प्रो. वी.के. मल्होत्रा ने बताया कि "हम जब तक भूमंडलीकरण को इतिहास बोध के साथ जोड़कर

नहीं देखेंगे तक तक हम राष्ट्रवाद को नहीं समझ सकेंगे।" सांसद स्वप्न दास गुप्ता के अनुसार वैश्वीकरण पर कई दृष्टियों से विचार किया जा सकता है जिसमें चीन एक उदाहरण है जिसने आर्थिक व्यवस्था को अपने पक्ष में करते हुए विश्व अर्थव्यवस्था के 40 प्रतिशत हिस्से पर अपना कब्जा कर लिया है वहीं भारत विश्व व्यापार में 20 प्रतिशत का हिस्सेदार था आज घट कर 2 प्रतिशत रह गया है।" श्री के. बद्रीनाथ बताते हैं कि "वास्तव में भूमंडलीकरण की अवधारणा दक्षिण अफ्रीका से आयी है। टाटा की सफलता की कहानी बताते हुए वे कहते हैं कि टाटा ने भूमंडलीकरण को अपना कर न सिर्फ अपना भला किया बल्कि राष्ट्र का भी भला किया है।"

दूसरे दिन का तीसरा सत्र: 'राष्ट्र के पुनरुत्थान में भारतीय भाषाओं एवं साहित्य का योगदान' सत्र में डॉ. रमा ने कहा कि हमारा राष्ट्र मानवता से परिपूर्ण हो रहा है, भारत की संस्कृति में राष्ट्र की भावना मानवता की भावना से जुड़ी हुई है। हमारे यहाँ तोड़ने की संस्कृति नहीं रही जोड़ने की संस्कृति रही है, जो इसे तोड़ने की बात करते हैं वो वास्तव में भारत की संस्कृति से अपरिचित हैं।"

प्रो. कैलाश नारायण तिवारी के अनुसार हमारा "साहित्य और संस्कृति वो तत्व हैं जो समय-समय पर हमें बिखरने से बचाते हैं। भारत को तोड़ने में वर्तमान शिक्षा व्यवस्था का भी उतना ही योगदान है जितना अराजक तत्वों का। जब तक शिक्षा व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन नहीं होंगे तब तक हमारे संस्कारों में जो नई पीढ़ी आ गयी है उनके चिंतन पर विखंडनकारी प्रभाव ही रहेगा और वो राष्ट्र को तोड़ने की ही बात करेंगे जोड़ने की बात नहीं करेंगे।" प्रो. बलवंत भाई जानी ने अपने वक्तव्य में बताया कि "राष्ट्र को एकात्म भाव देने वाला बिंदु हमारी राष्ट्रीयता ही है। जिस तरह से भाषा सनातन और शाश्वत है उसी तरह से राष्ट्रीयता का भाव भी सनातन और शाश्वत है।" प्रो. नन्द किशोर पांडेय ने अपने सारगर्भित वक्तव्य में इस बात का उल्लेख किया कि "राष्ट्र के उत्थान में योग और भोग का संतुलन बनाये रखने की जरूरत है। हमारी संस्कृति योग की संस्कृति है त्याग की संस्कृति है। लेकिन अगर हम आज भूमंडलीकरण के दौर में जी रहे हैं और अगर इस बीच भोग आ गया है तो उसमें संतुलन बेहद जरूरी है।" दूसरे दिन का चौथा अंतिम सत्र 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एवं भारतीय जान-संचार माध्यम' नाम से था जिसमे प्रो. ब्रज किशोर कुठियाला ने कहा कि "मीडिया आज सबसे जरूरी माध्यम बन चुका है, हमारी बात आज मीडिया के अभाव में आगे नहीं बढ़ सकती। आज मीडिया ने लाभ को लोभ में बदल दिया है। ऐसे हालातों में राष्ट्र को सुरक्षित रखना बेहद चुनौतीपूर्ण कार्य है।" श्री उमेश उपाध्याय ने कहा "अभिव्यक्ति की आजादी के साथ-साथ राष्ट्र के प्रति जिम्मेदारी भी बहुत जरूरी है।"

तीसरे दिन का पहला सत्र 'राष्ट्रीयता एवं भारतीय शिक्षा प्रणाली' विषय पर आधारित रहा। इस सत्र में सबसे पहले श्री चंद्र भूषण शर्मा ने कहा कि "हमें अपना पाठ्यक्रम बदलना पड़ेगा तभी राष्ट्रीयता बदलेगी। हमारी शिक्षा व्यवस्था अंग्रेजों के बाद बदली ही नहीं है।" उन्होंने वर्तमान शिक्षा व्यवस्था पर सवाल खड़े किये जैसे—देश की शिक्षा और शिक्षा नीति शिक्षकों के हाथ में क्यों नहीं है... इत्यादि। इनके बाद प्रो. जगबीर सिंह ने शिक्षा और राष्ट्रीयता पर विचार व्यक्त करते हुए कहा कि "देश की सरकारें बदली हैं लेकिन जिम्मेदारी नहीं बदली, जब तक हमें अपने देश की सभ्यता, संस्कृति का ज्ञान न होगा तब तक देश आगे बढ़ ही नहीं सकता। हमारे देश की शिक्षा धर्म केंद्रित है, धर्म यहाँ सांप्रदायिक भावना से जुड़ा नहीं है बल्कि इंसानियत के भाव से जुड़ा है, मानवता के भाव से जुड़ा है। आज जरूरी है कि हम भारतीय सभ्यता और संस्कृति को शिक्षा में शामिल करें तभी सही राष्ट्रीयता आएगी।" अगले वक्ता के रूप में डॉ. अवनिजेश अवस्थी ने अपने ज्वलंत वक्तव्य में बताया कि "हम अतीत को व्यतीत मानते हैं, क्या कारण है अंग्रेजों के बाद अलग-अलग रियासतें एक राष्ट्रीयता को क्यों स्वीकार करती हैं। हम आज लगातार गोष्ठियां, सेमिनार, समितियां, आयोजन करते हैं लेकिन शिक्षा वहीं की वहीं है। शिक्षा को हम बस घर के बाहर तक सीमित रखते हैं, हम व्यक्तिगत रूप से कुछ और सामाजिक रूप से कुछ और होते हैं। शिक्षा रोजगार नहीं देती समर्थ देती है, शिक्षा अपने आप में एक सत्याग्रह है। आज सेमीनार से कुछ नहीं निकलेगा लेकिन आगे निकलेगा, बस हमें अपनी हिप्पोक्रेसी से बाहर निकलना होगा।" प्रो. सुरेश प्रसाद सिंह के अनुसार "विद्या वही है जो हमें मुक्ति प्रदान करे, शिक्षा हमें घमंड नहीं सिखाती। वर्तमान में अनुशासनहीनता को बढ़ावा मिला है। सच्चा शिक्षक वही है जो मानवता को बढ़ाता है।"

अध्यक्षीय भाषण में प्रो. चंद्र किरण सलूजा का कथन था, कि "जब तक भारत की भाषाओं में शिक्षा नहीं दी जाएगी तब तक शिक्षा भारतीय नहीं होगी। आज बार-बार ये कहा जाता है कि मिलकर चलो और ये बात वर्षों पहले वेदों में कह दी गयी थी। जब भारत के हर बच्चे को सृजनात्मक ज्ञान भारतीय भाषाओं में दिया जायेगा तो भारतीय संस्कृति खुद ब खुद आगे बढ़ेगी। आज हमें आरोप के बजाय कुछ कदम उठाने की जरूरत है।"

तीसरे दिन 'राष्ट्रीयता का आधार: एकता में अनेकता' सत्र में प्रो. अश्विनी मोहपात्रा ने कहा "भारत सिर्फ एक देश नहीं है बल्कि सभ्यता और संस्कृति में मामले में यहाँ भारत के भीतर अनेक भारत बसते हैं ये अनेकता में एकता ही हैं।" प्रो. अरविन्द जोशी ने कहा "भारत की सभ्यता बहुत अलग है यहाँ परिवार के मूल्य बड़े रहे हैं जिसे विविध शक्तियों ने आज तोड़ा है हमारा देश धर्म के मामले में विविधता लिए हुए है, हमारी भारतीयता में संतान धर्म और मोक्ष का सिद्धांत है। भारत में रह रहे घुमक्कड़ों का भी अपना महत्व है, उन्होंने देश में घूम-घूम कर लोकगीत, लोक संस्कृति को बनाया है।" डॉ. संजय पासवान ने राष्ट्रीयता को दलित विमर्श के साथ जोड़ कर पेश किया। उनके अनुसार "दलित को अंग्रेजी में बोलकर अक्सर खुद को सभ्य साबित करना पड़ता है। अंग्रेजी को सभ्य भाषा बना दिया गया है। ये अच्छा है देरी से ही सही भारत सरकार ने भारत बोध तत्व को समझने की तरफ प्रयास किया है। हमारा देश कास्ट सप्रेशन पावर रहा है। आज देश के सही विकास की चार धाराएँ हैं—गांधी, लोहिया, अम्बेडकर और दीनदयाल उपाध्याय। इन चारों को आज जोड़ कर देखने की जरूरत है। हमें अपनी देशज धाराओं को एकता के लिए साथ लेकर चलना होगा...।"

सांसद श्री शेषाद्रि चारी ने कहा, "देश में जब तक जाति है तब तक जातिवाद रहेगा। जब हम सम भाव में आएंगे तभी समाज में सम भाव आएगा संकोचन और विस्तारण हर जगह काम आता है राजनीति में भी, आज हमें विशिष्ट को सामान्य बनाना चाहिए।" श्री हुकुमदेव नारायण यादव के अनुसार, "हमें अपने विचार अपनी भाषा में ही व्यक्त करने चाहिए। मार्क्सवाद ने हमारे यहाँ बहुत सी गड़बड़ियाँ की हैं। आज सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकात्मकता की जिम्मेदारी समाज पर ही है, समाज को इसके लिए एक टूल बन कर काम करना होगा।"

समापन सत्र में श्री बी.बी. कुमार, श्री अतुल कोठारी, सच्चिदानंद जोशी के समक्ष श्रोताओं ने राष्ट्रीयता और भारतीय संस्कृति से जुड़े बहुत से ज्वलंत सवाल रखे। इस सत्र में श्री बी.बी. कुमार ने कहा "विश्वविद्यालय की डिग्री लिए लोग आज सभ्यता और संस्कृति को समझते ही नहीं हैं। राष्ट्रीयता की अवधारणा पुरातन है, अंग्रेजों से पहले भी उसका विस्तार रहा है। हमारी अवधारणा लोक कल्याण की रही है।" श्री अतुल कोठारी ने कहा, "भारतीय संस्कृति को जीवन में जीने की आवश्यकता है। जब तक राष्ट्रीयता की भावना भाषण से अलग व्यवहार में नहीं आएगी तब तक राष्ट्रीयता वास्तविक रूप में नहीं आ सकती। अब रोने-धोने का समय समाप्त हो गया है। ये संगोष्ठी मात्र प्रतिक्रिया में नहीं है अब समय कार्य करने का है। देश की जनता में भारत की संस्कृति के प्रति उत्साह है। हमें आज अपनी परम्पराओं को पुनर्स्थापित करने की जरूरत है।" संगोष्ठी के अंत में इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केंद्र के डॉ. सुधीर लाल ने औपचारिक धन्यवाद ज्ञापन किया। हालांकि उसके बाद भी अतुल कोठारी जी के साथ श्रोताओं की अनौपचारिक बातचीत होती रही। कुल मिला कर ये तीन दिनों की राष्ट्रीय संगोष्ठी एक सफल और जीवंत संगोष्ठी रही जिसमें लगभग 250 से अधिक शिक्षाविद और शोध छात्र छात्राओं के बीच राष्ट्रीयता और संस्कृति को सही मायने में परिभाषित और व्याख्यायित किया गया।

सम्पर्क : एम-29/ए, गली नं. 26, सादतपुर एक्सटेंशन, दिल्ली-110094
दूरभाष : 9013225600
ई-मेल: narendrakumarbharti@gmail.com

अखिल भारतीय नागरी लिपि सम्मेलन

पुष्पा पाल

नागरी लिपि परिषद और हिन्दी विभाग राजीव गाँधी विश्वविद्यालय, ईटानगर, अरुणाचल प्रदेश के संयुक्त तत्वावधान में 10-11 नवम्बर, 2016 को दो दिवसीय नागरी लिपि सम्मेलन का विधिवत आयोजन हुआ। राजीव गाँधी विश्वविद्यालय के प्रेक्षागृह में सम्पन्न इस कार्यक्रम में देशभर के विद्वानों ने शिरकत किया। अन्तरप्रादेशिक प्रतिभागियों सहित राज्य के विभिन्न महाविद्यालयों के अध्ययन-अध्यापन से जुड़े प्राध्यापकों ने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। इस मौके पर 'नागरी संगम' स्मारिका का विमोचन राजीव गाँधी विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. तामो मिवाङ द्वारा किया गया। अरुणाचल की आदि जनजाति की भाषा, बोली साहित्य, समाज, संस्कृति आदि के सन्दर्भ में महती अकादमिक परियोजना सम्बन्धी योगदान के लिए युवा साहित्यसेवी और राजीव गाँधी विश्वविद्यालय के हिंदी विभागाध्यक्ष डॉ. ओकेन लेगो को विनोबा नागरी सम्मान से सम्मानित किया गया। पटना के जगदम्बी प्रसाद यादव स्मृति प्रतिष्ठान के अध्यक्ष और भारत के हिंदी

फोटो: नागरी लिपि परिषद्, नई दिल्ली द्वारा राजीव गाँधी विश्वविद्यालय ईटानगर (अरुणाचल प्रदेश) में आयोजित 39वें अखिल भारतीय नागरी लिपि सम्मेलन में उद्घाटन भाषण देते हुए विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. तामो निवाङ। मंच पर उपस्थित है हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. ओकेन लेगी, मुख्य अतिथि साहित्यकार श्री येशे दोरची थोंग्चि, परिषद् के अध्यक्ष डॉ. परमानन्द पांचाल, महामंत्री डॉ. हरि सिंह पाल और भाषा संकायाध्यक्ष डॉ. हरीश कुमार शर्मा।

सलाहकार समिति के सदस्य वीरेन्द्र यादव को भी इस अवसर पर नागरी संस्था सम्मान से नवाजा गया।

दो दिवसीय अखिल भारतीय नागरी लिपि सम्मेलन का आरंभ एनबीटी प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा लगाए गए पुस्तक प्रदर्शनी के उद्घाटन से हुआ। प्रो. निवाङ ने प्रदर्शनी का शुभारंभ किया। अरुणाचल प्रदेश के प्रखर लेखक और साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित श्री येशे दोरजी थोंग्चि मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। कार्यक्रम की शुरुआत डॉ. ओकेन लेगो ने स्वागत भाषण से की। उन्होंने देश भर से आए विद्वानों, प्रान्तीय बौद्धिकों, अध्यापकों, शोधार्थियों, विद्यार्थियों आदि का खुले दिल से स्वागत किया। उन्होंने इस दो-दिनी कार्यक्रम में अरुणाचल के साहित्य-सम्पदा, लोक-भंडार, सांस्कृतिक-गौरव आदि की दीर्घजीविता की दिशा में नागरी लिपि के महत्व को रेखांकित किया। डॉ. लेगो ने कहा कि "देश भर के विद्वानगण हमारी भाषा-साहित्य के अलिखित किन्तु अभिव्यक्त रचनाकर्म को संजोने-सहेजने में नागरी की भूमिका और इस कार्यवाही में आ रही समस्याओं पर संवेदनशील ढंग से अपना विचार प्रस्तुत करेंगे। साथ ही, इस दिशा में कारगर एवं समुचित उपाय सुझाने का महती प्रयास कर सकते हैं।"

उद्घाटन सत्र में विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. तामो निवाङ ने इस आयोजन के लिए नागरी लिपि परिषद् के अध्यक्ष और हिंदी विभागाध्यक्ष को साधुवाद दिया। प्रो. निवाङ ने हिंदी की व्यापकता और इसकी बहुआयामी दृष्टिकोण के ऊपर अपनी बात रखी। उन्होंने कहा कि "आज नागरी लिपि का महत्व भारत के उत्तरी छोर से दक्षिणी छोर और पश्चिमी छोर से पूर्वी छोर तक स्वीकार्य है।" उन्होंने याद दिलाया कि इस लिपि के अन्तर्गत आने वाली बोलियों में भरी विविधता, बहुलता, बहुरूपता, बहुसंख्यकता सबकुछ है।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि श्री येशे दोरजी थोंग्चि ने भी अरुणाचल के प्राकृतिक सौन्दर्य तथा भौगोलिक बनावट के बीच बसे लोगों की भाषा, बोली, कला, साहित्य आदि को बचाने के लिए लिपि को सबसे महत्त्वपूर्ण हथियार कहा। श्री थोंग्ची ने नागरी लिपि को अरुणाचल की बहुविध जनजातीय भाषाओं का अभिभावक कहा जिनसे उनका रोजमर्रा का रिश्ता है, सम्पर्क भाषा के रूप में बातचीत-व्यवहार है।

नागरी लिपि परिषद् के अध्यक्ष डॉ. परमानन्द पांचाल ने अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में यह स्वीकार किया कि "भारत की जनजातीय संस्कृति और भाषाएं भारतीयता की नींव हैं।" अरुणाचल के बारे में उन्होंने साफ कहा कि "यहाँ हिंदी का 'लिंक-लैंग्वेज' होना नागरी लिपि के लिए गौरव की बात है।" उन्होंने रोमन लिपि से बिना कोई दुर्भाव रखे कहा कि "रोमन की सबसे बड़ी समस्या उसका 'टोन' और 'फोनेटिक्स' है। रोमन में लिखा कुछ जाता है और बोला कुछ जाता है।" उद्घाटन सत्र में परिषद् के महामंत्री डॉ. हरि सिंह पाल ने कहा कि "लिपि में लिखने से ही आपसी बात दूर तक जाएगी। यही वह माध्यम है जिससे भाषा को समृद्ध बनाना संभव है। नागरी लिपि के प्रति हमारा आग्रह भाषा की सजीवता तथा उसके सौन्दर्य-विधान को बनाए रखना है, छोड़ना नहीं।" भाषा संकायाध्यक्ष प्रो. हरीश कुमार शर्मा ने अपने वक्तव्य में इस ओर ध्यान दिलाया कि अरुणाचल ऐसा राज्य हैं जहाँ नागरी लिपि से कमोबेश सभी परिचित हैं।

इस अवसर पर विभिन्न तकनीकी सत्रों के अन्तर्गत प्रतिभागियों, शोधार्थियों ने अपने शोध-पत्र पढ़े। समापन में सांस्कृतिक कार्यकम आयोजित हुए, अरुणाचल के सांस्कृतिक रंग और पारम्परिक सौन्दर्य को दर्शाते लोकगीतों एवं नृत्यों का रंगारंग प्रस्तुतिकरण हुआ। ऊषाकालीन इस कार्यक्रम में राजीव गाँधी विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के विद्यार्थियों ने मनमोहक प्रस्तुति दी। पूर्वांचल में बसे अरुणाचल प्रदेश को जीवंत और सजीव बनाने में विद्युत द्युति सैकिया, नजीबुर रहमान, गङजेन गङसा, लकी ल्यून, तालोम तायेङ, तुमुङ ताबीङ, बोम्पी नामुक, मिने मेतो, टोबी काई, प्रिया अलेप्रा, जुमतर तासो, गामरिक ताई आदि ने क्रमशः बाँसुरी वादन, एकल गायन, एकल नृत्य, समूह नृत्य द्वारा गणमान्य अतिथियों को मुग्ध कर दिया। इस सांस्कृतिक कार्यक्रम का संचालन हिंदी विभाग के सहायक प्राध्यापक डॉ. अभिषेक कुमार यादव ने किया।

सम्पर्क : 684, गली नं. 9, इन्द्रा पार्क, पालम मार्ग,
नई दिल्ली-110045
मोबाइल: 9717434643

श्रीलंका: हिन्दी दिवस 2016 समारोह

भारतीय सांस्कृतिक केंद्र कोलम्बो

भारतीय सांस्कृतिक केंद्र, कोलम्बो, श्रीलंका में 2016 सितम्बर 14 तारीख को हिन्दी दिवस धूमधाम से मनाया गया। भारतीय उच्चायोग कोलम्बो के उच्चायुक्त महोदय वाय.के. सिन्हा जी कार्यक्रम के मुख्य अतिथि थे। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि किसी भी देश की पहचान और गौरव उस देश की राष्ट्र भाषा होती है। वैश्वीकरण के इस दौर में भाषाओं के सरलीकरण के लिए जिस भाषा में जितने सरल शब्द हो उसे अपना लिया जाए, हिन्दी भाषा ने यह कार्य बहुत स्वाभाविक रूप से किया है। हिन्दी भाषा में हिन्दी, उर्दू, अरबी, फारसी और यहाँ की अन्य यूरोपीय भाषाओं के शब्द भी घुल-मिल गए हैं जो कि भाषा की समृद्धि के लिए आवश्यक है। ब्रिटेन के शब्दकोश में भी हिन्दी के कई शब्दों को अपनाया गया है तो हिन्दी का इतिहास आजादी के सदियों साल पुराना है। डॉ. विजय कुमार मल्होत्रा कार्यक्रम के विशेष अतिथि थे अपने उद्बोधन में उन्होंने हिंदी की वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालते हुए कंप्यूटर में यूनिकोड की जानकारी दी। विशेष अतिथि कॅलणिय विश्वविद्यालय के हिन्दी प्राध्यापक प्रो. इंद्रा दसनायक ने अपने भाषण में श्रीलंका का हिन्दी से लगाव व हिन्दी की श्रीलंका में स्थिति पर प्रकाश डाला। हिन्दी छात्रों द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए। नृत्य, नाटक, समूह गीत, एकल गायन आदि कार्यक्रम पेश किए। कार्यक्रम का संचालन कुमारी शीरीन कुरेशी व नधीरा शिवंति ने किया। अंत में शीरीन कुरेश ने आभार व्यक्त किया।

भारतीय उच्चायोग में हिन्दी दिवस

भारतीय उच्चायोग में 14 सितम्बर 2016 को हिन्दी दिवस मनाया गया। विभिन्न प्रतियोगिताएँ आयोजित की गयीं। इस अवसर पर भारतीय उच्चायोग कोलम्बो के उप-उच्चायुक्त महोदय अरविंदम बागची एवं प्रथम सचिव श्रीमती ईशा श्रीवास्तव उपस्थित थे।

सहायक उच्चायोग कैंडी में हिन्दी की गतिविधियाँ एवं कार्यक्रम

कार्यक्रम का शुभारंभ सहायक उप उच्चायुक्त राधा वेंकटरामन ने किया। हिन्दी दिवस पर विभिन्न प्रतियोगिताएँ आयोजित की गयी थीं। इसमें विद्यार्थियों ने भाग लिया और पुरस्कार प्राप्त किया।

जर्मनी: बर्लिन में विश्व हिन्दी समारोह

भारतीय दूतावास के टैगोर-सेंटर में 10 जनवरी, 2017 को 'विश्व हिन्दी दिवस' का आयोजन हुआ। इस अवसर पर बर्लिन की रंग संस्था 'रेलै-नेलै' द्वारा नाटक 'मातृभाषा मेरा परिचय' का मंचन किया गया। गायना की धर लक्ष्मी ने गायना और भारत की सांस्कृतिक समानताओं पर वक्तव्य दिया और कैथरीना यादव ने हरिवंश राय बच्चन की कविता 'कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती' का पाठ किया। दोनों छात्राओं की भूरि-भूरि प्रशंसा हुई। टैगोर सेंटर की निदेशक अंजना सिह और प्रतिष्ठित हिंदी अध्यापिका सुशीला शर्मा हक़ ने इस अवसर पर हिन्दी की साहित्यिक भूमिका और उसके महत्व को विस्तार से बताया। समारोह का समापन सहभोज से हुआ।

मॉरीशस में हिन्दी संदर्भित कार्यक्रम

बैंक ऑफ बड़ौदा में हिंदी दिवस

दिनांक 12/01/17 को बैंक ऑफ बड़ौदा, पोर्ट लुइस में विश्व हिंदी दिवस का उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर मॉरीशस के प्रमुख हिंदी कवि हेमराज सुन्दर, श्रीमती कल्पना लालजी, महात्मा गाँधी संस्थान की वरिष्ठ प्रवक्ता डॉ. अलका धनपत, डॉ. विनय गुदारी, बैंक के अधिकारीगण, हिंदी सेवी साहित्यकार और अन्य सम्माननीय महानुभाव उपस्थित थे। कार्यवाहक उच्चायुक्त, भारतीय उच्चायोग श्री अशोक कुमार कार्यक्रम के मुख्य अतिथि रहे। उच्चायोग की ओर से द्वितीय सचिव डॉ. नूतन पांडेय और इन्दर सिंह ने भी कार्यक्रम में अपनी सहभागिता निभाई। इस अवसर पर उपस्थित वक्ताओं ने हिंदी की वैश्विक स्थिति पर प्रकाश डाला और हिंदी को विश्व भाषा बनाने की दिशा में भारत और मॉरीशस सरकार के प्रयासों की चर्चा की। भारतीय कार्यवाहक उच्चायुक्त महोदय ने अपने संबोधन में भारत सरकार द्वारा हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए किए जा रहे प्रयासों की चर्चा की। उन्होंने राजभाषा अधिनियमों का उल्लेख करते हुए बैंकों और सार्वजनिक उपक्रमों में अधिकारियों को हिंदी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित भी किया। इस अवसर पर मॉरीशस के हिंदी कवियों ने अपनी कविता पाठ किया। साथ ही विश्व हिंदी दिवस के उपलक्ष्य में बैंक ऑफ बड़ौदा द्वारा आयोजित विभिन्न हिंदी प्रतियोगिताओं के विजेताओं को भी सम्मानित किया गया।

विश्व हिंदी सचिवालय द्वारा आयोजित विश्व हिंदी दिवस

दिनांक 13/01/2017 को भारत और मॉरीशस की संस्था 'विश्व हिंदी सचिवालय' द्वारा इंदिरा गाँधी भारतीय सांस्कृतिक केंद्र में विश्व हिंदी दिवस भव्य रूप में संपन्न हुआ। कार्यक्रम में विशेष अतिथि महामहिम परम शिवम् पिल्लै वयापोरी जी, राष्ट्रपति मॉरीशस गणराज्य रहे। इसके अतिरिक्त माननीया श्रीमती लीला देवी दुखन लछुमन, शिक्षा एवं मानव संसाधन मंत्री एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री, माननीय श्री सुनेल भोला, व्यापार, प्रतिष्ठान और सहकारिता मंत्री, माननीय श्री नन्द बोधा, सार्वजनिक ढांचा एवं परिवहन मंत्री तथा अन्य कैबिनेट मंत्रियों ने कार्यक्रम में भाग लिया। कार्यक्रम का प्रारंभ इंदिरा गाँधी भारतीय सांस्कृतिक केंद्र के कलाकारों द्वारा हिंदी गान से किया गया। सचिवालय के महासचिव श्री विनोद कुमार मिश्र ने अपने स्वागत भाषण में अतिथियों का स्वागत करते हुए सचिवालय की वार्षिक गतिविधियों का लेखा जोखा दिया। इस अवसर पर पेकिंग विश्वविद्यालय, चीन से आए हिंदी विद्वान जिंगर्कु जियांग ने चीन में हिंदी सीखने के प्रति बढ़ती रुचि और प्रेम की चर्चा की। उन्होंने हिंदी भाषा को भारतीय संस्कृति से जोड़ते हुए जोर दिया कि हिंदी केवल वर्णमाला और व्याकरण सीखना ही नहीं है बल्कि खुद को उसमें जीना है, भारतीयता को जानना है। कार्यवाहक भारतीय उच्चायुक्त श्री अशोक कुमार ने इस अवसर पर अपने संबोधन में हिंदी के विश्व में बढ़ते प्रभाव और उसके पीछे आप्रवासियों के संघर्ष और योगदान का उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि हिन्दी आज न केवल सूचना प्रौद्योगिकी और तकनीकी दृष्टि से पूर्ण समृद्ध और समुन्नत भाषा है, बल्कि रोजगार में भी अब हिन्दी के पर्याप्त अवसर विकसित हो रहे हैं।

शिक्षा मंत्री माननीय श्रीमती लीला देवी दुकन लछुमन ने अपने भाषण में मॉरीशस में होने वाले अगले विश्व हिंदी सम्मेलन में भारत सरकार के सहयोग की आकांक्षा की। उन्होंने कहा कि आज हिंदी की उपलब्धियों को मनाने का अवसर है। उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि अगली शताब्दी हिंदी की होगी। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि मॉरीशस गणराज्य के कार्यवाहक राष्ट्रपति माननीय श्री वयापुरी जी ने अपना वक्तव्य अंग्रेजी भाषा में दिया। उनहोंने इस बात को हृदय से स्वीकारा कि हिन्दी एक अत्यंत लोकप्रिय भाषा है और मैं पूर्ण प्रयासरत हूँ कि रोजमर्रा के जीवन में हिंदी का व्यवहार करने में सक्षम हो सकूँ। उन्होंने अपने संबोधन में मॉरीशस के लोगों में हिंदी और भारत के प्रति लोगों के प्रेम का उल्लेख किया। उन्होंने अपने संबोधन में हिंदी के लिए विश्व हिन्दी सचिवालय के प्रयासों की सराहना की और कामना की कि आगामी कुछ वर्षों में हिन्दी विश्व भाषा का दर्जा प्राप्त कर लेगी। इस अवसर पर विश्व हिंदी सचिवालय की वार्षिक पत्रिका का लोकार्पण किया गया तथा हिंदी प्रतियोगिता के विजेताओं को सम्मानित भी किया गया। कार्यक्रम के अंत में स्थानीय कलाकारों द्वारा भारतेंदु हरिश्चंद्र के प्रसिद्ध नाटक 'अंधेर नगरी' का प्रभावपूर्ण मंचन किया गया। कार्यक्रम में देश के प्रमुख हिंदी साहित्यकार और हिंदी सेवी संस्थाओं के साथ लगभग 650 हिंदी प्रेमी उपस्थित रहे।

साहित्य संवाद

दिनांक 16/01/2017 को भारतीय उच्चायोग द्वारा इंदिरा गाँधी सांस्कृतिक केंद्र में साहित्य संवाद की मासिक गतिविधि के अंतर्गत चीन से मॉरीशस आए हुए हिन्दी विद्वान प्रोफेसर ज्यांग जिंगकुई के साथ चीन में हिन्दी की दशा और दिशा विषय पर चर्चा-परिचर्चा की गई। कार्यक्रम में विश्व हिन्दी सचिवालय के महासचिव श्री विनोद कुमार मिश्र, महात्मा गाँधी संस्थान के हिन्दी विभाग के वरिष्ठ प्रवक्ता श्री गंगाधर

सिंह सुखलाल, डॉ. विनय गुदारी, श्रीमती अलका धनपत, अंजलि चिंतामणि, माधुरी रामधारी आदि उपस्थित थे। इसके अतिरिक्त हिन्दी प्रचारिणी सभा और आर्य सभा के सदस्य तथा स्वतंत्र हिंदी साहित्यकार भी उपस्थित थे।

इस अवसर पर अपने वक्तव्य में प्रोफेसर ज्यांग ने बताया कि अभी चीन के 15 विश्वविद्यालयों में हिन्दी विभाग हैं, जहाँ लगभग 500 छात्र/छात्राएँ हिन्दी अध्ययन कर रहे हैं। साथ ही हिन्दी साहित्य का चीनी भाषा में अनुवाद कार्य जैसा वृहद् प्रोजेक्ट भी चीनी सरकार के आर्थिक सहयोग से चलाया जा रहा है। आर्य सभा, मॉरीशस के प्रधान श्री उदय नारायण गंगू जी ने चर्चा के दौरान मॉरीशस में बैठकों से लेकर विश्वविद्यालयों तक पहुँची हिन्दी की विकास यात्रा का उल्लेख किया। भारतीय उच्चायोग की द्वितीय सचिव डॉ. नूतन पाण्डेय ने इस अवसर पर बोलते हुए प्रोफेसर ज्यांग को उनके सूरसागर के चीनी अनुवाद और हिन्दी चीनी शब्दकोष जैसी उपलब्धियों के लिए बधाई दी, साथ ही उनके हिन्दी, भारत और भारतीयता के प्रति अनुराग की भी सराहना की।

—नूतन पाण्डेय, द्वितीय सचिव

विश्व हिंदी सचिवालय द्वारा आयोजित कवि सम्मेलन

13 फरवरी, 2017 को विश्व हिंदी सचिवालय ने शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय, भारतीय उच्चायोग, मॉरीशस तथा कला एवं संस्कृति मंत्रालय के सौजन्य से इंदिरा गांधी भारतीय सांस्कृतिक केंद्र, फेनिक्स में एक भव्य कवि-सम्मेलन का सफल आयोजन किया।

मॉरीशस तथा भारत से पधारे कवियों ने अपनी प्रस्तुति से इस काव्य-संध्या की शोभा बढ़ाई। मॉरीशस से डॉ. हेमराज सुन्दर, श्री राज हीरामन, श्री साबीर गुदर, श्री धनराज शम्भु व श्रीमती कल्पना लालजी तथा भारत से श्री लक्ष्मी शंकर वाजपेयी, श्री दीक्षित दनकौरी, श्री सुशील ठाकुर 'साहिल', डॉ. विवेक गौतम, डॉ. आशीष कंधवे व सुश्री ममता किरण सभागार के विशाल मंच पर विराजमान थे।

इस अवसर पर व्यापार, उद्योग व सहकारिता मंत्री, माननीय सुमीलदत्त भोला, भारतीय उच्चायुक्त, महामहिम श्री अभय ठाकुर व श्रीमती सुरभी ठाकुर, मंत्रालय के अधिकारीगण, सचिवालय के आधिकारिक कार्यारंभ दिवस के अवसर पर आमंत्रित अतिथि वक्ता श्री अतुल कोठारी, मॉरीशस की हिंदी शैक्षणिक व हिंदी प्रचारक संस्थाओं के अधिकारीगण व सदस्य, मॉरीशस के काव्य-रसिक आदि काव्य-संध्या का रसास्वादन करने के लिए उपस्थित थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता वरिष्ठ कवि श्री लक्ष्मीशंकर वाजपेयी ने की। मंच का संचालन भारत से पधारे कवि डॉ. विवेक गौतम तथा डॉ. नूतन पाण्डेय, द्वितीय सचिव (शिक्षा व भाषा), भारतीय उच्चायोग, मॉरीशस ने किया। कार्यक्रम का शुभारंभ विश्व हिंदी सचिवालय के महासचिव, प्रो. विनोद कुमार मिश्र के स्वागत-वक्तव्य से हुआ। प्रो. मिश्र ने अपने स्वागत-वक्तव्य में बड़े ही मधुर शब्दों में कवियों व श्रोताओं का अभिनन्दन किया।

डॉ. नूतन पाण्डेय ने अति कलापूर्ण रीति से मंच का संचालन करते हुए मॉरीशस के कवियों का बारी-बारी से आकर्षक परिचय दिया। भारत से पधारे श्री विवेक गौतम ने भारतीय कवियों का बड़े भावभीने शब्दों में परिचय दिया।

कवियों ने अपने मधुर स्वरों में कविता पाठ और ग़ज़ल-गान द्वारा उपस्थित काव्य-रसिकों को घंटों तक मंत्र-मुग्ध कर दिया।

15 फरवरी, 2017 को ऋषि दयानंद संस्थान में आयोजित कवि-सम्मेलन में पुनः इन कवियों की कविताओं का रसास्वादन करने का अवसर प्राप्त हुआ। इनके अतिरिक्त मॉरीशस से श्रीमती सत्यवती सीता समयाद, श्रीमती अंजु घरभरन एवं श्रीमती सौभाग्यवती धनुकचंद ने भी अपनी-अपनी रचनाओं को बड़े ही प्रभावशाली स्वरों में व्यक्त किया।

—डॉ. उदय नारायण गंगू, ओ.एस.के. आर्य रत्न की रिपोर्ट

मॉरीशस में अभिमन्यु अनत कृत 'आप्रवासी घाट के तीन दिन' का मंचन

18 फरवरी, 2017 को महात्मा गाँधी संस्थान, मॉरीशस के भव्य सभागार में प्रसिद्ध मॉरीशसीय लेखक श्री अभिमन्यु अनत कृत 'आप्रवासी घाट के तीन दिन' एकांकी का सफल मंचन हुआ। महात्मा गांधी संस्थान के सृजनात्मक लेखन व प्रकाशन विभाग के इस अभूतपूर्व प्रयास को कई स्तरों पर सराहना मिली। 'आप्रवासी घाट के तीन दिन' मूल रूप से उन शर्तबंध मजदूरों के जीवन के महत्त्वपूर्ण अंश को प्रस्तुत

करता है, जब वे मॉरीशस की भूमि पर अपने पहले कदम रखते हैं और यहाँ पर वे प्रथम तीन दिन कष्टपूर्वक बिताते हैं। अनत जी ने एकांकी के प्रथम अंश में मजदूरों की कठिन यात्रा, उनकी आशाएँ, उनके मोहभंग आदि का मार्मिक चित्रण किया। दूसरे अंश में यह दर्शाया है कि किस प्रकार आप्रवासी यहाँ की परिस्थितियों से अवगत होते हैं तथा विश्व के कई क्षेत्रों से आए हुए, संघर्षों में उलझे हुए लोगों के बीच मानवीय संबंध उत्पन्न होते हैं। एकांकी के अंतिम अंश में यह दर्शाया गया है कि शक्कर कोठियों के लिए मजदूरों का चयन निर्दयतापूर्वक होता था।

पटकथा से मंचन तक इस नाटक में कई कार्यक्षेत्रों के लोग सम्मिलित हुए। पात्रों के किरदारों को निभाने के लिए महात्मा गांधी संस्थान में सृजनात्मक लेखन व प्रकाशन विभाग की अध्यक्षा, डॉ. राजरानी गोबिन ने कलाकारों का चयन बारीकी से किया। इसमें छात्र, अध्यापक, व्याख्याता, नवोदित तथा प्रौढ़ अभिनेता आदि तो थे ही, साथ ही गारी और क्लारेल नामक ऐसे युवकों ने साथ दिया, जिनका अब तक हिंदी से कोई संबंध नहीं था और उनकी निष्ठा एवं मेहनत का दर्शकों ने तालियों से आदर भी किया। 'आप्रवासी घाट के तीन दिन' को प्रभावशाली रूप से प्रस्तुत करने में कला एवं संस्कृति मंत्रालय की ओर से भी पर्याप्त सहायता प्राप्त हुई। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि इन भिन्न-भिन्न कार्यक्षेत्रों के लोगों को हिंदी साहित्य तथा सृजनात्मकता को बढ़ावा देने हेतु एक साथ कार्य करते हुए देख, भविष्य के लिए हिंदी-प्रेमी तथा कला-प्रेमी आशावादी हो सकते हैं। इस प्रकार के प्रयासों का स्वागत करने हेतु हिंदी जगत् हमेशा तत्पर रहेगा।

—श्री वशिष्ठ कुमार झमन की रिपोर्ट

स्पेन में विश्व हिंदी दिवस

विश्व हिंदी दिवस के अवसर पर कार्यक्रमों के आयोजन का उद्देश्य विश्व में हिंदी के महत्व को रेखांकित करना तथा हिंदी के प्रति रुचि को बढ़ाना होता है। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु बाय्यादोलीद विश्वविद्यालय में भी एक कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

10 जनवरी, 2017 की संध्या हिंदी के विद्यार्थियों के लिए अति विशिष्ट थी। अभी बहुत कम समय ही हुआ, उन्हें हिंदी सीखते हुए, किंतु उन्हें चुनौती दी गई, एक पूरा कार्यक्रम हिंदी में प्रस्तुत करने की, जिसे उन्होंने स्वीकार भी किया।

सायं 5 बजे कार्यक्रम का शुभारंभ सरस्वती वंदना से किया गया। तदुपरांत एक लघु नाटिका प्रस्तुत की गई—'बड़ा कौन?' इसमें यह दर्शाया गया था कि स्वर, व्यंजन, शब्द, वाक्य सभी का अपना महत्व है, किंतु ये सब मिलकर ही भाषा को सार्थक एवं सुंदर बनाते हैं। अंत में यह संदेश दिया गया कि इसी प्रकार यदि सब मिलकर रहें तो यह सृष्टि कितनी सुंदर हो जाए। हिंदी गीत पर स्पेनी नृत्य प्रस्तुत किया गया। एक विद्यार्थी ने हिंदी कक्षा के अपने अनुभव सुनाए।

एक पावर पाइंट प्रस्तुति दी गई, जिसमें हिंदी की विशेषताओं, विश्व मे हिंदी का स्थान, हिंदी के प्रति बढ़ती रुचि, हिंदी दिवस का महत्व आदि पर प्रकाश डाला गया। उससे पूर्व विश्व हिंदी दिवस के अवसर पर माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी का संदेश सुनाया गया।

अंत में सुलेख प्रतियोगिता हुई। विद्यार्थियों ने सानंद सोत्साह कार्यक्रम प्रस्तुत किया। उनका यह प्रयास निश्चय ही सराहनीय रहा।

—श्रुति पाण्डेय, थर्ड सेक्रेटरी (पीआइसी),
भारतीय दूतावास, मैड्रिड, स्पेन

क्रोशिया में हिंदी एवं भारतीय संविधान दिवस

ज़ाग्रेव विश्वविद्यालय, क्रोएशिया के इंडोलॉजी विभाग में हिंदी एवं भारतीय संविधान दिवस का भव्य आयोजन

इंडोलॉजी विभाग एवं भारतीय दूतावास के संयुक्त तत्वावधान में दिनांक 30 नवंबर, 2016 को हिंदी एवं भारतीय संविधान दिवस का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का शुभारंभ श्री संदीप कुमार, भारतीय राजदूत, प्रो. होल्जएवाक, कार्यकारी अधिष्ठाता मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान संकाय, डॉ. इवान अध्यक्ष इंडोलॉजी विभाग आदि अतिथियों के दीप प्रज्ज्वलन एवं अतिथि आचार्य हिंदी प्रो. रवींद्रनाथ मिश्र द्वार मां सरस्वती की वंदना तथा छात्रा कुमारी माया रम्भा के भरतनाट्यम नृत्य से हुआ।

प्रो. मिश्र ने उद्घाटन सत्र का संचालन करते हुए सभी गणमान्य अतिथियों और विद्यार्थियों का स्वागत किया। तदुपरांत हिंदी एवं संविधान दिवस के स्वरूप एवं महत्व को रेखांकित करते हुए उन्होंने कहा कि भारत और क्रोएशिया ने गुलामी के दंश को झेला है लेकिन भाषाई स्तर पर दोनों में असमानता है। क्रोएशिया की भाषा आजादी के पूर्व सर्बो क्रोएशियन थी और बाद में क्रोएशियन। इसमें कोई विशेष अंतर नहीं है। भारत में आजादी के बाद भी कुछ समय तक राजकाज की भाषा अंग्रेजी और हिंदी को सहभाषा का दर्जा दिया गया। हिंदी को वैश्विक रूप देने के लिए यहाँ हिंदी दिवस मनाने की सार्थकता और बढ़ जाती है। इस संदर्भ में प्रो. मिश्र ने हिंदी और संविधान के विविध पहलुओं की चर्चा की।

इसके पश्चात् उन्होंने सभी अतिथियों को क्रमशः वक्तव्य के लिए आमंत्रित किया। डॉ. इवान ने अपना वक्तव्य हिंदी में शुरू करते हुए दूतावास के सहयोग के लिए आभार व्यक्त किया। इसके बाद उन्होंने भारतीय संविधान के विषय में बताया कि इसमें विभिन्न धर्म, जाति, वर्ग, सम्प्रदाय आदि के लिए सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में समान अवसर की बात कही गयी है। तत्पश्चात् भारतीय संविधान के प्रमुख बिंदुओं की चर्चा की। भारतीय दूतावास के श्री अंकुर ने संविधान के संदर्भ में संक्षिप्त वृत्तचित्र प्रस्तुत किया।

प्रो. होल्जएवाक ने कहा कि "मुझे खुशी है कि इंडोलॉजी विभाग भारतीय भाषा, साहित्य एवं संस्कृति के प्रचार में संलग्न है। मेरी शुभकामना है कि विभाग आगे भी इसी प्रकार का कार्य करता रहेगा।" उन्होंने इंडोलॉजी विभाग द्वारा किए जा रहे कार्यक्रमों की सराहना की। श्री संदीप कुमार ने कहा कि "विगत कई वर्षों से इंडोलॉजी विभाग दूतावास के सहयोग से ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन कर रहा है। यह हम सब के लिए प्रसन्नता की बात हे। इससे क्रोएशिया में हिंदी भाषा और संस्कृति के प्रचार को बल मिलेगा। हमारे बीच सद्भाव और मैत्री विकसित होगी। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि क्रोएशिया से कई टीचर भारत गए और वहां से हिंदी सीखकर यहाँ पढ़ा रहे हैं। संस्कृत और क्रोएशियन भाषा में कई स्तरों पर बहुत समानताएं भी हैं। मैं चाहता हूँ कि इंडोलॉजी विभाग क्रोएशिया के पुला, रियेका एवं अन्य विश्वविद्यालयों से तालमेल कर भाषा और संस्कृति का प्रचार-प्रसार करें।" इस दिशा में प्रो. रवींद्रनाथ मिश्र ने पुला और रियेका विश्वविद्यालय में व्याख्यान देकर पहल की है। इसके साथ ही भारतीय दूतावास भविष्य में ऐसे कार्यों हेतु हमेशा सहयोग के लिए तत्पर रहेगा।

कुमारी लावरा ने क्रोएशिया में हिंदी भाषा के स्वरूप एवं महत्व की चर्चा करते हुए विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत रंगारंग कार्यक्रम का संचालन किया। सबसे पहले प्रथम, तृतीय एवं चतुर्थ वर्ष की कुमारी पाउलीना पुसिक, एमा वेसेलिनोविक, अन्या, दोरोतया एवं इवाना ने क्रमशः हिंदी कविता पाठ, कुमारी पेत्रा सेरबेतर और मार्सेला ड्रैगनिक ने हिंदी में संवाद प्रस्तुत किया। तत्पश्चात् एकल गीतकुमारी मगदालेना एवं समूह गीत इवाना कॉस्टिक, माटा जरनसिक, रंभा माया, वालेन्तीना, अन्या आदि ने गाया। इसके तुरन्त बाद एक समूह नृत्य प्रस्तुत किया गया। प्रो. रवींद्रनाथ मिश्र द्वारा निर्देशित "काश, मैं मोटर साइकिल होता" (श्रीलाल शुक्ल) व्यंग्य निबंध का नाट्यरूपांतर कुमारी मिआ, कारला, वेलेंटीना, माया रम्भा, कुमारी मगदालेना, डोरोतया एवं इवाना द्वारा मंचित किया गया। अंत में वंदे! मातरम् समूह नृत्य कुमारी पेत्रा मार्किट लुकास, तजना अब्रामोविक, मरीना बुबीसीसी, मरिज पव्लोस्क, मिया स्तुविकार, मातेज दाबो, वालेन्तीना बेल्जक, पेत्रा सेमिगा आदि के द्वारा प्रस्तुत किया गया। प्रो. रवींद्रनाथ मिश्र एवं कुमारी लावरा द्वारा क्रमशः हिंदी एवं क्रोएशियन भाषा में आभार ज्ञापन एवं राष्ट्रगीत के साथ कार्यक्रम समाप्त हुआ। इस अवसर पर विभाग के प्राध्यापक श्री क्रेशो, प्राध्यापिका सुश्री विश्या, सुश्री कटरीना, प्रकल्प शोधकर्त्री सुश्री मारियाना तथा दूतावास के वरिष्ठ अधिकारी श्री महेन्द्र सिंह पटियाल, श्री नरूला, श्री एवं श्रीमती वशिष्ठ एवं अन्य कर्मचारी श्री कुलदीप, श्री हरशरण सिंह, श्री एलेन तथा भारी संख्या में विद्यार्थी एवं अन्य हिंदी प्रेमी उपस्थित थे।

प्रस्तुति: रवींद्रनाथ मिश्र, इंडोलॉजी विभाग,
मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान संकाय,
ज़ाग्रेब विश्वविद्यालय, क्रोएशिया

रूस में विश्व हिंदी दिवस

जवाहरलाल नेहरू सांस्कृतिक केंद्र, भारतीय राजदूतावास, मॉस्को विश्व हिंदी दिवस समारोह, 25 जनवरी 2017—दुर्गाप्रसाद धर सभागार

जवाहरलाल नेहरू सांस्कृतिक केंद्र, भारतीय राजदूतावास मॉस्को द्वारा 'विश्व हिंदी दिवस समारोह' दिनांक 25 जनवरी को दुर्गाप्रसाद धर सभागार में आयोजित किया गया।

समारोह का शुभारंभ मुख्य अतिथि राजदूत महोदय श्री पंकज सरन तथा विशिष्ठ अतिथियों श्री वालेरी पजिनिन (प्रधानाचार्य, ल्यूसियम विद्यालय) तथा भारतविद् डॉ. सफ़रोमो तोलिबी, यूरी करचागव, श्री कश्मीर सिंह जी (अध्यक्ष, हिंदुस्तानी समाज) तथा भारत रूस मैत्री संघ के संस्थापक श्री रामेश्वर सिंह द्वारा दीप प्रज्वलन से हुआ। राजदूत महोदय ने अपने वक्तव्य में रूस में हिंदी के प्रति सहृदयता की भावना को सराहा। उन्होंने रूस में स्थित शिक्षण संस्थानों की प्रशंसा करते हुए हिंदी को रूस और भारत के बीच सांस्कृतिक सेतु के रूप मे रेखांकित किया। राजदूत महोदय ने प्रधानमंत्री जी के संदेश को भी पढ़कर सुनाया।

इस कार्यक्रम में भारतविद् डॉ. सफ़रोमो तोलिबी, ल्यूसियम विद्यालय के प्रधानाचार्य 'दिशा' के संस्थापक डॉ. रामेश्वर सिंह के साथ-साथ 'हिंदुस्तानी समाज' से श्री कश्मीर सिंह तथा प्रसिद्ध रूसी समालोचक यूरी करचागाव आदि की उपस्थिति उत्साह बढ़ाने वाली थी। सभागार में एक सौ बीस से अधिक रूसी-भारतीय हिंदी प्रेमी उपस्थित थे। जवाहरलाल नेहरू सांस्कृतिक केंद्र की हिंदी अध्यापिका डॉ. मीनू शर्मा तथा हिंदी कक्षा की विद्यार्थी अलेक्ज़ेंद्रा नेव्ज़ोरोवा ने कार्यक्रम का संचालन किया। इस कार्यक्रम का सम्पूर्ण आयोजन जवाहरलाल नेहरू सांस्कृतिक केंद्र के द्वारा हुआ। जवाहरलाल नेहरू सांस्कृतिक केंद्र के विद्यार्थियों तमारा, यूलिया, विओला, अन्ना, एलिया, एलेना देनिसोवा तथा राजदूतावास विद्यालय की छात्रा काशवी जैमिनी ने 'एक चिड़िया अनेक चिड़िया' नाट्य गीत पर बहुत सुंदर अभिनय कर एकवचन बहुवचन का भेद तो समझाया ही साथ ही बहुत खूबसूरती के साथ एकता में अनेकता की कहानी भी अभिनयात्मक रूप से दिखाई जिसे सभागार में उपस्थित जन समूह ने बहुत पसंद किया।

सांस्कृतिक केंद्र तथा विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने मिलकर एक कवि सम्मेलन भी प्रस्तुत किया जिसमें विद्यार्थियों ने काव्य क्षमता का परिचय दिया। मॉस्को राजकीय विश्वविद्यालय की छात्राओं आन्ना याकोव्लेवा तथा क्सेनिया लेसिक ने कहानी 'जीवन की सीख' प्रस्तुत की। इसके अतिरिक्त भारतीय राजदूतावास विद्यालय के विद्यार्थियों ने 'हम हैं हिंदुस्तानी हिंदी भाषा हम को प्यारी है' हिंदी गीत की संगीतमय प्रस्तुति दी। जवाहरलाल नेहरू सांस्कृतिक केंद्र के विद्यार्थियों ने हिंदी गीत 'हिन्दी भाषा हमारी है'' भी प्रस्तुत किया। 'विश्व हिंदी दिवस और हिन्दी' विषय पर अदिति सिंह ने भाषण प्रस्तुत किया। सभी कार्यक्रमों की तैयारी जवाहरलाल नेहरू सांस्कृतिक केंद्र की हिन्दी अध्यापिका डॉ. मीनू शर्मा के निर्देशन में की गई।

इस अवसर पर रूसी भारतीय मैत्री संघ 'दिशा' द्वारा त्रैमासिक पत्रिका 'नई दिशा' के नए अंक का विमोचन भी राजदूत महोदय तथा विशिष्ट अतिथियों के द्वारा किया गया। दिशा के संस्थापक डॉ. रामेश्वर सिंह ने अपनी संस्था के द्वारा हिन्दी के उत्थान के लिए किए जाने वाले कार्यक्रमों का विवरण दिया तथा हिन्दी को रूसी भारतीय मित्रता का आधार बताया।

कार्यक्रम के अंत में राजदूतावास विद्यालय के हिन्दी अध्यापक श्री शुभ नारायण सिंह ने हिन्दी की संप्रेषणीय क्षमता और मेलजोल के प्रभावी साधन के रूप में इसके महत्व को रेखांकित किया। कार्यक्रम के उपरांत भारतीय व्यंजन युक्त स्नेह भोज ग्रहण किया गया और इसके साथ ही कार्यक्रम का सफल समापन हुआ।

—डॉ. मीनू शर्मा, हिंदी अध्यापिका
जवाहरलाल नेहरू सांस्कृतिक केंद्र, भारतीय राजदूतावास, मॉस्को

वर्तमान समय और हम

हरीश नवल

समय की इकाईयों में वर्तमान सबसे महत्त्वपूर्ण है। बीता हुआ भूतकाल वर्तमान को ही प्रभावित करता है और भविष्य की चिन्ता वर्तमान का मुख्य धर्म है। हमारे पास इन तीनों में वर्तमान सबसे कम होता है। जहाँ कमी होती है वहीं चिंताएं अधिक होती हैं।

वर्तमान समय गहरी आशंकाओं से भरा समय है। वर्तमान में प्राकृतिक और अप्राकृतिक दोनों तरह की चुनौतियाँ हमारे समक्ष मुँह बाए खड़ी हैं। विशेष रूप से नगरों में रहने वालों का जीवन बहुत द्वंद्वों से भरा हुआ है। व्यक्तिवाद हावी है, उपयोगितावाद ने आज की दुनिया को, यानि हमे 'मतलबी' बना दिया है।

बस्ते का बोझ बढ़ रहा है परन्तु शिक्षा का ओज घट रहा है। मूल्यों का स्थान कीमत ने ले लिया है जो टिक रहा है वह बिक रहा है, मण्डी का वर्चस्व सर्वोपरि है। संयुक्त परिवार टूट रहे हैं, सम्बन्ध असम्बद्ध हो रहे हैं, भोग के लिए हम योग कर रहे हैं।

हम मनुष्य मशीनी हो गए हैं और मशीनें मनुष्य सी हो रही हैं। विवाह जैसी मर्यादित संस्थाएँ टूट रही हैं। हम मीडियान्मुखी होते जा रहे हैं। हमें क्या खाना, क्या पीना, क्या पहनना, क्या ओढ़ना और यहाँ तक कि किस साबुन से नहाना, दाँत साफ करने से लेकर घर की सफाई के अंदाज, मीडिया बता रहा है। हम फैशन के भ्रमजाल में फँसे हुए कीट-पतंगे हो गए हैं। गलाकाट प्रतियोगिता में हमारे हाथ कट रहे हैं, दूसरे की कमीज से अपनी कमीज साफ न होने पर हम खिन्न हो जाते हैं।

हमारे पाठ उलटे हो गए हैं। पहले हमें बताया जाता था कि ईमानदारी बड़ी चीज है। प्राथमिक कक्षाओं में प्रायः एक पाठ अवश्य होता था 'ओनेस्टी इज दा बेस्ट पॉलिसी' आज हमारी पालिसियाँ बदल गई हैं अब ईमानदारी को मूर्खता का पर्याय माना जाता है।

सम्पर्क: 65, साक्षरा अपार्टमैंट्स, ए-3, पश्चिम विहार, नई दिल्ली'110063
फोन: 9818988225
ई-मेल: harishnaval@gmail.com

हमारे बुजुर्गों की दशा उजड़े बागबान जैसी हो गई है। उनके लिए हमारे घर 'नो मेन्ज़ लैण्ड' हो गए हैं। घर में बरामदा न हो तो उन्हें बैठने के लिए जगह की तलाश करनी पड़ती है।

मार्शल मैक्लूहन ने कह दिया 'वर्ल्ड इज ए ग्लोबल विलेज' हम ग्लोबल तो हो गए हैं; वर्तमान समय में यातायात और संचार के साधनों ने दुनिया को बहुत छोटा कर दिया है परंतु हमारा विलेज तत्त्व गुम हो गया है। गाँव में किसी की बेटी गाँव की बेटी मानी जाती रही पर आज हमारे शहरों में हमारी बेटियाँ हर रोज भेड़ियों की नजरों का शिकार होती हैं।

हम फेसबुक पर बहुत करीब हो गए हैं, फेस टू फेस पड़ोसियों को भी नहीं जानते। ट्वीटर पर हम लाईक करते थकते नहीं हैं पर खुले नागरिक जीवन में हमारी नापसन्दगी हम पर सवार रहती है।

आज हमारे बच्चे अमेरिका और यूरोप की वर्कशॉप हैं जिनसे वे अपने लिए डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक आदि-आदि ढलवाते हैं। हम भारतीय हैं, का संकोच हमें पीछे हटाता है और एन.आर.आई का गौरव हमें ऊँचा उठाता है।

जिस ऋण को हम पाप समझते थे वह आज वरदान समक्ष हो गया है। प्लास्टिक मनी के युग में क्रेडिट कार्ड का कद कितना ऊँचा है यह बताने की आवश्यकता नहीं है। हमारे क्रेडिट कार्ड हमें गोल्ड और प्लेटिनम संज्ञाओं से विभूषित होकर हमारे पदक बन चुके हैं।

शब्दों के सही अर्थ हम भूलते जा रहे हैं। आज हम डिग्री को शिक्षा समझते हैं, डिग्रियों को प्राप्त करने की होड़ सी लगी हुई है। हम सूचनाओं को ज्ञान मानकर प्रसन्न हो रहे हैं, 'गूगल' हमारे लिए भगवान है। हम उस पर भरोसा करते हैं। सत्ता को हम व्यवस्था समझकर बदलने की कोशिश करते हैं। सत्ता बदल जाती है पर व्यवस्था वही रहती है। सफेद, पीली, लाल आदि टोपियाँ बदलने के बावजूद भी हम सिस्टम को नहीं बदल पा रहे हैं।

वर्तमान समय में हम इतना भ्रम में जी रहे हैं कि सुविधाओं को सुख समझकर उन्हें जुटाने के लिए जुटे हुए हैं।

जहाँ तक वर्तमान समय में सम्बन्धों का प्रश्न है हमारे रिश्ते आरोपित रिश्ते हैं, जो वास्तव में हैं हम उसको नहीं मानते जो हो नहीं सकता उसके होने की आशा में निरन्तर निराश होते हैं। हमें भाई ऐसा चाहिए जो दोस्त जैसा हो, दोस्त ऐसा चाहिए जो भाई जैसा हो। लिहाजा हमें न भाई मिलता है न दोस्त। हम बहू को 'बहू' के रूप में स्वीकार नहीं कर पाते, उसे बेटी के रूप में देखना चाहते हैं, सास को सास नहीं माँ में रूपायित होता देखना चाहते हैं, यानि जो है वो हमें स्वीकार नहीं है इसलिए हम सम्बन्धों का, रिश्तों का प्रलाप करते हुए महफिलों में देखे जा सकते हैं।

हमें आज घर में होटल जैसी सुविधाएँ चाहिए और होटल हम घर जैसा ढूँढ़ते हैं। हमें शहरी, ड्राइंग रूम में गाँव की डेकोरेशन चाहिए और गाँव की चैपाल में शहरी सजावट चाहिए। हम कितने अजीब हो गए हैं कि मौसम के सही अंदाज को भी नहीं अपना पाते। गर्मियों में एयर कंडीशनर में चादरें ओढ़ कर सोते हैं अैर सर्दियों में घर में इतनी हीट रखते हैं कि हवा का तापमान शरीर को शीतलता न दे सके।

वर्तमान समय अपसंस्कृति का समय है। संस्कृति सिखाने वाले हमारे लगभग सभी चैनल अपसंस्कृति ही बिखेर रहे हैं। टी.वी. के विभिन्न बड़े और महत्त्वपूर्ण 'रियल्टी शोज़' के कई निर्णायक अपनी असलियत पर उतरे रहते हैं। सर्वाधिक अंक देने का भाव कोई मेज पर खड़ा होकर करता है, कोई सीटी बजाकर देता है और कोई असभ्य भाषा में मत प्रकट करता है। सांस्कृतिक प्रदूषण का घोर युग है जहाँ तीन सौ रुपये का पिज्जा, दो सौ रुपये की मैगी या सौ रुपये का पॉपकार्न का पैकेट हमें कदापि महँगे नहीं लगते परंतु पुस्तक हमारे लिये हमेशा महँगी साबित हो रही है। फोन से ऑर्डर करके हम दो हजार रुपये का नाश्ता करके महा आनन्दित होते हैं किंतु पुस्तक का ऑर्डर करने में हमारा अर्थशास्त्र डोलने लगता है।

हम बुक नहीं 'बुके' के समय में जी रहे हैं, पार्क नहीं पार्किंग ढूँढ़ रहे हैं, हम बाजारवाद के ऐसे पक्षधर हो गए हैं कि हमें उसका बाजारूपन में होता परिवर्तन नजर नहीं आता।

वर्तमान में हमारा सबसे बड़ा सत्य वित्त-सत्य बन गया है। येन केन प्रकारेण हमें धन चाहिए। हम बिचैलियों का समाज बनाने में लगे हुए हैं। हम जिसका विरोध करना चाहिए उसके एजेन्ट बनने में शान समझते हैं। भ्रष्टाचार जहाँ सबसे अधिक हो वही करिअर हमें सबसे ऊँचा लगने लगा है।

जहाँ तक योग्यताओं का प्रश्न है हम सभी अवगत हैं कि हमारे वतन में चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी के लिए भी कुछ शैक्षणिक योग्यता अनिवार्य है किंतु शासन करने वालों के लिए अंगूठा भी न हो तो चल जाता है।

यदि गाँव की बातें करें तो हमारे असली अन्नदाता आत्महत्या कर रहे हैं, क्योंकि उनके पास जीवनयापन के साधन नहीं हैं। दलितों के साथ कौन-सा अन्याय नहीं होता, समाचार बताते हैं। प्रेम होने पर प्राणदण्ड पंचायत देती है।

यह कैसा समय है कि यह नहीं बीत रहा हम बीत रहे हैं। हम भोगों को नहीं भोग रहे, भोग ने हमें भोग लिया। हम तप को नहीं, तप ही हमें तपा रहा है। हमारी तृष्णा जीर्ण नहीं हुई, हम ही जीर्ण हो रहे हैं। भर्तृहरि के शब्दों में—

"कालो न यातः वयमेव याताः। भोगो न भुक्तः वयमेव भुक्तः॥
तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः। तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः॥

समय हमारी रक्षा करे।

नया सूरज उगाना ही होगा

हेमराज सुंदर (मॉरीशस)

रोगग्रस्त सूरज
अपनी बीमार रोशनी फैलाता
गाँव-दर-गाँव
शहर-दर-शहर
नदियों, जंगलों, पहाड़ों को
पार करता हुआ
हर शाम को
इससे पहले कि
अँधेरा उसे डस ले
कायर बन
कहीं छिप जाता है
किसी डरपोक
सेनापति की तरह!

जब लौटता है
चाँदनी-रथ पर सवार होकर
तब सारे समुद्र का सीना
युद्ध में बिखरे लहू-सा
लाल होता है!

फिर, वही सूरज
तराशी हुई संस्कृति में—
सभ्यता का दामन थामे
निकल पड़ता है
अपनी लीक पर!

अब तो
इस व्यवस्था से छुटकारा
पाना ही होगा!
लगता है, नया सूरज
उगाना ही होगा!

सम्पर्क: प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
महात्मा गाँधी संस्थान, मोका, मॉरीशस

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्

सदस्यता शुल्क फार्म

प्रिय महोदय,

कृपया गगनांचल पत्रिका की एक साल/तीन साल की सदस्यता प्रदान करें।

बिल भेजने का पता

.....

.....

.....

.....

पत्रिका भिजवाने का पता

.....

.....

.....

.....

विवरण	शुल्क	प्रतियों की सं.	रुपये/US$
गगनांचल वर्ष	एक वर्ष ₹ 500 (भारत) US$ 100 (विदेश) तीन वर्षीय ₹ 1200 (भारत) US$ 250 (विदेश)		
कुल	छूट, पुस्तकालय 10% पुस्तक विक्रेता 25%		

मैं इसके साथ बैंक ड्राफ्ट सं. ..... दिनांक .....

रु./US$ ..... बैंक .....

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्, नई दिल्ली के नाम भिजवा रहा/रही हूँ।

कृपया इस फार्म को बैंक ड्राफ्ट के साथ
निम्नलिखित पते पर भिजवाएं:

कार्यक्रम अधिकारी (हिंदी)
भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्
आजाद भवन, इंद्रप्रस्थ एस्टेट,
नई दिल्ली-110002, भारत
फोन नं. - 011-23379309, 23379310

हस्ताक्षर और स्टैंप.....

नाम.....

पद.....

दिनांक.....

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्

प्रकाशन एवं मल्टीमीडिया कृति

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् का एक महत्वाकांक्षी प्रकाशन कार्यक्रम है। परिषद् पांच भिन्न भाषाओं में, एक द्विमासिक — गगनांचल (हिंदी), दो त्रैमासिक — इंडियन होराइज़न्स (अंग्रेजी), तक़ाफत-उल-हिंद (अरबी) और दो अर्ध-वार्षिक — पेपेलस डी ला इंडिया (स्पेनी) और रेन्कोत्र एवेक ला ऑद (फ्रांसीसी), पत्रिकाओं का प्रकाशन करती है।

इसके अतिरिक्त परिषद् ने कला, दर्शन, कूटनीति, भाषा एवं साहित्य विभिन्न विषयों पर पुस्तकों का प्रकाशन किया है। सुप्रसिद्ध भारतीय राजनीतिज्ञों व दार्शनिकों जैसे महात्मा गांधी, मौलाना आजाद, नेहरू व टैगोर की रचनाएं परिषद् के प्रकाशन कार्यक्रम में गौरवशाली स्थान रखती हैं। प्रकाशन कार्यक्रम विशेष रूप से उन पुस्तकों पर केंद्रित है, जो भारतीय संस्कृति, दर्शन व पौराणिक कथाओं, संगीत, नृत्य व नाट्यकला से जुड़े होते हैं। इनमें विदेशी भाषाओं जैसे फ्रांसीसी, स्पेनी, अरबी, रूसी व अंग्रेजी में अनुवाद भी शामिल हैं। परिषद् ने विश्व साहित्य के हिंदी, अंग्रेजी व अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद की भी व्यवस्था की है।

परिषद् ने भारतीय नृत्य व संगीत पर आधारित डीवीडी एवं सीडी के निर्माण का कार्यक्रम भी आरंभ किया है। अपने इस अभिनव प्रयास में परिषद् ने ध्वन्यांकित संगीत के 100 वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर दूरदर्शन के साथ मिल कर ऑडियो कैसेट एवं डिस्क की एक शृंखला का संयुक्त रूप से निर्माण किया है। भारत के पौराणिक बिंबों पर ऑडियो सीडी भी बनाए गए हैं।

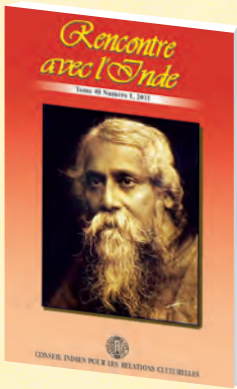

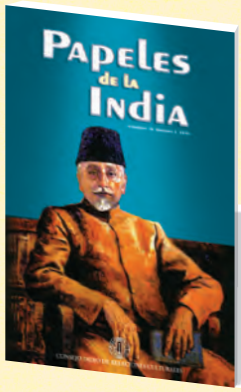

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् की स्थापना, सन् 1950 में स्वतंत्र भारत के प्रथम शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आज़ाद द्वारा की गई थी। तब से अब तक, हम भारत में लोकतंत्र की दृढ़ीकरण, न्यायसंगत सामाजिक व्यवस्था की स्थापना, अर्थव्यवस्था का तीव्र विकास, महिलाओं का सशक्तीकरण, विश्व-स्तरीय शैक्षणिक संस्थाओं का सृजन और वैज्ञानिक परम्पराओं का पुनरुज्जीवन देख चुके हैं। भारत की पांच सहस्त्राब्दि पुरानी संस्कृति का नवजागरण, पुनः स्थापना एवं नवीनीकरण हो रहा है, जिसका आभास हमें भारतीय भाषाओं की सक्रिय प्रोन्नति, प्रगति एवं प्रयोग में और सिनेमा के व्यापक प्रभाव में मिलता है। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्, विकास के इन आयामों से समन्वय रखते हुए, समकालीन भारत के साथ कदम से कदम मिला कर चल रही है।

पिछले पांच दशक, भारत के लम्बे इतिहास में, कला के दृष्टिकोण से सर्वाधिक उत्साहवर्द्धक रहे हैं। भारतीय साहित्य, संगीत व नृत्य, चित्रकला, मूर्तिकला व शिल्प और नाट्यकला तथा फिल्म, प्रत्येक में अभूतपूर्व सृजन हो रहा है। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्, परंपरागत के साथ-साथ समकालीन प्रयोगों को भी लगातार बढ़ावा दे रही है। साथ ही, भारत की सांस्कृतिक पहचान-- शास्त्रीय व लोक कलाओं को विशेष सम्मान दिया जाता है। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् सहभागिता व भाईचारे की संस्कृति की संवाहक है, व अन्य राष्ट्रों के साथ सृजनात्मक संवाद स्थापित करती है। विश्व-संस्कृति से संवाद स्थापित करने के लिए परिषद् ने अंतरराष्ट्रीय मंच पर भारतीय संस्कृति की समृद्धि एवं विविधता को प्रदर्शित करने का प्रयास किया है।

भारत और सहयोगी राष्ट्रों के बीच सांस्कृतिक व बौद्धिक आदान-प्रदान का अग्रणी प्रायोजक होना, परिषद् के लिए गौरव का विषय है। परिषद् का यह संकल्प है कि आने वाले वर्षों में भारत के गौरवशाली सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक आंदोलन को बढ़ावा दिया जाए।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् मुख्यालय

अध्यक्ष	:	23378616 23370698
महानिदेशक	:	23378103 23370471
उप-महानिदेशक (एन.के.)	:	23370228 23378662
निदेशक (ए.एम.जी.)	:	23370118
प्रशासन अनुभाग	:	23370834
अनुरक्षण अनुभाग	:	23378849
वित्त एवं लेखा अनुभाग	:	23379638
भारतीय सांस्कृतिक केन्द्र अनुभाग	:	23370413
अंतरराष्ट्रीय विद्यार्थी प्रभाग-1	:	23370391
अन्तरराष्ट्रीय विद्यार्थी प्रभाग-2	:	23370633
अंतरराष्ट्रीय विद्यार्थी (अफगान)	:	23379371
हिंदी अनुभाग	:	23370237

पंजीयन संख्या, आर. एन./32381/78
ISSN - 0971-1430

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् के प्रकाशन

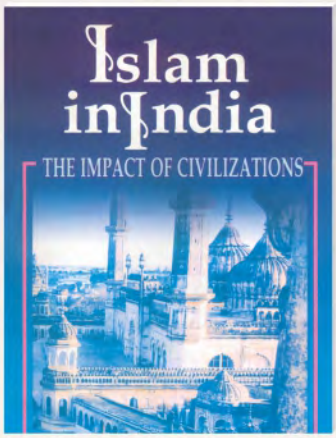

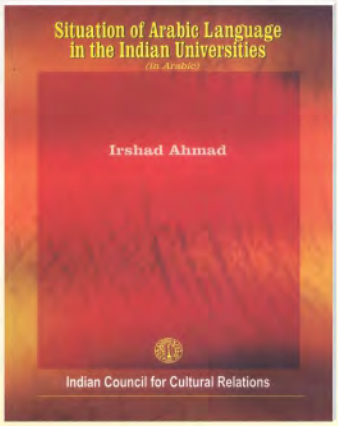

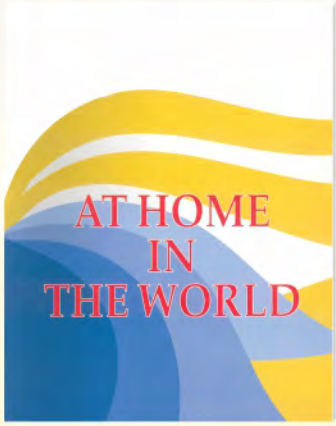

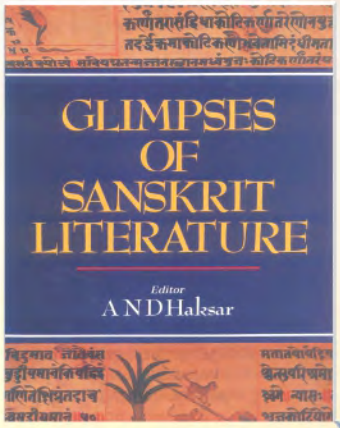

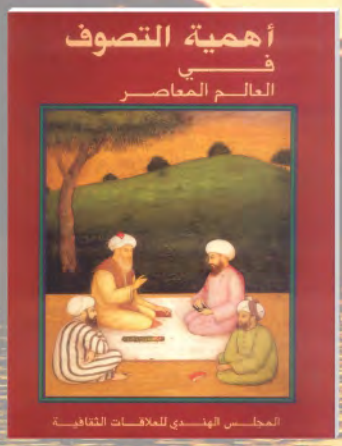

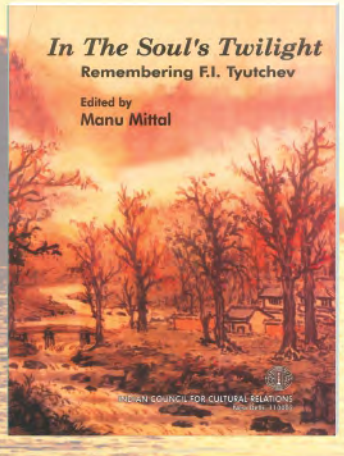

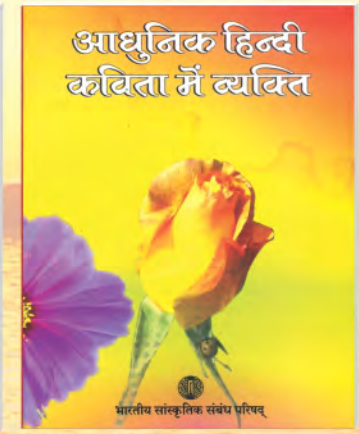

Indian Council for Cultural Relations
भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्
फोनः 91-11-23379309, 23379310
ई-मेल: pohindi.iccr@nic.in
वेबसाइट: www.iccr.gov.in

आवरण परिकल्पना : ममता गोयनका